ज्ञान के हिमालय

लेखक
सुरेश जैन सरल

प्रकाशक

आचार्य शान्तिसागर 'छाणी' स्मृति ग्रन्थमाला
बुढ़ाना

उपाध्याय मुनि श्री 108 ज्ञानसागरजी महाराज के सोनागिरि चातुर्मास के सुअवसर पर प्रकाशित

पुण्यार्जक : श्री महावीर प्रसाद जैन (बुढाना वाले), श्रीमती रेखा जैन – श्री महिपाल जैन, श्री पकज कुमार जैन – श्रीमती सपना जैन, श्री नीरज कुमार जैन – श्रीमती नीतू जैन, श्री सुमत प्रसाद जैन – श्रीमती विद्या जैन, श्री हस कुमार जैन – श्रीमती नीलम जैन, श्रीमती वन्दना जैन – श्री अतुल कुमार जैन, अकित, निधि, वैभव, सयम, अभय, रिद्धि, सौम्या, सम्यक, स्वस्ति, आर्जव, सम्भव, अनुकृति

'ज्ञानाश्रय', 66–67, कालिन्दी कालोनी, मेरठ–250 002 (उ.प्र.)

प्रथम संस्करण: 1100 प्रतियाँ, 2004
मूल्य : 200/– (पुन प्रकाशन हेतु)

प्राप्ति स्थान

- **आचार्य शान्तिसागर 'छाणी' स्मृति ग्रन्थमाला**
  बुढाना (मुजफ्फरनगर)

- **श्रुत संवर्द्धन संस्थान**
  प्रथम तल, 247 दिल्ली रोड,
  मेरठ - 250 002
  फोन : 0121-3119857, 2528704

- **प्राच्य श्रमण भारती**
  12/ए निकट जैन मन्दिर
  प्रेमपुरी, मुजफ्फरनगर- 251001 (उ० प्र०)
  फोन : 0131–2450228, 2408901

- **सस्कृति सरक्षण सस्थान**
  X/3349, गली न 1, रघुवरपुरा न 2,
  शांति मौहल्ला, गाधी नगर,
  दिल्ली-110031
  फोन : 011-22465078, 31043845

- **श्री दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्र "ज्ञानस्थली"**
  निकट परतापुर रेलवे क्रासिग
  भूडबराल मेरठ (उ० प्र०)
  फोन : 0121-2440485

मुद्रक
दीप प्रिन्टर्स
70 ए, रामारोड, इडस्ट्रियल एरिया, नई दिल्ली–110 015
फोन 011–25925099, 30923335

प्राक्कथन

–ब्र. अनीता जैन, सागर

"पूजौं गुरुपद सार" यह वह सूत्र है जिसे पकड लेने से, दो अन्य महान निमित्त भी सध जाते हैं। 'जैन–धर्म' मे देव, शास्त्र और गुरु की पूजा जगविख्यात तो है, चिर–सनातन भी है। हमे इस कलिकाल मे प्रशातमूर्ति, महान साधक, तप पूत, ज्ञानदिवाकर, चारित्र चक्रवर्ती, सिद्धान्त–रत्नाकर, व्याकरणविद, न्यायालकार परमपूज्य उपाध्याय 108 श्री ज्ञानसागरजी महाराज के चरण–शरण उपलब्ध हैं, यह हम समस्त श्रावको के लिये सौभाग्य का विषय है।

कथाकारशिरोमणि श्री सुरेश सरलजी द्वारा लिखित इस महा–कथा की पाडुलिपि पढ़ते समय मुझे यह तथ्य भलीविधि ज्ञात हो गया कि सरलजी 'सत चरित्र' क्यो लिखते हैं? वे 'गुरु के पद–कमल' स्पर्श कर अपनी भक्ति और श्रद्धा की आधारिका पर गुरु के साथ–साथ, देव और शास्त्र की पूजा भी पूर्ण कर लेते हैं।

उन्होने कई सतो पर लेखनी चलाई है। कतिपय 'गाथाए' मेरी दृष्टि से भी गुजरी हैं। प्रस्तुत कथा पढ कर, सरलजी मेरी नजर मे आदर के श्रेष्ठपात्र सिद्ध हुए हैं। उनका यह सु–लेखन पढते समय पाठक को जितना आनददायक और हृदयग्राही लगता है, लिखते समय लेखक से कितना श्रम और सोच चाहता होगा, इसकी कल्पना सहज नही है। कहे, लेखक को प्रखर तपाग्नि मे से होकर चलना पडता है। भले ही लेखन सरल है पर ऐसा लेखत्व सरल नही होता। यदि होता तो देश मे, हर कोई साहित्यकार, अपने तृतीय या चतुर्थ आश्रम मे पहुँचते–पहुँचते, कम से कम एक 'सत–चरित्र' अवश्य लिखता।

प्रज्ञाश्रमण परमपूज्य उपाध्यायश्रेष्ठ 108 श्री ज्ञानसागरजी महाराज की जीवनी पढ़ने की भावना गत पाच साल से थी। चूँकि मैं एक दशक पूर्व ही प पू आचार्य श्री विद्यासागरजी की जीवनी पढ चुकी थी। अत मन मे एक नये दर्शन ने जन्म ले लिया था कि पू उपाध्याय श्री की जीवनी भी वही लेखक लिखे जिन्होने पू आचार्यश्री की लिखी है। हर कार्य का समय तय होता है, होती है काललब्धि। शायद आदरणीय सरलजी भी अनेक वर्षों से सोचते रहे हो कि राष्ट्रसत, परमपूज्य उपाध्यायश्री पर भी लेखनी चलाना है। उनका सोच आकार पाने मे तब सफल हुआ, जब वे 16 अक्टूबर 2000 को निवाई (राजस्थान) पहुँचे और पूज्यश्री से आशीर्वाद लिया। आशीर्वाद उन्हे मिला, सो खुशी उन्हें होगी, परन्तु मुझे कुछ अधिक ही हुई थी, क्योकि मेरी अतरग–भावना, एक 'आदर्शरूप' (कलेवर) प्राप्त करने जा रही थी।

पाडुलिपि पढकर मेरी प्रसन्नता बढ गई है, जो मेरी भावना थी, वह ही तो है इसमे। इस कथा की काया उस स्फटिकमणि की तरह है, जिसमे गुरुवर का पारदर्शी वर्णन झलकता मिलता है। कथान्त मे पू आर्यिका श्री समाधिमति माताजी का चित्रण सरलजी के कथन को एक साथ महत्त्व और सत्य का मुकुट पहिनाता है कि श्रुत–सवर्द्धन की दिशा मे है उनका चिंतन। श्री सरलजी सदा इसी तरह के श्रेष्ठ–लेखन मे रत रहे और अपना लोक और परलोक यशो और पुण्यो से भरने मे सफल हो।

सोनागिरि–प्रवास

1 सितम्बर 2003

(उत्तम मार्दव धर्म दिवस)

दो शब्द

—ब्र. मंजुला जैन, मुँगावली

तुम गुणगण—मणिगणपति, गणत न पावहिं पार।
'दौल' स्वल्प—मति किम कहै, नमूँ त्रियोग संभार।।

उक्त पक्तियो के माध्यम से महाकवि एव महान पडित श्री दौलतरामजी ने श्री जिनेन्द्र भगवान की गुणगणना मे अपनी मति और लेखनी को असमर्थ बतलाते हुये विनती/स्तुति पूरी की है। ठीक इसी तरह हमारे जैन जगत के आदर्श जीवनी लेखक श्री सुरेश सरलजी ने गुरुदेव सराकोद्धारकसत, परमपूज्य उपाध्याय श्री ज्ञानसागरजी मुनिमहाराज का जीवन—चरित्र लिखते हुए, उनके गुणवर्णन मे अपने आपको लाचार माना है और सम्भावना व्यक्त की है कि पू गुरुवर का चरित्र—चित्रण आगे भी (द्वितीय—भाग में) निरतर रहेगा, क्योकि उनके कार्य और चर्याफल इतने अधिक है कि एक ग्रथ मे ले—आना सम्भव नही है।

मैने आदणीय सरलजी द्वारा लिखित यह श्रेष्ठ कथा आद्योपान्त पढी है। अत मै उनके कथन से सहमत हूँ और प्रेरणा करती हूँ कि वे आगामी वर्षो मे इस कथा का द्वितीय—खण्ड श्रावक—ससार के समक्ष लावेगे और पाठको का आदर पाते हुए लेखनी की सेवाये श्रुत—सवर्द्धन की ही दिशा में बनाये रहेगे।

वात्सल्यवारधि परमपूज्य उपाध्याय रत्न 108 श्री ज्ञानसागरजी को अनेक वर्षों से जानती भर नही हूँ, पूजती भी हूँ, वे मेरे आराध्य है। फिर भी जिस गहराई से सरलजी ने उन्हे जाना—पहिचाना है और उनकी विभिन्न छवियॉ, पृष्ठ—दर—पृष्ठ, विमोचित की है, वे उन जैसे महान लेखनी—साधक ही कर सकते है। ऐसा लेखन सब के लिए सम्भव नही है, यह ध्रुव—सत्य है। श्री सरलजी ने प पू आचार्य विद्यासागर जी महाराज की जीवनी लिखकर, सन 1985 मे ही सिद्ध कर दिया था कि ऐसी कृति दोबारा साहित्य—ससार को नही मिल सकेगी। उसके बाद उन्होने आठ अन्यान्य पूजनीय—सतो पर कलम चलाई। गत 17 वर्षों मे आठ सतो पर लिखकर उनकी लेखनी ने विराट धन्यता अर्जित की है। देश भर के पाठक उनकी रचनाओ को पढते है, और नई कृति की प्रतीक्षा हृदय से करते है। साधु—सतो के श्रीसघों मे उनकी कृतियॉ चाव से पढी जाती है, उन पर यथायोग्य चर्चा भी की जाती है।

सतो के आशीष से श्री सरलजी को, अब तक अनेक बार आदर–अभिनदन–पुरस्कार प्रदान कर समाज ने अपनी श्रेष्ठ–भूमिका का निर्वाह किया है। सत–चरित्र लिखने वाली लेखनी अभिनदित न होगी तो कौन होगी? कृपा सतो की।

प्रशममूर्ति परमपूज्य उपाध्यायश्री का आशीर्वाद प्राप्त श्री सरलजी का "आज" पूर्ण सफल है, उनका 'कल' भी सफलताओ से अलकृत रहे, ऐसी भावना है।

सोनागिरि–प्रवास

8 सितम्बर 2003

(उत्तम आकिचन्य धर्म दिवस)

प्रकाशकीय

गत अनेक वर्षों से यह सस्था धार्मिक पुस्तके प्रकाशित कर रही है। अनेक ग्रन्थ पुष्प के मानिन्द समाज मे सुगन्ध फैला रहे हैं। प्रस्तुत कथा–पुस्तक छापते हुए न केवल मुझे न केवल सस्था परिवार को बल्कि मुद्रण कला से जुडे समस्त प्रबुद्ध प्रेस–कर्मियो को भी हार्दिक खुशी हुई है कि हमारे महान सत परमपूज्य उपाध्याय श्री ज्ञानसागरजी महाराज के जीवन–परिचय का दर्पण हमारे समक्ष आया है।

हम सभी की खुशी का एक कारण यह भी है कि यह ग्रन्थ श्रुत–सवर्द्धन की राह का एक प्रशस्त–सोपान बन कर देश के समक्ष उपस्थित हुआ है।

खुशी का तीसरा कारण है कि यह पुस्तक बहुपठित एव बहुचर्चित वरिष्ठ साहित्यकार श्री सुरेश जैन सरल की तपी हुई लेखनी से नि सृत्त हुई है। उनकी दार्शनिकतापूर्ण लेखन–शैली के हम ही क्या देश के समस्त पाठकगण गुणग्राही हैं प्रशसक है।

अभी तक हमारा चेतन–आत्मा और पदार्थरूपी कल–पुर्जे (प्रेस आदि) विद्वानो–पडितो के विषय मे सामग्री प्रकाशित करते रहे हैं किन्तु अब हमे 'सतो' पर कार्य करने क, शुभावसर मिला है यह हमारी सस्था के लिए गौरव की बात है। यो यह प्रथम अवसर नही है परन्तु विशेष तो है ही।

मैंने सस्था का मन्तव्य पूर्व प्रकाशित ग्रन्थो के प्रकाशकीय मे सदा स्पष्ट किया है वह यहाँ भी कर रहा हूँ कि यह कार्य मात्र सुदर जिल्द से बाँधे गये पन्नो तक नही है। यह ऐसे महान तपसी का जीवन–वृत्त है जिसे पढकर अनेक श्रावक अपने जीवन–पथ मे दीप प्रज्ज्वलित कर सकेगे और मानवता के प्रहरी बनेगे। गुरुवर पू उपाध्यायश्री आज देश मे श्रुतपरम्परा के साधको के मध्य अत्यत ऊँचा स्थान बना चुके हैं। उनके कार्य धूप की तरह समग्र देश को प्रकाशित कर रहे हैं। ऐसे महान सत की जीवनी पर कलम चला कर आदरणीय सरलजी अपनी लेखनी का महत्व बढाने मे पूर्णरूपेण सफल रहे हैं। मुझे यह जानकर अपार हर्ष हुआ है कि सरलजी विभिन्न श्रीसघो के आठ आचार्यों–उपाध्याओ और मुनियो पर जीवन्त–कथाएँ लिख चुके है। मैं सस्था की ओर से उनका धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ।

सतशिरोमणि पूज्य उपाध्यायश्री के आशीष से देश मे अनेक निर्माण कार्य चल रहे हैं। मगर विशेष बात यह है कि वे मदिरो धर्मशालाओ पाठशालाओ छात्रावासो चिकित्सालयो मान–स्तम्भो के निर्माण के साथ–साथ श्रावको का भी उत्तम निर्माण कर रहे हैं कभी शिविरो के माध्यम से तो कभी देशना के माध्यम से। वे छात्रो पडितो विद्वानो डाक्टरो इजीनियरो जिलाधीशो शिक्षाविदो विधिविशेषज्ञो वैज्ञानिको आदि के शुष्क ससार मे धर्मरस का सुदर सचार कर रहे है। भाषाशास्त्रियो के साथ–साथ विभिन्न–भाषाओ को भी नया जीवन दे रहे हैं। महत्वपूर्ण ग्रन्थो का प्रकाशन इसकी फलश्रुति है जो देश के सामने आ चुकी है।

पूज्यश्री के आशीष से हमारे कार्य भी सरलतम होते जावे और हम धर्म, समाज और देश की सेवा व साहित्य एव सस्कृति की सुरक्षा करते चले, यही मनोभावना है।

कथा के अत मे, विभिन्न स्रोतो से प्राप्त कुछ दुर्लभ चित्र सकलित किये गये हैं, जिनमे पाठको को गुरुवर की छवियो का वैविध्य मिल सकेगा। चित्रखण्ड मे ही गुरुपरम्परा की चित्रावली और परिचय दिये गये हैं, जो इतिहास का मान तो बढाते ही हैं, धर्म तथा सस्कृति को भी प्रशस्त-पथ देते हैं ।

पुन. राष्ट्रसत प पू उपाध्यायश्री के चरणो मे नमन/ नमोस्तु करते हुए, प्रकाशक के रूप मे, मैं सुप्रसिद्ध कथाकार आदरणीय सुरेश जैन सरलजी का साधुवाद ज्ञापित करता हूँ।

—मत्री
आचार्य शान्तिसागर "छाणी" स्मृति ग्रन्थमाला
बुढाना, मुजफ्फरनगर

महावीर जयती, 15 अप्रैल, 2003

भूमिका

मेरे विचारों का रसायन नव कलशो मे है, जिन्हे विलोडने से यह भूमिका पाठको के समक्ष आ सकी है।

प्रथमः

पुस्तक के प्रारम्भिक पॉच–दस पन्ने पढ कर पलायन करने वाले पाठकों को भला कौन प्रज्ञावान कहेगा ? हॉ, पुस्तक की सामग्री/भाषा/विषय पलायन के लिए विवश कर दे तो पृथक बात है। इस पुस्तक की विषयवस्तु राष्ट्र के एक महान सत से सरोकार रखती है और भाषा शैली मुझसे। तब ? 'तब पढना ही पडेगा' – शायद आप कह पडे।

पुस्तक का महत्व इसलिये है कि इसमे परमपूज्य उपाध्यायशिरोमणि 108 श्री ज्ञानसागरजी मुनिमहाराज की जीवन–झॉकी है। सन् 1957 से 2000 तक की कथा । महाकथा । यह किसी महाकाव्य से अधिक पठनीय, प्रभावी और सार्थक सिद्ध होगी क्योकि यह 'यति–कथा' है, इसमे लेखक के साल–भर–लम्बे–श्रम से अधिक महत्वपूर्ण, सिद्ध–पुरुष की वह झॉई/छवि है, जो 43 वर्षों मे बनी है।

ऐसे लेखन मे लेखक श्रम करता ही कब है ? वह तो भक्ति मे डूबा रहता है और लेखनी चलती रहती है। लेखक की भक्ति पृथक–कोटि की होती है, स्याही की धार मे समायी हुई, जो पुस्तक मे प्रतीति देती है, दीखती नही। विश्व–प्रसिद्ध–ग्रन्थ 'रामायण' लिखते समय श्री तुलसीदासजी ने श्रम किया था या भक्ति ? वह तो नौ नारायण मे से एक, श्री रामचन्द्रजी ही जानते थे, जो तुलसीदास के मन–मनका में बसे हुए थे।

इधर, लेखक अपने स्वत्त्व को 'भक्तलेखक' की तरह सप्रयास प्रस्तुत कर रहा है, इतना भर न सोचा जावे, बल्कि उसके प्रयास (उपयोग) मे, भक्तिभाव मे, अवगाहन किया जावे, अनुशीलन किया जावे और एक महान कवि के ये शब्द याद रखे जावे–

सुमिरन ऐसा कीजिए, दूजा लखै न कोय।
होंठ न फरकत देखिए, प्रेम राखिए गोय।।

पूर्व मे सात अन्य–अन्य महान सतो की जीवनियॉ लिखने का सौभाग्य मुझे मिला है, परन्तु वह या यह कार्य किसी सन्त की अतिरिक्त–प्रसिद्ध, यशगान और छवि–निर्माण का हेतु न माना जावे। इसे एक धार्मिक–कार्य माना जावे जो हृदय के शान्त–कक्ष मे बैठ कर किया गया है, एक साहित्यकार की सामयिक–प्रक्रिया, जो उसे घर के एकान्त मे जीने की कला प्रदान करती है और अनेकान्त के मदिर के नव्य–द्वार खुलवाती है। ❑

द्वितीयः

कथा लिखते समय सम्पूर्ण ध्यान गुरुवर की चर्या पर रहा है, वे ही रहे हैं लेखनी के लक्ष्य। कथा के बहाने मंदिरों, मूर्तियो, धर्मशालाओ, भवनो, वनो–उपवनो ने बार–बार ध्यान खींचना चाहा कि उन पर भी

कलम चले, परन्तु वह कथा के मन्तव्य से स्वीकार नहीं था। स्वीकार यह था कि हर पृष्ठ पर मात्र गुरुवर की चर्चा हो/रहे।

ऐसी नायिकाहीन-कथाएँ लिखते समय विषयगत और भाषागत शुष्कता का अदेशा बना रहता है। दोनो का डर लेखक द्वारा ग्रहीत-शैली से कम हो जावे, यह लेखक का उत्तरदायित्व होता है। अपने उत्तरदायित्व के निर्वाह में मैं कितना सफलासफल हूँ, यह विद्वान-पाठक स्पष्ट करेगे, जिन्हे अच्छा पढने का विशद अनुभव है।

लेखन का श्रीहीन होना लेखक को श्रीवान नही बनाता। अत लेखक को-शब्द-शब्द-जागृत रहना पडता है। एक दिन मे एक पृष्ठ लिखा गया या आधा, इस पर चिन्ता नहीं करता, वह चिन्तन करता है कि जो लिखा गया है, वह किसी श्रमण या श्रमणी के श्रवण योग्य है या नही। लेखक यदि भीतर से श्रमणोपासक है तो उसकी शैली और भाषा हर श्रमण से सराहना प्राप्त करती है। यही है उसकी शैली की सफलता। जिसे श्रमण सराहते-स्वीकारते हैं, उसे श्रावकरत्न भी सम्मान देते हैं। ❑

तृतीयः

वह क्या है जिसके 'निधन' से आत्मा 'निधान' बन जाती है ? वह मानवीय दोषो मे से एक है- क्रूरता, जिसमे सवेदनहीनता, अ-दया, कठोरता और कुटिलताओ की सेना निवास करती है। उस (क्रूरता) के निधन से आत्मा 'दयानिधान' बन जाती है। अपनी मूल और चोखी शक्ल मे आ जाती है।

ऐसी स्थिति मे हमे, पाठकीय-क्रूरता समाप्त करनी चाहिए, वह है कुछ भी न पढने का पनपता औगुण। हम कुछ पढना ही नहीं चाहते, यह कैसी विडम्बना है ? जब तक अच्छा नही पढेगे, तब तक अच्छे विचार नही बनेगे, फलत आचरण (सस्कार) अच्छे नही बन पायेगे। अत यह कार्य घर से शुरु करना होगा। अपनी प्रिय सतति को जिस तरह हम टी वी ,कैमरा, शतरज, सॉप-सीढी, केरमबोर्ड, प्लेइगकार्ड खरीदकर देते हैं, उसी तरह वर्ष मे दो बार उनके लिए उत्तम पुस्तके भी खरीदे। दो बार न क्रय कर सके तो एक बार खरीदे, नियम चल सकता है-प्रतिवर्ष जन्मदिवस पर विभिन्न भेटो के मध्य पुस्तको को भी स्थान दे। अनुभव करेगे कि लेने और देने वाले, दोनो, अतिरिक्त हर्ष जाहिर करेगे।

जो माता-पिता या अग्रज आदि इतना नही कर पाते वे किस मुँह से अपनी नूतन पीढी को योग्य कहेगे ? नूतन-पीढी किस आधार पर उन्हे अपना 'निर्माता' कहेगी ? बच्चे का जन्म होना एक घटना मात्र है, किन्तु जन्मे हुए शिशु को आदर्श-सस्कार देना महान-कार्य है। धन्य हैं वे लोग जिन्होने महात्मा गॉधी और श्री गणेश प्रसाद जी वर्णी आदि महापुरुषो की जीवनी पढी है। आप तो उनसे अधिक धन्य हैं क्योकि आप महान-दिगम्बरसत का जीवनवृत पढ़ रहे हैं। त्याग, परोपकार और अपरिगृह से सजे आदर्श-जीवन को आत्मसात कर रहे हैं। ❑

चतुर्थः

क्या पू उपाध्यायश्री ने समयसार के साथ-साथ रामायण भी पढी है ? शायद पढी हो। क्योंकि वे अपनी चर्या मे उसके सत्य लेकर चलते मिले हैं। एक -'वे अहकारशून्य किन्तु ज्ञानसम्पन्न हैं, वे सदा अपने गुणो को छुपाये रहते हैं, क्या वे जानते हैं कि बिगड़ी-धुन मे रहने से भलाई है।' दो-'गुरुवर सर्वहारा वर्ग

का सदा ध्यान रखते हैं, वे ईश्वर का रहस्य समझ चुके हैं कि भक्तो के मध्य जो दरिद्री है, उसकी चिन्ता परमेश्वर को अधिक रहती है।' (यह कथन भक्ति की दृष्टि से किया गया है, सिद्धान्त की दृष्टि से नहीं) तीन–'सम्पूर्ण देश के जैनाजैन–विद्वान उनके गुणों की प्रशसा करते हैं, मगर वे सदा चुप रहते हैं, अपने गुणों का जैसे स्मरण ही न हो उन्हे। वे इस उक्ति को हृदयगम कर चुके हैं– जो साधु अपने उत्तम गुणो का बखान अपने ही श्रीमुख से करता है, उसकी तपस्या नष्ट हो जाती है।' चार–गुरुवर किसी दबग–व्यक्तित्व, डेशिग–पर्सनालिटी को देखकर विचलित नहीं होते। वे यहाँ भी एक नीति–कथन के समानान्तर हैं–'सुंदरभेषधारी को देखकर मूर्ख धोखा खा जाते हैं, चतुर नही।'

जो हो, चार बिन्दुओ पर सोचने से आधार मिल गया कि गुरुवर पूज्य ज्ञानसागरजी उस कोटि के निष्पृह–सत है जिसकी परिभाषा जैनाचार्यों के अतिरिक्त, महान (अजैन–साधु) कबीरदास जी ने भी की है–

"साधु ऐसा चाहिए, जैसा सूप सुभाय।
सार–सार को गहि रहै, थोथा देइ उडाय।।" ❑

पंचमः

मैंने गुरुवर के अनेक रूप देखे हैं। सबसे बडा है– सराकोद्धारक स्वरूप। जिसके माध्यम से उन्होने इतना विशाल कार्य कर दिया है, जितना देश मे अन्य सत नही कर पाये हैं। पत्थरो को मूर्ति का रूप देने मे तो हर दिशा मे लोग लगे हैं, किन्तु आदमी मे आदमियत का 'प्रतिष्ठा–समारोह' केवल पूज्य ज्ञानसागरजी कर रहे हैं। पश्चिम बगाल, बिहार, झारखण्ड और उडीसा प्रान्त की सीमा पर बसे हुए, वे सैकड़ो ग्राम देश के माथे पर चदन की तरह चमकने लग गये हैं, जहाँ वर्षों से सराक–भाई रहते आये हैं, और जो, पूज्य गुरुवर से प्रभावित होकर जैनत्व की मूलधारा की ओर अग्रसर हो पड़े हैं। वहाँ, जब गुरुवर से प्रेरणा लेकर कोई आदमी मास–मदिरा–मधु का सेवन छोड, त्याग–भाव धारण करता है तो एक नये मदिर के निर्माण का पुण्य गॉव मे बरसने लगता है और जब कोई व्यक्ति उनके चरणो में उपस्थित हो किसी जैनत्व–प्रधान नियम को धारण करता है, तो एक प्राचीन मदिर के जीर्णोद्धार का पुण्य सचित हो जाता है– वहाँ, उस नगर में।

सुने, सीमेन्ट, लोहा, पत्थर के निर्माण तो व्यसनी–आदमी भी करने मे सफलता प्राप्त कर लेता है, किन्तु सु–सस्कारो के निर्माण मे केवल सतजन ही हेतु बनते हैं। सेतु बनते हैं। कहे पू. ज्ञानसागरजी महाराज ऐसे सत हैं जो सासारिक/भौतिक–निर्माणो की भीड मे अभी भी, दिगम्बरत्व और आकिन्चन्य की याद ताजा कराकर चल रहे हैं और केवल वे–वे कार्य कर रहे हैं, जिनसे एक साधु, 'श्रेष्ठ–साधु' बनता है, ठेकेदार नहीं।

शास्त्र–कहते हैं– 'जो शुद्ध–चित्त और सुबुद्ध हो, वह प्यारा लगता है।' शायद इसीलिये परमपूज्य उपाध्याय श्री ज्ञानसागरजी, दो–तीन प्रान्तो को नहीं, देश के समस्त प्रदेशों को प्यारे लगते हैं। ❑

जब मैं यह 'जीवनी' लिख रहा था, उस अवधि मे, गुरुवर मुझे 'उपाध्याय' के श्रेष्ठ रूप मे ही उपलब्ध हुए हैं, कल यदि वे आचार्य–पद का आरोहण करेगे, तब ? तब इस पोथी का यह–संस्करण आमूलचूल सुधार चाहेगा । वैसा किया (भी) जा सकेगा । अस्तु। ❑

षष्टम्:

बोली और भाषा मे अतर होता है। बोली सरल हो सकती, भाषा नही। किन्तु ऐसी कथाएँ लिखते समय भाषा के सारल्य पर ध्यान रखा जाना जरूरी होता है। उन विद्वानो पर खुन्नस हो आना गलत नहीं है, जो सौष्ठव के चक्कर मे 'कथा' मे 'निबन्धो' की भाषा तलाशते हैं। बनावटी शिल्प से मुझे लगाव नही है, मै आत्मा से उपजी स्वाभाविक भाषा–बोली के सकेत पर लेखनी चलाता हूँ।

कृत्रिम सौष्ठव का उदाहरण है– 'औषधि का निमान देखकर उसे निछान नही कहा जा सकता, उसकी निर्माणविधि समझ लेने के बाद निपान पर विचार किया जाता है।'

इस कथन मे तीन थोपे हुए शब्द पाठको को भ्रम मे तो डाल ही देते हैं, मानसिक–पीडा भी बढाते है। निमान, निछान और निपान जैसे शब्द साहित्यिक–शोभा बढाने मे सक्षम हो या नही, परन्तु उनकी उपस्थिति ने (यहाँ) पाठक की परेशानी बढा दी है। निमान माने मूल्य, निछान माने बिना मिलावट का और निपान माने पीने की क्रिया। अब यदि उक्त कथन कथा मे लाया जाना होता तो (मेरी) भाषा इस तरह रहती– 'अहोश्रावक ! औषधि का मूल्य पढ कर उसे शुद्धाशुद्ध न माने, उसे बनाने की प्रक्रिया पर ध्यान दे, तब पीने योग्य घोषित करे।'

तात्पर्य यह कि सरलता और पठनीयता का रग जीवित रखना पडता है मन मे, तब लिखी जाती है महाकथा। यह भी सत्य है कि कथा–शिल्प मे सरलता के अलावा, लेखक की शैली और मौलिकता पाठको को अधिक प्रेरक सिद्ध होती है, जो उन्हे लगातार पढने का आमत्रण देती है तथा वे पढते हुए पृष्ठ दर पृष्ठ रस प्राप्त करते रहते है।

कहा गया है कि श्रेष्ठ 'कथा' मे सदाचार और मानवता को पुष्ट करने वाले सकेत या निर्देश रहते है। 'कथा' का सदेश वैराग्यात्मक या वैराग्यवर्धक होता है। वह वैराग्य को श्रेष्ठ उपलब्धि घोषित करती है। उसमे पदार्थ, सत्य और जीवादि तत्वो का मननीय विवेचन होता है। कथा का सार व्यक्तिपूजा से परे, भगवत–पूजा, ब्रह्मचर्य, तप और आकिन्चन्य गुणधर्मो पर आधारित हो। उसमे व्यसन–त्याग और निर्दोष–आहार की उद्‌घोषणाये गुम्फित हो। उसका समूचा स्वरूप जनसामान्य के चरित्र–निर्माण मे सहायक हो।

प्रस्तुत कथा मे यह सब है, नही है कुछ तो नायिका। इसमे नायिका का साकार/सशरीर वर्णन कही नही है, पर कथान्त मे यह स्पष्ट अवश्य होता है कि कथा का मूलनायक प्रारम्भ से अन्त तक, नायिका की खोज मे है, उसकी वह खोज निरतर है, वह नायिका के पथ पर पहुँच चुका है, उसे पथ मिल चुका है, अब केवल चलते ही रहना है। 'मुक्तिरमा' है इस कथा की नायिका। ❑

सप्तम्:

गुरुवर परमपूज्य उपाध्यायश्री ज्ञानसागरजी के भक्त आठो दिशाओ मे निवास करते हैं, विराजते हैं, सभी हिन्दी–भाषी हो, यह जरुरी नहीं है। मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश, राजस्थान, हरियाणा, बिहार तक तो ठीक है, किन्तु पश्चिम बगाल, झारखण्ड, उडीसा, गुजरात और दक्षिण के कतिपय प्रान्तो के भक्त क्लिष्ट–हिन्दी–भाषा नही स्वीकार/समझ पाते। अत ऐसे पाठको का ध्यान रखकर अत्यत सरल/बोधगम्य शैली मे, यह, लेखन–कार्य किया गया है ताकि वे इसका तलस्पर्शी आनन्द ले सके, इससे वे 'वह' प्राप्त कर सके, जो गुरुवर से चाहते हैं।

प्रस्तुत कथा को विद्वानगण सन् 1957 से सन् 2000 तक का लेखा–जोखा कह कर काम चलाना चाहेगे, पर यह मात्र लेखा–जोखा नहीं है। एक भव्य–आत्मा के उद्‌भव, विकास और लोक–स्थापना की वास्तविक प्रतीति देने वाला कथानक है, जो न तो उपन्यास है, न ही कहानी, न इतिहास, बस एक दिगम्बर–विभूति की गौरवगाथा है। औचित्यपूर्ण कथन है, जो निशीथ का दीपक नही है कि किसी ने देखा, किसी ने नही, यह तो लोकाकाश का सविता है, जिसकी हर तेजस्वी किरण के साथ पूज्य उपाध्यायश्री की प्रभावनाकारी झलकियाँ/विजन मुस्कुराती चली आती हैं मानस–पटल तक। इसमे मिथ्यालाप नहीं है, यथार्थ वार्तालाप है जो शतप्रतिशत अध्यात्म के धरातल पर है। इसे पढ कर कोई व्यक्ति/नागरिक/श्रावक सत बने या न बने, किन्तु इसके गम्भीर अध्ययन से श्रावक के अतर–प्रदेश मे छुपा श्रावकत्व अवश्य अगडाई लेकर सक्रिय हो जावेगा–अच्छा करने, अच्छा बोलने, अच्छा सुनने और अच्छा सोचते रहने के लिए। आदमी मे आदमियत का प्रादुर्भाव हो पड़ेगा। न हो, तो लेखक या उसकी विषयवस्तु का दोष नही, क्योंकि उर्वराभूमि मे भी हर बीज तो नही जमता, अच्छे बीज ही अकुरण प्राप्त कर पाते हैं। अस्तु। ❑

अष्ठम्:

मै आभार ज्ञापित करना चाहता हूँ, किन्तु मेरे पास कोई नये शब्द नही हैं, जो हैं वे शास्त्रो की तरह प्राचीन हैं– 'हे गुरुवर! आपने आशीष दिया, इसलिये आपका आभारी हूँ।'

सच, उनके आभार–ज्ञापन या गुणगान करने के लिए मेरे पास कुछ नया नही है, वे ही भाव हैं, वे ही शब्द हैं, जो भक्तो मे दीर्घ–काल से पाये जाते रहे हैं, फिर भी एक 'सही–सत' की स्तुति मे जब उनका उपयोग किया जाता है तो शब्दो–वाक्यो मे नही, भक्तो मे नवीनता/ताजगी का सचार होने लग जाता है। जैसे इस शरीर को स्नान कराने के पश्चात नित्य कुछ शुचिता का अनुभव होता है, जबकि तन–बर्तन–पानी–पनघट आदि वही (पुराने) ही रहते हैं। अत मै कहूँ कि गुरुवर 'प्रवरसत' हैं, अनियत–विहारी हैं, तो उन्हे कोई अतर नही पड़ता, अतर मेरी भावनाओ को अनुभूत होता है। वे जगतगुरु हैं, मनीषी–विचारक हैं, प्रवचनकला मर्मज्ञ हैं। वे–आत्मसाधना मे लीन, लोक–कल्याण के उन्नायक, सर्वश्रेष्ठ लोकनायक हैं। तप साधक, गुरु–आराधक, महान–धर्मोपदेशक हैं। साक्षात प्रज्ञापुन्ज विद्वतवत्सल, विद्वतसगोष्ठियो के अधिष्ठाता, विलुप्त–साहित्यान्वेषी और आत्मोपयोगी साहित्य के सर्जक है। मै कहता हूँ–वे प्रवचन सम्राट, वाक्‌पटु, हित–मित–प्रियभाषी, द्वादशागवाणी के तलस्पर्शी अध्येता हैं। वे सराकोद्धारक, सराक को श्रावक का गौरव प्रदान करने वाले प्रौषध–पथ के पथिक, दीनदयालु, शाकाहार–सूरि, आदर्श–ग्रहस्थ–संहिता के प्रवक्ता है। वे पचकल्याणक–प्रतिष्ठा–समारोहो को विकृतियो के भंवरजाल से बचाने वाले नाविक, युवा–पीढी के दीपस्तम्भ, ज्ञानगुणनिधि के आगार, वैयक्तिक–पारिवारिक–सामाजिक–दैशिक समस्याओ के सन्मार्ग–दिवाकर हैं, आत्म–प्रहरी हैं, धर्म–प्रहरी हैं, राष्ट्र–प्रहरी हैं। तब भी गुरुवर को कुछ फर्क नहीं पडता, वे चिर–दिगम्बरत्व के स्वामी हैं, ऐसे शब्दो के मोहजाल से ऊपर, एक मुनि हैं; सत हैं, ऋषि हैं, यति है, बस। मैं उन पूज्य उपाध्यायश्री ज्ञानसागरजी का, हाँ गुणाकर–रत्नाकर का, आभारी हूँ।

आभार ज्ञापित करता हूँ–परम–उपकारी–संत पूज्य सम्यक्त्वसागरजी क्षुल्लक महाराज का; जिन्होंने मौन रखते हुए भी, मुझे स्पष्ट आशीष प्रदान किया और दिया लिखने का आत्मबल।

आभारी हूँ ब्राह्मी बहिन आदरणीय ब्र अनीता दीदी का, जिन्होने गुरुवर की सम्पूर्ण–अवस्थाओ की सिलसिलेवार जानकारी प्रदान कर, मेरी मुश्किलो को न्यून कर दिया, जिनके वात्सल्य और वैदुष्य ने मुझे ऊर्जा दी लेखन की। कथा के तन्तु उन्होने दिये, ताना–बाना मैंने बुना हैं।

आभारी हूँ ब्राह्मी बहिन ब्र मजुला दीदी का जिनके प्रमाणित–संकेतो ने मेरी लेखनी की गति धीमी नही होने दी, नगर निवाई के श्रावको और समाजसेवियो का जिनके मध्य 16 अक्टूबर 2000 को उपस्थित होकर मैंने लेखन का मन बनाया था और उन्होने मन को बेमन नही होने दिया, आभारी हूँ भाई श्री कमल हाथीशाह का जिन्होंने सम्पर्क साधन मे अगुवाई की थी।

आभार के इस क्रम मे श्राविकारत्न–तुल्य श्रीमति पुष्पा जैन 'सरल' का आभारी हूँ जिन्होने सदा मेरे लेखन के लिए अनुकूल–वातावरण बनाया, लेखन की प्रेरणा दी और घर–गृहस्थी तथा काया की परेशानियो से घिरी रहने के बाद भी, वे पन्ने पढ कर सुनाये, जिन्हे मैं लिखकर रखता जाता था। इतना ही नही, मुझे लेखन के बाद सशोधन की प्रेरणा दी तथा पाडुलिपि के प्रथम से अतिम पृष्ठ तक, मेरे समक्ष रह कर एक शिष्या की तरह टहल करती रहीं।

आभार–ज्ञापन का क्रम कहाँ से प्रारम्भ किया जावे और कहाँ समाप्त, नहीं जानता, किन्तु पुस्तक पूर्ण करते हुए मेरे श्रेष्ठ गोत्रधारक पिता स्व श्री फदालीलाल जैन एव माता स्व श्रीमती फूलमती बाई जैन का हृदय से स्मरण–वदन करता हूँ, आभार मानता हूँ, कहीं अदृश्य मे जिनकी ममतामयि आशीशछाया मेरे सिर पर बनी रहती है। ❑

नवम्:

सत–कथाएँ/धर्म–कथाएँ लिखते हुए अब जब दो दशक पूर्ण हो रहे है, तब एक नया अनुभव हुआ है– पहले, काफी पहले लगता था कि कथापुस्तक प्रकाशनोपरान्त कोई व्यक्ति/सस्था/सरकार किसी पुरस्कार से सम्मानित करेगे। आठ कथा–ग्रन्थ पूर्ण करते हुए, मुझे कतिपय गुणीजनो ने सतो की आशीषछाया के तले, जब–तब पुरस्कृत भी किया है। एक हजार की राशि से शुरु होकर इकत्तीस हजार तक के पुरस्कार और अभिनन्दनपत्र स्वीकार कर चुके हैं ये हाथ अनेक बार, अब ध्यान अन्य पुरस्कार की ओर हो गया है। मन प्रार्थना करता रहता है कि अब कुछ मिले तो हे प्रभु, 'पडितमरण' प्राप्त हो।

इससे बडा अन्य पुरस्कार नहीं मानता हूँ। सब लघु हैं, चाहे वे राष्ट्रीय हो या अतर्राष्ट्रीय। मेरी समाधि उन सतो, जिन पर जीवन–गाथाएँ लिख चुका हूँ, मे से किसी एक के दरबार मे हो/निर्यापकत्व कर्ता, निर्यापकाचार्य भी वे हो।

एक अन्य मरण–समाधि भी मेरे अतरकक्ष मे है, उसका दृश्य आप भी समझे– 'सरलजी सरलकुटी के छोटे से कक्ष मे बैठे हैं, उनकी टेबिल पर सतो की कथा–पुस्तके रखी हैं। वे 'सत चरित' का अवगाहन कर रहे है, सत उनके 'मन–वचन–प्राण–लेखनी' मे समाये हुए हैं। सरलजी सतो मे ध्यानलीन हैं, सत चरित का कोई प्रेरक दृश्य निहार रहे हैं, तभी उन्हे एक हिचकी आयी, वे चेतनाहीन हो गये। पारिवारिकजन, जो उस समय घर मे उपस्थित हैं, दौड कर आते हैं। 'सरलजी' को सम्भालते हैं। मगर वे तो ठडे हो गये हैं।'

इससे अधिक समीचीन समाधि मुझे अन्य नही दीखती। क्योकि उक्त तरह की समाधि मे एक या दो नही, आठ सतो की छवियॉ एक साथ निर्यापकत्त्व कर रही होगी और सरलजी देह की कारा तोड़ रहे होगे। ❑

जबलपुर
क्षमावाणी 3 सितम्बर 2003
(क्षमाधर्म के अधिनायक भगवान महावीर–
स्वामी का 2600वॉ जन्मकल्याणक महोत्सव वर्ष)

सुरेश जैन सरल

खण्ड-विवरण

राष्ट्र-संत

सराकोद्धारक

परमपूज्य उपाध्याय-शिरोमणि

मुनि श्री 108 ज्ञानसागरजी महाराज

❖

कथा-प्रारम्भ

कथा लिखने मे तो विलम्ब लगता ही है, उसे शुरु करने मे और अधिक लगता है। यह कथा तो सन् 1995 मे लिखी जानी थी, किन्तु सब कुछ समय-आधीन है। काललब्धि-प्रणीत। अतः 'विलम्ब' को क्या दोष ? फिर जिन पर लिखी जानी थी उनके आशीष के बगैर भी तो कुछ नहीं लिखा जा सकता। क्या वह सहज ही मिल जाता है? उसकी भी काललब्धि तय होती है। 'कब गुरुवर दर्श देगे' का स्वर (राग) मन मे बजता भले रहे, पर दर्श तो तभी होते हैं, जब भक्त उनके चरणो तक जाये या वे भक्त के गाव तक।

जो हो, वह क्षण आया 15 अक्टूबर 2000 को जब यह लेखक, सपत्नीक, निवाई नगर जा पहुँचा। राजस्थान प्रान्त की परिवहन-सेवा की एक बस ने रात्रि 11 30 बजे मुझे और मेरी धर्मपत्नी (श्रीमती पुष्पा जैन सरल) को निवाई के बस स्टैंड पर उतारा और फुर्ती से आगे बढ गई। हम लोग यहाँ-वहाँ देखने लगे कि किसी से पूछे-गुरुवर कहा हैं? तभी एक वृद्ध कुली स्वेच्छा से पास आया, पूछने लगा-कहाँ जाओगे? गुरुजी के पास?

उसकी आवाज ने स्पष्ट कर दिया कि वह बाहर से आनेवाले 'श्रावको' को शीघ्र पहिचान लेता है। बातो मे अपनत्व था। जैसे पूर्व-परिचित हो हम लोग।

मैंने उससे पूछा-पू उपाध्याय जी कहाँ रुके हैं?

वह उत्तर देने मे कुछ सकपकाया सा, दृढता से न बोल सका, मनधरयाते हुए बोला-'धर्मशाला मे मिल जायेगे।' मैने पूछा-रिक्शा-ताँगा से चले या आप ले चलेगे?

वह- मै ले चलूँगा।

मैं- कितनी दूर है?

वह- आधा कि मी से कम। पैदल मे और पास है।

मैंने कहा, चलो। उठाओ समान। उसने मेरी भारी अटैची और बैग लिया सिर पर, फिर बोला चलो।

पचास कदम भी न चल पाये होगे कि एक टैक्सी (जीप) आकर स्वत रुकी। उसके चालक ने कुली से कुछ बात की। कुली ने मुझसे कहा-साहबजी, टैक्सी करलो। कही महाराज जी धर्मशाला-मदिर मे नहीं रुके होगे, तो नसिया जी चलना पडेगा, वह कुछ दूर है।

मैने कुछ जवाब-सवाल चालक से किये और जीप पर बैठ गया। कुली ने सामान वाहन पर रख दिया और खुद भी उसी पर बैठ गया। मैं पूछता हूँ- 'आप क्यो बैठते हैं, हम लोग इस (चालक) के साथ चले जायेगे।'

वह सक्षिप्त मे कहता है-वहाँ मेरी जरूरत पडेगी। चालक झट से समर्थन करता है- हाँ, बैठ जाने दो साहब। मैं चुप रहा, मुझे लगा-कुली का घर उसी तरफ होगा।

जीप फर्राटे भरती और विविध कुलियो (तगगलियों) से घूमती हुई धर्मशाला के पास जाकर रुकी। रात के 12 बज चुके थे। कुली ने मैनेजर को जगाया। उससे ज्ञात हुआ कि महाराज तो नसियाजी में हैं।

मैं चालक और कुली पर झल्लाता हूँ, आप लोगों को यह ही नहीं मालूम कि गुरुवर का रात्रिविश्राम कहाँ होता है । वे थोडा शर्माये, फिर बोले-यहीं रुक जाइए, सुबह उनके दर्शन कर लेना, वहाँ जाकर।

क्षण भर को मैं परेशान सा हो गया, "जैसे कोई छात्र स्कूल से घर लौटे और घर पर माँ न मिले।" अन्यमनस्कता सिर पर चढे, उसके पहले मैं चीख पड़ता हूँ-'यहाँ नहीं रुकना, वही ले चलो।' चालक वाहन

घुमाता है, नसियाजी चल देता है। मैं पत्नी की ओर मुँह कर बडबडाता हूँ–बतलाओ, इन्हे यही नहीं मालूम की महाराज कहॉ हैं? पत्नी मेरा कष्ट समझ रही थी। अत समझाकर बोली–'अरे, ये जैन तो हैं नहीं, जो हर खबर रखे।'

तब तक चालक बोला–'महाराज का चातुर्मास चल रहा है। दिन मे कभी नसियाजी, कभी मदिरजी मे कार्यक्रम चलते है, पर रात मे नसिया ही रुकते हैं।' मैं जोर से कह पडता हूँ–'तो पहले क्यो नही बतलाया।' वह चुप रहा।

थोडी देर मे नसियाजी के मुख्य द्वार (गेट) के समक्ष पहुँच गये हम लोग। रात्रि के 12 30 हो चुके थे। पूरे नगर मे सोता पड चुका था। वहॉ भी सब सो रहे थे, किन्तु गेट के भीतर, बाजू मे एक कमरे के दरवाजे खुले थे, वहॉ चौकीदारी कर रहा युवक बैठा था। उसे पुकारा तो वह गेट के पास आया। उससे पूछा–महाराजश्री यहॉ ही हैं? उसने 'हॉ' कहते हुए सिर हिलाया। मैंने कहा–तब फिर गेट खोलिए, हम लोग यही रुकेगे।

उसने गेट खोला।

मैं मुख्य गेट से उसके साथ भीतर की ओर बढता हूँ। करीब सौ कदम रेत मे चलकर विशाल सभा भवन मे प्रवेश करता हूँ। वहॉ कुछ लोग सो रहे थे। मैं उन्हे उठाता हूँ। अपना परिचय देता हूँ, कुछ ऊचे स्वर मे।

शायद आवाज हवा मे तैरकर । 'माता' की श्रवणेन्द्रि तक पहुँच गई। बडे हाल के भीतर निर्मित एक लघुकक्ष के किवाड खुलते है, उसमे से एक दुबला–पतला आदमी निकल कर मेरे पास आता है। हाथ मिलाने की तर्ज पर अपने दोनो हाथो से मेरे हाथ पकड लेता है। उसके स्पर्श मे आत्मीयता है। मेरा मन कह देता है–'यह यहॉ का मैनेजर या मुनीम नही है तो फिर कौन है?'

वह धीमी और मिष्ठ आवाज मे पूछता है–'सामान कहॉ है।'

–गाडी मे।

वह गाडी की ओर दौडता है। मै उसके पीछे। कुली के सहयोग से वह सामान निकालता है, हाल मे ले आता है। बस स्टैंड से जो कुली वाहन मे आया था, उसकी उपयोगिता यहॉ थी, मुझे समझ मे आ गया। मै कुली को पृथक और चालक को पृथक भुगतान कर विदा करता हूँ। मगर मेरा सोच खत्म नही होता कि यह व्यक्ति कौन है ? वह मुझे पहले एक कक्ष मे ले जाता है, उसमे बाथरूम आदि नही हैं। अत मैं कहता हूँ– यहॉ तो परेशानी हो जायेगी।

वह मेरा नाम आदि जानकर अपने कक्ष मे वापिस जाता है, फिर लम्बी–लम्बी डगो से लौटता है, कहता है–यही पास मे व्यवस्था हो जायेगी, मेरे साथ चलिए।

वह अटैची लेकर आगे हो जाता है। मैं और पुष्पाजी पीछे–पीछे। करीब दो सौ फीट चल लेने के बाद, मैं उससे पूछता हूँ–आपका क्या नाम है ?

–जी, राधेश्याम।

–क्या यहॉ काम करते हो ?

–नही, सेवा।

—क्या मतलब ?

—मेरी दुकान है। यहाँ तो सेवा—भक्ति के लिये रुक जाता हूँ।

राधेश्याम जी ने मेरी आँखे खोल दीं। सेवा—भक्तिवाले जन, बिना पगार के कैसे उपलब्ध हो जाते हैं ? वे बिना कुछ लिये, इतना मधुर कैसे बोल लेते हैं ? आधी रात मे—कॉधे पर अटैची रखकर कैसे चल देते हैं ?

तब तक एक सुदर—पक्का मकान आ जाता है, राधेश्याम जी रुकते हैं। कहते हैं—यह मेरा मकान है। यहाँ सब व्यवस्था है। आपको कोई परेशानी नही होगी।

वे हम दोनो को सीढियो से ऊपर के कक्ष मे ले जाते हैं। वहाँ उनकी वृद्धमाता और किशोरी पुत्री सोई हुई थी, उन्हे जगा देते है, वे अपने बिस्तर उठाकर बाजू वाले कमरे मे चली जाती हैं। बिल्कुल शांत। कुछ भी नही कहती।

रात के डेढ बज चुके है। राधेश्याम जी की धर्मपत्नी भी आ जाती है। दोनो प्राणी मिलकर, भारी श्रद्धा से हम दोनो के लिए बिस्तर लगाते है। भाभी जी चाय—पानी के लिए अनुरोध करती हैं। तब तक राधेश्याम जी नसिया के हाल से हमारा बैग ले आते हैं। उनका श्रम देख मैं अपने ऊपर लज्जित होता हूँ।

वे दोनो हमे लिटा कर चले जाते हैं।

हम दोनो सो जाते हैं। ❑

सुबह साढे पॉच पर हम लोग उठ जाते है। दर्शनो के लिए तैयार होने लगते हैं। भाभी जी गर्म पानी की व्यवस्था करती है। नहाना धोना हो जाता है।

अटैची से पुज और श्रीफल निकाल कर पुष्पा जी तैयारी की सूचना देती हैं। मैं भी तैयार। तब तक राधेश्याम जी भी आ जाते है। पॉच मिनट तक उनसे चर्चा होती है। उनका अलबेला परिचय समक्ष आ जाता है। उनकी गुरुभक्ति से मै चकित हो जाता हूँ। वे एक सामान्य से ऊपर 'श्रावक' हैं। मुख्य बाजार मे उनकी दुकान है, पुत्र सम्भालते हैं। जब से गुरुवर निवाई पधारे हैं, वे रात्रि विश्राम उन्ही के समीप करते हैं। रात मे सतो की सेवा, टहल, देखरेख करते हुए वे जो पुण्य प्राप्त कर रहे हैं, वह अतुलनीय है। सुबह गुरुवर के साथ शौच—मैदान जाकर, नियम से एक और महान—सेवा कर लेते हैं। पूर्णरूपेण समर्पित व्यक्तित्व। दिन या रात मे बाहर से आनेवाले विद्वानो को अपने निवास मे आश्रय देकर गुरुभक्तो की समस्याये समाप्त कर देते है। विनयशील इतने कि अतिथि की अटैची उठाकर चलने मे नही झिझकते। सेवाभावी इतने कि अर्धनिशा मे नसियाजी से स्व—निवास तक लगेज उठा कर दो फेरा लगा देते हैं। उनका पूरा नाम श्री राधेश्याम जी मित्तल है। निवाई के सुप्रसिद्ध मित्तल (जैन) खानदानो मे अग्रणी, मैं उनकी कर्त्तव्यपरायणता और परदुखकातरता से अत्यत प्रभावित होता हूँ। जब गुरुवर के 'एक भक्त' मे इतनी महानताए विद्यमान हैं, तो गुरुवर मे कितनी न होगी ! जब भक्त इतना परोपकारी है तो गुरुवर कितने न होंगे ! मैं भक्त की ऋजुता, सौम्यता, परोपकारभाव, देखता हुआ गुरुवर के व्यक्तित्व को कूतने का मन बना रहा था। ❑

भाभीजी के साथ हम दोनो नसियाजी गये। प्रमुख हाल में एक तख्त पर गुरुवर विराजमान थे, सामने कुछ श्रावक बैठे चर्चा मे लीन थे। हम दोनो उनके दर्शन करते है। हमारे हाथो के श्रीफल उनके चरणों मे शोभा पाने लगते हैं।

दर्शनोपरान्त मैं वही तख्त के समीप बैठ जाता हूँ। तब तक गुरुवर के अधरो से मिश्रीमिश्रित ध्वनि निकल पडती है–'सरलजी रात मे परेशानी हुई होगी? दिन मे न होती?'

मेरे हाथ जुडे रह गये, मैं उन्हे निहारता रह गया, सोचने लगा कि पहली बार आया हूँ। पहली बार दर्शन कर रहा हूँ, पर वे तो ऐसे बोल रहे हैं, जैसे पूर्वभव से परिचित हैं। उनके औदार्य का प्रथम अनुभव हो गया। अभी–अभी जैसे मुझे माँ के दर्शन हो गये हो।

मैंने ऑखो से भरपूर 'दर्शनपान' किया। एक टक उन्हे देखता रहा, फिर बोला–गाडियो का ऐसा कुछ क्रम बना कि रात हो गई। मेरा वाक्य सुन कर मुस्काये। उनकी छवि से अमृत का अदृश्य सिचन हो रहा था मेरे ऊपर।

कुछ समय तक मौन छाया रहा। वे भी चुप, मै भी चुप। मैं उन्हे देख रहा था, वे बाजोट पर रखी कोई पुस्तक निहार रहे थे, कहे थी दृष्टि नासा पर। भक्त और भगवान के बीच मौन रहते हुए भी वार्ता हो जावे तो उसे (उस क्षण को) क्या कहेगे ? उस समय वैसा ही हो रहा था। हम मौन थे, वे मौन थे और वार्ता चल रही थी। मन ही मन।

फिर वे बोले। जैसे जगाया हो मुझे। उन्होने कहा–'यहाँ नसियाजी मे मूलनायक भगवान श्री शान्तिनाथ जी है, जाइए वदना कर लीजिए।' मैं उनके शब्दो से जागा, उन्हे पुन नमोस्तु किया और सपत्नीक दर्शनो को नसियाजी के गर्भ गृह की ओर चला गया। ❑

वदना कर लौटा तो एक अन्य कक्ष मे पू मुनिवर वैराग्यसागर जी के दर्शन किये, उनका मौन था। मगर वे मेरे विषय मे जानकारी ले चुके थे। अत हमने जब द्रव्य चढाकर नमोस्तु किया तो उन्होने मुस्कानो के माध्यम से कोई अदृश्य–तत्व हमे दिया। कुछ समय वहाँ बैठा फिर पुन गुरुवर की ओर। ❑

प्रवचन का समय हो गया था। हमे वह लाभ भी मिला। पहली बार उनके प्रवचन सुने। हृदयात्म गद्‌गद्। वे बोल रहे थे, हम सुन रहे थे। हमारे साथ पूरा सभाकक्ष सुन रहा था। निवाई के श्रावको से सभाकक्ष भर गया था। ❑

प्रवचनो के मध्य गुरुवर ने सार्वजनिक रूप से मेरा परिचय श्रोताओ को दिया। गुरुमुख से परिचय सुन आत्मा सुखो का अवगाहन करने लगी। मैं उन्हे देख रहा था, श्रोता मुझे। तब तक भारी शालीनता से उन्होने मुझे आदेश दिया कि दो शब्द बोलू।

कुछ ही मिनटो तक मैं माइक पर बोला। ❑

प्रात कालीन–सभा समाप्ति के समय, आदर की पात्र ब्राह्मी अनीताजी एव ब्राह्मी मजुलाजी को प्रथम बार यहाँ ही देखा था। वही परिचय हुआ था– श्री कमल हाथीशाह से। ❑

दो दिनो मे चार बार गुरुवर के समक्ष बैठकर वार्ता की। बातो के दौरान मैंने अपना पुनीत मन्तव्य प्रकट किया–'आपकी जीवनी लिखना चाहता हूँ, आशीर्वाद प्रदान कीजिए।' वे ठिठक से जाते हैं, फिर प्रश्न करते है–'वह आत्म–प्रचार का कार्य न कहा जायेगा? लोकेषणा का भाव?'

मै उत्तर देता हूँ–'आप कहते लिखने को, तो शायद? पर आप नहीं चाहते। यह तो मैं स्वत लिखना चाहता हूँ। इसके पूर्व कुछ सतो की लिखी है। उन्हे तो ऐसा नहीं लगा।'

–उन्हे क्या लगा?

–उन्हें लेखक का निजी कार्य लगा था। जीवनी–पुस्तक से कुछ लेना देना नहीं है, ऐसा सोचा होगा।

–ठीक है, मैं भी वैसा ही सोचता हूँ। किन्तु फिर मुझसे पूछते क्यों हैं?

–शुभ कार्य के पूर्व आपका आशीष चाहता हूँ, वही मुझे स्वीकृति तुल्य है। यह एक गजरथ/ज्ञानरथ से अधिक महत्व का कार्य है। इसे पढकर नूतन–पीढियाँ अपने सत के विषय मे जानकारी प्राप्त करती रहेगी। संतचर्या, सतसदेश और सतविचार से अवगत होगी। सत ने जनजीवन और निजजीवन के लिये क्या किया, जान सकेगी। सत का ऊपरी प्रचार या छवि–निर्माण का भाव इसमे नहीं रहेगा। केवल जीवन–चरित्र का चित्रण रहेगा। 'जीवन चरित्र' जो किसी श्रावक को प्रेरणा देगा तो किसी को समाधान, तो किसी को आत्मशान्ति।

गुरुवर मुझे सुनकर मुस्करा उठते हैं। मैं उनके श्रीचरणो मे झुक जाता हूँ, वे आशीष देते हैं।

वही दोनो बहिने आ जाती हैं, ब्र अनीता जी और ब्र मजुला जी। मैं गुरुवर से कहता हूँ–'विवरण आदि तो इन विदुषियो से प्राप्त कर लूँगा। आपसे नही पूछूगा।'

मेरा बालोचित–कथन सुनकर पू उपाध्यायश्री मौन रहे, किन्तु समीप ही खड़े श्री कमलहाथीशाह मुस्करा पडे। ❑

17 अक्टूबर 2000 को मै लौट पडा था निवाई से। मुझे लिखने की 'धुन' आ चुकी थी। कब निवाई से जयपुर पहुँच गया? कब आगरा और कब जबलपुर, ध्यान ही न रहा। 24 घटे लम्बी यात्रा तय हो गई। मुझे गुरुवर पर जो लिखना था। परमपूज्य उपाध्याय शिरोमणि 108 श्री ज्ञानसागर जी पर, उनके जीवनवृत्त पर।

उन पर, जिनकी गुर्वावली परमपूज्य आचार्यप्रवर 108 श्री शातिसागर जी महाराज (छाणी) से शुरु होती है। प्रथम गुरुणागुरु शातिसागर जी, द्वितीय परमपूज्य आचार्य सूर्यसागर जी, तृतीय परमपूज्य आचार्य विजयसागर जी महाराज, चतुर्थ परमपूज्य आचार्य विमलसागर जी महाराज (भिन्ड), पचम परमपूज्य आचार्य सुमतिसागर जी महाराज और षष्ठम् परमपूज्य उपाध्यायशिरोमणि ज्ञानसागर जी महाराज। कहे एक महान गुरुपरम्परा के प्रतिनिधि, एक महान गुरुकुल के धारक हैं– उपाध्यायश्री। महान ऋषि–माला के मूल्यवान मनका। मूल्यवान क्यो, अनमोल मनका। सच, ऐसे सतो का मूल्य हो ही क्या सकता है? कौन लगा सकता है मोल? एक बात और, उनकी तुलना भी नही की जा सकती। तुला के एक पात्र पर वे आवे, तो दूसरे पर किसे रखेगे? उन जैसा व्यक्तित्व, उन जैसा मूलगुणो का स्वामी/गुणाकर, कहाँ मिलेगा? उन जैसा सम्यक् ज्ञान–प्रसारक और सारल्य का बाहुबली कहाँ से लायेगे? वे तो श्रमण सस्कृति के मानक–प्रतीक हैं, वे तो जिन शासन के प्रभावक प्रकाश–स्तम्भ है। वे तो पल–पल वद्य है, प्रात स्मरणीय हैं, तप· मूर्ति हैं, हाँ प्रशममूर्ति हैं, उनसा सत कहाँ मिलेगा? वे उपसर्ग विजेता हैं, तत्वमर्मज्ञ हैं, श्रेष्ठतम धर्मोपदेशक हैं, उन जैसा यतिशिरोमणि किस डगर पर मिलेगा? सो उनकी तुलना, उनका आकलन नहीं किया जा सकता, उनका तो विरद ही गाया जा सकता है। विरद का गायन ही तो है यह लेखन। सो उन्हे नमोस्तु कर यह लेखन प्रारम्भ करता हूँ। ❑

1

'मातृभूमि - गरीयषी'

आपने 'मुरैना' शब्द से निकलती ध्वनियॉं सुनने का प्रयास कभी न किया होगा। सही भी है मुरैना कोई मुरली/बॉंसुरी तो है नही, वह तो एक नगर है। मध्यप्रदेश के मध्य से उत्तर दिशा की ओर देखे तो ठीक प्रदेश–सीमान्त पर यह नगर स्थित दीख जायेगा भूगोल के मानचित्र पर, जिसके समीप ही ग्वालियर और भिन्ड जिले हैं।

मुरैना की ध्वनियॉं उससे मिलते जुलते शब्दो मे समाहित हैं, जैसे मुरैना, मुरेना, मुडेना, मुरना, मोरेना। अब यदि इसे शब्दजाल न माने और इसे शब्द–विनोद की दृष्टि से देखे तो अनुभूत होगा कि मुरैना मे तो बहुत सी गूँजे–अनुगूँजे छुपी हुई हैं। मु –माने मुँह। मुरैना माने मुरेना और मुरेना माने 'मुडेना'। तब मुरैना से प्रथम श्रेष्ठ ध्वनि निकलती है– मुँह कषायो की ओर 'मुडे ना।'

दूसरी ध्वनि है–मुडेना याने मुडाना माने मुडनकराना। जहॉं मुडन हो। जो सिर मुडा कर साधु बनने की ओर हो, वह है मुरैना।

मुरैना की तीसरी ध्वनि है–'मुरना'। मुर माने वह कपडा (वेष्टन) जो वस्तु पर लपेटा गया हो। सो मुरना हो गया–'मुर ना'। जहॉं वेष्टन भी नही है। जब, वस्तु/व्यक्ति पर कपडा न रह जायेगा तो वह दिगम्बर ही तो नजर आयेगा। अत मुरैना मे दिगम्बरत्व की ध्वनि भी है।

चौथी ध्वनि 'मुरना' ही है, पर उसका अर्थ पृथक है–मुर माने दोबारा। जहॉं दोबारा ना हो त्रुटि, वह है मुर ना बनाम मुरैना।

तो मुरैना साधारण शब्द है, पर उसके अर्थ असाधारण हैं। जानकर लोग कह सकते है कि इन ध्वनियो से परे वहॉं जो सबसे बडी ध्वनि हैं, उसकी चर्चा क्यो नही करते?

–कौन ध्वनि?

–यही कि मुरैना डाकुओ के लिए प्रसिद्ध है।

जो सज्जन यह कहते है कि मुरैना डाकुओ के लिए प्रसिद्ध है उनसे निवेदन करना चाहता हूँ कि वे अपने बोध को सुधार ले। और कहे 'मुरैना की पवित्र धरती डाकुओ के आत्मसमर्पण के लिए प्रसिद्ध है।' यह वही मुरैना है जहॉं देश मे सबसे पहले, (सन् 1978 मे), पॉंच सौ से अधिक डाकुओ ने राज्यशासन के समक्ष प्रेरणापूर्ण आत्मसमर्पण कर सारे विश्व को अहिसा की ओर चलने का पाठ दिया था।

बस्ती और समाज मे छुपे डाकुओ की प्रशसा करनी होगी कि वे जनहित मे समर्पित हो गये। किन्तु मन आत्मा मे छुपे डाकुओ को कौन हटायेगा? –'मुरैना' प्रश्न करता है समाज से? मन के डाकू–क्रोध, मान, माया, लोभ आदि।

तब मुरैना समाज के एक होनहार युवक उमेश कुमार ने उत्तर दिया था– यह आत्मन हटायेगा। पन्द्रह वर्ष का वह किशोर उमेश –मन के डाकुओ से समर्पण कराने का मन बना चुका और ऐसा मार्ग चुना जिसके हर कदम पर कॉंटे और अगारे थे। कई वर्ष तक वह काटो के साथ खेला, अगारो के साथ सोया और अपने भीतर बैठे डाकुओ को बाध्य करता रहा। एक दिन ऐसा आया कि आत्मा को घेरे रहने वाले चारो डाकू अपना समस्त लाव–लश्कर लेकर आत्म–समर्पण कर बैठे और उमेश नाम का वह युवक विजेता बनकर अपनी राह चलता रहा, चलता रहा। वे कालातर मे बने– परमपूज्य उपाध्याय शिरोमणि श्री 108 ज्ञानसागर जी मुनि महाराज।

युवक बन गया मुरैना का 'मुर'। फिर भारत का मुर। मुर माने मुकुट।

आज जो सराकोद्धार जैसे एकमेव श्रेष्ठ कार्य मे लगे हुए हैं देश भर के साधु–सतो के मध्य, वे कल कैसे थे? उनका कल कैसा था? कौन न जानना चाहेगा? 'कल' माने इतिहास। कल माने जीवन चरित्र। जीवन और आचार विचार की झलक मात्र है यह कथा। कष्टो की रपट। दुखो की खट–खट। सुखो की चट।

महान सत के अतीत को जानने के लिए हर कोई उत्सुक रहता है। कई बार तो देखा है कि सत के चरित्र को पढकर लोगो मे सतत्वभाव प्रगाढ हो पडते है।

(जो होता हो, पाठक अनुभूतेगे, मै तो उनके चाहने वालो के साथ–साथ, न चाहने वालो के लिए भी लिख रहा हूँ यह महाकथा) ❑

2

शिशुत्व की मुस्कान

पूज्य उपाध्यायश्री ज्ञानसागर जी की कथा सन् 1957 मे शुरु हो गई थी, जब वे मुरैना के सामान्य दीखने वाले श्रेष्ठ श्रावक श्री शातिलाल जी जैन (जैसवाल) की धर्मपत्नी श्रीमती अशर्फी देवी के गर्भ मे आये थे।

तब पूज्य अशर्फी माताजी, घर मे 'बहुरानी' के आदरसूचक शब्द से सम्बोधित की जाती थीं। श्री शातिलाल जी की वश-परम्परा का प्रथम पुष्प जो उनकी पावन कुक्षि मे मुस्का रहा था।

मुरैना तब शहर कम था, गॉव अधिक। वहाँ की सस्कृति मे ग्रामीण माहौल का भोलापन और सुघरता जीवित थे। वे आज भी हैं, मुहल्लेवार कमाधिक। श्री शातिलाल से अधिक उनके पिता श्री शकरलाल जी की ख्याति थी। मगर गॉव मे पृथक-पृथक ख्याति का चलन नही था। पिता की ख्याति ही पुत्र की ख्याति होती थी। पिता की ख्याति सुनकर पुत्र गद्-गद् होते थे और पुत्र की से पिता। ❑

सन् 1957 के जनवरी माह की शीतलता से बचने, समूचे मुरैना को रजाइयो-पल्लियो मे छुपा रहने को विवश होना पड रहा था, पर माता अशर्फी जी कुछ विशिष्ट ही अनुभव करती थी, पाचवॉ माह चल रहा था उन्हे। वे स्वप्न देखती हैं कि उनकी रजाई फैल कर रथ की गद्दी बन गई है, कहे उनके समक्ष एक रथ खडा है, उस पर उनके पतिपरमेश्वर श्री शातिलाल जी राजकुमारो की तरह सजेधजे बैठे हैं और उन्हे सकेत कर रहे है-'चलो, शीघ्र आओ, तीर्थयात्रा पर चलना है'

वे पति के साथ हो जाती हैं। किसी जाने-पहिचाने तीर्थ क्षेत्र पर पहुँच जाती हैं। तैयार होकर वदना को निकलती हैं। तभी नीद खुल जाती है। वे जागकर चकित होती है, फिर सोचती हैं-कौन सा क्षेत्र था वह? मन ही मन उत्तर देती है-सोनागिरि। हॉ शायद सोनागिरि ही। मगर टोक तो शिखरजी जैसी लग रही थी। सोचती रहती हैं।

जनवरी मे कई बार उन्हे ऐसे स्वप्न आये। चले गये। फरवरी मे भी स्वप्न आये, पर पूर्व जैसा नहीं, उससे हट कर। "वे शातिलाल जी के साथ एक मदिर मे प्रवेश कर भगवान के दर्शन करती हैं। वहॉ वेदी पर भगवान चद्रप्रभु की मोहक प्रतिमा विराजी थी। दूसरे मदिर मे जाती हैं तो वहॉ प्रतिमाजी नही दीखती, चरणचिन्ह दिखते हैं। जरा पास जाकर देखती हैं-भगवान पार्श्वनाथ के चरण।"

नीद खुल जाती है। माह बीतने वाला था, तभी एक रात फिर वही स्वप्न आया।

अशर्फी जी ने दोनो स्वप्नो की बात एक दिन, सकोच करते हुए, अपने पतिदेव से कह दी। वे सुनते रहे, फिर सोचते रहे।

जब गर्भ मे भव्य आत्मा होती है, तो स्वप्नो की झलक भी दिव्यता लिये हुए रहती है। मार्च के माह मे, जब ठड कम हो पड़ती है किन्तु गर्मी अपना तेज नही जता पाती, तब माता जी को पुन एक स्वप्न आया-"वे एक मदिर जी मे बैठी हैं, शास्त्र-सभा चल रही है और वे ध्यान से शास्त्र सुन रही हैं।"

सुनते-सुनते निद्रा भग हो जाती है। माता सोचने लगती हैं-शास्त्र जी का वाचन कौन कर रहा था।

दिन बीता। बात गई। पर मार्च माह पूर्ण हो कि उसके पहले पुन वही स्वप्न आया। इस बार माता जी स्पष्ट तौर पर देख रही थीं कि शास्त्र स्वय उनके पति श्री शांतिलाल जी पढ रहे हैं। स्वप्न समाप्त। माता बहुत प्रसन्न हुई, क्योंकि वे (पतिदेव) तो, रोज ही शाम को शास्त्र सुनाते हैं। शास्त्रवाचन तो नियम है उस घर का। पतिदेव के पिताश्री शकरलाल जी भी घर मे शास्त्र बॉचते थे जब-तब।

मार्च चला गया। अप्रैल आ गया। माताजी के स्वप्न चलते ही रहते थे। इस बार उन्होने देखा–एक दिगम्बर सत आहार चर्या को निकले हैं, माता अशर्फी जी उन्हे पडगाहने की तैयारी कर रही हैं, उनके साथ सभी गृह–सदस्य पडगाहने खडे हैं। मुनिवर समीप आते है, उनकी विधि मिल जाती है, माता जी नवधाभक्तिपूर्वक उन्हे आहार देती है। निरतराय आहार कराती हैं। आहार के बाद, मुनिवर चौके मे बैठते हैं, माताजी भजन गाती है, तभी नीद खुल जाती है।

आदत के अनुसार अशर्फी माताजी स्वप्न की चर्चा श्री शातिलाल से करती हैं। वे खुश होकर, प्रभु का स्मरण करते है।

माता के गर्भ मे एक–एक माह की नौ ऋतुएँ आती हैं, उनमे से आठ आ चुकी थी। नौवी आने वाली थी, वह आई भी, ज्योही नौवॉं माह शुरु हुआ, वह आ गई।

धीरे–धीरे माह पूरा होता जा रहा था कि एक रात माता को फिर स्वप्न आया–'एक सुदर विमान आकाश क्षेत्र से चला आ रहा है। वह ज्यो–ज्यो उनके घर के करीब पहुँच रहा है, त्यो–त्यो छोटा होता जा रहा। धीरे–धीरे वह काफी छोटा होकर सीधा माता के कक्ष मे आकर रुक गया। माता उसे समीप से देखती हैं, उसके पास खडी रहती है। उसकी सजावट और भव्यता को निहारती रहती है।' निद्रा टूटती है। प्रात काल बिस्तर से उठी तो सम्पूर्ण वृतात पतिदेव को सुनाती है। वे गम्भीरता से सुनते है, फिर विचार–विमर्श हेतु अपने मित्रो की तरफ चले जाते है।

एक–दो मित्रो से, एक पडित से, एक ज्योतिषी से उनकी राह चलते मुलाकात होती है, मन करता है कि स्वप्न रहस्य उनसे पूछा जावे, पर वे सकोच कर जाते है। किसी से नही पूछते। घर आ जाते है।

शाम को जब पत्नी ने सपनो का राज समझना चाहा तो श्री शातिलाल जी ने कहा–आपको कई माह से स्वप्न आ रहे है, पर है सभी सौभाग्य के प्रतीक। अत कोई भ्रम न पाले। 'अच्छे स्वप्न देखना और अच्छे विचार रखना' सिद्ध करता है कि गर्भस्थ शिशु 'विशेष–आत्मा' है।

एक मई सन् 1957 की सुबह आई तो सौगात लेकर आई। माता अशर्फीजी को पुत्ररत्न की प्राप्ति हुई। उस समय प्रात के सवा छह बजे थे। मदिरो से, अभिषेक–पूर्व बजाई जाने वाली घटियो की, आवाज आ रही थी। घरो मे प्रभाती गाई जा रही थी। ग्राम्यबालाएँ पनघट की ओर जा रही थी। गौओ के बधन खोलकर उन्हे चरोखर भेजा जा रहा था। सब कुछ नित्य जैसा था, किन्तु उस दिन हर कार्य का अर्थ विशेष–सदेश सुना रहा था।

सूर्य भी रोज की तरह आकाशागन मे टहलने निकला था, पर उस रोज उसकी किरणे श्री शातिलाल के भवन की सश्रद्धा परिक्रमा करती प्रतीत हो रही थी। जो हो, महान–आत्मा के आगमन पर, प्रकृति ने अपने सकेत स्पष्ट कर दिये थे, यह पृथक बात है कि कोई समझ पाया, कोई नही। ❑

पृथ्वी, सूर्य, चन्द्रमा आदि के नामो का उल्लेख महापुरुषो के जन्म के समय साहित्यकार इसलिए करते है कि वे आगत भव्यात्मा की महानता और गरिमा का पैमाना उनसे जोड सके। ऐसा ही एक पैमाना/कीर्तिमान जोडा गया था, 10 अक्टूबर 1946 को जब भारत के दक्षिण मे स्थित ग्राम सदलगा मे परमपूज्य आचार्य विद्यासागर जी महाराज ने रात्रि 11 30 बजे जन्म लेकर शरदपूर्णिमा के चॉद से सम्बन्ध जोडा था और माता पूज्य 'श्रीमतीजी' की कुक्षि का पावन परिचय देश को दिया था। ऐसा ही कीर्तिमान सन् 1917 (आसोज शुक्ल चतुर्थी स 1974) मे जोडा गया था, जब परमपूज्य आचार्यवर्य सुमतिसागर जी

महाराज का जन्म इसी मुरैना जिले के श्यामपुर नगर में पूज्य माता चिरोजा देवी की पवित्र–कोख से हुआ था, उस दिन भी पृथ्वी, सूर्य, चद्र वे ही थे; पर उनके संकेत कुछ और हो गये थे।

एक मई को भी वही हुआ, पूर्व से भी अधिक बेहतर और स्पष्ट हुआ कि मुरैना की धरती पर, मुरैना के आकाश के नीचे, मुरैना की गोद में–भव्य आत्मा ने स्थान ग्रहण किया। जैसा कभी किया था महावीर स्वामी ने माता त्रिशला की गोद में। तीर्थंकर ऋषभनाथ ने माता मरुदेवी की गोद में।

बुधवार का दिवस, प्रज्ञा–समय का दिवस। वैशाख शुक्ल द्वितीया का दिवस। विक्रम सवत् 2014 का एक स्वर्ण–दिवस। हॉं, तदनुकूल एक मई सन् 1957 का दिवस। कृतकृत्य हो गया था वह प्यारा दिवस। प्रात काल सवा छह बजे का समय–बालारुण का समय होता है। सूर्य शिशुवत् दीखता है, उसकी रश्मियॉं सुकोमल और सुकुमार होती हैं। वे धीरे–धीरे आकाश से उतरती हैं और धरती के 'सार' को स्पर्श करने लालायित रहती हैं। उस क्षण, उस प्रहर उन्हें धरती के सार के रूप मे वह नन्हा शिशु मिला, जो भविष्य का 'ज्ञानसागर' था, हॉं परमपूज्य उपाध्यायरत्न 108 श्री ज्ञानसागर जी मुनिमहाराज।

रश्मियो का समूह शिशु को पहचान गया था। वे हँस रही थी, मुस्करा रही थीं, गाना गुनगुना रही थीं। उनके समूह को उस 'सार' का स्पर्श जो मिल गया था, जो भविष्य में 'समयसार' अनुगुंजित करेगा। उस महान 'क्षण' के समक्ष प्रात काल का, उषाकाल का 'मनोहारी–प्रहर' प्रणाम कर रहा था और कह रहा था–सभी सामान्य होते हैं, किन्तु जिस पल महान–आत्मा अवतरित होती है, वह अपने आप महानताओ का सूचक बन जाता है। उसके समक्ष–आठ याम/प्रहर, लगन, मुहूर्त, बेला, आदि सभी अवधियॉं/घडियॉं लघु हो जाती है। 'पल' महान हो जाता है, पावन, कल्याणो और मगलो का प्रतीक।

सूर्य की किरणे शातिलाल जी के भवन में प्रवेश कर रही थीं, पर उनके परिवार की किरणे घर से बाहर की ओर दौड पडी थीं। गृह मे उपस्थित महिलाऍं और बच्चियॉं हर्ष मना रही थीं और बतला रही थीं कि भैया हुआ है ! वृद्धाऍं कह रही थी–मुन्ना हुआ है।

उनकी घोषणा कुछ ही क्षणो मे सज्ञा मे बदल गई थी, समग्र परिवार नवजात शिशु को दुलार से 'मुन्ना' सम्बोधन दे रहा था।

परिजनो के मुख से निकलते मधुर–मधुर शब्द पुरजनो के कर्णप्रदेश तक जा पहुँचे। देखते ही देखते 'चर्चा' बासती की तरह सारे नगर मे प्रसार पा गई।

घर–परिवार के लोग मग्न। पुरा–पडोस के प्रसन्न। चारो ओर खुशियॉं तैर रहीं थी वातास मे।

हर व्यक्ति शिशु की चर्चा मे रस ले रहा था। उधर 'समय–सम्राट' भी शातिलाल जी के गृह मे जन्मे 'पुत्ररत्न' पर विचार कर रहा था कि शिशु का जन्म 'एक' मई को हुआ है, तो इसका वर्तमान–परिवेश से क्या सरोकार कहा जावेगा। एक मई–'विश्व श्रमिक दिवस'। क्या यह शिशु श्रम करने वाले समुदाय का उद्धारक होगा ? प्रश्न 'समय' के गर्भ मे छुपा रह गया, उस क्षण कोई विद्वान व्यक्ति यह नहीं सोच सका कि यह शिशु होश सभालने के पश्चात सीधा उसी क्षेत्र मे जायेगा, जिसका सम्बन्ध सैकड़ों साल से केवल श्रम से है। श्रमिक से है। वह है सराक–क्षेत्र। श्रम जहॉं पाल्थी मारकर बैठा है। वह श्रमशील लोगो का क्षेत्र। श्रम, श्रमिक और फिर श्रावक–श्रमण वाला क्षेत्र।

सम्पूर्ण ससार के मजदूर जिस दिन एकता और सघ–भावना के विषयों पर गभीरता से विचार करते हैं, वह कौन सा दिन हैं ? वह है 'मजदूर–दिवस'। श्रमिक–दिवस।

'समय–सम्राट' को समझ मे आ गया–यह महान–आत्मा सराक क्षेत्र के श्रमिको/श्रावको को कल्याण–पथ प्रदान करने आया है।

मई के उस प्रिय–दिवस मे, जिस क्षण प्रिय मुन्ना ने जन्म लिया, अनेक सम्भावनायें भरी हुई थीं, परन्तु कोई व्यक्ति अपने चर्म–चक्षुओ से उन्हे बॉच न पा रहा था। उस क्षण कौन जानता था कि यह शिशु बडा होकर परमपूज्य आचार्य सुमतिसागर जी महाराज का हृदय जीत सकेगा। कौन जानता था कि यह महान दिगम्बर सत का बाना धारण कर अपना और जग का उपकार करेगा। कौन जानता था कि यह अपनी पैतृक–वशबेल का त्याग कर परमपूज्य आचार्यप्रवर श्री शातिसागर जी मुनिमहाराज (छाणी) की कुल–परम्परा (गुरुकुल–परम्परा) से जुडने का सौभाग्य पायेगा।

सत्य यह है कि कोई नही जानता था, परन्तु एक अन्य प्रतीक्षा सभी के मनो मे खेल रही थी। एक सहज प्रतीक्षा। परिवार मे प्रथम–सतान की प्रतीक्षा मे जो रस मिलता है–पारिवारिक–सदस्यो को, वह फिर कभी नही मिलता। मुन्ना की जो प्रतीक्षा उनके गर्भस्थ रहते की जा रही थी, उससे अधिक, जन्म ले लेने के बाद, की जानी लगी थी। आप कहेगे–जब जन्म ले लिया धरती पर आ गये, तो प्रतीक्षा कैसी ? मैं कहूँगा कि प्रतीक्षा एक हो तो बतलाऊ शकरलाल जी के घर मे तो हर कदम पर प्रतीक्षा रहती थी मुन्ना कब हॅसेगा, कब बोलने लगेगा, कब चलने लगेगा, कब शाला जाना शुरु करेगा– हर बात की, हर क्रियाकलाप की प्रतीक्षा की जाने लगी थी। कभी माता अशर्फी द्वारा, कभी पिता शातिलाल द्वारा, कभी हॉ, पूरे घर–परिवार द्वारा। ❑

धीरे–धीरे वैशाख माह निकल गया, ज्येष्ठ शुरु हो गया। गर्मी का ताप दिन–दूना बढता जा रहा था प्रकृति–पनहारिन पर। मुन्ना पैंतालीस दिन के हो गये, हॉ डेढ माह के। पिता जी शान्तिलाल धैर्य न रख सके, वे बालक की जन्मपत्री बनवाने शहर के विश्वस्त ज्योतिषी जी के यहॉ जा पहुॅचे।

ज्योतिषाचार्य ने श्री शातिलाल के अभिवादन से ही समझ लिया कि पुत्र की पत्री बनवाने आये हैं, बोले–बैठिये।

शातिलाल जी बैठ गये। ज्योतिषी ने पूछा–शिशु कितने दिन का हो गया?

–जी, भैयाजी 45 दिन का।

–अच्छा, यह तो खुशी की बात है। मिठाई लाये कि नहीं?

–फिर ला दूँगा। आप पत्री तो बनाइये।

ज्योतिषी को याद आ गया कि जन्म की खुशी की मिठाई तो वे पा चुके हैं पहले ही। सो मुस्कुराते हुए पूछ बैठे– किस तिथि को हुआ था?

–वो बैशाख शुक्ल द्वितीय, बुधवार को।

–दिन मे कि रात मे?

–दिन मे। प्रात छह बजकर पन्द्रह मिनट पर।

ज्योतिषी ने समय और तिथि एक कागज़ पर लिखी और केलकुलेशन (लगन–गणना) करने बैठ गये। लगभग आधा घटा बाद खुले–'भैया, पुत्र तो होनहार/योग्य है। अत्यत ज्ञानवान और यशवान होगा। मगर यह घर पर न टिकेगा।'

ज्योतिषी जी ने पत्री मे जो कुछ लिखा था, उसके प्रमुख वाक्य सुना दिये।

शातिलाल जी कागज लेकर घर आये, सभी सदस्यो को पत्री की बाते सुनाई। एक वाक्य 'यह घर पर न टिकेगा '

अब यदि पुत्र–रत्न की खुशी लेकर कोई श्रावक जैन सतो के पास जाता और उन्हे समाचार सुनाकर आशीष की याचना करता तो, आशीष तो मिलता, किन्तु सदुपदेश भी पाता। वे संतप्रवर कविनाथ श्री द्यानतराय का दर्शन प्रवर्तित कर कहते–हे श्रावक, जिन भावो और कार्यो से कर्मबध होता है, उन दुखदायी परिणामो की क्या चर्चा करना। यह पर्याय तो पर के सयोग से उत्पन्न है और प्रत्यक्ष रूप से जडमय है, अत इसे अपना क्यो जानते/मानते हो? इस ससार मे भ्रमण करते हुए अनन्तकाल बीत गया है। लाखो जन्म तपस्या करते बीत गये हैं।

फिर वे सतजी, कविवर दौलतराम का कथन स्पष्ट करते–तेरा या इस शिशु का शरीर, आत्मा से पृथक है। इसका सुपोषण करने के पश्चात भी यह स्थिर रहने वाला नहीं है। इसे तू ममतारूपी डोर से क्यो बॉध रहा है?

भाई, भावना भाओ कि यह नन्हा शिशु शीघ्र ही आत्म–विकास करे, ताकि जन्म–मरण के कर्मबध नष्ट करने वाला ज्ञान प्राप्त कर सके और ज्ञानावतार बन जाये। आत्म–रसरूपी अमृत का रसास्वादन करे और जन्म–मरण का टटा नष्ट करने मे सफल हो। ❑

राग और विराग के दोलन से परे, श्री शातिलाल जी के धर्मज्ञ परिवार का ध्यान अपने कुल की शोभा बढाने वाले शिशु पर ही था, जो भविष्य का 'कुलतिलक'था। कोई भविष्यवेत्ता वहाँ विराजा होता तो गौरव से घोषणा कर देता कि यह शिशु 'कुलतिलक' ही नहीं 'साधु–कुल–तिलक' सिद्ध होगा। ❑

जन्म से ग्यारह दिन के ठीक बाद धूम–धाम से चौक–समारोह का आयोजन किया गया था। बस्ती के सम्पूर्ण जैन–परिवार आमत्रित किये गये थे, उस समय 80 घर थे। बाहर के रिश्तेदार पृथक। कहे–'जलसा' मनाया गया। गॉव भर मे पेड़े और चावल बॉटे गये। घर मे धूम–धाम, मन में धूम–धाम। कहे– सारे नगर मे धूम–धाम।

धूम–धाम के मध्य केवल व्यवहार और लोकाचार नही साधा गया था, बल्कि जैन–दर्शन की छॉव मे सिरजे पूजा–पाठ विधानादि पर भरपूर ध्यान रखा गया था। ❑

'घर मे नहीं–टिकेगा' सुनकर सभी के कठ सूख गये थे। मन मे अदृश्य चिता व्याप्त कर गयी थी। घर पर न टिकेगा–का–अर्थ बहुत सीधा था कि साधु–सत बनकर भ्रमण/विहार करता रहेगा।

भविष्य के भय को विसारते हुए, पत्री के अनुसार मुन्ना का नाम उमेश रखा गया। 'उमेश चद जैन जैसवाल'। नामकरण तो हो गया–उमेश, किन्तु पारिवारिक सदस्य मुन्ना ही कहते रहे । एक दिन या दो दिन नहीं एक दो सप्ताह नहीं, शाला जाने की उम्र में भी उमेश जी घर पर मुन्ना ही थे।

दोज को जन्मे मुन्ना द्वितीय के चन्द्रमा की तरह ही दुबले–पतले किन्तु कातियुक्त थे। वे धीरे–धीरे बढते गये और कुछ ही माहो मे पूर्णिमा के चाँद की तरह गोल–मटोल, गोरे–चिट्टे हो गये। उनकी बाल–क्रीडाएँ देखने के लिए लोग खडे रह जाते, अपना काम–काज भूल जाते। वे हँसते मुस्कराते तो उन्हें देख सब जन हँसने लग जाते। आनंद का एक विशाल समुद्र उमड़ने लगता घर–आंगन में।

घर मे आती–जाती महिलाएँ, मुन्ना को ही देखती रहती थी, वे जब बालक को गोद में लेकर खिलातीं तो उनके मुख से झरते हुए शब्द सुनने मे चाहे जिसका मन लग जाता था। जो भद्र महिला श्री शांतिलाल

की नानी थी, वह श्री शकरलाल की सासू जी भी थीं, वह श्री शकर लाल वे मुन्ना को अपने फैले हुए पैरो पर सीधा लिटा लेती थी, फिर बुदबुदाती थी–'देखो तो कैसा गोरा है, जैसे सगमर्मर का बना हो। देखो तो चेहरा कैसा गोल और सुदर है, जैसे चद्रमा उतर आया है मेरी गोद मे। देखो तो नाक (नासिका) कितनी प्यारी दीखती है। देखो तो इसके ये मुलायम बाल कितने चिकने और बारीक हैं। देखो तो... . ।' वे आगे कोई वर्णन करती कि कही से श्री शकरलाल जी आ गये, वे अपनी सासू जी को शिशु मे लीन देखकर चीखते स्वर मे ताना देते हैं–अरे सासू जी, मेरे नाती को नजर न लगा देना। बडा प्यारा लगता है आपको !

वृद्धा, जो शकरलाल जी की मात्र सास है और शातिलाल की मात्र नानी है, मुन्ना की 'सब–कुछ' है। वह गौरव से मुन्ना को शकरलाल को सौंपकर कहती है–'आप ही देख लो दामाद जी, मेरा पंती साक्षात कामदेव का अवतार है।'

शकरलाल हँसते रह जाते थे। ❑

पिता (शातिलाल जी) की नानी उपस्थित थीं, तो पुत्र (मुन्ना) की नानी कैसे दूर रही आतीं, वे भी आईं, उनके साथ नानाजी भी आये। नानी श्रीमती पार्वती देवीजी, नानाजी श्रीमान माणिकचद जी।

फिर मुन्ना जी के मामा–मामियो का क्रम आया–बड़े मामा श्री प्रेमचद जी जैन अम्बवाह अपनी धर्मपत्नी श्रीमती अगूरी देवी के साथ पहुँचे, तो मझले मामा मामी–श्रीमान श्यामलाल एव श्रीमती मनोरमा भी हाजिर हुए। भला छोटे मामा क्यो रुकते, वे श्रीमान नत्थीलाल एव श्रीमती शारदा देवी समयानुसार अपने प्यारे भान्जे को देखने जा पहुँचे।

जो घर और नगर मे थे, उन्हे मुन्ना तक पहुँचने मे समय ही न लगा, वे ही अधिक समय तक खिलाने की पात्रता पा सके–ताऊ श्री भगवानदासजी और उनकी अर्धांगिनी–श्रीमती कातीदेवी। दूसरे ताऊ श्री पूरनचद जी और उनकी धर्मपत्नी श्रीमती अगूरी देवीजी। चाचाश्री–श्री सुमतचद जी और उनकी जीवन–सगिनी श्रीमती रतन देवी जी। कहे–भारी भीड लगी रहती थी देखने और खिलाने के लिए सगे–सम्बन्धियो की। पर क्या मजाल कि कोई, पडनानी श्रीमती नेकसी बाई के सामने से मुन्ना को उठा ले, उनके प्यार का ध्यान सभी रखते थे, वे सर्वाधिक सयानी थी।

चॉद सा शुभ्र बालक छह–सात माह मे ही अपनी देह की सुडोलता के लिए गॉव भर मे प्रसिद्ध हो गया। जो आता गोद लेता और खिलाता, खिलाने से मन ही न भरता, उसकी सुकोमल अगुलियॉ और गद्‌देदार हथेली को पकडने और सहलाने मे मन लगा रहता। कुछ लोग शिशु के गोल–कपोलो को चूमकर अमृतपान जैसा आनद मनाते। किलकारियो से गृहप्रदेश भरा रहता था।

तभी शिशु की माता जी बीमार पड़ गईं, दवा चली, किन्तु स्वस्थ होते–न–होते, छह माह लग गये, तब तक शिशु को सूखी (रोग) हो गया। माता के साथ–साथ बच्चे का भी उपचार शुरु कर दिया गया।

बच्चा दुबला हो रहा था। एक–दो माह डाक्टरो ने देखा–समझा, पर आराम न लगा। तब गृह सदस्य उसे वैद्यो की ओर ले गये। चार माह निकल गये, किन्तु लाभ न दिखा। स्वास्थ्य के लिए सभी लोग चितित हो पड़े। स्थिति कुछ ऐसी बनी कि एक सदस्य डाक्टर की ओर जाता तो दूसरा वैद्यराज की तरफ।

हर स्थिति का अत सुनिश्चित रहता है। धीरे–धीरे शिशु को स्वास्थ्य–लाभ मिला। लोगो मे प्रसन्नता का सचार हो पडा। नव जीवन की आशा को आधार मिल गया।

शिशु तो स्वस्थ हो गया पर पारिवारिक–जन यह नही जान पाये कि वह किसके उपचार से ठीक हुआ है। डॉक्टर के यहाँ ले जाने वाले परिजन मानते की डॉक्टरी–दवा से ठीक हुआ, वैद्य मानते कि वैद्य की चिकित्सा से।

सत्य कुछ और था–माता के करकमलो से की गई–सेवा और मालिश। माता के पवित्र आँचल से छलकी–छलकी अमृत की बूँदे, हाथो से दी जाने वाली ग्रामीण–घुट्टी।

जो हो, शिशु पूर्ण स्वस्थ हो गया था।

स्वस्थ हो गये सो नटखट हो गये। दिन भर ऊधम। यह वस्तु उठाना, उस वस्तु को पटकना। कभी घुटनो के बल चलते तो कभी पैर–पैर। घर मे जैसे बालक कृष्ण दौड रहा हो। काष्ठ निर्मित एक सुदर पालना (झूला) छत मे, पूर्व से डाली गई कुन्दियो (कुदों) से बाँधा गया जिसमे कृष्णकन्हैया जी झूलते थे।

लोग परेशान हो उठते जब दोलते दोलन मे वे अचानक उठकर बैठ जाते, लगता–गिर न जायें कहीं! (पर जो सभी को उठाने आया हो, वह स्वय क्यो गिरेगा? ऐसा कोई नही सोच पाता था उस समय–काल में)

झूला झुलाने वाले हाथो की कमी न थी घर मे, हर सदस्य झुलाता रहता था, किन्तु जब बालक अचानक पालने मे उठ कर बैठ जाता तो एक साथ तीन–चार जन दौड पडते पालने की ओर–कहीं भैयाजी गिर न जाये–की शका मन मे लिये।

माता ऐसे दृश्य देखकर कभी भयभीत हो जाती थी, तो कभी जी खोलकर हँसती थी। लगभग यही मानसिकता पिता की बन गयी थी।

बाल लीलाओ के साथ एक परिवार का सुख जीवनयात्रा पर था। ❑

मुन्ना जी धीरे–धीरे ढाई वर्ष के हो गये। कोई पूछता–आपका नाम क्या है? तो मुन्ना जी अपने कमर पर पेट को चढाते हुए उत्तर देते–उमेश जैन। मीठी आवाज सुनकर, प्रश्नकर्ताओ को भारी खुशी होती।

मुन्ना जी की नजरे बब्बा जी के जेब (पाकेट) मे रखे गये पेन पर अधिक रहती थी। बब्बा जी जब कभी घर पर रहकर हिसाब–किताब करते–करते क्षण भर को पेन नीचे रखते, मुन्ना जाने कब लपक कर पेन उठा लेते और बब्बा जी के असली कागजो पर गोदा–गादी कर देते, आडी–तिरछी लकीरे खींच देते जैसे पूरे हिसाब को गलत सिद्ध कर दिया हो।

गृहसदस्य हँसते, कभी डॉटते, पर मुन्ना पर कोई असर न होता। बब्बा जी कहते–बडा कही का लेखक पैदा हुआ है। मगर बब्बा यह नही समझ पाते कि बालक जो कट–बट के निशान लगाता है, उनमे कोई दिव्य–सदेश छुपा है। सदेश–'हे शंकर लाल जी जैसवाल, जीवन का यह हिसाब–किताब छोडो और धर्म–पथ से नाता जोडो, आपका जीवन चतुर्थ–चरण की ओर हो पडा है।'

न समझ सका कोई बालक के सकेत। सकेत करते–करते वह ढाई से साढे तीन साल का हो गया। और सकेत करने से बाज न आया।

यह उम्र ऐसी होती है कि हर किसी सदस्य के साथ बालक घूमना–फिरना चाहता है। कोई मदिर जा रहा है तो मदिर, कोई दुकान जा रहा है तो दुकान। यो बालक का उद्देश्य मदिर या दुकान कम होता है, घूमना अधिक।

चम्बल नदी के कछार मे बसा मुरैना अपनी उपजाऊ माटी के लिए तो प्रसिद्ध है ही, चम्बल की बारीक और शुभ्र चमकीली रेत के लिए भी। चार वर्ष की वय छूते–छूते बालक उमेश गीली मिट्टी को सानकर और मसलकर आकार देने लगे, देखने वाले जन कहते–यह बालक तो सुदर मूर्तियाँ घड लेता है। मिट्टी से तो कभी बालू से वे खेलते और खेल–खेल मे किसी देवता की मूर्ति उकेर लेते। मूर्ति बनाने का खेल हाथ चढा तो फिर वह उतरा नही, उम्र के अनुसार परिपक्वता पाता गया। जहाँ कही मिट्टी या बालू का ढेर होता, उमेश वहाँ आधा घटे मे मूर्ति बनाकर चम्पत हो जाते, लोग घटो निहारते रहते। उमेशजी को बालू की माटी से बनी मूर्ति से समय मिलता तो मदिर चले जाते और वहाँ भी मूर्ति मे ही उनकी नजरे अटकी रहती। कुछ वर्ष तक दो कार्य ही थे उनके समक्ष–बालू से मूर्ति बनाना या मदिर मे मूर्ति निहारना।

मूर्तियो के इस उपक्रम से वे बचपन से ही धार्मिक हो पडे। धर्म–कर्म और मदिर मे ही मन लगा रहता था। ❑

मदिर जी मे कभी स्वरबद्ध पूजाये सुनते तो कभी सगीतमय भजन। क्रम ऐसा बना कि उन्हे सगीत से भी प्रेम हो गया। जहाँ कोई मीठी–आवाज सुनते, ठहर जाते और उसी मे खो जाते।

वे सोचते क्या मैं ऐसा नहीं गा सकता? क्या मैं वाद्ययत्रो से सगीतलहर नही पैदा कर सकता? कहे–सगीत के प्रति लगाव और जिज्ञासा–दोनो ही–उनके अतर्मन मे उत्पन्न हो चुके थे। अत स्पष्ट है कि बालक ने कालातर मे सगीत सीखने का भी सद्प्रयास किया, और वह सीखा भी। हो गया वाद्य–यत्रो मे पटु। ❑

पॉच वर्ष पूर्ण करते ही सन् 1963 मे नगर के प्रसिद्ध जी डी जैन चिल्डरन–स्कूल मे बालक का नाम दर्ज कराया गया। वे पहुँचने लगे स्कूल। पढने मे भारी रुचि थी। कक्षा मे सबसे अधिक होशियार।

चार वर्ष के बाद, वे कक्षा पॉच से, श्री गोपालदास दिगम्बर जैन माध्यमिक विद्यालय मुरैना के छात्र बने। वहॉ भी उन्होने अपनी मृदुवाणी और श्रेष्ठ–छात्रता से गुरुजनो का दिल जीता। स्वाभिमान की तो जीवत मूर्ति थे, एक बार कक्षाशिक्षक ने उन्हे, सही उत्तर प्रदान करने पर कुछ कापियॉ इनाम मे देनी चाही। फलत बोले–तुम्हारा उत्तर सही है, तुम टेबल पर रखी गई कापियॉ ले सकते हो।

शिक्षक का वाक्य सुन उमेश जी खडे रहे, टेबल की ओर नही गये। शिक्षक ने वे कापियॉ उठाकर अपने हाथ से सौंपी, तब उन्होने स्वीकार की। ❑

उमेश जी के अनेक बालसखा थे, उनमे देवेन्द्र जी, सुदीप जी, वीरेन्द्र जी, कैलाश जी, कमलेश जी आदि तो छाया की तरह सदा साथ बने रहते थे। ❑

3

'किशोरावस्था की हलचल'

आठ वर्ष की उम्र की एक घटना। उमेश जी कक्षा चार मे रहे होगे। बब्बा जी (शकरलाल जी) की वृद्धा सासू मॉं के निधन की बात है, वे वृद्धा मॉं शांतिलाल जी की नानी थीं तो उमेश की पडनानी। तब तक शातिलाल की तीन सतान हो चुकी थीं। प्रथम उमेश, द्वितीय राकेश और तृतीय प्रदीप। प्रदीप बहुत छोटा था, पर वह पड़नानी से बहुत प्यार पाता था। वृद्धा नानी उसे गोद मे ही भरे रहती थीं।

एक दिन, रात्रि करीब 8 बजे अचानक पडनानी की तबियत अधिक बिगड कई। शातिलाल जी मदिर गये हुए थे, शकरलाल जी भी घर पर न थे। मॉं ने उमेश को मदिर भेजा, वे गये और पिताश्री को बुला लाये।

घर आते ही देखते हैं कि नानी जी चारपाई पर श्लथ पडी हुई हैं। वैसी ही हालत मे उन्हें दस्त उतर आया है। पारिवारिक जनो ने शुद्धि करदी, आवश्यक दवाये दी, वैद्यराज को बुलाने एक सदस्य दौड गया, तब तक शातिलाल जी ने टाड पर रखी सदूक (बाक्स) से जिनवाणी निकाली और वाछित पाठ का वाचन कर नानी को सुनाने लगे। तब तक शकरलाल जी आ गये।

नानी की शिथिलता बढती गई। हाथ–पैर ठडे हो पडे। शातिलाल ने उन्हे चारपाई से उतार कर जमीन पर लिटा दिया। ग्रामीण बोली मे वह उपक्रम/क्रिया–भूशरण–कहलाती है।

दृश्य को उमेश जी ध्यान से देख रहे थे, देखते हुए कुछ समझ रहे थे। वे देखते हैं कि घर के बडे सदस्य जोर–जोर से णमोकार मत्र कह रहे है, नानी को सुना रहे हैं, नानी कुछ सुन रही हैं, कुछ भूल रही हैं, चुप है, बेहोश है। अचानक सास थम जाती है, गृहसदस्य रो पडते हैं, अशर्फी जी नानी मॉं का हाथ अपने हाथ मे लिये विलाप करती रह जाती है। कोई पक्षी अचानक एक पिजरे से उड गया है।

उमेश जी जीवन मे प्रथम बार यह देख रहे थे। वे नही जानते थे कि मर जाना क्या होता है, मृत्यु किसे कहते है, रुदन कैसा होता है?

सारी रात विलाप का क्रम चलता रहा। उमेश जी मृत्यु का दृश्य समझते रहे, किसी से कुछ बोले नही, कुछ पूछा नही, शान्त बने रहे।

सुबह यथासमय अतिम–क्रिया कर दी गई।

उमेश जी को समझने मिला–मृत्यु बोध। रिश्तो की श्रृखला। रिश्तो का प्यार। रिश्तो का मोह। मोहजन्य–आदमी। वे जीवन और मृत्यु के रिश्ते की किचित झलक उस दिन समझ गये थे। ❑

मुरैना धर्म और ज्ञान के लिए एक युग से प्रसिद्ध है। वहॉं के जैन–विद्यालय देश भर मे जाने जाते हैं। जैन मदिर भी। अनेक मदिरो को वक्ष पर सम्भाले मुरैना धर्मनगर ही दीखता है। वहॉं बडे मदिर के बाजू मे पडी जगह पर विशाल सभाभवन का निर्माण कार्य चल रहा था। बात सन् 1965–66 की है। तभी नगर मे पू क्षुल्लक श्री 105 सुमतिसागर जी महाराज कहीं से विहार करते हुए पधारे। उन्हे कम्पन–बाय हो गई थी, सारा शरीर कॉंपता रहता था। सयोग से उनके गृहस्थ अवस्था के पारिवारिक जन वहॉं–मुरैना मे–ही निवास करते थे। कहे, मुरैना उन क्षुल्लक जी का गृहनगर था।

समाज ने क्षु जी के रुकने की व्यवस्था बडे मदिर जी के एक साफ कक्ष मे कर दी। वे दो माह रुके। उमेश जी उनके दर्शन कर बहुत प्रभावित हुए, वे लगातार उन्हीं के आस–पास बने रहे। क्षु जी की पिच्छिका देखकर उमेश जी को भारी हर्ष हुआ। उन्हे लगा–कि एक पिच्छिका कही से उन्हे भी मिल जाये तो आनन्द

आ जाये। जितनी प्यारी पिच्छिका लगी, उतने ही अच्छे क्षुल्लक जी लगे। फलत उमेश जी दिन–रात वहाँ ही जमे रहे। उन्हीं के समीप उठना–बैठना, उन्ही के समीप सोना। कभी उमेश जी क्षु जी को देखते, कभी पिच्छी को और कभी क्षु जी की क्रियाओं को। कैसे आहार को निकलते हैं? कैसे आहार लेते हैं? कैसे स्वाध्याय करते हैं? कैसे एकान्त मे ध्यान लगाते है और कैसे ध्यान से लौटते हैं।

उमेश जी दिन मे केवल नहाने–धोने और भोजन करने के लिए, कुछ ही समय को, घर गये थे, शेष पूरा समय क्षु जी के समीप बिताया।

घर के लोग परेशान हो उठे कि यह लडका सतो के पास अधिक समय दे रहा है, जिससे जन्म पत्री के अनुसार कुछ दूसरे ही सकेत उपलब्ध हो रहे है।

रात को जब उमेश वैयावृत्ति को जाने लगे तो सभी सदस्यो ने रोका–दिन भर तो वही रहा है, अब रात मे भी वही? क्या लिखना–पढना नही है? घर का सबक (होमवर्क) भी नही करना?

उमेश चुप रहे, फिर अश्रु बहाने लगे। गृहसदस्य पसीज गये, बोले–'अरे भैया, रोओ नही। बडे भक्त बन गये हो। आज हो आओ, कल से न जाना। और हॉ, रात मे शीघ्र लौट आना।'

उमेश जी के पैर गतिशील हो पडे, मदिर पहुँचकर ही थमे।

दिल लगाकर वैयावृत्ति की, फिर वही सो गये। सुबह क्षु जी की तरह ही बडी भोर जाग गये। बातो ही बातो मे ज्ञात हो गया कि क्षु जी के केशलुच होगे।

घर लौटे तो सोचने लगे कि क्षु जी की केशलुच–क्रिया मे सहयोग करूगा। शीघ्र नहाया धोया। धुले–स्वच्छ वस्त्र पहिने तो घर के लोग पूछ बैठे–अब कहॉ की तैयारी है?

–क्षु जी के केशलुचन की।

–और पढाई कब करोगे? तुम्हारे तो टेस्ट चल रहे है?

–हॉ चल रहे है। पढाई तो कर चुका हूँ।

–कब?

–दो दिन पहले ही।

घर के लोग पूछते रह गये, उमेशजी ये जा, वो जा। मदिर पहुँच गये। एक मोर्चा तो जीत गये, अब दूसरा मोर्चा था सामने। लोगो ने उन्हे केशलौच के कार्य से मना कर दिया, प्रेम से समझा दिया–अभी तुम बहुत छोटे हो, इतने छोटे बच्चो से क्षु जी केशलौच नही कराते।

उनकी हिदायत सुन उमेश जी परेशान। फिर पास जाकर बोले–'देखो मै छोटा हूँ तो क्या हुआ, कामकाज तो करता ही हूँ। ये देखो मैं स्वच्छ वस्त्र पहनकर आया हूँ। बाजार की वस्तुओ का भी त्याग है। अब क्या चाहते हो?'

एक वरिष्ठ सज्जन ने वात्सल्य से बतलाया– भैया, तुम ठीक कहते हो, पर अभी छोटे हो न? जरा बडे हो जाओ। परन्तु उमेश जी कहॉ मानने वाले थे। अत कुछ समय चुप रहे, किन्तु ज्योंही केशलुचन का समय आया, उन्होने क्षुल्लक जी को 'इच्छामि' किया और उनका केशलौंच करने लगे। उनके नन्हे–नन्हे हाथ सधे हुए चल रहे थे। फलत दर्शकगण सुखद–आश्चर्य मे पड गये। सभी जन बालक की सराहना करने लगे।

दोपहर को ही उमेश जी ने हम–उम्र बालको की एक टीम बना डाली। क्षु जी से कतिपय नियम लिये और धर्म सेवा/सत–सेवा के पथ पर चल पडे। उनके साथ उनके मित्र (श्री सुधीर आदि) थे ही।

लगभग ढाई माह पश्चात् क्षु जी ने गमन कर दिया। उमेश जी उनके साथ चले जाने का मन बना बैठे, किन्तु नगर और परिवार के लोगो ने रोक दिया। स्वत क्षु जी ने समझाया कि अभी छोटे हो, तनिक बडे तो हो जाओ, फिर सोचना।

उमेश जी मन मसोस कर रह गये।

क्षु जी विहार कर गये। नगर के अनेक भक्तगण साथ मे गये–आगामी मुकाम तक पहुँचाने। ❑

क्षु जी तो चले गये, किन्तु उनकी प्रेरणाओ और नियमो ने उमेश जी के हृदय–प्रदेश में सौभाग्य का प्रकाश फैला दिया। काया का भाग्योदय हो गया। आत्मा मे ज्ञानोदय। ❑

कुछ ही समय व्यतीत हुआ था कि घर के लोगो ने तीर्थयात्रा का मन बना लिया, सबके साथ, सबके प्रिय उमेश जी भी तैयार हो गये। पारिवारिक सदस्यो का एक लघु–श्रावक–सघ बन गया। यात्रा शुरु।

जब सुहाग की नगरी फिरोजाबाद पहुँचे तो शकरलाल धन्य हो गये, वहाँ विशाल धार्मिक आयोजन चल रहा था, आयोजन मे परमपूज्य आचार्य श्री 108 विमलसागर महाराज सघ सहित विराजित थे। सभी ने दोहरा लाभ लिया। तभी उमेश जी देखते हैं कि कुछ साधुगण केशलौच कर रहे है और जनता उनकी जय–जय कार कर रही है। वे श्रद्धापूर्वक आगे की ओर बैठ कर अवलोकन करने लगे। देखते–देखते बालक उमेश को ध्यान हो आया कि कभी यदि वे साधु बने तो केशलौच कर पायेगे या नही? दर्द होगा या नहीं? सोचते–सोचते उनके नन्हे–नन्हे कोमल हाथ स्वत केशलुचन के लिये सक्रिय हो गये। बिछात के सामने बारीक लाल मिट्टी/धूल पडी थी। उमेश जी ने वह उठाई और सिर के अग्रभाग मे, माथे से ऊपर की ओर रगडी और ताकत से बाल खीच लिये। एक बार, दो बार, तीन बार। दर्शकगण, जो साधुओ का केशलौंच देख रहे थे, बरबस बालक की क्रिया देखने लगे। लोग चकित, आचार्यश्री चकित, जो साधु केशलुचन कर रहे थे वे भी चकित। बालक ने काफी मात्रा मे बाल उखाड डाले थे, तब तक कुछ लोग उसकी ओर लपके और उमेश जी के हाथ पकड कर रोका। हाथ रुक गये। सही मे कहा जाये तो उमेश रुक गये। वे मन ही मन विचार कर चुके थे कि केशलोच कर मुनिसघ मे ही रह जाऊगा, पर दर्शको के कारण वैसा न हो सका।

उमेश के कारनामे से पारिवारिक जन क्षण भर को परेशान हो उठे थे। पर जनता प्रशसा कर रही थी–'धन्य है यह बालक। कैसे अच्छे सस्कार पाये हैं। आचार्यश्री के कार्यक्रम से प्रेरणा पाकर मुनि बन जाना चाह रहा था।'

जब गृहसदस्य लौटने लगे तो उमेश जी जिद करने लगे–'मै नही लौटूँगा, मैं यहाँ मुनिसघ मे रहूँगा।'

किसी ने डॉटा, किसी ने समझाया, तब कही जाकर उमेश जी फिरोजाबाद से वापिस हो पाये, वर्ना वे तो साधु बन गये होते। ❑

किसी तरह घर आ गये। शातिलाल जी ने मन ही मन अपने कान पकडे और सकल्प किया कि इसको साथ लेकर कही न जायेगे। (पर होनी के आगे सोच कब ठहरा है?) ❑

कुछ देर बाद श्री शातिलाल जी ने उमेश जी के प्रिय मित्रगणो को बुलवाया, वे तुरंत आ गये, प्रथम वीरेन्द्र कुमार और द्वितीय देवेन्द्र कुमार। दोनो को समझाते हुए बोले– देखो बेटे, अब कभी उमेश इस तरह धर्मसेवा या मुनिसेवा करे तो मुझे खबर करना।

दोनो बालक जी कह कर दौडकर भाग गये। ❑

4

‘कुमार - अवस्था की पहल’

उमेश जी 13 वर्ष के हो गये हैं। सन् 1957 का शिशु सन् 1970 का वर्ष स्पर्श कर किशोरावस्था को प्राप्त कर गया है। दुकानो, होटलो और बाजारो मे खाना–पीना पहले से ही सीमित था, मगर अब वे पूर्ण प्रतिबध लगा चुके हैं, कदम सयम के आंगन मे हैं।

बाजार की अशुद्ध खाद्य–सामग्री नहीं खायेगे, सकल्प ले लेते हैं। घर मे बनाई गयी भोजन–सामग्री ही स्वीकार होगी। वह भी ऐसे ही नहीं, पहले स्नानादि फिर मदिर–अभिषेक पूजन, तब उसके बाद भोजनादि। पूर्ण धार्मिकता। पूर्ण श्रावकत्व।

वर्ष भी पूरा न हुआ कि उनकी चर्या देख कर समाज के सुधीजन उन्हे 'भगतजी' सम्बोधन दे बैठे। हर ज्ञानवान आदमी उन्हे भगत कह कर सम्बोधता। मगर जिन श्रावको के बच्चे धर्म–पथ मे पिछड़ गये थे, या विमुख बने रहते थे, वे अपनी तसल्ली के लिये उमेश जी को चिढाया करते थे। पर उमेश जी को उनके विशेषणो से विशेष–प्रयोजन न था, वे अपने कार्य में लगे रहते थे।

बड़ी बात यह थी कि वे सम–आयु के किशोरो के साथ जितना समय बिताते थे, उससे अधिक समय वरिष्ठजनो के साथ रहा करते थे। अत ज्ञान की परिपक्वता बढ चली थी, चेहरे पर विचारो की पक्तियॉ मुस्कराती रहती थी। ❑

किशोर उमेश को देख कर कोई भी विद्वान यह बात सगौरव कह देता था कि यह बालक उस मुरैना का प्रतीक है जिसकी धूल मे कभी–जैन दर्शन के युगप्रधान विद्वान प गोपाल दास जी बरैया भी–घूमते, फिरते, खेलते और पढते थे। ❑

मुरैना की भौगोलिक स्थिति महत्वपूर्ण है। वह ग्वालियर–आगरा मार्ग पर बसा है। मध्य प्रदेश को उत्तर प्रदेश से जोडने की प्रमुख कडी है–मुरैना। फलत मुनिसघ जब भी एक प्रदेश से दूसरे को आते जाते हैं, उन्हे मुरैना ठौर देता है। यह क्रम वर्षों से है। किन्तु साधुओ का आना–जाना श्री शकरलाल के परिवार को भयभीत किये रहता था कि कही किसी सघ से प्रभावित होकर उमेश जी घर न छोड़ दे। सभी की नजर रहती थी ऐसी बातो पर।

मगर उमेश तो उमेश थे, वे साधुओ की सेवा सब कार्य छोडकर करते थे। कोई सघ आ रहा है, तो तीन मील दूर तक अगवानी के लिए जाते थे। कोई विहार कर रहा है तो बीस मील तक उन्हें छोडने जाते थे।

धीरे–धीरे वे अनेक साधु–सतो के परिचय मे आ गये। हर सत को उनका स्वभाव अच्छा लगता था। ❑

उमेश जी को हर साधु अच्छा लगता था, मगर उनसे अच्छे उनके पिच्छि–कमडलु लगते थे। एक किस्म से वे पिच्छि और कमडलु को सदा अपने हाथो मे लिये रहना चाहते थे। फलत साधुओ के सग शुद्धि को चलना और कमडलु उठाना, आहार को चलना और कमडलु लेना, विहार के समय भी कमडलु। वे, कहे, साधु की परिचर्याओ मे अधिक से अधिक समय देते थे और अपना सौभाग्य मानते थे। उन्हीं के समीप बने रहते थे। कई बार तो पारिवारिक सदस्य जब बुलाने आ जाते, तब घर लौटते थे।

साधु समागम का भाव इतना प्रबल हो पड़ा कि मुरैना से 140 कि मी दूर अवस्थित सिद्ध क्षेत्र सोनागिरी तक साधुओ के साथ पॉव–पॉव चलकर पहुँच जाते थे। तो कई बार मुरैना से आगरा के मार्ग पर भी पैदल गये–आये।

सन् 1970 का प्रसग है। उमेश जी आठवी कक्षा मे थे। बोर्ड की परीक्षा सामने थी। तभी आचार्यकल्प परमपूज्य सन्मतिसागर जी महाराज (टोडारायसिंह वाले) सोनागिरि से ससंघ मुरैना पधारे। उसी समयावधि मे

परमपूज्य आचार्य सुबलसागर जी भी ससघ मुरैना पहुँचे। विराट समागम का समय था वह। उन सभी की परिचर्या मे उमेश जी का मन लीन हो गया। खूब सेवा की। जब सघ प्रस्थान करने लगा तो उमेश जी उनके साथ हो गये। तभी पारिवारिक लोगो ने पहुँचकर रोक लिया, सो उन्हे घर आ जाना पडा। ❑

घर आ गये। पढाई पर ध्यान दिया आठवी की परीक्षा दी। तब तक आगरा की ओर से परमपूज्य मुनि विवेकसागर महाराज मुरैना पधारे। (ये पूर्व मे परमपूज्य आचार्य ज्ञानसागर जी के सघ मे रह चुके थे, उनके प्रिय शिष्य थे। उन्ही आचार्य ज्ञानसागर जी के प्रथम शिष्य हैं-- परमपूज्य आचार्य 108 विद्यासागर जी महाराज) विवेकसागर जी आये तो उमेश जी का विवेक फिर जाग गया। अब वे उनके साथ लग गये। खूब सेवा की, वैयावृत्ति की। जब वे विहार करने लगे तो उमेश जी उनके साथ । घरवालो को पता लग गया, दौडे। रास्ते से उमेश को लौटा कर लाये। अजब था उमेश का बाल्यकाल। ❑

कई बार उमेश जी अचानक भी आये गये। ऐसी स्थिति मे घर के लोग परेशान हो जाते थे, दो--दो दिन चूल्हा तक न जल पाता था। जब उमेश को लौटा पाते थे, तब चौका--चूल्हे की सुध होती थी। ❑

पारिवारिक सदस्य अनुभव कर चुके थे कि उमेश को पिच्छी कमडलु से भारी अनुराग है। उन्हे छूने, पकडने, उठाने मे उसे आत्मिक आनन्द होता है। ❑

मुरैना से विहार कर मुनि विवेकसागर जी बामौर पहुँच गये थे। उमेश जी को सब कुछ ज्ञात था। अत दूसरे दिन ही पूज्यमाता अशर्फीदेवी से बामौर जाने की आज्ञा ली और चले गये। वह बेचारी माता न जानती थी कि बामौर मे मुनि जी विराजमान हैं, वह तो सदा की तरह इतना ही जानती थी कि वहॉ जो आत्मीय रिश्तेदार है, यह उन्ही के घर जा रहा है।

उमेश जी बामौर पहुँचे तो सीधे मुनिवर के समक्ष। फिर चर्चाएँ हुई। मन प्रसन्न। मगर दूसरे दिन ही बब्बा श्री शकरलाल जी वहॉ जा पहुँचे। रग मे भग हो गया।

शंकरलाल जी ने मुनिवर से शिकायत की कि यह लडका घर मे नही रुकता, साधुओ के पीछे भागता रहता है, इसे कुछ मार्गदर्शन दीजिए।

मुनिराज मुस्कराये। बोले--शकरलाल जी, वह लडका तो मार्ग पर ही है।, मार्गदर्शन की जरूरत तो आपको प्रतीत होती है, जो आप उसके मार्ग मे बार--बार आ जाते हैं।

शकरलाल जी ने मुनिवर की बाते सुनी तो घबडा गये। सोचा था कि बालक को घर जाने का उपदेश देगे, वे तो कुछ और ही कह रहे हैं। शकरलाल जी वहॉ से उठे और सीधे उमेश के पास जा पहुँचे। उसका हाथ पकडा और बस स्टैड की ओर चल पडे।

वहॉ भी घटना घटते--घटते रह गयी। शकरलाल जी एक बस की चपेट मे आ गये, वे गिर पडे, बस के चक्के उनके ठीक बाजू से निकल गये। सब कुछ शान्त होते होते रह गया।

लोग उन्हे देखकर, उठाने दौड पडे। तब तक वे स्वत उठ बैठे। लोगो ने कहा--आपका तो नया जन्म हो गया समझो। वाक्य सुनकर वे मौन रहे आये। फिर विचार करने लगे--अभी, आयु शेष थी, इसलिए अनुकूलता बन गयी, वरना ।

फिर उन्होने उमेश की ओर आक्रोश से देखा। पुन हाथ पकडा, बस पर बैठे और मुरैना चल पडे।

उमेश जी आने को तो घर आ गये पर उनका आत्म--द्वन्द्व चलता रहा। ❑

कुछ ही दिन बीते कि उमेश जी ग्वालियर स्थित लश्कर--दानाओली चले गये। वहॉ पू मुनि विवेकसागर जी विराजित थे। मॉ अश्रु बहाती रह गयी। शातिलाल और उनके पिता शकरलाल घर पर नही थे।

दानाओली से संघ के साथ उमेश जी पैदल चलकर सोनागिरि पहुँचे। तपस्वी सत के समीप मन लग गया। उन्हीं के पास मँडराते रहे उमेश। सत की आहारचर्या देखी, वे अत्यन्त कठिन विधि लेते थे।

बालक उमेश वहीं बीसपथी कोठी में रुक गया। बाजू में श्री जी की स्थापना थी।

दूसरे दिन आहारो के पश्चात जब मुनिवर स्वाध्याय करने ही वाले थे, लोगो को पता चला कि श्री जी के वेदी के बाजूवाले कक्ष मे एक युवक अकेला बैठा केशलुचन कर रहा है, लोग दौडे, देखा, उमेश जी थे। लोगो ने रोका–'अरे यह क्या कर रहे हैं? केशलौंच करना तो मुनिवर से आज्ञा लेकर करो।' तभी उमेश जी के पिता (श्री शातिलाल जी) खोजते हुए वहाँ पहुँच गये। उनके साथ उमेश के मामाजी भी थे, श्री श्यामजी।

शातिलाल जी ने कुछ समझाया, कुछ डाँटा, और बालक के शेष बाल नाई से मुडवाये। फिर उसे साथ ले घर चल दिये। उमेश को पिताज्ञा के समक्ष नतमस्तक होना पडा, वे लौट गये। लौटने को तो लौट आये, पर पिताजी समझ गये कि उमेश का शरीर ही लौटा है, मन तो मुनिचरणो मे रह गया है। उनकी बात दूसरे दिन ही पुष्ट हो गयी जब उन्होने देखा कि उनका बेटा शर्ट/पेट नही, धोती–दुपट्टा पहिने है। कहे–उन्होने स्वेच्छा से ब्रह्मचारी–बाना धारण कर लिया था, घर मे रहते हुए।

उमेश जी मे उठी वैराग्य–भावना का मर्म घर तो घर, समाज के लोग भी जान गये। अत उन्होने मिलकर उमेश को समझाया कि अभी इस नन्ही उम्र मे गृहत्याग उचित नही है। कुछ विद्वानो ने उपालम्भ का सहारा लेकर समझाया, कहने लगे–भैया, इस उम्र मे अध्ययन सर्वोपरि होता है। अत पहले स्कूल और धर्म का अध्ययन कर लो, फिर विचार करते रहना।

जब उमेश जी को स्वीकृति नहीं मिली तो शकरलाल जी ने वचन दिया–'पढाई पूर्ण हो जाने के बाद तुम्हे नही रोकूँगा, तुम जब चाहो चले जाना।'

उमेश जी को श्री शकरलाल जी का मर्म समझ मे आ गया। वे विचार कर ही रहे थे कि एक दिन पडित मक्खन लाल जी ने भी उन्हे प्रेरणा दी। उन्होने कहा कि धर्मशास्त्र मैं पढाऊगा, तुम निश्चिन्त रहो।

बिना कुछ पढे, साधु बन जाना वे उचित नही मानते थे। अत उन्होने स्पष्ट भी किया–'ज्ञान प्राप्त कर साधु बनना चाहिये ताकि 'साधु–बाना'का सुदरतम निर्वाह हो सके। साधु बनकर, टोपी वालो के समक्ष बैठकर पढना, याद करना और सुनाना क्या अच्छा लगेगा'?

उमेश जी को वचनो का आधार स्वस्थ और पवित्र लगा। अत दूसरे दिन से ही वे पडित जी से सर्वार्थसिद्धि और छत्रचूडामणि ग्रन्थो का अध्ययन करने लगे। तब वे नवी कक्षा के छात्र थे।

विद्यालय से पढकर घर आते तो कुछ व्यस्तताएँ घेर लेती थी। अत पिताजी से आज्ञा लेकर 'गोपाल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय मुरैना' के छात्रावास मे रहने लगे। ❑

जैन ग्रन्थो का अध्ययन तो प्रारम्भ हो गया, किन्तु उम्र कम होने से वे तत्काल समझ मे नहीं आते थे। आखिर उमेश जी बालक ही तो थे, जबकि ग्रन्थो की पढाई अधिक स्तर के छात्रों के लिये थी। न छत्रचूडामणि समझ मे आता न सर्वार्थसिद्धि। मन तो मात्र सतो के साथ रमण करने के लिये कुलबुलाता रहता था। सतो के साथ रहने और उनकी यथासम्भव वैयावृत्ति करने। कहे–साधु–सेवा में रुचि थी।

यों अपनी अल्प–वय मे उन्होने कुछ अच्छी बातें–कलाएँ स्वेच्छा से सीख ली थीं। तबला, हारमोनियम और वायलिन भी खूब बजाते थे। सीखने के लिए स्थानीय सगीत–विद्यालय को जाते थे। वहाँ के अध्यापक भी रुचि लेते थे। फलत उमेश जी वाद्ययत्रो को तो शीघ्र समझ–सीख सके, गाने का अभ्यास भी करने

लगे थे। भजन गाने मे अग्रणी रहते, फिर भजनो–आरती के समय नृत्य भी करने लगे। कहे–गायन और नृत्यकला मे पारगत हो गये।

सगीत की रुचि ने उन्हे 'जिनेन्द्र नृत्य कला–मडली' तक पहुँचा दिया वे उसके एक कर्मठ–सक्रिय और समर्पित सदस्य बन गये। सदस्य बने तो मडली के कार्यक्रमो के प्रस्तुतीकरण के लिये नगर तो नगर, वि–नगर भी जाने लगे। उनका सगीत प्रसिद्धि पाने लगा। धीरे–धीरे अनेक पुरस्कार प्राप्त करने मे सफल हुए। सगीत और गायन मे अग्रणी रहने के कारण उन्हे नाटको मे अभिनय करने बुलाया जाने लगा। फलत वे एक सफल रगकर्मी भी सिद्ध हो सके। वयोवृद्ध कलाकर्मी श्री सुमतिचद्र (नृत्यकार) उनके मार्गदर्शक थे।

इतनी सारी कलाओ को जब वे सीख रहे थे, तब नवी कक्षा के छात्र थे। नवी माने हाईस्कूल का प्रथम वर्ष। उन्होने शिक्षको से परामर्श के बाद कामर्स (वाणिज्य) विषय चुना था पढने के लिये। ❑

पिताजी और बब्बाजी प्रसन्न कि मुन्ना भैया वाणिज्य–विषय लेकर पढ रहे हैं, तो अवश्य ही व्यापारादि मे मन लगायेगे। आशा बलवती हो गयी। फलत पिताजी ने एक दुकान भी खुलवा दी कि पुत्र दुकान मे व्यस्त होकर–माया के चक्कर मे अवश्य ही फॅसेगा, सो सतो के साथ भाग जाने का खतरा टल जायेगा। ❑

जगह, पूॅजी, साधन आदि मुहैया करा देने और दुकान खुलवा देने के बाद भी पिताजी को उमेश से निश्चिन्तता न मिल सकी। वे देखते है कि धीरे–धीरे एक वर्ष हो चला पर उसका मन तो दुकान मे लगता ही नही, वह तो पूर्व की तरह ही है। सत्य तो यह था कि सोनागिरी से लौटने के बाद से उमेश जी के मन मे वैराग्यभाव की जो ज्योति जल पडी थी, वह मद न हो सकी, उसका प्रकाश और–और बढता ही जा रहा था।

घर तो घर, आस–पास के गॉवो तक के लोग विश्वास कर चुके थे कि तनिक सी उम्र मे प्रबल वैराग्य भाव धारण कर लिया है–उमेश ने। करते भी क्यो न? अष्टमी और चौदस को व्रतो का क्रम बढ कर उपवास पर जा पहुॅचा था। विचार आगम–अनुकूल क्रियाओ पर दृढ थे। फलत. घर मे निर्मित पक्के शौचालय को छोड, मुनियो की तरह भूमि पर शौच करने नगर से दो–दो मील दूर तक चले जाते थे। लौट कर स्नान करना न भूलते थे। सर्दियो मे ऐसे उपक्रमो से पारिवारिक जन चिता मे पड जाते कि सुबह–शाम नहाने से मुन्ना को सर्दी न हो जाये। वह बीमार न पड जाये।

अनेक वस्तुओ का त्याग कर चुके थे। अत दुबले हो पडे सो परिवार के समक्ष यह भी एक नई चिता आ गयी। साधारण भोजन, बिल्कुल नीरस, अत शरीर भला मस्त कैसे होता? माता जी जबरदस्ती–अधिकार बतलाकर कुछ अच्छा पकवानादि थाली मे परोस देती, तो वे सामग्री थाली से निकाल देते। माँ या अन्य जन बाध्य न कर पाते कि कही, थाली छोडकर न चल दे। पकवानो का त्याग, रसो का त्याग, फलो का त्याग–कोई परसे भी तो क्या परसे? वही सूखी रोटियॉ और सादी साग।

पारिवारिक जन असमर्थ हो गये, किन्तु पौष्टिक सामग्री उमेश जी के पेट तक क्या, थाली तक भी न पहुॅचा सके, तब उन्होने नगर मे आने वाले विद्वानो और नगर के समाजसेवियो से उमेश के स्वभाव की चर्चा की।

चर्चा मात्र चर्चा ही रही, विद्वानो–समाजसेवियो और प्रतिष्ठित नागरिको का प्रभाव भी उमेश जी को विचलित न कर सका। उल्टे, उन्हे ही उमेश जी ने समझा दिया–'जिह्वा/स्वाद लोलुप श्रावक ब्रह्मचर्य की साधना मे सफल नही हो सकता।'

अब क्या था। विद्वान अपने घर चले गये। समाजसेवी मच पर और प्रतिष्ठित नागरिक उद्योगधधो पर, कोई कुछ न कर सका। उनका मन बोलता–'बालक उमेश जिदाबाद।' ❑

वह तो अच्छा हुआ कि काफी पहले से उमेश को घर मे घी–दूध–दही–छाछ–मेवा–मिष्ठान निरतर दिया जाता रहा था, अन्यथा वे तो और कमजोर हो पडते। उनके त्याग मे साधना का उद्देश्य था। अत. स्वादादि स्वमेव ही गौण हो गये थे।

भोजन की/आहार की कठिनाई के पश्चात पारिवारिकजनो ने देखा कि उमेश जी पानी की कठिनाई से भी सघर्ष कर रहे हैं। वे एक लम्बे अरसे से होटल, प्याऊ, स्कूल मे स्थित पानी की टकी आदि का जल नही पी रहे थे। सुबह 10 बजे घर से जल पीकर स्कूल जाते तो लौटकर चार बजे के बाद ही पानी पी पाते थे। अब तो खतरा और बढता लग रहा था–कहीं दिन मे मात्र दो बार का नियम न ले ले? ❑

15 वर्ष की उम्र मे इतनी सख्त चर्या देखकर लोग दॉतो तले अगुली दबा लेते थे। तभी एक और करिश्मा हो गया। हुआ यह कि उमेश जी ने प्रौषध–उपवास का सकल्प ले लिया। यह सामान्य उपवास के समक्ष एक कठिन कार्य है। इसमे अष्टमी को उपवास करना होता है, पर सप्तमी और नवमी को एकासन। कहने का मतलब यह कि एक उपवास मे दो उपवासो की ऊर्जा लग जाती है। उमेश जी सप्तमी को मदिर जी से पौषध उपवास का सकल्प लेकर निकले। घर पर आहार हेतु बैठे, एक बच्चे की लापरवाही से किचित विघ्न पड गया। आहार शुरु न कर पाये थे कि उठ गये। मॉ ने पानी–मात्र ले लेने का अनुरोध किया पर न माने, चले गये। माता बिलखती रह गयी–'जे तो मुनियो की तरह अतराय मानत है।' भोली मॉ बुदबुदायी। कर कुछ न सकी। दूसरे दिन अष्टमी थी सो उमेश जी का निर्जला उपवास रहा। मॉ तो मॉ, सारा घर दुखी हो गया। तीसरे दिवस नवमी। सप्तमी को स्कूल। अष्टमी को भी स्कूल जाना हुआ, कोई आकुलता चेहरे पर न आ पायी। नवीं को एकासन हेतु चौके मे आये, काष्ठ की चौकी पर बैठे, पर । फिर किसी की तनिक सी त्रुटि से अतराय मान बैठे। उठ गये। चले गये बाहर। मॉ उठी और हाथ पकड लिये, झुमट गये साथ के भाई, पर उमेश ने आहार न लिया, न आक्रोश बतलाया, न पश्चाताप। लोग हैरान। भय यह था कि अधिक भूख साधने से कोई अनहोनी न हो जावे।

सारे गॉव मे अतराय की चर्चा छिडी। लोगो का वात्सल्य–भाव प्रगाढ हो गया उमेश के प्रति। कतिपय व्यापारी और आफीसर अपने पेटू बेटो को, जो दिन में 4–6 बार खाने–पीने मे मस्त रहते थे, उमेश का उदाहरण सुनाने से न चूकते।

लोग जानते थे कि उमेश के भीतर वे सस्कार अगडाई ले रहे हैं, जो उन्हे अपने पूज्य बब्बा श्री शकरलाल जी से मिले है। शकरलाल जी शोध का भोजन लेते थे और घर मे शोध का चौका–सचालन मे माता–पिता सहयोगी थे।

शकरलाल जी मे उत्तम श्रावक के अनेक गुण थे, पर त्याग और श्रावकोचित तप का भाव प्रबल नहीं था। वे शुद्ध भोजन और सही आचरण को जीवन का आदर्श मानते थे, मगर दुकान से मोह क्षीण नहीं कर पा रहे थे, पारिवारिक–ममता मे ही मस्त रहे आते थे। फलत कभी बाजार मे तो कभी मदिरो मे चर्चा छिड़ जाती–'बब्बा तो वृद्धावस्था मे भी दुकान से चिपके हुये हैं जबकि नाती अभी से वैरागी बन गया है।' तर्क–वितर्क के शब्द उनके कानो तक धीरे–धीरे पहुॅच गये, बेचारे सुन कर शांत रह गये, कुछ कर न सके।

भजन गाने और नये भजन सुनने का शौक शंकरलाल जी मे बहुत प्रबल था। उनका वह गुण उमेश भी प्राप्त कर लेने मे सफल हो गये थे। शास्त्र–सभा और प्रवचन आदि मे शकरलाल जी उत्सुकता से उपस्थित होते थे, साथ मे नाती अवश्य रहता था। सो कहे कि मदिर, शास्त्र, प्रवचन की प्रेरणा उमेश जी ने, बब्बा जी से पा ली थी।

समान रुचियो के कारण बब्बा जी का लाड–प्यार कुछ अधिक ही रहता था उमेश जी पर। लाड प्यार के चलते शकरलाल जी ने उमेश जी को छात्रावास से पुन घर पर ही रहने को रिझा लिया। उमेश छात्रावास छोडकर घर आ गये।

बब्बा जी से अब कुछ अधिक ही रुपये–पैसे मिलने लगे, हॉ, पहले से अधिक। बब्बा जी सोचते कि उनके प्यार और उपहार से उमेश का मन घर मे लगा रहेगा। परन्तु उमेश तो पूर्ण 'उमेश' (भोलेनाथ) थे, वे बब्बा जी से प्राप्त रुपये जोडते रहते और अवसर आने पर दानादि या साधु–दर्शन मे उनका उपयोग कर देते थे। ❑

बब्बा जी और पिताजी ने विचारोपरान्त दुकान तो खुलवादी थी और स्वतत्र रूप से उमेश के जुम्मे करदी, पर दुकानदारी उसे आकर्षित न कर सकी। बड़ी बात तो यह कि उमेश जी के सीमित लगाव के बाद भी, दुकान अच्छी चलने लगी थी, किन्तु लगाव का आधिक्य कहीं और था, हॉ धर्म–क्षेत्र मे। अत दुकान से धनार्जन करने के पश्चात भी मन की उदासीनता न हटी। धर्म–ध्यान और धर्माध्ययन मे निरतर समय देते रहे। दुकान पर बैठ धार्मिक–पुस्तको मे इतने डूब जाते थे कि ध्यान ही न रहता कि कोई ग्राहक आकर खडा है या प्रतीक्षा कर लौट गया है।

परिचित लोग तो शिकायत ही करने लगे, किसी ने बब्बा जी से तो किसी ने पिताजी से कहा–'हम तो दुकान गये थे, परन्तु उमेश भैया किताब मे तल्लीन थे, उन्होने नजर उठाकर तक नही देखा, सो लौट आये।'

अब बेचारे बब्बा और पिता क्या उत्तर देते, सो शात रह जाते। ❑

यहॉ तक तो गनीमत थी। धर्मध्यान का चक्कर तब और परेशानी मे डाल गया घर–वालो को, जब एक बार उमेश जी खबर सुनकर–कि मदिर मे एक मुनिराज आये है–खुली दुकान छोडकर चले गये। घर मे बब्बा और पिताजी न थे। अत जब कुछ घटो के बाद मॉ को पता चला तो आकर देखा–दुकान ज्यो की त्यो सजी हुई थी, दुकानदार नदारद था। जानकारी ली तो ज्ञात हो गया कि दुकानदार तो मुनिवर के पास विराजे हुए हैं। तब मॉ ने दुकान बद की और अपने 'लाल' के भवितव्य के विषय मे सोचने लगी–क्या होगा इसका? क्या करेगा भविष्य मे? ❑

रात्रि मे मॉ आशर्फी जी ने शातिलाल जी को सारा हाल बतलाया। बब्बा जी बाहर से ही समाचार सुनकर लौटे थे कि दुकान खुली पडी रही। तीनो ने मिलकर योजना बनाई कि इसे बॉध कर रखना है तो इसकी शादी करा दी जाये। शकरलाल जी बोले–दो एक जगह से रिश्ते की बात आयी थी, पर मैं चुप रहा, सोचा था–पढाई पूरी कर ले, फिर ।

शकर लाल जी की बात को समर्थन देते हुए शाति लाल जी बोले–पिताजी, फिर–विर छोडिये, लडका हाथ से निकले उसके पहले बधन डाल दीजिए।

शातिलाल जी ने शकरलाल जी के बडे भाई श्री पूरन चद जी का स्मरण दिलाते हुए कहा–उनका पुत्र (महेन्द्र) उमेश की बराबरी का है, उसकी तो शादी हो रही है।

शकर लाल जी को क्षण भर को महेन्द्र और उमेश पास–पास खड़े दीखने लगे, फिर सोच कर बोले–'ठीक है, दोनो का मुहूर्त साथ–साथ निकलवा देते हैं।' उनकी वार्ता से सभी को धीरज बॅधा। ❑

5

‘धर्म की डगर पर मौन के स्वर’

उम्र, उम्र होती है। वह पल–पल बढती ही जाती है। उमेश जी सोलह वर्ष के युवक हो गये। मूछों की बारीक झलक चेहरे पर राज करने लगी थी। शरीर की बलिष्ठता में से जवानी के दर्शन होने लगे थे। घर–परिवार–रिश्तेदारो मे बाते चलतीं तो अक्सर मुँह से निकल जाता–'शातिभैया का लड़का जवान हो गया है, बिल्कुल शादी योग्य, पर उसका मन तो धर्म की ओर ज्यादा है।'

उमेश घर में किसी के पास अधिक देर तक नहीं बैठते थे, किसी न किसी कार्य मे लगे रहते थे। पर सुधि सभी की रखते थे।

घर के लोगो ने शादी की चर्चा छेड दी एक दिन, तो उठकर चले गये। मगर जब रोज–रोज शादी की बाते होने लगी तो उन्होने सभी के समक्ष अपने विचार दृढता से रख दिये–'मैं शादी नहीं करूगा, ब्रह्मचर्यव्रत लेना चाहता हूँ।' सुनकर लोग स्तब्ध रह गये। मगर हार नहीं मानी, आपस मे योजना बनाते रहे। एक दिन गृहसदस्यो ने उमेश जी को समझाया–'भैया ब्रह्मचर्य का मार्ग कठिन होता है, वह तो साधु–सतो के लिये है। अपन (हम लोग) तो गृहस्थ हैं, गृहस्थी बसाने मे ही कर्त्तव्य मानते हैं।'

बब्बाजी और पिताजी ने प्रयास तो उत्तम किया था, परन्तु बेचारो को सफलता न मिल सकी। उमेश जी हाथ न आये, वे पिताजी से कम ही बोलते थे, पर उस दिन कुछ वाक्य बोल कर चुप हो गये, बाद मे माँ के समक्ष पूरा हृदय उतार कर धर दिया। माँ बेचारी सुनकर अवाक् रह गयी। कहें–कि घर के सदस्यो की चिकनी–चुपडी बाते उमेश जी के हृदय पर कोई प्रभाव न जमा सकीं, वे अपनी धारणा मे दृढ बने रहे। ❑

भोजनादि के नियम तो वे पालते ही थे, रहन–सहन की सात्विकता भी अपना ली और एक जोगी की तरह रहने लगे। लोग उनके इस स्वभाव से परेशान हो गये।

जैन–भजनो पर नृत्य करने मे विख्यात वृद्ध, श्री सुमति चद्र जी से कुछ अधिक ही बोलते बतियाते रहते थे उमेश जी। उनके समक्ष दिल की बात निकाल कर धर देने मे भी न हिचकिचाते थे। अत घर मे हुए शादी के प्रलाप की तथा–कथा सुनाकर मन का बोझ कम कर लिया। उन्होने भी अपने पुत्रवत् मित्र को उचित प्रश्रय दिया। उमेश की चिता कम हो गयी आत्मबल बढ गया।

उधर ब्र दयाराम जी (वर्तमान मे परमपूज्य मुनि श्री श्रुतसागर जी महाराज) भी उमेश को बहुत वात्सल्य देते थे। उन्होने भी उमेश को आत्मबल प्रदान किया।

उमेश जी के मित्र छोटे–मोटे लोग नही होते थे। उक्त तीन के बाद, जो नाम है, वे भी कम नहीं है–प बालमुकुद शास्त्री, प मक्खन लाल जी एव कुछ और अन्य महानुभाव, मगर वे समस्त गुणीजन दादा शकरलाल जी से भयभीत रहते थे। क्योंकि वे लडने पहुँच जाते थे–'आप हमारे लड़के को गृहस्थमार्ग से उदासीन कर रहे हैं, आपका लड़का साधुमार्ग पर चला गया तो आप चाहते हैं हमारा भी चला जाये मगर ध्यान रखना, मैं ऐसा न होने दूँगा। बडे आये धर्म का पाठ पढ़ाने वाले।'

शंकर लाल जी के तानो से बचने के लिए अनेक जन उमेश जी को अपनी सगति में न रुकने देते, थे, कहते–'भैया अभी तुम्हारे बब्बाजी आ जायेंगे, कहेगे, लडका को बिगाड रहे हैं।'

उमेश जी को शकरलाल जी के विवादो का समाधान खुद जुटाना पड़ता। बेचारे विनयपूर्वक गुणीजनों को समझा देते कि बब्बाजी की तो आदत ही पड़ गयी, बहुत मोह करते हैं, उनकी बात का क्या बुरा मानना। ❑

कभी–कभी बैठक/चौपाल मे ऐसे–वैसे साधुओ की चर्चा छिड जाती, लोग एक के बाद एक सभी मे बुराइयॉ बतलाने लग जाते, जैन तो जैन, अजैन लोग तक तर्क–वितर्क कर देते, तब उमेश जी विनयपूर्वक, यथाशक्ति समाधान प्रदान करते थे और उन महानुभावो की दृष्टि मे श्रद्धान का दीप जला देते थे। ❑

इस बीच सगीत और भजनो का क्रम भी जोर पकड चुका था। अत उमेश जी एक श्रेष्ठ स्वर साधक के रूप मे भी विख्यात हो गये। इस ख्याति से त्वरित लाभ यह मिलता कि कभी बस या रेल मे चलते तो समीपी यात्री तुरत उनके लिये जगह खाली कर देते और प्रेम से बैठने का निवेदन करते। उमेश जी बैठते, अच्छी चर्चाएँ करते और अपनी तथा अन्य लोगो की यात्रा सुखद कर देते। एक छाप छोडकर, मजिल पर उतर जाते। ❑

एक दिन मुरैना की पावन धरती पर परमपूज्य मुनि निर्माण सागर जी पधारे, (परमपूज्य आचार्य 108 श्री निर्मल सागर जी के शिष्य) उमेश जी उनके पास जा पहुँचे। मुनिवर तपस्वी थे, हर पल तपो का ध्यान रखते थे। उमेश जी का मन उनके चरणो मे लग गया। बाद मे वे उन्हे पहुँचाने सोनागिरि तक पैदल गये। लौटे, पर दोनो मे वात्सल्यभाव बढ गया। फिर क्या था, उनके सोनागिरि–प्रवास चलते, उमेश जी कई बार सोनागिरि गये। एक बार तो माह भर उन्ही के पास रहे। पर्वत पर भगवान चद्रप्रभु के मदिर के पार्श्व मे निर्मित विख्यात गुफा मे रहते थे और मुनिवर की सुश्रषा करते थे। ❑

प्रारम्भ से ही उमेश जी सोनागिरिजी के मेला के प्रति आकर्षित होते रहे थे। वे प्रथम बार जब सोनागिरि आये थे, तब भी निमित्त वहाँ का मेला ही था। एक मायने मे उमेश जी ने मुरैना के स्थानीय मेला के पश्चात, सोनागिरि का मेला देखा था। देखा था फिर तीर्थक्षेत्र। हृदय की गहराई तक प्रभावित हुए थे।

सोनागिर मे क्षेत्र जी और मदिर के साथ–साथ सतो के समीप आने–जाने की भावनाएँ अनजाने मे प्रवेश कर गयी थी उनके मस्तिष्क मे। सो तीर्थ और सतगण उनके मानस मे समाये रहते थे। ❑

साधुओ के प्रति उनका समर्पण भाव उन्हे हर साधु का प्रिय बना देता था। सन् 1972 का शीतकाल चल रहा था। वे छात्र जिन्हे ग्यारहवी की बोर्ड–परीक्षा देनी थी–रात–रात जाग कर पढ रहे थे, उन्ही मे उमेश जी थे, वे भी श्रम कर रहे थे जी लगाकर। तभी जानकारी मिली कि परमपूज्य मुनि ज्ञानभूषण जी ससघ पधारे हैं, वे पूर्व मे एहसा ग्राम (जिला मुरैना) के निवासी रहे हैं। अत उमेश जी कैसे रुक सकते थे? किताबे छोडी और मदिर जी की राह पकडी।

शीघ्र ही घुल–मिल गये सघ मे। जब मुनिवर ज्ञानभूषण जी से चर्चा करने बैठे तो प्रथम समस्या यही बतलाई कि गृह–त्याग करने मे किस तरह सफलता प्राप्त करे?

मुनिवर ने समाधान रखा–'तुम अपने निर्णय पर दृढ रहना, पारिवारिकजनो को मैं समझा दूँगा।' बस फिर क्या था, सघ के साथ उमेश जी भी विहार कर गये। घर के लोग फिर हैरान। दौडे रास्ते मे मनाया–पथाया, तो समझ मे आया कि सघ को पहुँचाने जा रहे हैं, शाम को लौट आयेगे। पर शाम आ कर चली गयी, उमेश जी न लौटे।

श्री शातिलाल जी खोजते हुए चल दिये, सघ लश्कर पहुँच चुका था। वे लश्कर गये और अपने कतिपय रिश्तेदारो को साथ ले मुनिवर के समक्ष जा पहुँचे। मुनिवर रिश्तेदारो को समझाने लगे कि बालक का भविष्य उज्ज्वल है, उसे साधुमार्ग पर जाने दिया जाये।

मुनिवर के वचन अगारे की तरह लगे। अत वे सब लोग उनसे बहस करने लगे, बहस मे जीतते न दीखे सो आक्रोश मे आकर मुनिवर को बुरा भला कहने लगे। उनके क्रोध से मुनि चुप हो गये। शातिलाल अपने अशात पुत्र को पकडकर मदिर से बाहर ले आये, फिर सभी ने पकडा और सीधे घर। जहाज का पछी

पुन जहाज पर आ गया। तडप गयी उमेश जी की आत्मा। उन्हें भारी दुख हुआ कि उनके कारण मुनिवर को कठोर वचन सुनने पड़े।

लगन मगर खत्म न हुई। लश्कर से जिस पछी को बलात् लौटाकर लाये थे, कुछ ही दिनो बाद वह पुन उड गया और सीधा–सोनागिरि जी–जा पहुँचा।

वहाँ एक मुनिसघ मे समाहित हो जाने का प्रयास किया। तब तक पुन श्री शांतिलाल जी एव श्यामलाल जी लेने पहुँच गये। समझाने–बुझाने मे समय खोना उचित नहीं समझा, उमेश को वार्ता करने के बहाने मदिर जी से बाहर बुलाया और तुरत दोनो ने विवश हो कॉधे पर पड़े गमछे (दुपट्टे) से उनके दोनो हाथ बॉध दिये और बदी की तरह रोते–सिसकते उमेश जी को रेलवे–स्टेशन ले आये। वे सारे रास्ते रुदन करते रहे।

आकर स्टेशन पर बैठे। सुबह से कुछ खाया–पिया नही था उमेश जी ने। अत मोही पिता व मामा ने सूखे मेवा का डिब्बा उनकी ओर बढाते हुए–कुछ खा लेने को कहा। पिता एव मामा जी के चेहरे से करुणा बरस रही थी। पर उमेश ने उन्हे और उनके डिब्बे को अनदेखा कर मौन धारण कर लिया। पिता जी और मामा जी से दृश्य नही देखा जा रहा था। अत उनके अश्रु पोछते हुए कॉपते अधरो से बोले– "उमेश। हम लोग इतने खराब लगते है?"

वाक्य सुनकर उमेश जी ने मौन रहते हुए ही इशारे से बतलाया–'जब तक आप वहा (साधु सघ मे) नही जाने देगे, मै आहार–जल नही लूँगा, न मौन खोलूँगा।'

उनके वाक्य पर कोई प्रतिक्रिया हो कि रेल (ट्रेन) आ गयी। सभी ने उन्हे पकड कर ट्रेन मे बिठा दिया। चलने को ट्रेन तो चल पडी, पर घर के लोगो की चिता न चली, वह जहॉ की तहॉ–मन मे ही–खडी रही।

वे सब घर पहुँच गये। समाचार नगर मे हवा की तरह फैल गया। देखने वालो की भीड लग गयी घर पर। जैसे–तैसे भीड को भगाया, पर कुछ परिणाम न आ पाया, पूरा दिन व्यतीत हो गया। उमेश भूखे प्यासे ही रहे–आये; धीरे–धीरे रात्रि हो गयी।

घर के लोग उमेश जी के पास बैठे–बैठे समझाते रहे। वे न माने। पुन सब जन रो उठे कि हमारा पुत्र होकर भी हमारी बात नही मानता।

शकरलाल जी ने दुख को छुपाते हुए अपनी बात उमेश के समक्ष रखी–'तुम्हे दुकान खुलवादी पर तुम्हारा मन उसमे नही लगता, तुम्हारी बात मानकर शादी की चर्चाएँ रोक दी, तुम्हारी हर बात मानी हमने, फिर भी तुम हम लोगो की बात नही मान रहे? घर पर रह कर जो करना है करो, वहॉ न जाओ।'

फिर भी उमेश जी अपने सकल्प पर अडिग रहे आये।

तब शकरलाल पुन बोले–अच्छा एक बात मानो बेटा, तुमने परीक्षा–फार्म तो भर ही दिया है, अत उसका ध्यान रखो और कुछ दिनो के लिए सघ मे चले जाओ, वही रहो, मगर परीक्षा के समय स्वेच्छा से लौटकर आओ और परीक्षा दो।

परीक्षा की बात पर उमेश जी के मन मे एक चुनौती का प्रादुर्भाव हो गया। अत मन ही मन विचार करने लगे। पर मौन न खोला।

अधिक रात होते देख, घर वालो ने उन्हें सो जाने और दूसरे दिन उत्तर देने कहा। सब लोग सो गये।

दूसरे दिन फिर मान–मनौअल का दौर चला। तब उमेश जी बोले–ठीक है, अभी मुझे जाने दोगे तो परीक्षा के समय लौट आऊगा और परीक्षा दे दूँगा।

गृह–सदस्य प्रसन्न। डूबतो को तिनके का सहारा। सभी मदिर जी गये। फिर उमेश जी ने भोजन किया। पर तुरत गमन की तैयारी शुरु कर दी। उनकी तैयारी देख घर के लोगों की पुन ऑखे छलछला आयीं।

समाज मे शकरलाल जी की इज्जत थी। वे एक अच्छी छवि के सुयोग्य श्रावक थे। अत अनेक गणमान्य लोगो से जुडे थे। उमेश के गमन की खबर पूरे गॉव मे फैल ही चुकी थी। अत. पुन घर पर भीड लग गयी।

छोटी सी उम्र के छोटे से उमेश गृह–त्याग कर जा रहे थे। हर ऑख उन्हे देख रही थी। लोग कुछ दूर तक उन्हे पहुँचाने निकले। उमेश हवा की तरह बह गये मुरैना से, देखने वाले जन ऑखे बहाते देखते रहे। ❑

वे शिवपुरी गये। वहॉ मुनि निर्वाणसागर जी के दर्शनो से मन मे शाति लौट आयी। कुछ दिन सघ–सानिध्य मे रहे और परीक्षा के समय का ध्यान रखते हुए, समुचित तिथि पर वहॉ से लौट आये। गृह–सदस्यो को खुशी हुई कि उमेश ने वचन का निर्वाह किया है बराबर। ❑

सन् 1973 की बात है। परमपूज्य मुनिपुगव विद्यानद जी महाराज ग्वालियर पधारे। उस समय वे आचार्य नहीं थे। पर उनकी ख्याति देश की सीमाये लाघकर, विदेशो मे जैनध्वजो के साथ मुस्करा रही थीं। वे पहले सत हैं इस देश के, जो टेलीविजन या रेडियो के बिना, प्रसिद्धि का सर्वोच्च शिखर स्पर्श कर चुके थे सन् 1973 के पूर्व ही।

देश का प्राण–प्राण उनके प्रवचन सुनने को बेचैन रहता था। भला उमेश जी कैसे चुप बैठ सकते थे? मुरैना से ग्वालियर जाने और लौटने के लिए रेल का सुलभ साधन उनके समक्ष था ही। अत घर मे किसी को बतलाये–बगैर, वे चाहे जब मुनिपुगव का प्रवचन सुनने, कभी दर्शन करने, निकल जाते थे और समय पर लौट आते थे। घर वालो का डर था कि भनक पड जायेगी तो अभी प्रतिबध लग जायेगा। प्रतिबध तोडूँगा तो पहरेदारी लग जावेगी। अस्तु।

चोरी से जाने के कारण कई बार भूखा–प्यासा रह जाना पडता था, क्योकि बाहर का भोजन और जल त्यागे थे। हर कही तो कुऑ–आदि सहज ही नही मिल जाते।

पू विद्यानद जी का विहार हो गया। उमेश जी की यात्राए बद हो गयीं। ❑

कहा था मैंने कि मुरैना मे सतो के चरण जल्दी–जल्दी पडते हैं, उसकी भौगोलिक स्थिति ही ऐसी है। सो एक बार पू क्षुल्लक पद्मसागर जी पधारे, वे शमशाबाद के समीप के थे। उमेश जी ने उनकी परिचर्चादि के लिए खूब समय निकाला। फिर पू ऐलक वीरसागर जी आये, उनके लिए भी समय और सेवा । ❑

सत तो अन्यान्य आये और विहरित हुए, किन्तु उमेश जी और परमपूज्य मुनि निर्वाणसागर जी मे अधिक समय तक युति बनी रही। वे काफी समय तक सोनागिरि मे रहे और उमेश जी बार–बार उनके दर्शनार्थ जाते रहे। रुकते रहे। आते रहे। ❑

नियति बन चुकी थी कि कोई भी साधुसघ आये, उमेश जी पूरा समय उन्हीं के चरणसानिध्य मे व्यतीत करते थे। उनके इस निर्णय से घर मे क्लेश बढता गया, किन्तु उमेश जी गृहजन्य विषमताओ को सहकर भी, साधुओ से मिलते ही रहे। लोग न जाने देते तो उदास हो जाते, अपने कमरे मे बद होकर साधु–दर्शन की भावना करते रहते। सोते तो स्वप्न मे साधु–सत दीखते, कभी मदिर जी और प्रतिमाओ के दर्शन होते, वे धन्य हो जाते। जागते तो मुस्काते रहते। लोग उन्हे देखकर आश्चर्य करते थे। ❑

लोगो को अनुभव हो गया कि उमेश जी ने घर से और गृहसदस्यो से मोह–ममता क्षीण कर ली है और अपने आप को सुखी बना लिया है। गृहसदस्य उनके मोह मे फँसे रहे, परन्तु उन पर किसी का जादू न चल पाया। ❑

परीक्षाये चालू थीं। अतिम पर्चा (पेपर) बचा था उमेश जी का। नगर मे परमपूज्य मुनिवर कीर्तिसागर जी का सघ रुका था, वे परमपूज्य आचार्य 108 श्री निर्मलसागर जी के शिष्य थे। उमेश जी परीक्षाएँ देते रहे और मुनि दर्शन का लाभ भी लेते रहे। अचानक सघ का विहार हो गया।

उमेश जी ग्याहरवी कक्षा के अतिम पर्चे की परीक्षा की उपेक्षा कर, सघ को पहुँचाने, मुनिवर के साथ हो लिए।

घर मे किसी को पता ही न चल पाया, वे भोलेजन तो यही समझ रहे थे कि उमेश अतिम पेपर देने गये हैं। शाम को जब न लौटे तो पिताजी ने पता लगाया। पता लग गया। पिताजी मुनिसघ की ओर भागे। रास्ते से ही उमेश को लौटा कर लाये। घर मे पुन क्लेश–'परचा बिगड गया उसका डर नहीं है, साल खराब होगा इसकी चिता नही है, चल दिया मुनिसघ के साथ।' ❑

बडी सहज बात है, जो युवक घर छोड सकता है, वह परचा भी छोड सकता है। पर यह मत्र उस समय तक किसी के दिमाग मे न आ पाया था। अस्तु। ❑

कुछ सप्ताह ही बीते कि उमेश जी को समाचार मिला–'परमपूज्य आचार्य श्री 108 सुमतिसागर जी महाराज ससघ, सम्मेदशिखर से विहार कर सोनागिरि पहुँच रहे हैं।' समाचार से उमेश का मन प्रसन्नता से खिल उठा, उन्हे विश्वास हो आया कि इस बार गृहत्याग की बात सध जायेगी। पर बेचारे करे तो क्या करे, उन पर तो बाहर जाने का प्रतिबध लगा हुआ है, खासतौर से साधु समागम पर। सो सोचते–विचारते रहे आये। ❑

तभी एक और समाचार मिला कि आचार्य सुमतिसागर जी महावीर–जयती पर लश्कर पधारेगे। उमेश धन्य–धन्य हो गये।

होली का उत्सव निकल गया। महावीर जयती का समय आ गया। गुरुवर लश्कर पहुँच गये। उमेश जी ने दर्शन करने की बात कही घर मे। शकरलाल जी बोले– मैं चलूगा, मेरे साथ चलना।

नाती को लेकर शकरलाल दर्शनार्थ आते–जाते रहे। कभी गुरुवर से चर्चा भी कर लेते थे। एक दिन चर्चा के बीच ही गुरुवर ने नाती (उमेशजी) की ओर सकेत कर शकरलाल से कहा– 'नाती त्यागी बनना चाहता है, मगर बब्बा जी तृष्णाओ से घिरे हुए हैं।' ऐसा कह कर गुरुवर ने वात्सल्य से हाथ बढाया और शकरलाल जी की पगड़ी (फेटा) उतार कर मुस्करा दिये।

शकरलाल जी को उनके वचन भीतर तक स्पर्श कर गये, वे भारी सोच मे पड़ गये, किन्तु उस समय कुछ बोल न सके। गम्भीर हो गये। नाती के साथ लौट आये।

लौटे अवश्य, पर उस दिन वे वास्तव मे वहीं रह गये थे, गुरुचरणो के समीप, हा उनका मन नहीं लौटा था।

घर मे रहते हुए बब्बा जी ने सुबह–शाम सामायिक का सकल्प ले लिया स्वेच्छा से। अजीब परिवर्तन हो गया, बदलने गये थे नाती को, मगर खुद ही बदल गये। ❑

6

'सुपथ के दावेदार'

कुछ समय बाद पू मुनि कीर्तिसागर जी से समागम हुआ बब्बा जी का। कुछ ब्रत लेने का सौभाग्य मिला। दो प्रतिमा के ब्रत ले लिये।

जय हो बब्बा जी की। घर के लोग सोचने लगे–अभी तक उनके नाती को समझाते फिरते थे, अब बब्बाजी को समझाना पडेगा। ❑

सयोग से उसी वर्ष मुरैना मे परमपूज्य आचार्य कुन्थुसागर महाराज (लश्कर वालो) की ससघ वर्षायोग स्थापना हुई। अब नाती के साथ–साथ, बब्बा जी का समय भी सघ–सेवा मे बीतने लगा। कुछ ही दिनो मे शकरलाल जी ने उमेश जी को पीछे छोड दिया, जब उन्होने आचार्यश्री से सप्तम् प्रतिमा के व्रत लेने का सौभाग्य पाया।

घर तो घर, गॉव के लोग चकित हो गये। ❑

उसी वर्ष की बात है, मुरार मे पूज्य मुनि कीर्तिसागर जी का चातुर्मास सम्पन्न हो रहा था और सोनागिरिजी मे पू आचार्य सुमतिसागर जी का। फलत उमेश जी कई बार दोनो स्थलो पर पहुचे और दोनो सन्तो के दर्शन किये। दोनो की नजरो मे वे स्थान भी बना सके थे।

वर्षायोग के बाद दोनो सतो का मुरार मे मिलन हुआ। उमेश जी दो स्थानो की दूरी तय करने के बजाय, अब एक ही स्थान आते–जाते और अधिक समय देते। जब कभी पू आचार्य सुमतिसागर जी से वार्ता का सयोग भी निकालते। एक दिन आचार्यश्री ने उन्हे अध्ययन की प्रेरणा की तथा मार्ग भी बतलाया, बोले–जयपुर मे क्षुल्लक सन्मतिसागर जी है उनके पास चले जाओ। वे पडित जी को बुला देगे, आपकी पढाई शुरु हो जावेगी।

गुरु–मत्रणा को गुरु–आदेश मानकर उमेशजी घरवालो को बतलाकर कि पढने जा रहे है, जयपुर चले गये। यात्रा–लम्बी थी। स्थान अपरिचित था, किन्तु मन मे श्रेष्ठ सकल्प था। अत किसी तरह पहुॅचने का सद्–प्रयास किया, दूसरे दिन पहुॅच गये।

जयपुर महानगर की विशालता देख कर उमेश जी चकित थे, पूछते पूछते–छोटे दीवान जी के दिगम्बर–जैन–मदिर पहुॅच ही गये। वहा एक छोटे से कक्ष मे पू क्षुल्लक जी विराजे हुए थे। उमेश जी ने दर्शन किये, मन की आकुलताएँ क्षीण हो गई, शाति मिली। फिर सारा वृतान्त क्षुल्लक श्री को सुनाया।

क्षुल्लक जी वार्ता सुनकर प्रसन्न हुए। फिर बोले–मै भी पढने ही आया हूॅ इधर, तुम भी पढो, अच्छा रहेगा। पडित जी नित्य आते है। वे यहॉ प चैनसुखदास जी द्वारा सचालित–श्री दिगम्बर जैन सस्कृत महाविद्यालय जयपुर मे हैं। पढने–पढाने मे सहयोग देने के उद्देश्य से क्षुल्लक जी रोज सुबह उमेश जी को जल्दी जगा देते थे। वे उठ कर व्याकरणमाला रूप आदि याद करते थे।

क्षुल्लक जी का अनुशासन बहुत अच्छा था, कहे–कठोर। वे अपनी पढाई मे लगे रहते थे, किन्तु उमेश जी पर कडी नजर रखते थे, अधिक बोलते–बतियाते नही थे, काम से काम रखते थे। यदि उमेश जी समय पर कुछ भूलते तो बहुत डॉटते थे। अपने समीप न बैठने देते थे। कभी–कभी त्रुटियॉ अधिक होने पर समझाने लगते– 'काहे को यहॉ परेशानी झेल रहे हो, घर चले जाओ, सुख से रहना।'

उमेश जी समझ जाते कि यह समझाइश नही है, योग्य–शिक्षक द्वारा छात्र को दी जाने वाली ताडना है, बेचारे चुप रहे जाते। मगर क्षुल्लक जी त्रुटियॉ बतलाने से न चूकते, कोई न कोई त्रुटि निकालते ही रहते थे। वे अपनी जगह सही थे, पर चूॅकि उमेश जी ने कभी अधिक डॉट नही खाई थी, अनेक घटो तक पढाई

नही की थी, अत उनकी सहनशीलता चूकने लगी। पर बेचारे क्या करते? लौटते तो पढाई चली जायेगी, नही लौटते तो सहनशील होना पडेगा। कहे–डाट खाते/सहते हुए भी पढने की लालसा धीमी न हुई; वह और प्रखर होती गई। वे ध्यान लगाकर पढते रहे।

जलवायु की प्रतिकूलता से उन्हे बुखार आने लगा। एक दम तेज बुखार। एक दिन उठने–बैठने की हिम्मत नही थी शरीर मे, पर उन्होने क्षुल्लक जी को न बतलाया। भूखे–प्यासे डटे रहे, पढते रहे। दूसरे दिन दोपहर एक बजे कुएँ पर गये, नहाया धोया, पानी लाये, मदिर गये, फिर भोजन बनाया। बडी मुश्किल से दो–चार ग्रास खाना ले सके। उस दिन माँ की याद आई। बहुत याद आई–'भोजन के लिए कितना मनाती थी?' ❑

धीरे–धीरे वह समय भी निकल गया, बुखार जाता रहा। फिर तो प्रात काल बाग मे घूमने जाने लगे। नाममाला के दो श्लोक लिख कर साथ ले जाते थे, घूमते हुए उन्हे याद करते थे। लौटते–लौटते याद हो जाते थे।

फिर कातत्र–व्याकरण याद करने लगे। शाम को महाविद्यालय के प्राचार्य श्री गुलाब चद जैन दर्शनाचार्य को मौखिक सुना देते। वे काफी समय देते थे।

उमेश जी एक वर्ष वहाँ रहे। समय पर परीक्षा भी दी। सभी साधुओ का वात्सल्य प्राप्त करने मे भी सफल रहे, किन्तु स्वास्थ्य साथ न देता था, बार–बार बीमार हो जाते थे। बीमारी के कारण परमधन्य वैद्यराज श्री सुशील कुमार का सानिध्य लाभ भी लिया, वे योगीवत् जीवन बिताते थे। उमेश जी उनसे काफी प्रभावित हुए। प भवरलाल जैन न्यायतीर्थ, श्री हीरालाल जी सेठी, श्री गोपीचद जी परवार आदि विद्वतवर्ग से भी लाड–प्यार मिलने लगा था।

वहाँ अवस्थित पू आर्यिका धर्ममति जी, पू बुद्धिमति जी एव क्षुल्लिका जिनमति जी से उमेश जी को वात्सल्य मिलता था। तभी परमपूज्य आचार्य देशभूषण जी महाराज का आगमन हुआ। मगर तब तक उमेशजी पुन अधिक बीमार हो गये।

क्षुल्लक जी ने कहा–उमेश जी, आपको कुछ समय के लिए जलवायु बदलना चाहिए। मेरी राय है कि आप अजमेर चले जाते वहाँ परमपूज्य आचार्य सुमतिसागर जी केशरगज स्थित मदिर मे विराजित हैं, उनका दर्शनलाभ भी मिल जायेगा घूमना भी हो जावेगा।

कथन तो उचित था, मगर उमेश जी उन्हे छोडना नही चाहते थे। महत्वपूर्ण बात यह कि क्षुल्लक जी भी इन्हे न जाने देना चाहते थे, परतु ज्वराक्रात–काया को स्वस्थ करना जो आवश्यक था, वह निर्णय लेना पडा। उमेश जी आज्ञा–प्रधानी थे, वरिष्ठो की आज्ञा मान कर वहाँ आये थे और वरिष्ठ की आज्ञा से प्रस्थान को तैयार हो सके। क्षुल्लक जी को उनका स्वभाव बहुत अच्छा लगता था। वे जानते थे कि उमेश जी ने एक वर्ष मे मेरे अलावा अन्य किसी से सम्पर्क/व्यवहार/ बढाने का प्रयास नहीं किया, न मेल–मुलाकात। क्षुल्लक जी भी इतना अधिक ध्यान रखते थे कि उमेश को काम के लिए किसी से कुछ कहना न पडे, और कार्य हो जावे। यो उमेश जी शास्त्र वाचन मे उत्साही थे। गुरु–आज्ञा से कभी सुबह कभी रात्रि शास्त्र–सभा मे शास्त्र बाचते थे। उनका ढग लोगो को अच्छा लगता था। अत समाज के अनेक महत्वपूर्ण लोग उन्हे चाहने लगे थे। उमेश जी गुरु–आज्ञा मे पक्के थे। अत जब जयपुर मे गुरु–आज्ञा–पालन का कर्त्तव्य सामने आ गया तो उन्हे अजमेर जाना पड गया।

वहाँ केशरगज मे परमपूज्य गुरुदेव आचार्य सुमतिसागर जी के दर्शन किये। प्रसन्नता का जो अनुभव उस समय हुआ उन्हे, वह वर्णनातीत है। वे हँसे; मन हँसा, आँखे हंसी, रोम–रोम हँसा।

कुछ ही दिनों मे स्वास्थ्य अच्छा हो पडा।

अजमेर का प्रसग, सन 1973 का है, जब वहा केशरगंज में परमपूज्य आचार्य सुमतिसागर थे तो वहा से एकाधिक किलोमीटर दूर अवस्थित सोनी जी की नसिया मे परमपूज्य आचार्य श्री 108 विद्यासागर जी ससघ विराज मान थे। वे उस समय नूतन–आचार्य थे, मगर उनकी काफी प्रशसा सुन रखी थी उमेश जी ने।

एक दिन उमेश जी ने गुरु से आज्ञा ली और उनके दर्शन करने चले गये। प्रथम दिन ही उनसे वार्ता का पावन–क्षण प्राप्त हो गया। दोनो मे काफी समय तक वार्तालाप हुआ। दोनो ने एक दूसरे को प्रभावित किया। फिर तो उमेश जी प्राय रोज दर्शनार्थ जाने लगे, तब आचार्यश्री के साथ कुछ क्षुल्लक और ब्रह्मचारी थे, उनसे भी परिचय बढ गया। खासतौर से ब्र भीमसेन (मुनि भूतवली जी वर्तमान में) से; समानपद होने के कारण, अधिक बाते कर लेते थे।

आचार्यश्री अपने सघ को बहुत अच्छी तरह से पढाते थे। अत आचार्य सुमतिसागर जी ने उमेश जी को उनसे पढने की आज्ञा दे दी। उमेश जी एक आचार्य की आज्ञा शिरोधार्य कर, दूसरे आचार्य की स्वीकृति लेने नसिया जी चले गये, स्वीकृति मिल गई। स्वीकृति के साथ उमेश जी को उचित वात्सल्य भी मिला। फलत नित्य आहार के पश्चात प गोपाल दास बरैया जी द्वारा लिखित जैन सिद्धान्त प्रवेशिका तथा अपराह्न के समय कातत्र–व्याकरण और तत्वार्थ सूत्र पढाने लगे। (तत्वार्थ सूत्र की टीका प कैलाशचद द्वारा लिखित थी) उमेश जी भारी लगन लगा कर पढते रहे। श्रम से कभी जी न चुराते थे। पाठ याद कर समय पर सुनाते थे। कभी–कभी वर्षा के कारण तो कभी अन्य कारण से रात्रि मे बिजली गुल हो जाती थी, तब वे सन्तो की वैयावृत्ति मे अधिक समय देते थे और बाद मे छत पर जाकर, विद्युत–खम्भे से आ रहे प्रकाश मे पढाई पूर्ण करते थे। यो व्यवस्था बहुत अच्छी थी, प छगन लाल जी, श्रावक श्री कजोडीमल जी सहित ममतामयी ब्र कचनबाई दृष्टि रखते थे। स्वत आचार्यश्री विशेष ध्यान देते थे, विशेष समय प्रदान करते थे।

धीरे–धीरे वर्षायोग पूर्णता की ओर था। कुछ समय बाद गुरुओ के अलग–अलग विहार की स्थिति आ गई, आचार्य विद्यासागर जी को कहीं, तो आचार्य सुमतिसागर जी को और कहीं। फलत उमेश जी दोनों गुरुओ से आज्ञा लेकर समीपस्थ नगर सीकर चले गये। वहा उनके पूर्व परिचित मुनिराज श्री विवेकसागर जी ससघ अवस्थित थे। उनके दर्शन किये। वहीं रुक गये।

पूर्व मे चर्चा की जा चुकी है कि पू. विवेकसागर जी की आहार चर्या बहुत कठिन थी। कहे–कठोर थी, कई बार दो–दो दिन तक विधि नहीं मिलती थी। वे उमेश जी को साधुपथ पर आने की प्रेरणा, करते थे। अब जब उन्होने पुन उमेश को अपने समीप पाया तो उनकी पढाई शुरु करा दी। उमेश जी दिन रात व्याकरण आदि का अध्ययन करने लगे।

रात्रि ग्यारह, कभी बारह बजे तक, घूम–घूम कर सूत्र याद करते और प्रात पुन शीघ्र उठ कर पढने लगते, फिर याद किये अश को लिख कर देखते।

कुछ समय बाद मुनिवर ने विहार कर दिया, उमेश जी उनके साथ चल पडे। पचेवर आदि स्थान होते हुए कूकनवाडी (नागौर जिला) राजस्थान की एक अन्य पावन बस्ती मे पहुँचे। वहा अष्टान्हिका पर्व मे विधान आयोजित किया गया था, अत कुछ दिन रुके। वहा भी मुरैना से उमेश जी के पिता श्री शाति लाल जी जा पहुँचे।

शीतकाल का समय था। ठड तेज पड रही थी। मुनिसघ का गमन सम्भाव्य था। शातिलाल जी ने उमेश जी से घर चलने कहा। किन्तु उन्होने सघ के साथ विहार करने का भाव बतलाया। तब वहा अवस्थित श्री क्षुल्लक जी को, पिता–पुत्र के बीच आना पडा। वे कडे स्वर मे बोले– 'पहले घर जाकर समुचित उपचार कराओ स्वस्थ होते ही आ जाना।'

वार्ता सफल हुई, शातिलाल जी के साथ उमेश जी चल पडे। पहले, मदिर जी से बस–स्टेन्ड पहुँचे, सयोग से उपयुक्त बस निकल चुकी थी। फलत वह भीषण ठडी रात्रि, स्टेन्ड पर ही काटने की स्थिति निर्मित हो गई। अगली बस सुबह 6 बजे थी। मगर समस्या सीग मार रही थी कि भयानक रात कैसे व्यतीत होगी! यो शातिलाल जी के पास छोटा सा बिस्तरा था, पर वह एक यात्री लायक था। उन्होने उमेश जी से उस पर लेट जाने को कहा, पर उन्होने मना कर दिया।

पिताजी ने समझाया–तुम्हे दर्द तो रहता ही है, ज्वर भी है, शीतलहर तेज है, अत कम से कम एक कम्बल तो ले लो ताकि कानो मे हवा न लगे।

परन्तु उमेश जी नही मान सके पिता का ममतालु अनुरोध। वे अपनी अतिरिक्त धोती (पर्दनी) चादर की तरह ओढ कर लेट गये। पिता की आत्मा कलपती रही रात भर।

सुबह नियत समय पर बस मिल गई। वे चल पडे मुरैना की ओर।

पिता–पुत्र मे मोह से परे, वात्सल्य के धरातल पर सुदर चर्चा हुई। फिर पिताजी ने बतलाया कि तुम्हारे बब्बा शकरलालजी तो क्षुल्लक दीक्षा ले चुके है, तुम्हे पत्र लिखा था, तुम आये ही नही।

सुनकर उमेश जी बहुत प्रसन्न हुए। मन मे सोचा– 'यहॉ भी बब्बाजी मुझसे आगे निकल गये।' तब तक पिताजी ने कहा– 'क्षुल्लकजी के दर्शन तो कर ही लेना, स्वास्थ्य–लाभ भी ले लेना।'

पिताजी के सदेश मे एक जीवित यथार्थ छुपा हुआ था।

चलने को तो चल पडे थे, पर घर के नाम से उनकी 'आत्मा' को बुखार सा हो आया था। वह तो यही मुनिचरणो मे सुखी थी। किन्तु . ।

मुरैना पहुचे। घर पहुँचे। समाज को पता चला तो लोगो का तॉता लग गया– 'पडित उमेश जी घर आये है, जरा मिल आये।' यही वाक्य सोच–सोच अनेक जन आते रहे। तॉता लगा रहा। वह तो जब वे स्वाध्याय को बैठ गये, तब क्रम टूटा। उमेश जी समय पर जाप, स्वाध्याय, शास्त्रवाचनादि करते रहे। चार दिन बाद क्षुल्लक वर्धमानसागर जी के दर्शनार्थ अम्बाह को चल पडे, मुरैना के निकट ही है।

अम्बाह मे विशाल श्रीसघ विराजमान था, जिसमे प पू आचार्य श्री विमलसागर जी (भिड) एव प पू कुन्थुसागर जी (लश्कर) जैसे सतो के साथ पू क्षुल्लक वर्धमानसागर जी अवस्थित थे। जब उमेश जी उनके समक्ष पहुचे तो बिना कुछ बोले, उनके चरणो मे नत हो गये। ❑

कहे– उमेश जी उनके चरणो से लग गये। फिर सब समाचार बतलाये और समाचार प्राप्त किये। वार्ता के दौरान ही उन्हे ज्ञात हुआ कि बब्बा जी को तो 16 मई 1974 को क्षुल्लक दीक्षा प्राप्त हो चुकी है।

कारण बहुत विचित्र था, हुआ यह कि एक वर्ष पूर्व जब उमेश जी जयपुर पढने चले गये थे, तो नगरवासी–इष्टजन श्री शकरलाल जी को छेड देते– 'नाती तो जवानी मे ही घर–बार छोड कर चला गया, बाबा ससार के मोहबधन मे बधे हुए हैं।'

कहने को लोग कह देते थे, पर सब जानते थे कि बेचारे वृद्धावस्था मे क्यो घर छोड़े? कहाँ जावे?

लोगबाग तो कह कर हँस लेते थे, मनोविनोद कर लेते थे, किन्तु शकरलाल जी भीतर ही भीतर आदोलित हो पडते– "सच ही तो कहते हैं ये लोग, जब नाती जा सकता है तो बाबा क्यो नही?"

उमेश जी का घर छोडना बाबा जी की मुख्य प्रेरणा का निमित्त बन गया था, वे कई दिनो तक गम्भीरता से सोचते रहे थे। फलत जिन गुरुवर कुन्थुसागर से सप्तम प्रतिमा के व्रत लिये थे, ब्रह्मचर्य–दीक्षा ली थी, उन्ही से क्षुल्लक–दीक्षा प्राप्त करने मे सफल हो गये थे।

उमेश जी ने प्रथम बार बाबा के दर्शन किये थे–बाबा के रूप मे नही, क्षुल्लक के रूप मे। वे आत्मविभोर हो गये और चरण पकड कर काफी देर तक उन्ही के पास बैठे रहे। दो धर्मात्मा आमने–सामने थे, जो कल तक बडा था–उम्र मे, वह आज पद मे भी बडा हो गया था। ज्ञान मे बडा। धर्म मे बडा। निर्मोहत्व मे बडा।

उमेश जी को पहली बार विश्वास हुआ कि बाबा उन्हे धार्मिक क्षेत्र मे इसलिए बढाना चाहते थे कि वे स्वत भीतर से पूर्ण धर्मनिष्ठ थे। तो उनका वह लाड–प्यार–मोह? क्या वह कुछ और था? नही वह धर्मपथ पर चलाने का उचित माध्यम था।

उमेश जी के मन मे पाडित्य घुमड आया और पोर–पोर से श्रद्धा के भावपुष्प झड गये क्षुल्लक जी के चरणो मे, यह कोई देख ही न पाया। बस दो आत्मनो ने अनुभव भर किया।

उस दिन उमेशकुमार जी काफी समय तक रहे क्षुल्लक जी के पास। घर लौटे तो उन्हे बाबा के पुराने शब्द याद हो आये– 'उमेश, तुम कभी निराश नही होना, उत्साह से रहना। तुमने जो सयम और त्याग का पथ चुना है वह महान है, उसी पर चलकर तुम महान बनोगे। तुम्हारे पुरा–पडौस मे भी धार्मिक जन रहते हैं, वे सब तुम्हे बहुत चाहते है, उनकी यह चाह अमर हो जावे, कुछ ऐसा करना।'

उमेश जी को क्षण भर को लगा कि ये शब्द उन्होने मुझे भले ही कहे हो पर आज तो वे उन्ही पर पूरे हुए हैं।

दूसरे दिन जब पुन उमेशजी क्षुल्लकजी के दर्शनार्थ गये तो उन्होने कुछ भक्तियो और प्रतिक्रमणो का उच्चारण कराया उमेशजी से। सुन कर गदगद् हो गये थे, आवाज पहले से अधिक स्पष्ट और गम्भीर पा रहे थे।

उमेश जी लौटने लगे तो प्रश्न कर बैठे क्षुल्लक जी से–कुछ शिक्षा/उपदेश प्रदान कीजिए। उन्होने कोमल स्वरो मे सबोधन दिया–तुम जैन हो, वीरो की सन्तान। कदम यदि सही दिशा मे उठे तो फिर उसे पीछे न करना। विपत्तियो मे धैर्य न खोना, पुरुषार्थी रहकर प्रतीक्षा करना। स्वय का कार्य अन्य के भरोसे नही छोडना और प्रमाद से दूर रहना। जितना अधिक अध्ययन कर सको, अवश्य करना। तुम्हारे मार्ग पर आने वाली बाधाएँ स्वय लौट जायेगी। तुम ज्ञाता दृष्टा बन कर रहना। ❑

7

साधना के सोपान

आठ दिवस बीत गये। उमेश जी को लौटने की शीघ्रता थी। सभी जन रोकते रहे किन्तु वे सभी को समझा कर वापिस हो गये। मुरैना से अजमेर। वहाँ पता चला कि परमपूज्य आचार्यश्री विद्यासागर जी महाराज तो नसिया जी से विहार कर अन्यत्र चले गये हैं। उमेश जी का युवा–मन क्षण भर को विकल हो गया, फिर धैर्य धारण कर पता लगाया। सघ अजमेर से 25 कि मी दूर वीरग्राम मे था, उमेश वहीं चले गये। आचार्यश्री के दर्शन किये। मुरैना के समाचार दिये। बब्बा की दीक्षा की खबर सुनाई, फिर प्रार्थना कर बैठे कि आचार्यश्री उन्हे ब्रह्मचर्य–दीक्षा प्रदान करे।

आचार्यश्री पात्र को पूर्व मे ही परख चुके थे। अत अनुरोध को स्वीकार किया और सन् 1974 के शीतकाल मे उमेश जी को एक साधारण समारोह मे ब्रह्मचर्य दीक्षा प्रदान कर दी। वे हो गये– "ब्र प उमेश कुमार जी।" ❑

सघ मे रहते हुए ब्र उमेश जी को दो तीन दिन ही हो पाये थे कि एक दिन उपयुक्त अवसर देखकर उन्होने आचार्यश्री से पढाने की प्रार्थना की।

ब्र उमेश जी के कथन पर आचार्यश्री मुस्कराते रहे काफी देर तक, फिर अपने गुरु से प्राप्त सयम को दोहराते हुए बोले–ब्र जी, आपको पढा दूँगा, पर वाहन त्याग?

ब्र उमेश जी को याद हो आया कि जब पू गुरुवर विद्यासागर जी, ब्र विद्याधर के रूप मे, अपने गुरु पूज्य आचार्य ज्ञानसागर जी से शिक्षा लेने गये थे, तब उनके समक्ष भी वाहन–त्याग की बात आई थी, फलत ब्र उमेश जी भी मुस्करा पडे।

सोचते रहे कि तब से अब बहुत अतर आ गया है, वाहन का त्याग कठिन कार्य है, पर. . . । पर यदि गुरुवर से शिक्षा लेना है तो, त्याग तो करना ही पडेगा। फलत ब्र उमेश जी गुरुवर से बोले– 'जी, विशेष परिस्थिति को छोड कर, वाहन–त्याग करता हूँ।'

–बस या रेल?

–जी बस भी और रेल भी।

– 'ठीक है।' गुरुवर समझ गये कि ब्र उमेश जी को अध्ययन की तीव्र आकाक्षा है। उन्हे ऐसा पात्र ही पसन्द आता है।

गुरुवर ने सर्वप्रथम 'वाहन त्याग' के विषय मे प्रकाश डाला। गुरुदेव आचार्य ज्ञानसागर जी का प्रसग सुनाया और दूसरे दिन से पढाने का समय तय कर दिया।

पढाई शुरु। ब्र उमेश जी को नये सिरे से कातत्र–व्याकरण, तत्वार्थ–सूत्र, जैन–सिद्धान्त प्रवेशिका आदि का ज्ञान प्राप्त होने लगा। प्रतिदिन कुछ सबक देते थे–कठस्थ कर लेने का। फिर समय पर मौखात सुनते और समझाते। बीच–बीच में पढाई विषयक कोई न कोई सस्मरण भी सुनाते और शिष्यो का मस्तिष्क ताजा कर देते।

ब्र उमेश जी गुरुवर के अनुरूप चलते थे। अत. उनसे डॉट–डपट खाने के मौके कम ही आते थे।

सघ ने वीरग्राम से विहार कर दिया। ब्र उमेश जी साथ–साथ चलते गये। एक स्वच्छ वेष्टन मे अपने ग्रन्थ बाँध लिए। जहॉ कहीं समुचित स्थान और अवसर मिलते तो गुरुवर शिष्यो को पढ़ाने का समय निकालते, शिष्य मनोयोग से पढते। जहा गुरुवर न पढा पाते, वहॉ ब्र उमेश जी समय निकाल कर

व्याकरण–सिद्धि के पाठ कठस्थ करते रहते। पूर्व मे पू क्षुल्लक सन्मतिसागर जी ने पढने की जो प्रेरणा और शैली दी थी, उसी का लाभ लेते हुए, ब्र उमेश जी पढने मे मग्न रहते थे, अन्यथा क्षुल्लक जी से सम्पर्क होने के पूर्व तक तो, वे मात्र आहार–दान देने और वैयावृत्ति करने तक सीमित थे।

विहार करते हुए श्रीसघ महावीर जी पहुँच गया। कुछ ही समय बाद, वहाँ परमपूज्य आचार्यकल्प श्रुतसागर जी ससघ पहुँचे, उन्ही के सघ के साथ जयपुर से क्षुल्लक सन्मतिसागर जी चल पडे थे। अत करीब पच्चीस पिच्छियाँ साथ हो गई थी। जब वह सघ महावीरजी पहुँचा तो परमपूज्य आचार्य विद्यासागर जी ने ससघ उनकी अगवानी की।

क्षुल्लक जी के आ जाने से ब्र उमेश जी को जयपुर के दिन याद हो आये। अत वे महावीरजी प्रवास की अवधि मे क्षुल्लक जी के समीप ही रुके। क्षुल्लक जी को नजदीक पाकर बहुत प्रसन्न थे।

समय पूर्ण होते ही आचार्य विद्यासागर जी ने वहाँ से विहार कर दिया। ब्र उमेश जी का मन विहार का न हुआ, अत गुरुवर से आज्ञा लेकर वही रुके रहे।

आचार्यकल्प श्रुतसागर के सघ मे उपाध्यायश्री अजीतसागर जी पढाने के लिए प्रसिद्ध थे। क्षु सन्मतिसागर के अनुरोध पर, उन्होने ब्र उमेश जी को भी पढाना शुरु कर दिया। वही, कातत्र–व्याकरण और कुछ अन्य ग्रन्थ।

श्री महावीरजी जैसे अतिशय क्षेत्र मे एक अतिशय हुआ। आहारो के पश्चात ब्र उमेश जी वसतिका से एक–दो किलोमीटर दूर जगल मे चले जाते और वहाँ कभी दो, तो कभी तीन घटे के लिये वस्त्रो का त्याग कर, (नग्न रह कर) स्वाध्याय करते। स्वाध्याय करते–करते ध्यानलीन हो जाते। घटो तक समाधि चलती। कभी पद्मासन तो कभी खडगासन रहते।

उनकी समाधि–साधना से आचार्यकल्प श्रुतसागर जी को खुशी हुई। उनका वात्सल्यभाव प्रगाढ हो गया। वहाँ–पू आर्यिका विशुद्धमती जी भी एक अन्य वसतिका मे ससघ ठहरी थी। वे परमपूज्य आचार्य शिवसागर जी के साथ थी। ब्र उमेश जी को आर्यिकाश्री से भी मातृत्वपूर्ण वात्सल्य मिलने लगा।

सबका सानिध्य–लाभ लेकर ब्र उमेश जी ने अनुभूत किया– 'परमपूज्य आचार्यकल्प श्रुतसागर जी धीर–वीर–गभीर और अनुशासनप्रिय हैं। वे धन्य हैं, उनका वात्सल्य सब को मिले।' ❑

फिर विहार की बेला आ गई। सघ ने महावीरजी से विहार कर दिया–आगे आगे आचार्यकल्प श्रुतसागर जी, पीछे–पीछे सर्व शिष्यगण और उनके पीछे सहस्रो श्रावक।

एक दिन रास्ते मे भयकर हवा चली, लोग समझ गये कि तूफान आ रहा है। उसके वेग से अनेक श्रावक तितर–बितर हो गये तो अनेक शिष्य भी। तभी भारी वर्षा होने लगी। कोई कही तो कोई कही। देखते–देखते नदियो मे बाढ आ गई। प्रभुकृपा से कोई सदस्य खोया नही। गुरु–आज्ञा से शिष्यगण नदी पार करने लगे, पानी की मात्रा तो अधिक थी ही, वेग भी तीव्र था, अत गुरुवर ने नाव पर चलने की आज्ञा प्रदान करदी। आज्ञा शिरोधार्य कर समस्त सघ नाव पर हो गया। नाव बढने लगी, वर्षा और हवा भी बढ गई। फलत नाव डगमग होने लगी। कुछ शिष्य क्षण भर को घबरा गये, तभी वर्षा का पानी ब्र उमेश जी के कान मे भर गया। कान तड़कने लगा।

मल्लाह समझदार और अनुभवी था। वह नाव नियत्रित कर सावधानी से उस पार ले जाने मे सफल रहा। ब्र उमेश जी को तुरन्त अनुभव मे आया कि ये गुरु भी तो हमारे श्रेष्ठ मल्लाह ही हैं जो हम सभी को अत्यत सावधानी से भवसागर पार कराते हैं।

नाव के डूबने का भय समाप्त हो गया। सभी शिष्य नदी का किनारा प्राप्त कर चुके थे। किसी को कुछ विशेष क्षति नहीं हुई। फिर चरण बढे और श्रीसघ अतिशय क्षेत्र चमत्कार जी पहुँचा, दर्शन कर हर्षित। फिर नगर सवाईमाधोपुर में प्रवेश किया। समाज ने सघ की अगवानी की।

रात्रि मे अनेक वरिष्ठ साधुओ की वैयावृत्ति करने का सु–अवसर ब्र उमेश जी को मिला, आचार्यश्री का भी।

वसतिका मे वे आचार्यश्री के समीप ही बैठते थे, और उनके गुणो को अपने जीवन मे उतारने का प्रयास करते। आचार्यश्री गम्भीर स्वभाव के दूरदृष्टि–सत थे। उनके एक–एक अनुभव को ब्र उमेश जी ध्यान से सुनते थे, बाकी पूरा समय अध्ययन मे देते थे।

दिन मे साधु–चर्या मे पूर्ण समय देते हुए ब्र उमेश जी रात्रि मे देर तक व्याकरण आदि पर ध्यान देते, पढते, याद करते, थक जाने पर आराम। आचार्यश्री उन्हे अधिक समय तक पढता देखते तो कभी–कभी मीठी डाट लगा देते– इतनी रात तक जाग कर पढते हो, तबियत न बिगाड लेना, जाओ सो जाओ।' फलत ब्र उमेश जी पढते हुए सावधान रहने लगे कि कही आचार्यश्री न देख ले।

आचार्यश्री का सघ मे अच्छा अनुशासन था। ❑

कभी–कभी ब्र उमेश जी प्रातकाल शौच के लिये नगर के समीप पहाडी पर चले जाते और लौटते समय वहॉ एकान्त मे वृक्षादि के नीचे वस्त्र रख देते, फिर दिगम्बर हो, खडगासन मे ध्यान करते। इस तरह की क्रियाओ से उन्हे आत्मसतोष तो मिलता ही था, उनका आत्मबल भी बढता प्रतीत होता था।

एक दिन तो गजब हो गया। वे पहाडी से शौचोपरान्त, नीचे आ गये, धर्मशाला मे। वहॉ अनेक कमरो के साथ एक विशाल हाल था, उसी मे त्यागियो के कपडे सूखने डाले जाते थे। ब्र उमेश जी ने वहॉ किंचित एकान्त पाया। अत एक उत्तरीय (दुपट्टा) लपेट कर जाप देने खडे हो गये। ध्यान लग गया। खडगासन मुद्रा। धीरे–धीरे चार घटे बीत गये, वे ध्यान मे ही रहे। सघस्थ अन्य साधु उनकी खोज करने लगे। कोई पहाडी पर ढूँढने गया तो कोई छतो पर, कोई मदिर मे तो कोई कही। ब्र उमेश जी न मिले। हलचल बढ गई, समय चार से बढ कर आठ घटा हो गया। अब तो आचार्यश्री भी चिन्तित हो गये। शाम होने वाली थी।

एक अन्य ब्र जी कपडा उठाने हाल मे गये तब उनकी दृष्टि ब्र उमेश जी पर पडी। उन्होने सघ मे सूचना दी। अन्य ब्र गण देखने आये, सूचना आचार्यश्री तक पहुँच गई, वे मन ही मन प्रसन्न हुए।

लगभग आठ घटे बाद ब्र उमेश जी का ध्यान पूर्ण हुआ, वे काफी थक गये थे। चेहरे पर भूख और प्यास की रेखाए उभर आयी थी। पिडलियो और पजो मे सूजन आ गई थी। शरीर मे कमजोरी।

फिर कुएँ पर गये, स्नान किया, श्री जी के दर्शन किये और फिर सायकालीन भोजन, पर भोजन क्रिया निष्फल रही। ❑

उस दिन सघस्थ साधु ब्र उमेश जी के ध्यान पर चकित हो गये थे। ब्र उमेश जी को पहाडियो पर घूमना, जंगलो मे टहलना–अच्छा लगता था। कई बार रास्ते मे कोई ऊबड–खाबड पहाडी आती तो ब्र उमेश जी दौड़कर उस पर अवश्य जाते और घूम–फिर कर लौट आते।

पहाडो व चट्टानो पर ध्यान करने से उमेश जी को चैन मिलता था। कहे थे–प्रकृतिप्रेमी। ❑

सवाईमाधोपुर की पहाडियॉ, धर्मशाला और मदिर के छत ब्र उमेश जी की साधना के उत्तम स्थल बन गये थे। वहॉ पू आर्यिका विशुद्धमती माताजी की वयोवृद्ध–श्लथकाय–गुरुणी जी की सेवा और समाधि के क्षण भी ब्र उमेश जी को देखने और समझने को मिले। आर्यिकाश्री की गुरुणी स्वनामधन्य वरिष्ठ आर्यिकारत्न पू विनयमती माताजी थी, वे काफी समय से अस्वस्थ थी। ब्र उमेश जी सदा समय निकाल कर उनके समीप बैठते और ज्ञानपूर्ण बातो मे रुचि लेते थे। जब उन्होने मरणसमाधि ले ली, तो ब्र जी और अधिक समय देने लगे। एक दिन वृद्ध माताश्री ने अपनी कुछ महत्वपूर्ण किताबे और हस्त–लिखित डायरियॉ ब्र जी को वात्सल्यपूर्वक प्रदान की और कहा कि खूब ध्यान लगा कर अध्ययन करते रहना, आपको अभी काफी आगे बढना है।

ब्र उमेश जी ने विनय–भाव से उनका वह अक्षर–प्रसाद स्वीकार किया और उन्हे वार्ता से निश्चिंत कर दिया।

कुछ दिनो बाद उनका समय पूर्ण हो गया, वे नही रही। ब्र जी अतिम क्षण तक उन्ही के पास उपस्थित रहे थे। ❑

ब्र जी का कान जब–तब तडक उठता था, यहॉ भी वही हुआ। कान का दर्द बढ गया। दिन रात भारी कष्ट। दर्द और दर्द। वाछित इलाज चला, किन्तु लाभ न मिला। तब डाक्टरो–वैद्यो ने जयपुर जाने का परामर्श दिया। ब्र उमेश जी वाहन–त्याग किये हुए थे, अत मना कर दिया। तब क्षु सन्मतिसागर जी ने समझाया– 'उमेश! तुमने बस और रेल का त्याग किया है, हरेक वाहन का नही। अत मेरा आदेश है कि श्रावको के साथ तुम साईकिल पर वहॉ जाओ, रुको नही, अन्यथा तुम्हे कोई बडी बीमारी जकड सकती है।'

क्षुल्लक जी की आज्ञा टालने की क्षमता ब्र उमेश जी मे न थी। अत उनके तर्कपूर्ण आदेश को उचित मानकर श्रावको के साथ जयपुर चले गये। श्रावक साईकिल चलाते थे। उमेश जी को पीछे एक कोमल तकिया युक्त केरियर पर बैठा लेते थे। किसी तरह पहुँच गये जयपुर। वहॉ पू मुनि निर्वाणसागर जी थे, उनके सघस्थ क्षुल्लक वर्धमानसागर जी भी थे, ये वही वर्धमानसागर जी थे जो मुरैना मे श्री शकर लाल जी के नाम से उमेश जी के बाबा जाने जाते थे।

ब्र उमेश जी ने साधुओ के दर्शन किये। वार्ता की। बाद मे उनका इलाज सुप्रसिद्ध सवाई मानसिह अस्पताल मे चला। कुछ ही दिनो मे थोडा सा आराम प्रतीत होने लगा, तब ब्र उमेश जी पुन सवाईमाधोपुर लौट गये।

वहॉ क्षुल्लक जी से निवेदन करने, कुछ विद्वानगण और कुछ समाजसेवी पहुँचे। प्रमुख नामो मे आदरणीय प पन्नालाल जैन (सागर) एव आदरणीय प जगमोहन लाल शास्त्री (कटनी) उल्लेखनीय हैं, वे सघ से, सागर पधारने की, प्रार्थना कर रहे थे ब्र उमेश जी चुपचाप देख रहे थे। ❑

कुछ दिनो के बाद क्षु जी ने ब्र उमेश जी सहित वहॉ से विहार कर दिया और कोटा, गुना, चदेरी, ललितपुर होते हुए सागर जा पहुँचे।

उन्हे समीप आया देख प जी एव समाज को खुशी हुई। शीघ्र ही दोनो त्यागियो ने अध्ययन शुरु कर दिया। प जी समय पर पढाने पहुँचने लगे। ❑

सागर मे महावीर–जयती तो मनाई ही युवा साधुओ ने, समय और अध्ययन का ध्यान रखते हुए

चातुर्मास भी वही किया और एक–एक पल को धर्म और ज्ञान से सजाते रहे। उसी अवधि मे ब्र उमेश जी ने प पन्नालाल जी से 'लघु–सिद्धान्त–कौमुदी' ग्रन्थ पढा। वर्षायोग मे साथ रहने वाले संघ के अन्य सदस्य थे–मुनि श्री आर्यनदी जी एव आर्यिका राजमती माताजी। ❑

ब्र उमेश जी को कान मे दर्द बना ही रहता था। अचानक वह बहुत बढ गया। वे भारी पीडा सह रहे थे। क्षुल्लक जी से न देखा गया, उन्होने एक योग्य श्रावक के द्वारा मुरैना सदेश भिजाया।

सदेश प्राप्त होते ही श्री शातिलाल जी, बछडे को खोजती विह्वल गाय की तरह, सागर की ओर भागते चले आये। सीधे सघ के समीप पहुँचे। दर्शनो के पश्चात क्षु जी से उचित वार्ता की, फिर ब्र उमेश जी के समीप बैठे, वस्तुस्थिति समझी। ब्र उमेश जी को समय की नाजुकता का बोध कराया और समझाया कि इस उम्र मे दर्द और बीमारियो को दूर रखने का प्रयास करना चाहिए, औषधि तो औषधि, शल्य–चिकित्सा का भी सामना करना चाहिए। अत आप प्रात मेरे साथ चलिए।

पिता की वात्सल्यपूर्ण समझाईश के समक्ष ब्र उमेश जी मौन रह गये।

सुबह ग्वालियर बस मिल गई। वे सीधे ग्वालियर ही उतरे और वहाँ के प्रसिद्ध चिकित्सक के अस्पताल गये। जब गेट पर पहुँचे तो डा साहब अपना ब्रीफकेस हाथ मे लिए कही जा रहे थे। शातिलाल जी फुर्ती से उनके समक्ष उपस्थित हो गये, औपचारिक–अभिवादन के बाद बोल पडे–डा साहब, ये ब्र उमेश जी हैं, इनके कान मे भारी तकलीफ है, तनिक देख लीजिए। ❑

शातिलाल जी की वाणी और ब्र उमेश जी के शालीन चेहरे ने डा साहब के पैरो मे जैसे बेडियाँ डाल दी हो, वे आगे न बढ सके, न उन्हे टाल सके, सीधे अपने कक्ष मे लौट आये। ब्र उमेश जी के कान का अवलोवन किया। आपरेशन आवश्यक मानते हुए तुरन्त शल्य–कक्ष मे ले गये और शल्यक्रिया कर दी। उमेश को राहत मिली।

डा साहब ने दवाओ का कागज शातिलाल को दिया, कुछ निर्देश दिये और चलते बने। न फीस माँगी न आपरेशन का खर्च। शातिलाल चकित, उन्होने डा साहब को मनाकर रुपये दे ही दिए।

बाहर जो लोग डा साहब की प्रतीक्षा कर रहे थे, वे शातिलाल से पूछने लगे–आपका गहरा परिचय है क्या डा साहब से? वे घर जा रहे थे, पर आपका कार्य आनन–फानन मे कर दिया और पैसे भी अधिक नहीं लिये।

शातिलाल सोचते रह गये, फिर सकोच से बोले–जी, परिचय तो नही था। मै तो पहली बार यहाँ आया हूँ। तब लोगो को बोध हुआ कि डा साहब ने ब्र उमेश जी के स्वरूप को 'मान' दिया है। उनके भोलेपन को सम्मान दिया है और शातिलाल जी की निश्छलता को पुरस्कारित किया है अपने व्यवहार से। जो खुशी और आत्म–सतोष का विषय था क्योकि लोग डाक्टरो को व्यस्त और लोभी मानने लगे थे, पर वहाँ तो डा के भीतर धर्म और कर्त्तव्यबोध का सागर भरा हुआ देखा गया था। (वह डा. धन्य है। और सुनो–वह डा अनजाने में ही; अपने सेवाभाव के कारण, कृतकृत्य हो गया था क्योकि उन्होने किसी सामान्य रोगी को लाभ नहीं पहुँचाया था, उन्होने तो भविष्य के उपाध्याय, ज्ञानयोगी, उपसर्गविजेता परमपूज्य ज्ञानसागर जी महाराज को लाभ पहुँचाया था, मजिल पर पहुँचाने का लाभ। काश कोई व्यक्ति डा. साहब के पुण्य लाभ का गुणाभाग कर पाता! उनका नाम था–डा आनन्द डे) ❑

पिताजी अपने परम सुयोग्य–पुत्र को लेकर घर (मुरैना) आ गये, उनकी चर्या सधवाते हुए; स्वास्थ्य–लाभ की प्रतीक्षा करने लगे। चिकित्सा चलती रही।

सात दिन भी न बीते और ब्र उमेश जी ने लौटने का भाव जाहिर कर दिया। पिता तो पिता, सारा परिवार आकुल–व्याकुल हो उठा। माँ बोली–बेटे, कमजोरी है अभी आपको, थोडा और स्वस्थ हो जाओ फिर चले जाना। रोक लिया माता की अश्रुधारा ने। रोक लिया पिता के सताप ने। बहिन और भाई पृथक से अपने अपनत्व मे बाँधे हुए थे। अत ब्र उमेश जी कुछ दिन और रुके।

पिताजी पुन ग्वालियर ले गये पुत्र को। डा साहब से निरीक्षण कराया। तकलीफ ठीक हो चुकी थी, बस काया मे कमजोरी दीख रही थी। कुछ दवाएँ लिख दी।

पिता–पुत्र मुरैना आ गये। ❑

कुछ दिनो तक पिता शातिलाल के घर मे सोना बरसता रहा, ज्येष्ठपुत्र जो रुका हुआ था। सुख शाति का सागर उनके आँगन मे हिलोरे लेता रहा, तभी एक दिन ब्र उमेश जी ने आदेश सुना दिया– 'मैं अब पू क्षु सन्मतिसागर जी के पास जाऊँगा, बहुत समय हो गया आये हुए।'

दूसरे दिन प्रस्थान। रो पडी मातेश्वरी अशर्फीदेवी जी। किकर्त्तव्यविमूढ हो गये पिताश्री। रिरयाते रहे भ्राता और भगिनी, रोकते रह गये पुरा–पडोस के मान्य श्रावकगण, चल दिये ब्र उमेश जी अपने मूल–पथ पर।

सभी जन उन्हे बस–स्टेड तक पहुँचाने गये। ब्र उमेश जी अपने भीतर स्थापित निर्मोह–भाव का परिचय मौन रहते हुए भी वहाँ सब पर सींच गये और निस्पृह–सत की तरह चले गये। ❑

ब्र श्री उमेश जी अपने भीतर महसूस कर रहे थे कि क्षुल्लक–दीक्षा लेने का समय आ गया है। मनोभाव विनयपूर्वक क्षुल्लक जी के समक्ष रखे। वार्ता की।

सोनागिरिजी अतिशय क्षेत्र को प्रस्थान कर दिया। वह सन् 1976 का अक्टूबर माह था, जब ब्र उमेश जी सोनागिरि की पावन धरती पर पहुँचे थे। कहे–अष्टमी से ठीक दो दिन पूर्व।

वहाँ उन्होने परमपूज्य गुरुदेव, आचार्य श्री सुमतिसागर जी महाराज के चरणो मे श्रीफल चढाया और करबद्ध प्रार्थना की– 'हे गुरुवर, मुझ दुखी और भटके पथिक को सद्मार्ग दिखलाने हेतु, क्षुल्लकदीक्षा प्रदान कीजिए।'

आचार्यश्री को पूर्व से ही जानकारी थी। अत मुस्कराते हुए बोले– 'मुहूर्त–विचार करे कि ऐसे ही दे दे।'

– 'जो उचित समझे महाराज।' ब्र उमेश जी ने उत्तर दिया। ❑

आचार्यश्री ने मुहूर्तो का अध्ययन किया तो दो मुहूर्त निकले। उनमे से कार्तिक शुक्ल चतुर्दशी का अधिक ठीक माना गया। तब तक श्रावको/समिति सदस्यो ने मुरैना समाचार भेज दिया। वहाँ से स्वीकृति न आई, स्पष्ट मना कर दिया गया था। निषेध के कारण कई थे–अल्पायु। शारीरिक–कमजोरी। दैहिक व्याधि। आदि आदि। मुख्य समस्या यह थी कि माता–पिता समारोह मे उपस्थित होने की स्थिति मे नहीं थे, पूर्व निर्धारित–कार्यक्रम के अनुसार, वे गिरनारजी प्रस्थान कर गये थे।

ब्र उमेश जी के सामने चार कोणो से चार प्रश्न मस्तक पर प्रहार करने लगे, तेरी उम्र कम है, तू कमजोर है, तेरी देह मे रोग है, तेरे माता–पिता दीक्षा के समय न आ पायेगे। वे सोचते रहे। आचार्यश्री भी

सोचते रहे, फलत अनिश्चितता का वातावरण बन गया, लोग बतियाते–ऐसे मे दीक्षा सम्भव प्रतीत नहीं होती।

मगर ब्र उमेश जी की लगन प्रबल थी, वातावरण/मौसम अनुकूल नहीं, फिर भी उन्होंने आशा नहीं छोड़ी और अष्टमी से ही एकासन शुरु कर दिये। शाम को दूध, फल, मेवादि कुछ नहीं लेते थे। अष्टमी के दिन ही उन्होने सप्तम प्रतिमा के व्रत आचार्यश्री से प्राप्त कर लिये।

चतुर्दशी के लिए मात्र तीन दिन बचे किन्तु असमजस का वातावरण न मिटा, तब ब्र. उमेश जी ने दो अन्य साधुओ के समक्ष अपने उद्गार रखे– 'वातावरण की संदिग्धता से क्या मतलब? कोई कुछ भी कहता रहे तो मुझे क्या? मुझे तो चौदस को ही दीक्षा लेनी है। जब तक क्षु दीक्षा सम्पन्न नहीं होगी, अन्न जल नही ग्रहण करुँगा। मेरा सकल्प है।'

उनके सकल्प की साधुओ ने सराहना की। वे आपस मे बतलाते रहे कि ब्र उमेश जी धुन के पक्के हैं, कुछ ही देर मे उनके भाव आचार्यश्री तक पहुँच गये। फलत मदगति से सही, दीक्षा की तैयारियाँ शुरु कर दी गईं।

तब तक मुरैना, ग्वालियर आदि से कुछ लोगो के फोन आये कि ब्र उमेश जी जल्दबाजी न करे तो अच्छा है, अभी उम्र छोटी है। फोन करने वाले जन साधारण नहीं थे, विशेष थे, उनमे प मक्खनलाल शास्त्री, पू सुमतिचद शास्त्री आदि प्रमुख थे। सभी के स्वर मे समझाने का मृदुलभाव था।

मगर ब्र उमेश जी की दृढता देख कर सभी चुप हो गये। उनका समझाना भी उस समय ब्र उमेश जी को विरोध जैसा लग रहा था। तभी ब्र उमेश जी को तेज ज्वर आ गया। बेचारे डर के मारे कि दीक्षा मे और विलम्ब न हो जावे, अपने ज्वर को ज्वर न मान रहे थे और मनोबल न गिरने दे रहे थे। लोगो ने स्थिति को भाँपते हुए, कही किसी को कोई सूचना तक नही भेजी।

आचार्यश्री बडे कृपालु थे। उन्होने ब्र उमेश जी का मन टूटने से बचाया। द्वादशी, तेरस और चौदस को ब्र उमेश जी की बिनोली निकलवाई, आकार छोटा और सादा था, सादगी के धरातल पर उचित था। चतुर्दशी को आचार्यश्री की आज्ञानुसार ब्र उमेश जी ने केशलौंच किये। सौभाग्य से वह बटवृक्ष आज भी, इतिहास का साक्षी है जिसके नीचे, चबूतरे पर बैठ कर, केशलौंच–सम्पन्न हुआ था।

विधिपूर्वक आचार्यश्री ने विचारित समय पर ब्र उमेश जी को क्षु दीक्षा प्रदान की, जो लोग मुरैना आदि नगरो से आये हुए थे, उन्होने खुली–ऑखो से क्रियाएँ देखी और प्रसन्न हुए।

गुरुवर ने दीक्षोपरान्त ब्र उमेश जी का नामकरण किया– '105 श्री क्षुल्लक गुणसागर जी महाराज।' वह 5 नवम्बर 1976 का दिवस था।

उपस्थित लोगो ने भारी उत्साह से आचार्यश्री और क्षु जी का जयघोष किया। आश्चर्य तब हुआ जब दर्शको की सीमित सख्या के बाद भी जयघोष के स्वर सोनागिरि की ऊचाइयो तक फैल गये। ❑

ऐसी सादगी और शाति से अनेक महान साधुओं की दीक्षाएं पूर्व मे हुई हैं। अत किसी को कोई विस्मय नहीं हुआ, वरन् आचार्यश्री की शात और सयत कार्यप्रणाली की सराहना ही हुई। 'आडम्बर से दूर दिगम्बर' उक्ति के अर्थ यहाँ सार्थक हो सके थे। ❑

दूसरे दिन गुरु आज्ञा हुई तब क्षुल्लक गुणसागर जी आहार चर्या को निकले। एक भाग्यशाली श्रावक के चौके मे आहार सम्पन्न हुआ। श्रावक और उसके परिवार ने अपना अहोभाग्य माना।

क्षुल्लक गुणसागर जी गुरुवर की आशीषछाया मे साधनारत रहे आये, फिर उन्ही के साथ विहार किया और चरणानुगमन करते हुए झासी जा पहुँचे।

वहाँ गुरुवर ने क्षु जी को अध्ययन के लिए पुन उत्साह दिया और बोले कि सागर जाकर, साधना करते हुए पढो।

क्षु जी ने गुरुवर से आज्ञा प्राप्त कर, तब, पुन सागर के लिए विहार किया। वहाँ पहुँच कर विद्वानो को बुलाया, क्षु सन्मतिसागर जी थे ही।

पढाई तो शुरु हो गई, पर आहारो के समय अतराय भी शुरु रहे। ग्रीष्मकाल मे तो सात दिनो मे चार अतराय हो गये थे। साथ के साधु–सन्त आश्चर्य मे पड गये। अत उन्होने विनोदभाव से गुणसागर जी का नाम अतरायसागर रख दिया। सन्तो के मध्य यह उपजा विनोदभाव उनकी वत्सलता का प्रतीक था। (तकदीर की बात यह कि अतराय का क्रम माह दो माह नही, छ वर्ष तक चला)

अतरायो से गुणसागर जी विचलित नही हुए, उसे साधु की नियति का एक हिस्सा मान कर प्रसन्नता बनाये रहे। उनकी किसी क्रिया मे कोई विघ्न न आ सका। उनकी दृढता के समक्ष अतराय को हारना पडा कुछ वर्षो के बाद।

एक बात और आश्चर्यकारी थी उस समय–जब कोई नया स्वाध्याय प्रारम्भ किया जाता था या अध्ययन–कक्ष मे कोई नया–पाठ शुरु किया जाता, उस दिन क्षु गुणसागर जी को अतराय अवश्य हो जाता, जो सभी की समझ के परे था। किन्तु क्षु जी का मनोबल कम न होता, वे सोत्साह दिनचर्या का स्वस्थ निर्वाह करते रहते थे। ❑

सागर नगर मे क्षु जी ने एक पल भी व्यर्थ न जाने दिया था। वे प पन्नालाल जी से अध्ययन लाभ लेते रहे। उन्होने अनेक ग्रथो का पारायण किया और उत्साह से पढाया। लघु सिद्धान्त कौमुदी के साथ–साथ सस्कृत और व्याकरण के अनेक महत्वपूर्ण ग्रन्थ। सौभाग्य से प जी उस समय सागर स्थित सस्कृत विद्यालय के प्राचार्य थे। वे पढाते तो थे ही, क्षु जी के लिए चौका भी लगाते थे। अपनी धर्मपत्नी के साथ खडे होकर पडगाहते और भक्ति–भाव से आहार कराने का पुण्यार्जित करते थे। क्षु जी को भी सुविधा प्रतीत होती थी कि पढाई देखते हुए, आहार मे अधिक समय नही लगाना पडता था।

क्षु जी उस समय तक, न तो प्रवचन करते थे, न किसी से बाते, बस पूरा समय अध्ययन पर समर्पित था। किन्तु पडित जी से अवश्य वार्ता छेड देते थे, जिसे सुनकर वे खुश हो जाते थे। ❑

काफी समय तक सागर मे रहे, अध्ययन की पूँजी जब मन तिजोरी मे समा गई तो वहाँ से विहार किया और कुन्डलपुर की ओर चल पडे। रास्ते मे गढाकोटा, रहली, पटना, पटेरा ग्रामो का समय दिया।

पटेरा मे पू आचार्य विद्यासागर जी ससघ विराजे थे। क्षु जी ने भक्तिभाव से दर्शन किये और दो दिन रुके, फिर विहार कर दिया, कुन्डलपुर पहुँचे। कमेटी के साथ–साथ धर्मशाला मे रुके हुए श्रावक गण भी समय निकाल कर क्षु जी को लेने सीमा तक गये। ❑

कुन्डलपुर मे क्षु जी ने बडे बाबा के दर्शन किये। लगातार दर्शनो का क्रम बनाये रहे। एक दिन दर्शन करते–करते उन्हे अपने आत्मवैभव का बोध हो गया।

तब तक आचार्यश्री पटेरा से हटा विहार कर गये। वहाँ ज्ञानार्णव–ग्रन्थ का स्वाध्याय शुरु किया। क्षु गुणसागर जी को जानकारी मिली तो वे भी हटा चले गये और अध्ययन का लाभ लिया। आचार्यश्री के सघस्थ साधु क्षु चारित्रसागर जी क्षु गुणसागर को अपूर्व वात्सल्य प्रदान करते रहे।

चार दिन ही व्यतीत हो पाये कि क्षु गुणसागर जी को मलेरिया–बुखार हो आया, वह बढता ही गया। स्थिति कष्टकारी हो गई, आये थे हरिभजन को, पर कुछ और हो गया।

बुखार ने 10–5 दिन नही, ढाई माह तक सताया। कभी सौ तो कभी 103, कभी 104 और कभी 105 पर पहुँच कर ताडव करता रहा।

अनेक वैद्य आये। दवाये चली किन्तु आराम न लगा। क्षु जी की हालत भयावह हो गई। शरीर मे भारी कमजोरी आ गई। स्थानीय डा शिखरचद जी ने अवलोकन किया, फिर आचार्यश्री से इजेक्शन लगाने की अनुमति चाही। आचार्यश्री कुछ कहे कि उसके पूर्व–ही क्षु जी ने स्पष्ट मना कर दिया।

उनका आत्मपुरुषार्थ देख सभी चकित रह गये। ❑

क्षु जी हटा ही मे थे। आचार्यश्री भी वही थे। प्रथम बार का ज्वर ठीक से जा न पाया था कि डाक्टरो ने इजेक्शन लगाना और बाटले चढाना अनिवार्य बतलाया, अन्यथा मृत्यु तय थी। तब क्षु जी ने विनयपूर्वक इशारा किया– 'मृत्यु को गले लगाना उचित है, किन्तु अशुद्ध दवाओ को गले मे उतारना अनुचित है। शरीर के छूटने का समय आ गया होगा, तो वही उपयुक्त है। मेरे लिये सयम की रक्षा प्रमुख है।'

चिन्तित–समाज और घबडाये हुए साधुगण, क्षु जी के उत्तर से प्रसन्न हो गये। समुचित आयुर्वेदिक उपचार चलता रहा।

क्षु जी की कमजोरी देख लोग कहते कि बैठकर जाप न कीजिए, लेटे–लेटे ही ये क्रियाएँ कीजिए। किन्तु वे नही माने और सहनशीलना बनाये रहे। उन्हे विश्वास था कि असाताओ का उदय सदा एकसा नही रहता, कभी साता का क्षण भी आ सकता है। लोगो के लिये यह प्रथम अवसर था, जब वे देख रहे थे कि अत्यत कमजोर शरीर मे अत्यत बलवान आत्मा रहती है, जिसके बल से साधुचर्या सधी रहती है। ❑

समाज का पुण्य और आचार्यश्री की वत्सलता कि क्षु जी को आराम लग गया। कई दिनो के बाद, आहार मे मूग की दाल का पानी ले सके। ❑

उनकी जर्जर अवस्था देखकर एक बार तो आचार्यश्री स्वत उन्हे देखने कक्ष मे आये थे और काफी समय उनके पास बैठे रहे थे। ❑

धीरे–धीरे वे ठीक हो पडे। तन भले ही सूख कर जीर्ण हो गया था, किन्तु आत्मा मे तप का भाव निरतर बना रहता था। अत, किसी भी प्रकार के तप से पलायन नही करते थे। केशलौंच का समय आ चुका था, किन्तु सभी साधु मौन साधे रहे कि कही ये ऐसी कमजोर हालत मे ही न करने लग जावे। मगर साधुओ के चुप रहने से क्षु गुणसागर जी की भावना चुप न रह सकी और नियत–समय पर केशलौच की आज्ञा लेने आचार्यश्री के समक्ष पहुँच गये, बोले–हे गुरुवर! मुझे केशलुन्चन की आज्ञा प्रदान कीजिए।

–मगर अभी तो आपको बहुत कमजोरी है?

–मुझे तो नही है।

– कभी काया की ओर देखा है?

–आत्मा की तरफ देखता रहा हूँ। काया का मोह तो दीक्षा के समय ही छोड दिया था।

–तब भी, आप इतने सारे केश कैसे लौंच पायेगे? हाथो मे, अगुलियो मे ताकत तो आने दो!

–साथ के गुरुभाई सहयोग कर देगे।

–केशलुचन के समय सिर और चमडी का दर्द भी तो सहना होता है। गर्दन तान कर रखनी होती है। कहीं गिर पड़े तो?

–नहीं गिरूँगा, आपका आशीष जो साथ है।

–ठीक है क्षु जी, जब मन मे पूर्ण उत्साह है तो शारीरिक कमजोरी रोडा नही बन पायेगी।

गुरुवर से आज्ञा प्राप्त कर क्षु जी को भारी खुशी हुई। वे अपने आत्मबल की पूँजी संजोकर मुस्कराते रहे। फिर गुरुभाई क्षु चारित्रसागर जी के पास गये। बोले– 'आज्ञा तो मिल गई है, पर ऐसा लगता है, इस बार आपके सहयोग की जरूरत पडेगी। तैयार रहना।' उन्होने सहर्ष स्वीकृति देदी।

तब तक, निर्देशानुसार एक श्रावक, छानी हुई राख लेकर आ गया।

क्षु गुणसागर जी यथासमय नियत स्थान पर पहुँचे। चारो दिशाओ मे परम्परानुसार आवर्तक/नमस्कार निवेदित किया और आसन लगा लिया।

ढुलमुल और अस्वस्थ दीखने वाला शरीर, बैठा ही रहा आया, किन्तु जाने कहाँ से उनकी अगुलियो मे, कलाई मे शक्ति का सचार हो पडा। फलत अपने ही करकमलो से पूरा केशलौंच सम्पन्न कर डाला। समय भी अधिक न लगा। दर्शक देख–देख कर चकित थे, वे अनुभव कर रहे थे कि क्षु जी का सकल्प दृढ है, स्पष्ट है कि आत्मा मे सयोजित शक्ति साथ दे रही है। ❑

दूसरे दिन से रोटी के ऊपर की पर्त (पपटी) आहार मे दी जाने लगी। फिर उन्हे पैदल चलने का अभ्यास कराया गया, दो–एक दिन के बाद ही, बिना किसी श्रावक का सहारा लिये, चलने लगे। सुधार हुआ तो आहार–चर्या के लिये मदिर–परिसर से बाहर, बस्ती मे जाने लगे और शौचादि के लिये जगल।

कुछ दिन ही बीते, फिर अध्ययन की चिन्ता हो आई। अत आचार्यश्री से आज्ञा लेकर सागर को विहार कर दिया। विहार के समाचार से हटा–समाज धर्मसकट मे पड गया कि क्षु जी कमजोर हैं, कहीं पद–यात्रा करते हुए रास्ते मे परेशानियो से न घिर जावे। समाज मे विचार–विमर्श चलता रहा। मगर क्षुल्लक जी ने विहार कर दिया।

प्रथम दिन एक कि मी चल कर रुक गये क्षु जी। थकावट के कारण रात्रि मे तीव्र ज्वर हो आया। श्रावकगण चिंतित।

दूसरे दिन आहारोपरान्त पुन विहार, 4 कि मी चले, थक गये। रुक गये। रात्रि विश्राम। तीसरे दिन फिर चल पडे।

रास्ते मे जो व्यक्ति उन पर नजर डालता, उनकी दयनीय स्थिति देख कर चिन्ता मे पड जाता। माताये दुखी हो जातीं। चलते–चलते कुछ दिनो मे सागर पहुँच गये। वहाँ पू क्षु सन्मतिसागर जी ने उनकी धारा (रूपरगत) देखी तो चिंतित हो उठे, बोले–जब स्वास्थ्य इतना अधिक खराब था, तो पैदल क्यो आये? विहार ही न करते तो अच्छा था?

जब सन्मतिसागर जी शात हो गये तो क्षु गुणसागर जी ने मुस्कराकर उत्तर दिया–विहार न करता तो आप लोगो के दर्शन कैसे होते?

प्रश्न पर प्रतिप्रश्न सुन सन्मतिसागर जी भी मुस्करा उठे। फिर उन्होने समाज को परामर्श दिया, समाज ने छह माह तक वैद्यराजो से आयुर्वेदिक चिकित्सा कराई, बीच मे, प्राकृतिक–चिकित्सा भी चली।

कमजोरी के वावजूद भी क्षु गुणसागर जी ने कभी लेट कर सामायिक नही की, सदा उचित आसन पर करते रहे। ❑

सन 1977 का वर्षायोग सागर मे ही किया और स्वास्थ्य लाभ से ऊपर, ज्ञानलाभ लिया। क्षु सन्मतिसागर जी के साथ–साथ वे प पन्नालाल जी साहित्याचार्य के पास पढने लगे। ग्रन्थ थे–लघु सिद्धान्त कौमुदी, जीवनकाण्ड आदि।

धीरे–धीरे वर्षायोग पूरा हो गया, शीतकाल लग गया। क्षु जी का क्रम अनवरत चलता रहा। सन बदल गया, 1978 आ गया, आ गया फिर ग्रीष्मकाल।

द्रोणागिरि मे पचकल्याणक समारोह आयोजित था। अत क्षु जी कमेटी के अनुरोध पर फरवरी मे विहार कर वहॉ चले गये पहले बडा, फिर दलपतपुर, नैनागिरि जी अतिशय क्षेत्र और फिर हीरापुर रास्ते मे पडे थे। कहे 4–5 दिन मे द्रोणागिरि पहुॅच गये, मगर अतराय की बहुलता से गर्मी बढ गई, निरतर अतराय जो हो रहे थे। एक सप्ताह द्रोणगिरि रुके, पचकल्याणक देखा और पुन विहार।

पहले हीरापुर। गर्मी अधिक पडने लगी थी, सो काया मे भी गर्मी बढने लगी थी। श्रावक चिंतित हो पडे। पर विहार न थमा। गये–फिर बडानगर । फिर सागर। तब तक पैरो मे काफी सूजन हो आई थी। कमजोरी जिगरीदोस्त की तरह चिपकी थी। किन्तु क्षु जी का आत्मबल कायम रहा आया।

सागर, सेवा–वैयावृत्ति–आहार चर्या के साधको का सागर है। फिर भी जाने क्या होता कि क्षु जी को अतराय हो जाता। प्राचीन तो प्राचीन, नवीन केश वाले श्रावक भी नेत्र खोल कर हर ग्रास टटोलते किन्तु केशमहाराज (बाल) जाने कैसे, क्षु महाराज की हथेली तक पहुॅच जाते थे और अतराय हो जाता था, लोग पश्चाताप करते रह जाते थे, क्षु जी कर्म–आधीन विसगति मान कर शात रह जाते थे।

काया मे आहार की कम मात्रा जाने से, चौथे दिन तक क्षु जी को गर्मी बढ गई, वमन हो गया।

प्रतिकूल स्थितियो से सघर्ष करते हुए क्षु जी ने अपनी पढाई मे कमी न आने दी, ध्यान लगाकर पढते रहे।

सयोग से सन 1978 का वर्षायोग भी सागर मे ही सम्पन्न हुआ। बाद मे, सागर ही मे, पू मुनि शीलसागर जी, पू मुनि नेमिसागर जी और पू मुनि नमिसागर जी का सानिध्य क्षु जी को मिला, फलत. क्षु जी गद्गद् हो गये। उसी बीच मुनिवर शीलसागर जी अस्वस्थ हो गये तब क्षु जी ने भरपूर सेवा/वैयावृत्ति कर अपना सौभाग्य माना। ❑

सागर से विहार का समय आ गया। दोनो क्षु–श्री सन्मतिसागर जी एव श्री गुणसागर जी श्री दिगम्बर अतिशय क्षेत्र ईशुरवारा को प्रस्थान कर गये। सागर के सहस्रो धर्मप्रेमी श्रावक उन्हे विदा देने काफी दूर तक साथ–साथ चले। विदा की बेला मे, वात्सल्यातिरेक के कारण अनेक लोगो के नेत्र गीले हो पडे, पर क्षु द्वय चलते ही गये। ❑

'ईशुरवारा' जिसे जल्दी जल्दी मे, 'ईसुरवारा' कह देते है, भी उत्तम श्रावको की बस्ती है। वहॉ एक लगनशील, कर्मठ और धर्मप्रेमी युवक क्षुल्लकगणो से काफी प्रभावित हो गया। उसका नाम जयकुमार था। (वर्तमान के परमधन्य, सुविख्यात सत, मुनिपुगव सुधासागर जी महाराज) जयकुमारजी लगातार क्षुल्लको के सम्पर्क मे बने रहे, बाद मे वे उनके विहार के समय, उनके साथ हो गये। ईशुरवारा से चलकर बादरी पहुॅचे। वहॉ एक धर्मसभा मे युवक जयकुमार ने क्षुल्लकगणो से ब्रह्मचर्य व्रत प्राप्त किया। (यह कथा पृथक है। अस्तु)

'बहता पानी रमता जोगी' की उक्ति चरितार्थ कर क्षुल्लकगण वहाँ से भी विहार कर गये। बरोदिया पहुँचे, फिर विरधा, ललितपुर, ताल–बेहट, बबीना, झासी होते हुए दतिया। वहाँ पू आचार्य कुन्थुसागर जी महाराज और पू आर्यिका गणनी विजयमती माता जी ससघ विराजमान थे। क्षु द्वय उनके दर्शनो से हर्षित हुए, मात्र एक दिवस साथ रहे। दोनो को श्रेष्ठ वात्सल्य मिला, उत्तमचर्चा का सयोग मिला और मिला सत्सग–सानिध्य।

चूकि समीप ही सोनागिरि क्षेत्र मे पू पू आचार्य विमलसागर जी और पू उपाध्याय भरतसागर जी ससघ अवस्थित थे, उनके केशलौंच का समाचार क्षु द्वय सुन चुके थे। अत दतिया स्थित सघ से आज्ञा और विदा ले–सोनागिर चल पडे। सभी साधुओ ने अपने साधुचित–अनुरोध–अनुराग दर्शाये, पर क्षु द्वय न रुक पाये, विहार कर दिया।

क्षुल्लक जी तो विहार कर गये, परन्तु पू आचार्य कुन्थुसागर जी एव माताजी आदि उनकी कठिनतम–साधना की सराहना करते रहे। आचार्यश्री ने बतलाया–क्षुल्लक गुणसागर जी तो मुनिवत् साधना कर रहे हैं। रात्रि मे दुपट्टा भी नही ओढते। भविष्य उज्ज्वल है। ये भी अपने तपो और साधनाओ के लिये सतो के मध्य प्रसिद्धि पायेगे।

सोनागिरि पहुँचने के पूर्व, रास्ते मे एक स्थल पर सामायिक की और तुरन्त चल दिये, सौभाग्य से सही समय पर सोनागिरि की पावन भूमि का स्पर्श कर लेने मे सफल रहे। आचार्यश्री और उपाध्यायश्री के दर्शन किये। वात्सल्यातिरेक से आचार्यश्री ने क्षु जी को गले से लगा लिया। क्षु जी का मनमानस गद्गद् हो उठा। तब तक आचार्यश्री ने स्वास्थ्य की कुशलता पूछी और पुन वात्सल्य–स्नान करा दिया।

सभा पूर्ण हो जाने के बाद सभी साधुओ के मध्य रत्नजय सवाद हुआ जो क्षु जी को प्रेरणाकारी सिद्ध हुआ।

कुछ दिवस सोनागिरि मे रुके और वहाँ का सोना हृदय मे सयोजित करते रहे, सोना–पवित्र–तलहटी से लेकर चद्रप्रभु के मदिर तक जो फैला है।

आचार्यश्री के सघ की सचालिका–ब्रह्मचारिणी चित्राबाई की प्रसिद्धि से कौन न अवगत होगा, उनका अनुशासनपूर्ण–रुख और वात्सल्यपूर्ण–स्वभाव हर साधु को मोह लेता था। वे एकमात्र ऐसी धर्ममाता थी जिनकी फटकार साधु और श्रावक बराबरी से सहते थे।

क्षु जी आचार्यश्री से अधिक, चित्राबाई से डरते थे, पर दो–तीन दिनो मे ही वे चित्राबाई का वात्सल्य प्राप्त कर लेने मे सफल हो गये। स्थिति यह हो गई कि क्षु गुणसागर जी की हर आवश्यकता का ध्यान चित्राजी रखने लगीं। क्षु जी ने आहार किया या नहीं? आहार कैसा किया? अतराय तो नही आया? अनेक तरह से ध्यान रखती। कहे–माता की तरह बच्चे को मनाने और खुश रखने की कला उनमे कूट–कूट कर भरी थी। वे ऐसी माँ थीं सतो की, जो निर्मोह तो थीं किन्तु वात्सल्य से भरपूर थीं। गुणसागर जी से इतनी प्रभावित हो गईं कि अन्य साधुओं को उदाहरण दे बैठतीं–देखो, साधु ऐसा होता है।

क्षु गुणसागर जी पू उपाध्यायश्री के समीप अधिक बैठते थे। वहाँ ही लगता था उनका मन। वे अध्ययनशील साधु जो थे। हैं। उनसे समय मिलता तब क्षु जी निर्जन स्थानो/कंदराओ की ओर चले जाते थे और वहाँ ध्यान करते रहते।

एक दिन जब क्षुल्लक जी स्वाध्याय कर रहे थे, तब अचानक एक सर्प आ गया, क्षु जी ध्यान मे मग्न थे, सर्प उनके ऊपर आ गया। शरीर पर कुछ क्षण रुका, फिर चला गया। क्षु जी मग्न थे, सो मग्न रहे आये। चकित तो वे श्रावक थे जिन्होने अपने खुले नेत्रो से वह दृश्य देखा था।

लोग बतलाते हैं कि ऐसा तो कई बार हुआ था वहाँ।

धर्म और ज्ञानार्जन से समय का पल-पल भीगा रहता था। तभी मुरैना-समाज के प्रमुखजनो का आगमन हुआ, वे पचकल्याणक-प्रतिष्ठा का निमत्रण देने आये थे, उन्होने क्षु जी को श्रीफल भेंट कर आमत्रित किया।

समाज का तो टाल सकते थे, पर साधुओ का आग्रह न टाल सके। फलत मुरैना के लिए विहार करना पडा। क्षु सन्मतिसागरजी जो आये थे। सोनागिरि से डबरानगर पहुँचे तो जानकारी मिली कि पू आचार्य विद्यासागरजी झासी के निकट आ चुके है। फलत क्षु द्वय इस तरह से बढे कि ग्वालियर के समीप मिलन हो गया। फिर आचार्यश्री के साथ ही दोनो ने ग्वालियर मे प्रवेश किया। तीन दिन रुक कर आगे बढे, दानाओली पहुँच गये। आचार्यश्री से क्षु गण पूर्व से ही परिचित थे। अत वात्सल्य-भाव यहाँ भी प्रगाढ बना रहा। वहाँ उन्होने आचार्यश्री की अपूर्व वैयावृत्ति की। किन्तु किसी श्रावक से स्वत की सेवा न कराई। श्रावक चकित कि खुद तो दिल लगाकर वैयावृत्ति करते हैं, मगर कराते नही। कुछ भक्त जबरन शीशियाँ लेकर आ धमके, पर उनकी हथेली का तेल, हथेली मे ही रह गया, क्षु जी ने एक बूद भी न लगाने दिया। लोग क्षु जी के मनोभाव से गहराई तक प्रभावित हुए।

दूसरे दिन आहारोपरान्त समस्त सघ का विहार हो गया। रास्ते मे सामायिक की और पुन चरण मुरैना की ओर। करीब 40 कि मी की दूरी है दोनो शहरो मे। शाम को मुरैना से कुछ कि मी पूर्व ही एक वेरियल के समीप सघ रुक गया। मुरैना के श्रावको ने उत्तम व्यवस्था की थी।

रात टली। सुबह हँसी। सघ ने प्रस्थान किया। विशाल शोभायात्रा के साथ-नगर प्रवेश हो गया। ❑

प्रतिष्ठा कार्यक्रम धूमधाम से चला। आचार्यश्री के साथ-साथ ही क्षु गणो की चर्या सुदर ढग से सध रही थी। तभी समाचार मिला कि पू पू आचार्य सुमतिसागरजी ससघ मुरैना की ओर बढते चले आ रहे है। ठीक तपकल्याणक के दिन आचार्यवर्य का मगल-प्रवेश हुआ। दोनो सघो का परस्पर मिलन हुआ। समाचार का आदान-प्रदान। वात्सल्य की वर्षा। मध्याह्न के तीन बज चुके थे।

समारोह रोज की गति से चलता रहा। दोनो आचार्यसघ रस की वर्षा करते रहे, मगर जो रस मुरैना की सडको से बह कर आ रहा था, उसका मूल्य आचार्यगण अधिक मान रहे थे। हुआ यह कि मुरैना छोडने के बाद, क्षुल्लक भेष मे पू गुणसागरजी अपने गृहनगर मे पहली बार पधारे थे। अत समाज के लोगो से सडके भरी रहती थी, वे अपने प्रिय उमेश-पू गुणसागरजी के दर्शनार्थ-उमड रहे थे। उनके उमडते-घुमडते आगमन का रस सतो को भी भा रहा था। रस, हाँ आत्म-सुख। जाति तो जाति, अन्यान्य जाति के नागरिक भी पू गुणसागरजी के दर्शनो के लिए पहुँच रहे थे। उनके समीप भारी भीड जमा रहती थी।

कार्यक्रम पूर्ण हो गया। फिर विहार का क्रम। गुणसागरजी के शरीर के माता पिता दोनो वक्त अपने महानपुत्र को देख जाते थे। जिनका पुत्र था, वह अब उनका न रहा था। अस्तु। ❑

आचार्य सुमतिसागरजी के साथ क्षु गुणसागरजी विहार कर सोनगिरि चले गये। माता-पिता की आँखे सूनी रह गईं। समाज अन्यमनस्क।

कुछ दिन बाद समाज ने पू आचार्यश्री सुमतिसागरजी से वार्ता की। श्रीफल चढाया और देवगढ–पचकल्याणक मे पधारने की प्रार्थना की। देवगढवालो को निराश न किया आचार्य श्री ने, स्वीकृति दे दी। ❑

सोनागिरि से देवगढ के लिए गमन। कुछ ही दिनो मे पहुँच गये। वहाँ भी विराट साधु–समागम का दृश्य बना, क्योकि तभी पू आचार्य पार्श्वसागरजी ससघ पहुँचे और पू मुनि ज्ञानभूषणजी भी ससघ। तीन सघो के मिलन की 'कल्पना' ही मधुर होती है, वहाँ तो 'साक्षात' दृश्टव्य थे।

पू क्षु गुणसागर जी भीड मे रहकर भी, भीड से बचते रहते थे, यह उनकी पुरानी आदत है। फलत दिन मे नदी के किनारे, किसी एकान्त स्थान पर जाकर सामायिक करते रहते थे। शाम को समय पर लौट आते। जब समारोह के कार्यक्रम शुरु हो गये तो पूरा समय आचार्यश्री के साथ रहते।

यह क्षेत्र विशेष पावनताओ से अभिमडित है। अत यहाँ का हर पत्थर 'देव' बन जावे तो आश्चर्य नही होना चाहिए। नाम भी तो है–देवगढ! जहाँ देव घडे जाते हो, वह देवगढ ही तो कहलायेगा।

पाषाण को देव और मानव को महामानव का आकार प्रदान करने वाली पवित्र–भूमि का उदाहरण हमारे समक्ष है। अनेक युवको–युवतियो को जैनेश्वरी–दीक्षा प्रदान कराने मे यह आधारिका रही है और निमित्त रहे है हमारे साधु–सत। वर्तमान मे जो भारतदेश मे विख्यात है, विदुषी साधिका हैं, वे पूज्य आर्यिकारत्न 105 श्री दृढमति माता जी इसी भूमि से वैराग्य–पथ पर बढी हैं। जब पूज्य क्षुल्लक गुणसागर जी यहाँ, इस भूमि पर थे, तब उनकी प्रेरणा से एक अत्यत सुकुमार, सुकोमल और राजकुमारी जैसी झलक देने वाली बेटी–कुमारी सुनीता जैन सागर–ने, एक वर्ष का ब्रह्मचर्य–व्रत धारण किया था। बडी बात यह थी कि सुनीता जी की छोटी बहिन–कुमारी अनीता जैन–दो वर्ष पूर्व ही ब्रह्मचर्य व्रत लेने मे सफल हो चुकी थी। उन महान यशस्वी–बेटियो के पिता, श्रावकरत्न, श्री गुलाबचद्र जी एव माता श्रीमती सुशीलाबाई जी का स्मरण कर किसे न सुख होगा! समय की पगडडियो पर चल कर कु सुनीता ने गुरुवर आचार्य विद्यासागर जी का चरण सानिध्य प्राप्त किया और गणिनीतुल्य आर्यिकारत्न दृढमति माता जी का पावन स्वरूप पाया। जबकि कु अनीता जी ने गुरुवर उपाध्यायरत्न ज्ञानसागर जी का चरणसानिध्य प्राप्त किया और अपनी साधना, सेवा, भक्ति और आस्था के आधार पर, सम्पूर्ण भारत मे 'ब्रह्मचारिणी' के सनातन–स्वरूप की प्राण–प्रतिष्ठा की। उनका वह स्वरूप आज उनके वैदुष्य और तप–त्याग के कारण आर्यिकामाताओ की तरह तेजवान है। साधु–सघ की एक प्रखर वर्तिका बन चुकी है वे।, ❑

देवगढ से विहार किया तो क्षु जी आचार्यश्री के साथ सीधे, पुन, अतिशय क्षेत्र सोनागिरि जी जा पहुँचे। कहे, सयोग ऐसा बना कि सन 1979 का चातुर्मास सोनागिरि मे ही सम्पन्न हुआ, भगवान चदाप्रभु के चरणो के समीप, आचार्य सुमतिसागर जी की आशीषछाया मे। वर्षायोग का एक–एक पल अध्ययन को समर्पित करना चाहते थे अत क्षु जी ने गुरुवर के समक्ष भावना रखी कि अष्टाध्यायी व्याकरण पढना चाहते है।

गुरुवर ने शिष्य के लिए उद्यम किया, कमेटी को निर्देश दिये कि उचित विद्वान को बुलाया जावे। व्यवस्था–समिति से जुडे वरिष्ठ समाजसेवी श्री रहतूमल जी (झासी वाले) के समक्ष बात पहुँच गई, वे गुणसागर जी को पुत्रवत् वात्सल्य देते थे। उनकी दृष्टि तुरन्त श्री प लक्ष्मीकान्त झा पर गई, वे सस्कृत महाविद्यालय झाँसी के प्राचार्य पद से सेवानिवृत्त हुए थे। वे समस्तीपुर (बिहार) के निवासी थे, पर अवकाशप्राप्त कर वहाँ न जा पाये, रहतूमल जी के साथ सोनागिरि आ गये। प्रसिद्ध ही नही, सिद्ध व्याकरणाचार्य थे। सरल स्वभाववाले परिश्रमी विद्वान।

आते ही पाठन–कार्य सम्भाल लिया, क्षु जी को प्रतिदिन सुबह शाम, कुल 7 घंटे, पढ़ाने लगे। पढाने वाले का और पढने वाले का ऐसा मन लगा कि पढाई–ज्ञानयज्ञ–मे बदल गई। पू जी क्षु. जी से संस्कृत मे अनुवाद कराते, सस्कृत मे वार्ता करते और सस्कृत मे ही लिखने का क्रम बनाये रहते। अष्टाध्यायी–पाणिनीय व्याकरण सहज तो नहीं है? सवा पांच हजार सूत्र, सहस्रो वार्तिकाऍ, परिभाषाये और फक्किकाएँ उसमे समाहित है। प जी ने सश्रम पढाया, क्षु जी ने सश्रम एव स–लगन पढा, पढाई का आधिक्य तो था ही, अतरायो का भी हो जाता था, पर क्षुल्लक जी पढने से पल मात्र विमुख न होते थे। रोज पूरा सबक करते, फिर पडित जी को सुनाते और साफल्य के मार्ग पर बढते जाते। ❑

कुछ सप्ताहो के बाद प लक्ष्मीकान्त झा ने अपना अनुभव सुनाया था– 'मैंने गुणसागर जी जैसा विद्यार्थी अपने पूरे जीवन मे नही देखा, वे न अधिक खाते–पीते हैं, न घूमते–फिरते, बस जितना पढाते जाओ पढते जाते है। थकावट का नाम नहीं लेते, सच, मैं भले ही थक जाऊ पर उनका क्रम निरन्तर चलता है। चेहरे पर ताजगी और उत्साह खेलता रहता है। जबकि मुझसे अधिक परिश्रम उन्हे करना पडता है। दिन रात तल्लीन रहते है। अन्य विद्यार्थियो को तो कभी–कभी बुलाने की स्थिति आ जाती है, पर क्षु जी! वे तो सदा पॉच मिनट पहले तैयार मिलते हैं। न अनावश्यक विश्राम लेते, न मुझे करने देते। उन्हे पढाने मे आनद आता है। फलत मैं भी उनके साथ कभी थकता नही।'

पढते–पढते ही क्षु जी ने श्लोको की रचना करना सीख लिया। यो वे पूरे चातुर्मास पूर्ण स्वस्थ नही रहे, कुछ न कुछ शारीरिक बीमारिया बनी रही थी, पर उन्होने उनपर ध्यान नही दिया। कहा जा सकता है कि धार्मिक–चर्या और धार्मिक पठन–पाठन मे ही पूरा वर्षायोग निकला। ❑

इस वर्षायोग का एक प्रसग सदा याद रहेगा, हुआ यह कि सोनागिरि मे ही पू मुनि सन्मति भूषण महाराज (पू आचार्य देशभूषण महाराज के सुशिष्य) ने भी चातुर्मास–स्थापना की थी, वे आहार मे अन्न नही लेते थे, वृद्धावस्था थी, ऊपर से बीमारियो ने घेर रखा था। शरीर की जर्जरता का विचार करते हुए एक दिन उन्होने पू आचार्यवर्य सुमतिसागर जी महाराज से समाधिमरण की विनती की। उनकी बात पर ध्यान दिया गया। उनकी हालत किसी से छुपी नही थी, फिर भी आचार्य सुमतिसागर जी ने उनका गहन निरीक्षण किया, फिर आज्ञा दे दी।

उनकी समाधि का वर्णन महत्वपूर्ण है। अत उसे कैसे छोडा जा सकता है–आचार्य सुमतिसागर जी ने रोगग्रस्त मुनि सन्मति भूषण जी के निर्यापकत्व का भार स्वीकार कर लिया। वे निर्यापकाचार्य और मुनिवर क्षपक।

पू सुमति सागर जी ने क्षु जी से चर्चा की, वे वैयावृत्ति के लिये सहर्ष तैयार हो गये, उनके तो रोम–रोम मे साधु–सेवा के भाव प्रारम्भ से रहे हैं। फलत निर्यापकाचार्य से निर्देश प्राप्त कर क्षु जी क्षपक की सेवार्थ समर्पित हो गये। कुछ दिनो के लिए पढ़ाई पिछड गई, पर आदर्श–क्रियाऍ आगे बढ गईं।

क्षु जी के विचारो से प्रभावित हो क्षपक ने मावा, फल आदि खाद्य पदार्थों का भी त्याग कर दिया। अन्न पहले ही छोड चुके थे। कुछ दिन और बीते कि क्षपक ने दुग्धरस का भी त्याग कर दिया।

अब स्थिति यह कि क्षु जी दिन और रात चौबीसो घटे उन्ही के पास उपस्थित रहते और उनकी सुश्रूषा करते हुए उन्हे पूर्ण सावधान रखते। मात्र कुछ मिनिटो के लिये आहारचर्या को जाते थे और लौटकर शीघ्रता से क्षपक के पास आ जाते थे। निरतर श्रम, जागरण, उद्‌बोधन और चौकसी से क्षु जी कमजोर हो गये, पर सदा की तरह उनका आत्मबल साथ देता रहा।

क्षु जी की साधना देख, समीपस्थ सत, मुनि चद्रसागर जी शात न बैठ सके, वे भी क्षु जी की बराबरी से श्रम करने लगे।

क्षपक त्याग–सयम के प्रति हर पल उत्साही दीखते थे। रोज निर्यापकाचार्य से कोई न कोई त्याग मागते थे, पर वे स्थिति–अनुसार ही आज्ञा देते थे।

दूध का त्याग किया तो गुरुवर ने छाछ दिलाना शुरु करा दिया। फिर कुछ दिन बाद आवले का पानी। अतिम समय समीप आता देख, केवल प्रासुक जल की सीमा रख दी।

सभी त्यागो के बाद भी, क्षपक–पू मुनि सन्मतिभूषण जी–हर क्षण जागरुकता बनाये रहते थे, पूर्ण चेतना। मगर क्षु जी पूरी रात्रि जागते थे, वे जानते थे कि जाने किस घडी काया मे बसा पाखी उड जावे।

भारी श्रम और धर्म के साथ निर्वाह चल रहा था, ग्यारह दिन निकल गये। जल त्याग के समाचार से दर्शनार्थियो की सख्या बढती गई। यात्रियो की भीड लगी ही रहती थी। अत क्षपक के दर्शनो का समय तय कर दिया गया।

जब क्षपक को दर्शको के समक्ष लाते तो नमोस्तु नमोस्तु के स्वर गूज उठते थे, क्षपक अपनी शिथिलता/कमजोरी का कवच तोड कर पूर्ण चेतना के साथ आशीर्वचन देते थे। ❑

क्षपक की आत्मशक्ति बढ रही थी। अत उन्होने मुस्कराते हुए अपनी हस्तलिखित सामग्री क्षु जी को भेट की और शाति महसूस की।

वे पूर्ण अशक्त थे, पर सामायिक बैठकर ही करते थे। नित्य मदिर जी तक ले जाकर उन्हे भगवान और गुरुवर के दर्शन कराये जाते थे। ❑

शारीरिक कमजोरी बढने लगी, हाथ पैर ढीले हो पडे। पर आत्मबल दृढ बना रहा, आत्मभाव पवित्र।

क्षु जी स्वत उन्हे लिटाते, बैठाते और निस्तारादि को ले जाते थे। लघुशका और दीर्घशका के समय श्रम अधिक करना पड जाता था। फिर समय पर णमोकारमत्र सुनाना, कभी अन्य पाठादि भी। क्षपक को कम सुनाई देता था, अत क्षु जी को तेज गले से वार्ता करनी पडती थी, फलत उनका गला बैठ गया। एक मायने मे क्षु जी की 'धुन' बन गई थी। शरीर पहले ही कमजोर था, फिर गला बैठ जाने से–बोलने, सकेत करने मे भारी श्रम करना पडता।

जिस दिन क्षपक के प्राण–त्याग का समय था, उस दिन उनमे अदीठ शक्ति का सचार हुआ। फलत क्षु जी के हाथो पर नही, पैदल चलकर मदिर जी तक गये और दर्शन किये। पर्वत का प्रथम मदिर, जिसके मूलनायक तीर्थकर भगवान नेमिनाथ हैं, क्षपक के आगमन से गमक उठा, जयघोषो से भर गया। क्षपक ने भगवान का अभिषेक देखा, गधोदक प्राप्त किया और जाप दी। सभी लोग चकित–इतनी अधिक शक्ति कहॉ से आ गई?

वह वीर, जयती का पावन, दिवस था। क्षपक ने सुबह बैठकर सामायिक की। फिर हाल मे उपस्थित साधु–सतो से निवेदन किया कि वे सब आहारचर्या को निकले। आचार्य सघ आहार हेतु उठ गया। तब तक क्षपक पुन लेट गये। क्षु गुणसागर और क्षु वर्धमानसागर उनके समीप ही बैठे थे, आहारार्थ न उठे।

क्षपक पुन बैठने के लिए हिले–डुले, तब क्षु जी ने उन्हे बैठाल दिया। क्षपक ने लघु सामायिक की, फिर सभी जीवो से क्षमा याचना की। इशारा कर, वहॉ उपस्थित क्षु द्वय से भी क्षमा मागी और ध्यान मुद्रा

मे बैठ गये। अचानक दस बजे उनकी सासे रुक गईं, क्षु जी ने उन्हे सम्भाला। आचार्यश्री को बुलाया, समस्त सघ आ गया।

भक्तिभाव और मोहविजय के आदर्श के साथ अग्नि–क्रिया सम्पन्न की गई। एक संत सोनागिरि के सोने में समा गया देखते ही देखते।

समाधिमरण तो सम्पन्न हो गया पर क्षुल्लक जी को बहुत कमजोरी आ गई। धीरे–धीरे, कुछ दिनो मे, सामान्य हो गये। उन्हे खुशी थी कि गुरु–कृपा से सम्पूर्ण–समाधि का पुण्यार्जन और प्रत्यक्ष–अनुभव प्राप्त कर सके। ❑

वीर–जयति के पश्चात, गुरु–आज्ञा ले, क्षुल्लक सन्मतिसागर जी एव क्षु गुणसागर जी गोम्टेश–यात्रा के उद्देश्य से दक्षिण भारत की तरफ चल पडे, रास्ते के ग्रामो–नगरो मे आने वाले मदिरों का दर्शन–लाभ लिया।

सबसे पहले कुछ दिवस का समय झासी को दिया, फिर रुके ललितपुर। सयोग की बात कि पू. गुणसागर जी को वहाँ तेज ज्वर हो आया जो कई दिनो तक बना रहा।

स्वास्थ्य ठीक न होते देख समाज ने उन्हे वैसी स्थिति मे विहार न करने का निवेदन किया, साथ मे चल रहे–क्षु सन्मतिसागर जी भी चिंतित हो उठे, उन्होने भी समझाया कि गुणसागर जी रुके।

काया की माया के समक्ष जोर न चला, गुणसागर जी को रुकना पड़ा, क्षु सन्मतिसागर जी विहार कर गये। ❑

सागर मे प्रथम–धवला–वाचना–शिविर लगने जा रहा था। अध्ययन के उपासक पू. क्षु. जी का मन तडप उठा कि स्वास्थ्य ठीक होता तो शिविर मे समय पर पहुँच जाता।

वे सोचते रोज–रोज, पर कुछ निर्णय नहीं ले पा रहे थे। तभी सागर –समाज के श्रावक उन्हे लेने के लिये पहुँच गये, आमत्रण दिया और विहार करने का अनुरोध किया। 'सागर' के विचार 'ललितपुर' ने बाँचे। दोनो समाज के लोगो ने मिल कर मत्रणा की। एक सयुक्त टोली क्षु जी को लेकर सागर चल पड़ी। ❑

स्वास्थ्य तो खराब था ही, अत क्षु जी को रास्ते मे अनेक स्थानो पर अन्तराय हुए, पर चरण न रुके, वे आचरण की ओर बढते ही गये। शक्ति आती गई।

मेहनत सफल हुई। क्षु जी ने मोराजी (सागर) मे प्रवेश किया। किये आचार्यश्री के दर्शन।

वाचना–शिविर मे ध्यान से भाग लिया। परन्तु वहाँ भी अतराय की बहुलता बनी रही। पू क्षुल्लक गुणसागर जी अनेक विषमताओ से हाथ मिलाते रहे और विसगतियो को गले लगाते रहे, किन्तु वाचना की कक्षाओ मे रोज तीनो बार पहुँचते रहे। कभी क्षण मात्र को भी गैरहाजिरी बर्दास्त न थी क्षु जी को। दूसरी तरफ, उनकी काया ग्रीष्म के तप्त वातावरण से भी सघर्ष करती रही। उन्होंने हार न मानी, ज्ञानयज्ञ का पूरा–पूरा लाभ लिया।

सघस्थ साधु पूछते– 'गुणसागर जी, आप इतने अधिक कमजोर हैं; फिर शक्ति कैसे पा लेते हैं?' तब उन्होने बतलाया– भैया, सन 1979 मे श्री फूलचंद जैन योगाचार्य (छतरपुर) से योग/आसन/प्राणायाम आदि सीखे थे, उन्ही का अभ्यास करता रहता हूँ। वे सोनागिरि आये थे, मैं वहीं था, बस सयोग बन गया।

उनकी बाते सुन कर साधुओ को खुशी हुई, कुछ की इच्छा सीखने की हो आई, तब क्षु जी ने अनेक त्यागियो को आसन–क्रिया सिखलाई। सिखाने का क्रम आगे भी चलता रहा।

वाचना पूर्ण हो गई। आचार्यश्री ससघ अन्यत्र विहार कर गये। क्षु जी रुके रहे और उन्होने आगे पढने का क्रम जारी रखा। वे श्री प पन्नालाल जी से न्यायदीपिका–ग्रन्थ पढने लगे।

क्षु जी की लगन देखते हुए समाज ने वहाँ स्थित एक ब्राह्मण विद्वान प जीवन लाल अग्निहोत्री व्याकरणाचार्य से बात की और उन्हे अष्टाध्यायी व्याकरण पढा देने को तैयार कर लिया, वे प्रतिदिन एक घटा क्षु जी को पढाने आने लगे।

उन्हे पूरा ग्रन्थ कठस्थ था। एक दिन मे 40–50 सूत्र पढा देते थे। क्षु जी को उनके ज्ञान पर आश्चर्य हो आता था।

पढते हुए पुन ज्वर। पुन अन्तराय। किन्तु क्षु जी पढने से जी न चुराते, लगे रहते। हा, इतना अवश्य था कि जब ज्यादा ज्वर रहता तो सरल विषय पढते थे और जब सामान्य स्थिति होती तो कठिन। पर ज्वर के नाम पर आराम नही करते थे। पढते रहे। समय देते रहे। पाठ्यक्रम पूर्ण हो गया। ❑

अध्ययन का क्रम चलता ही रहता था, उन्हे व्याकरण, न्याय, सिद्धान्त आदि ग्रन्थो को पढने मे अनेक विसगतियो से चार होना पडा था, पर अध्ययन कभी नही रोका। कई बार तो चकित करने वाली शारीरिक–प्रतिकूलताएँ आती थी, तो कई बार वाछित विषय को पढाने वाले विद्वान मुश्किल से मिल पाते थे, फिर भी क्षु जी हार न मानते और अनेक स्थानो को पत्राचार करा अनुकूल स्थिति बना लेते। धीरे–धीरे समय का पुरस्कार 'सफलता' प्राप्त करने का क्षण भी पाया। ❑

सागर मे प पू आचार्य श्री विद्यासागर जी के सानिध्य मे ब्राह्मी–विद्या–आश्रम का शिलान्यास प्रस्तावित था, आचार्यश्री तो नही पहुँचे, तब समाज और प पन्नालाल जी के सविनय अनुरोध पर क्षुल्लक जी कार्यक्रम मे सम्मिलित हुए और समय पर आशीर्वचन भी प्रदान किया।

कमरा बद कर पढना और स्वाध्याय करना क्षु जी की पुरानी आदत रही है। सागर मे एक बार कमरे मे जाप दे रहे थे, तब एक छिपकली आई और क्षु जी की जाँघ पर बैठ गई। काफी देर तक बैठी रही, लगा वह भी जाप देने लगी। जब क्षु जी की आख खुली तो देखकर चकित। मगर उठकर भागे नही, पुन पचपरमेष्ठी के ध्यान मे लीन हो गये। कुछ पल बाद छिपकली ने सिर हिलाया, मगर काटा नही, वहाँ से प्रस्थान कर गई। दिवाल आदि मे समा गई। फिर क्षु जी भी उठे और अन्य कार्य मे लग गये।

हम कह सकते हैं कि वह क्षु जी का पुण्योदय काल था कि छिपकली ने काटा नहीं और परीक्षाकाल भी था कि डर कर घबडाये नही। था गुरु–आशीष का सुफल। ❑

एक प्रसग ललितपुर का है। वही सन 1980 का समय। क्षु जी ज्ञानाराधना और धर्मोपासना मे लीन थे, तभी वहाँ प पू आचार्य नेमिसागर जी, पू मुनिरत्न दयासागर जी आदि सतो की ससघ पधारने की सूचना प्राप्त हुई। उसी दिन वहाँ, अटा मदिर मे ही, श्रीमान एम के गाँधी एव प्रसिद्ध विद्वान प हुकुमचद भारिल्ल के प्रवचन होने थे, समय रखा गया था–सुबह 9 बजे।

क्षुल्लक जी सोच मे पड गये–प्रवचन सुने या सतो की अगवानी करे। समाज कुछ अनुरोध करे कि उसके पूर्व ही क्षु गुणसागर जी ने अनुरोध सुना दिया–पहले शोभायात्रा सहित सतों को नगर प्रवेश करायेगे, फिर कुछ और।

श्रावकगण क्षु जी के साथ गये, सतो की भावमीनी अगवानी की और भक्ति सहित उन्हे मदिर जी ले आये। जब वहाँ पहुँचे तो प्रवचन–सभा चल रही थी।

सतो को यथोचित स्थान पर विराजमान कराया गया, तभी मच–सचालक की आवाज माईक से गूँज उठी– 'पू क्षु श्री 105 गुणसागर जी महाराज से निवेदन है कि आज वे भी प्रवचन प्रदान करे।'

क्षु जी चकित, क्योकि उन्हे पूर्व सूचना नहीं थी। तब तक श्रावको ने जयघोष करना शुरु कर दिया– 'पू क्षु गुणसागर महाराज की जय।'

जब तक क्षु जी के समक्ष माईक न आ गया तब तक जयघोष का क्रम चलता रहा, सम्भवत वरिष्ठ सतो के समक्ष पहली बार, ऐसा हुआ था। क्षु जी सकोच मे पड गये। फलत मगलाचरण करना ही उपयुक्त समझा। पहले मगलाचरण फिर प्रवचन। कार्यक्रम धूमधाम से सम्पन्न हो गया।

लोग सभा से लौटे कि उसके पूर्व श्री एम के गॉधी लन्दन और श्री भारिल्ल क्षु जी के पास गये और उनसे चर्चा करने लगे। कहे, दोनो विद्वान उनसे प्रभावित हो गये थे। ❑

यह भी ललितपुर की बात है। सूचना प्राप्त हुई थी कि परमपूज्य आचार्य श्री 108 देशभूषण जी महाराज ससघ पधारने वाले है। आगमन की तिथि के माह भर पूर्व से, समाज ने तैयारियाँ शुरु कर दी। हर मार्ग और चौराहे झडा, झालरो और कपडपट्टो (बेनरो) से सजा दिये गये थे, प्रमुख रास्तो पर स्वागत–द्वार खडे कर दिये गये थे। क्षु जी तैयारियो पर विहगम दृष्टि ही डाल पाते थे क्योकि वे तो लिखने–पढने मे ही लीन रहते थे। बस, कमरे के दरवाजे बन्द किये और पढाई शुरु। श्रावकगण शिकायत करते कि क्षु जी अक्सर बद कमरे मे रहे आते हैं, दर्शन नही हो पाते।

क्षुल्लक जी ने शोभायात्रा के साथ आचार्यश्री की अगवानी की योजना बनाई। आचार्यश्री को ललितपुर के अधिकाश समाज ने पूर्व मे नही देखा था। अत क्षु जी ने अपने वचनो और प्रवचनो के माध्यम से जनसामान्य मे उनके प्रति अधिक श्रद्धा–भक्ति उत्पन्न कर दी।

सुनिश्चित समय पर आचार्यश्री की अगवानी के लिए क्षु जी विशाल शोभायात्रा के साथ, नगर से तीन कि मी दूर तक उन्हे लेने गये। आचार्य सघ के दर्शन–पूजन के बाद, उनका नगर–प्रवेश हुआ। लोग कहते है कि वह स्वागत, वह प्रवेश, वह अगवानी अभूतपूर्व थे, ऐतिहासिक। दूसरे ही दिन लोहा–पीतल–बाजार के विशाल मैदान मे आचार्यश्री के प्रवचनो का भव्य–आयोजन रखा गया। कई हजार श्रोता / दर्शक उपस्थित हुए थे। मैदान और समीपी स्थान भीड से खचाखच भर गये थे। मच पर अभिनव स्वागत–सत्कार–पूजन–अर्चन हुआ, हुआ फिर आचार्यश्री का प्रवचन। ❑

क्षु जी आचार्यश्री के निकट बने रहते थे, वे अधिक वृद्ध थे। अत क्षु गुणसागर जी उनका हाथ पकड कर चलते थे। कुछ ही दिनो बाद आचार्य–सघ का विहार हो गया। उन्हे देवगढ जाना था।

वे चले गये, चर्चा नगर मे चलती रही, वह आज भी वहाँ सुनने मिल जाती है। ❑

प्रसग समाप्त, पुनः सागर की वार्ता करते हैं–

साल को बदलते समय नही लगता। 80 चला गया, 81 ने उन्हे छू लिया। तब तक आचार्य श्री विद्यासागरजी सागर से जबलपुर चले गये। वहाँ से ग्रीष्मकालीन वाचना का प्रस्ताव उनके समक्ष आ चुका था।

क्षु जी को समाचार मिला तो वे भी जाने को उद्यत हुए। तभी, वर्तमान के आचार्य श्री पुष्पदन्त सागर जी का आगमन हो गया, वे तब आचार्य नही थे, मात्र मुनि थे। उन्होने गुणसागर जी से व्याकरण पढने की भावना व्यक्त की। क्षु जी को जबलपुर आना था, सयोग से उन्हे (पुष्पदंत जी को) भी एक पचकल्याणक–प्रतिष्ठा–महोत्सव मे जाना था, अत पढ़ने–पढाने का क्षण दब गया। क्षु जी प श्री पन्नालाल जी का अनुरोध मानकर जबलपुर की ओर चल पडे।

रास्ते भर गर्मी ने सताया, अतराय होते रहे, पर क्षु जी चलते–चलाते, किसी तरह जबलपुर–पिसनहारी की मढिया–पहुँच गये। आचार्यश्री के दर्शन किये और उन्ही के समीप रुक गये। ढाई माह तक रहे, वाचना की हर कक्षा मे उपस्थित हुए और ज्ञानार्जन करते रहे। ढाई माहो के दौरान इतने अधिक अतराय आये कि आहार तो समझिए एक माह ही पेट तक पहुँच पाया होगा। गर्मी बढती चली जा रही थी, जितना ताप बाहर–मौसम मे–था, उतना भीतर तन को भी तपाता रहता था।

एक तो ग्रीष्म ऋतु, ऊपर से अतरायो का बाहुल्य, किन्तु क्षुल्लक जी सघस्थ–साधुओ की वैयावृत्ति अवश्य करते रहते थे। इस बीच आचार्यश्री ने एक दिन स्पष्ट किया–आप मुनिदीक्षा की तैयारी से साधना कर रहे हैं, अच्छी बात है। ❑

धीरे–धीरे वाचनादि–कार्यक्रम पूर्ण हो गये। ग्रीष्मऋतु का स्थान पावस ऋतु ने ले लिया। पानी के झले बरसने लगे। वर्षायोग स्थापना की चर्चाएँ चलने लगी। समाज ने क्षु जी से भी जबलपुर मे वर्षायोग करने का अनुरोध किया, पर न आचार्यश्री रुके, न क्षु जी। सागर से आये हुए समाजसेवी श्री गुलाबचद जी पटना, सागर (पू आर्यिक दृढमति माताजी एव श्रद्धेय ब्रह्मचारिणी अनीता जी के शरीरतत्व के पिताजी) श्री जीवेन्द्र जी सिघई (पू मुनिश्री क्षमासागर जी के शरीरतत्व के पिताजी) एव विद्वान श्री प पन्नालाल जी साहित्याचार्य मढिया जी मे ही थे, उन्होने क्षु जी से सागर चलने का अनुरोध किया। क्षु जी ने विचार किया, फिर बरसते पानी को पीछे छोड सागर को विहार कर दिया। सागर के लोग साथ चल रहे थे, सयोग से उसी दिन आचार्यश्री ने भी अन्य स्थान को विहार किया था। ❑

क्षु जी निरतर सागर की ओर चल रहे थे। वर्षायोग स्थापना के लिए मात्र बीस दिन बचे थे। किसी तरह सागर पहुँचे, वहाँ पहुँचते ही ज्वर तेज हो गया। मगर क्षु जी ने वहाँ से भी विहार कर दिया, चरण थे सोनागिरि के पथ पर। शरीर की स्थिति पहले से ही गम्भीर थी, वह अब और अधिक हो गई क्योकि एक दिन पानी बरसता तो चार दिन तेज धूप निकलती थी। मौसम के हर प्रहार (उमस आदि) को साभार सहते हुए बढते गये। रास्ते मे उपयुक्त स्थान देख कर सामायिक कर लेते और फिर चल पडते।

श्री जीवेन्द्र कुमार सिघई जी श्री गुलाबचद जी आदि को पता चला तो चकित। प्रश्नो की भीड लगादी उन्होने–क्यो चले गये? क्या कारण आ गया था? अभी तो हमारे अनुरोध से सागर आये थे? आदि आदि। किन्तु प्रश्नो के उत्तर कोई न जुटा पाया, श्रावकगण उस विहार को नियति का एक हिस्सा (अग) मान कर शान्त रह गये।

क्षु जी नगर बॉदरी तक ही पहुँचे थे कि उनके पैर के तलवे जवाब दे गये। बडे–बडे रक्ताभ छाले हो आये थे। पहले जबलपुर से सागर तक और फिर पुन चल पडने से–यह तो होना ही था, जानते थे क्षु जी, पर रुके नही। आत्मबल के भरोसे चलते रहे।

बॉदरी से बरोदिया, फिर वहाँ से ललितपुर। स्थिति यह कि छालो मे पस (मवाद) पड गई, पैरों में सूजन (शोथ) आ गई।

ललितपुर के मुनिभक्त समाज ने पीडाओ के साक्षात दर्शन किये तो तुरत सेवा मे जुट गये। उचित उपचार, उचित वैयावृत्ति और उचित संत–ससर्ग से शीघ्र कुछ आराम लग गया क्षु जी को। ❑

उसी समय–काल में, ललितपुर में पू मुनिवर श्रुतसागर जी महाराज (महाराष्ट्र) और क्षु मणिभद्र जी भी विराजमान थे। उन्होने पू क्षु गुणसागर जी के गहन–अध्ययन के विषय मे पहले ही सुन लिया था। अत उन्होने क्षु जी से ललितपुर का वर्षायोग करने और व्याकरण पढा देने का अनुरोध किया।

किन्तु क्षु जी किसी कारणवश वहाँ समय न दे सके, सोनागिरि को विहार कर गये। वर्षायोग स्थापना की तिथि निकट थी, स्थानो की दूरी अधिक थी, और थी शारीरिक कमजोरी, पर क्षु जी कदम–कदम बढते गये और ठीक आषाढ शुक्ल अष्टमी की पावन–बेला मे सिद्ध क्षेत्र सोनागिरिजी जा पहुँचे।

वहॉ, पूर्व परिचित धर्मभाई क्षु सन्मतिसागर जी से मिलन हुआ। समाचारो का आदान–प्रदान हुआ।

गुणसागर जी के क्षतविक्षत पैरो को देख कर सन्मतिसागर जी विचलित हो पडे, उन्हे भारी आश्चर्य हुआ कि पैरो के तलवो से मास निकल आया है, रक्तरजित हो गये हैं, फिर भी गुणसागर जी कैसे चलते रहे? उनकी सहनशीलता की सराहना की और स्पष्ट किया कि यह भी तप का एक रूप है।

सच है, जबलपुर से सोनागिरि, 450 कि मी की यात्रा है। सागर तक तो ठीक ही था, वहॉ के बाद तो स्वास्थ्य गिरता ही गया था। अतराय तो जबलपुर से ही प्रारम्भ हो चुके थे। सन्मतिसागर जी समझ गये कि गुणसागर जी ने अनेक भक्तो को द्रवित किया होगा, उनकी हालत देखकर किसको न अश्रु बह आये होगे? जहा पैर धरते थे, वहॉ रक्त छप जाता था। ओह ।

सन्मतिसागर जी ने उनका और उनके पैरो का सघन उपचार कराया, कुछ दिन लगे सामान्य होने मे। ❑

पुन दोनो क्षुल्लको मे कुछ महत्वपूर्ण मत्रणा हुई। विचार बने कि वर्षायोग स्थापना ललितपुर मे की जावे। लोग सुनकर चकित। अभी आये है, ठीक से उपचार तक नही हो पाया और अब पुन 125 कि मी चलेगे?

पर श्रावको और व्रतियो की सोच मे फर्क होता है। मात्र दो–ढाई दिन का समय शेष था। क्षु द्वय के चरण बढ चले ललितपुर की ओर। साथ मे कुछ श्रावक और कुछ ब्रह्मचारीगण हो गये, मगर यह क्या? क्षु जी ऐसे चले कि मानव रूपी एक्सप्रेस से मेल–गाडियॉ पीछे रह गई।

वे एक आहार मे ही, सोनागिरि से ललितपुर पहुँचे थे, धन्य है वह श्रम। ❑

चातुर्मास 1981 की स्थापना ललितपुर मे हो गई। पू मुनि श्रुतसागर जी के सघ के साथ–साथ उनकी चर्यादि होने लगी। मुनिवर भी पूर्ण रूप से निस्पृह थे, शात–स्वाभावी। धवलाग्रन्थ के स्वाध्याय मे रुचि रखते थे। मूलाचार का स्वाध्याय पृथक कक्षा मे चलता था। उनके आग्रह पर पू क्षु गुणसागर जी सघस्थ क्षु माणिभद्र जी एव अन्य ब्र जी को सस्कृत–व्याकरण पढाने लगे।

शेष समय क्षु जी मौन रखना पसन्द करते थे। कक्ष के शान्त–एकान्त वातावरण मे रह कर स्वाध्याय मे लीन रहते थे। यही कारण था कि वे ललितपुर मे पुस्तक 'आलाप–पद्धति' की पाडुलिपि (प्रेस कापी) तैयार करने मे साफल्य पा सके थे। ❑

वर्षायोग के चलते पर्वराज–पर्युषण का आगमन हो गया। श्रावको ने अनुरोध किया कि क्षु गुणसागर जी बड़े मदिर जी मे दस–दिवसीय प्रवचन–श्रृखला का सूत्रपात करे। अनुरोध स्वीकार किया, फलत

प्रवचन–पुरुषार्थ से सभी को अवगत होने का सु–अवसर मिल सका। दो–तीन दिनो मे ही प्रवचनो के आकर्षण ने रग दिखा दिया। फलत श्रोताओ की सख्या बढती चली गई। कहे–दशलक्षण पर्व धूमधाम और प्रेरणाओ के साथ सम्पन्न हो गया। सब कुछ निर्विघ्न।

नगर मे क्षु जी का व्यक्तित्व उत्तम चर्चा प्राप्त कर सका, श्रावको ने सराहना की, विद्वानो ने पुष्टि। ❑

दो ढाई माह मे ही गुणसागर की पढाई ने भी अपना प्रभाव बतला दिया, जब मुनिवर को पता चला कि उन्होने क्षु मणिभद्र जी सहित ब्र जी को व्याकरण तो व्याकरण, लघु सिद्धान्त कौमुदी भी पढा दी है। उन्हे सूत्रवृत्ति कठस्थ करा दी है। मणिभद्र जी 50–52 वर्ष के सरल–स्वाभावी क्षुल्लक थे।

मदिर जी के तत्कालीन प्रबधक श्री शीलचद्र जैन (अनौरा वाले) थे, उन्हे ज्ञात हुआ कि क्षु गुणसागर जी किसी अधिकारी–विद्वान से न्यायग्रन्थ पढना चाहते है। फलत उन्होने अनेको स्थानो पर अवस्थित विद्वानो से पत्राचार किया, पर जब उनके नाम क्षु जी के समक्ष रखे गये तो उन्होने मना कर दिया, क्योकि वे सामान्य नही, प्रमाणित विद्वान चाहते थे।

सौभाग्य से तभी प भगवानदास जी न्यायतीर्थ (रायपुर वाले) का ललितपुर आगमन हुआ, उनका समाचार सुन गुणसागर जी को खुशी हुई, फिर उन्ही के सानिध्य मे अध्ययन किया। क्षु जी ने उनसे राजवार्तिक (दोनो भाग), स्याद्वादमजरी, चद्रप्रभुचरित्र–काव्य आदि ग्रन्थो पर प्रकाश पाया। फिर (उन्ही से) प्रमेय रत्नमाला और आप्तपरीक्षा ग्रन्थो का पाठन–पठन किया।

कह सकते हैं कि क्षु जी का हर पल, पढते हुए और पढाते हुए ही गुजरा था उस वर्षायोग मे।

श्रम अधिक किया। फलत पुन बीमार हो गये। तेज ज्वर। तीव्र शारीरिक कमजोरी। अनेक अतराय। एक माह तक लौकी–पानी और आधी–एक रोटी तक ही सीमित रहा आहार। शरीर टूट कर रह गया।

क्षु जी की वार्ताशैली या हावभाव से कभी नही पता चल पाता था कि वे अस्वस्थ है। लोग तो आहारचर्या देखकर अदाज लगा लेते थे, या देह पर ज्वर आ जाने से ज्ञात कर पाते थे। सौ से एक सौ दो डिग्री तक ज्वर रहने पर भी वे अपने कार्य नही रोकते थे। अत आहार देने वाले श्रावकगण जाकर प्रबधको से बतलाते थे कि स्वास्थ्य गडबड चल रहा है।

एक बार तीन दिनो तक क्षु जी ने आहार मे कुछ नही लिया, फिर भी लोग समझ नही पाये, स्थिति जब गम्भीर ही हो गई तब चिकित्सा शुरु की जा सकी थी। प्रबधक श्री शीलचद्र जी ने समीप स्थित डा चौबे को बुलाया, उन्होने निरीक्षण किया तो श्रावको पर झल्ला पडे– 'भाई, स्थिति गम्भीर हो चुकी है, आप लोगो ने पहले क्यो नही बुलाया मुझे?' फिर उन्होने नगर के ख्यातिप्राप्त चार अन्य डाक्टरो को बुलवाया, सभी चितित हो पडे। आगत डाक्टरगण तब और परेशान हो उठे जब उन्हे क्षु जी से उत्तर मिला– 'मै अग्रेजी दवाइयॉ नही लूँगा, आप लोग जाइए।'

तब तक आयुर्वेदिक चिकित्सक श्रीमती डा अरुणा जैन आ गईं, वे सुप्रसिद्ध चिकित्सक स्व डा बाहुबली जैन की अर्धांगनी हैं और ललितपुर की प्रसिद्ध फार्मेसी की मालिक।

उनका इलाज शुरु हुआ, उन्होने सबसे पहले क्षु जी का अध्ययन बद कराया और स्पष्ट तौर से बतलाया कि अधिक विलम्ब हो जाता तो आपका स्वास्थ्य ठीक न हो पाता। भविष्य मे कभी ऐसी स्थिति आये तो श्रावको को सकेत अवश्य कर दिया करे। ❑

यदि सन 1974 (ब्रह्मचारी–दीक्षा–दिवस) से सन 1980 तक के परिदृश्यो पर ध्यान दे तो देखने मे आता है कि क्षु जी ने अपने अध्ययन के लिये जो स्थान चयनित किये थे, वे अति विशेष रहे है, यथा–मुरैना,

चदेरी, मुगावली, थूबोनजी, खनियाधाना, सागर, ललितपुर, जबलपुर, सोनागिरि और जयपुर। हर स्थान पर समाज और विद्वान का श्रेष्ठ सहयोग भी मिला था। विद्वान भी श्रेष्ठ श्रेणी के उपलब्ध हुए थे जो अपने विषय के अधिकारी–विद्वान कहलाते थे। क्षु जी का सौभाग्य और गुरुवर का आशीष ही कहा जायेगा कि अध्ययन और धर्मसाधना के समय अनेक कष्ट बार–बार आते रहे किन्तु क्षु जी उनसे सघर्ष कर आगे को ही बढते गये। अत्यन्त विषम स्थिति ललितपुर की थी, जहा वयोवृद्ध विद्वान प भगवानदास जी न्यायतीर्थ (रायपुर वाले) जो लकवा से पीडित होते हुए भी, पढाते थे और क्षु जी बीमार तथा कमजोर होते हुए भी, ध्यान लगाकर पढते थे।

भगवान दास जी ने लगभग डेढ वर्ष पढाया था। उनके पढाते हुए, क्षु जी की इच्छा पर समाज ने समस्तीपुर (बिहार) स्थित सस्कृत महाविद्यालय के अवकाश प्राप्त प्राचार्य प बलभद्र कुमार जी पाठक की सेवाए भी करीब एक वर्ष तक ली, उन्होने क्षु जी को सस्कृत व्याकरण और साहित्य का पाठ्यक्रम पढाया था।

क्षु जी चाहते ही थे कि जिनवाणी जन–जन तक पहुँचे। अत वे एक नन्हे दीप की तरह, बडे दीपको के ससर्ग मे आते रहे, ज्ञान लिया और आगे भी ज्योति से ज्योति जलाने का क्रम बनाये रहे। (अब वे नूतन दीपको को ज्योतित कर रहे है) ❑

वर्षाकाल का समय सामने था। क्षु जी को समाज ने वही के वर्षायोग के लिये बाध्य किया, अनुरोध और आग्रह का क्रम कई दिनो तक चला। अतत, क्षु जी तैयार हो गये। तब तक वयोवृद्ध क्षु वर्धमान सागर जी का भी आगमन हो गया। (वे कुछ वर्ष पूर्व तक गुणसागर जी के शरीर के बब्बा जी थे, श्री शकरलाल जैन मुरैना) वर्षायोग की स्थापना हो गई। अवधि ठीक–ठीक निकल गई। चातुर्मास के बाद क्षु श्री गुणसागर जी के भाव विहार करने के हो गये। समाज ने रुकने के लिए बहुत कहा, पर उन्होने एक दिन प्रात बेला मे विहार कर दिया।

क्षुल्लक जी प्रस्थान कर सिरोज जी पहुँचे। वह अतिशय क्षेत्र है, भावसहित दर्शन किये। उस प्राचीन क्षेत्र पर पुरातत्व महत्त्व की बहुत सी सामग्री, मूर्तियॉ आदि, (बिखरी पडी हुई थी) देखने को मिली।

प्रथम दिवस ही आहार के समय अतराय हो गया, श्रावक चिन्ता मे पड गये।

ललितपुर के श्रावक लौटना चाहते थे, मगर जब उन्हे ज्ञात हुआ कि क्षु जी सीधे चन्देरी प्रस्थान कर रहे है, तो वे उन्ही के साथ चल पडे, सिरोज से भी कुछ श्रावक साथ हो गये। चदेरी के मदिर जी मे स्थापित चौबीसी के दर्शन किये, फिर थूबोनजी गये। वहॉ से पुन चदेरी आ गये। प बलभद्र पाठक का मिलन हुआ। फलत अन्य यात्राए और कार्यक्रम निरस्त कर दिये और अध्ययन शुरु।

क्षु जी के रुकने से चदेरी समाज मे धर्मोत्साह की लहर दौड गई। सुबह उनके प्रवचन सुनने सब जन आते। शेष समय वे पढते रहते। धीरे–धीरे जैन तो जैन, जैनेतर लोग भी प्रवचन सुनने एव वार्ता करने आने लगे। कुछ मुसलमान–शिक्षक प्रभावित हुए, वे भी आये। चदेरी के मदिर जी का प्रौढ माली बहुत्त श्रद्धालु था, वह सदा क्षु. जी की सेवार्थ तत्पर रहता था। उसे देख उसके सुपुत्र (श्री मुन्नालाल सुमन) मे भी भक्ति का सचार हो पड़ा और वह भी क्षु जी के समीप बने रहने लगे।

कुछ कार्य से पू बलभद्र जी अपने गॉव चले गये। फलत सुबह का समय खाली रहने लगा, तब क्षु जी मुन्नालाल के साथ पहाडी पर चले जाते, वहॉ एक प्राचीन महल और किला के समीप ध्यान–अध्ययन करते।

पहाडी का स्थान और एकान्त क्षु जी को इतना अधिक पसद आ गया कि कई दिनो तक तो वे मात्र आहार के लिए ही नीचे आते थे। शेष समय अपनी पुस्तके लेकर पहाडी के नीरव वातास मे जमे रहते थे। वही पढाई, वही स्वाध्याय करते। सुमन भाई साथ–साथ रहे आते थे। वे ही किताबे ऊपर ले जाते थे, वे ही ले आते थे।

जो शिक्षक क्षु जी से ध्यान सीख रहे थे, वे भी पहाडी पर पहुँचने लगे और समीप बैठकर धार्मिक चर्चाएँ करते थे। उनमे कुछ मुसलमान भाई भी थे। जब अच्छी तरह परिचित हो गये तो वहीं पहाडी पर भजन (कव्वाली) सुना दिया करते।

वात्सल्य इतना बढा कि वे भजनगायक सगीत–मडली के साथ क्षु जी की उपस्थिति मे, मदिर मे कार्यक्रम देने लगे।

समय की गति बनी रही, चातुर्मास स्थापना की घडी नजदीक आ गई। समाज के आग्रह से क्षु जी ने सन 1983 का वर्षायोग चदेरी मे स्थापित किया था। बाद मे प बलभद्र जी भी आ गये। फलत वर्षायोग के चलते अध्ययन का साधन भी सध गया। पू क्षु वर्द्धमान सागर जी भी विराज गये थे।

मगर क्षु गुणसागर जी के स्वास्थ्य ने पुन गडबड शुरु कर दी। दशलक्षण पर्व के सुभागमन के पूर्व ही वे बहुत बीमार पड गये। उचित उपचार शुरु। कुछ दिन मे किंचित आराम। तब तक पर्व आ गया। अत उन्हे प्रवचन के लिए भी समय निकालना पडा फलत लोग धर्म की डगर पर आनदित हो उठे।

स्थानीय सामाजिक एव राजनैतिक कार्यकर्ता श्री कमलेश हाथीशाह क्षु जी के कार्यक्रमो मे शामिल होते और जनता मे उत्साह बढाने का निमित्त बनते। सम्पूर्ण नगर और समीपी बस्तियो तक क्षु जी की चर्चा फैल चुकी थी, सभी लोग उन्हे बहुत चाहने लगे। समाज को आश्चर्य तो तब हुआ जब चदेरी के वरिष्ठ जमीनदार घराने के सदस्य श्री कुँअर कमलसिह भी क्षु जी के भक्त बन गये। उनका प्रभाव आसपास के इलाके मे, राजा–महाराजाओ की भाँति बना हुआ था। ❑

चातुर्मास की अवधि पूर्ण हो गई। सब कुछ निर्विघ्न हुआ। समाज प्रसन्न। क्षु जी भी प्रसन्न।

चँदेरी मे आध्यात्मिक–सगोष्ठी एव विशाल–धार्मिक–आयोजनो का क्रम क्षु जी के सानिध्य मे ऐसा सफल हुआ था कि बडे–बडे विद्वान भी सराहना करते हुए और प्रेरणा लेते हुए लौटे थे। वहाँ के आयोजनो मे अखिल भारतीय–स्तर के अनेक विद्वान उपस्थित हुए थे। जुलूस/शोभायात्राएँ भी प्रशसा के योग्य रहे। वर्षायोग के पश्चात ललितपुर से क्षु सन्मतिसागर जी भी पधार गये थे। अत आनद द्विगुणित हो गया था। वे क्षण कोई नही भुला सकता। ❑

चँदेरी मे एक कार्य और हुआ। क्षु जी सन 1977 से मुनि बनने की साधना कर रहे थे, जो यहाँ, चँदेरी मे श्रेष्ठ स्थिति मे पहुँच गई थी। वे पहाडी पर बने प्राचीन महल के पाँचवे माले पर जाकर नग्न बैठते और सामायिक करते थे। महल तो खण्डहर ही–हो चुका था, पर वह क्षु जी की साधना का पवित्र निमित्त बना था। क्षु जी की वृत्ति देख सुमनभाई ने वहाँ पत्थरो की चौकी बना डाली थी, जिस पर डायरी रख कर क्षु जी लिखाई करते थे।

चँदेरी के वैष्णव–समाज (हिन्दू समाज का एक अग) के सामने गगा–यात्रा–समारोह का प्रसग आया। पूरे गाँव के लोगो ने मिलकर विशिष्ट शोभायात्रा निकालने का मानस बनाया। नगर के वक्षस्थल कहे जाने वाले स्थान 'दिल्ली गेट' पर सभा करने की तैयारी शुरु की। उन्होने क्षु जी से प्रवचन का आग्रह किया।

समाज के गणमान्य लोग उनसे वार्ता करने पहाड़ी पर ही जा पहुँचे। क्षु जी ने विचार किया कि दर्जनो वैष्णव–सतो–साधुओ के साथ यह जैन–साधु शोभा पायेगा या बिगाडेगा? अत कुछ उत्तर न दे सके। फलत गगा–यात्रा–समारोह–समिति के अनेक वरिष्ठ सज्जन कई बार क्षु जी.के पास आये और अत मे उन्हे राजी कर लिया।

नियत समय पर दिल्ली गेट पर सभा का विशाल आयोजन किया गया। अनेक सतो की उपस्थिति मे जैन सत गुणसागर जी का प्रभावनाकारी प्रवचन हुआ। लोगो को गहराई तक प्रभावित करने मे सफल रहे। फलत सम्पूर्ण हिन्दू समाज मे भी क्षु जी की उत्तम–प्रसिद्धि हुई। जैन समाज मे तो हो ही चुकी थी। एक मायने मे उस कार्यक्रम–प्रवचन के पश्चात, जैन समाज का सम्मान बढ गया था हिन्दू समाज की नजर मे। परस्पर प्रेमादर के भाव दृढ हो पडे थे। ❑

चँदेरी मे दिगम्बर मदिर वदनीय और दर्शनीय तो हैं ही, अन्य अनेक स्थान भी दर्शनीय हैं। समीप ही 2–3 कि मी दूर जगल मे अतिशय तीर्थक्षेत्र खदार जी अवस्थित है, जहा की विशालकाय तीर्थकर मूर्ति प्रसिद्ध है। कुछ खडित मूर्तियॉ भी यहा खडगासन और पद्मासन मे उपलब्ध है जो पुरातत्व की दृष्टि से महत्व रखती हैं। वहॉ निर्मित चार प्राचीन छतरियॉ उस स्थान का परिचय देती हैं कि यह सम्यग्ज्ञान–प्राप्ति का विशेष स्थल रहा होगा। यहा पर पूर्वकालीन–विद्वानो एव सतो ने बैठ कर सहस्त्रो ग्रन्थ लिखे है। कहने का अभिप्राय यह कि वहॉ अनेक स्थान हैं जो कुछ न कुछ प्रसिद्धि लिये हुए है।

क्षु जी तीर्थ पर फैली गदगी को देखकर दुखी हो गये, गुफाए भी सुरक्षित न थीं, उनमे बदरो ने आवास बना लिये थे। कहते हैं कि एक बार मेला के अवसर पर मधुमक्खियो का प्रकोप हो गया था, फलत तभी से विमान–लाना बद कर दिया गया था।

क्षु जी के परामर्श पर क्षेत्र की ओर सभी का ध्यान गया, गुफाओ को निरापद बनाया गया और समाज को चौकस। 'क्षेत्र की प्रगति मे कुछ कर सकूँ' इस विचार से क्षु जी काफी समय तक वही रुके रहे। ❑

सन 1984 का वर्षाकाल सामने था, क्षु जी खदार से चलकर चँदेरी आ गये। समाज के अनुरोध को देखते हुए, चदेरी मे द्वितीय–चातुर्मास की स्थापना की। सयोग से क्षु परमानद जी एव क्षु सुपार्श्वसागर जी साथ थे। ❑

चँदेरी–प्रवास के पश्चात् पू क्षु गुणसागर जी ने ससघ वहॉ से प्रस्थान किया और उसी अचल के प्रसिद्ध अतिशय तीर्थ क्षेत्र थूबोनजी पहुँचे। पू क्षु सन्मतिसागर एव पू क्षु वर्धमानसागर के साथ थे। वहॉ पू मुनि निर्वाणसागर जी ससघ अवस्थित थे, क्षुल्लक–सघ ने मुनिसघ के दर्शन किये, की फिर क्षेत्र की वदना।

वहॉ से वापिस हुए तो चँदेरी और सिरोज होते हुए ललितपुर पहुँचे। साथ मे 15 व्रती थे, कुछ अन्य श्रावकगण भी। कुछ दिन ललितपुर रुके, तब तक पचकल्याणक महासमिति सागर के कार्यकर्ता आये और सागर चलने का अनुरोध किया, क्षुल्लकगण सागर चले गये। वहॉ परमपूज्य आचार्य पार्श्वसागर जी के दर्शन किये, पचकल्याणक–समारोह का लाभ लिया, मगर अधिक समय न दे सके और शीघ्र ही बीना को विहार कर दिया। समुचित समय बीना को दिया, फिर विहार किया मुँगावली की ओर। नगर चार कि मी ही रहा होगा कि क्षु जी के पैर मे कॉटा लग गया। वह बडा था। अत गहराई तक चुभ गया था। साथ चल रहे ब्र श्री चद्रसेन ने प्रयास कर कॉटा निकाला, तब कही मुँगावली पहुँचे। क्षु जी टहकते हुए दीखते थे, किन्तु वाणी और चेहरे से कष्ट का आभास न होने देते थे। कष्ट के कारण रात्रि–विश्राम मुगावली मे ही किया,

मगर दूसरे दिन चँदेरी को विहार कर दिया। रास्ते मे सहराई ग्राम मे आहार–चर्या सम्पन्न हुई, फिर सामायिक। तब तक चँदेरी–समाज के अनेक गणमान्य लोग लेने आ गये। फलत सुदर शोभायात्रा के साथ चँदेरी चल दिये, शाम को नगर–प्रवेश। ❑

प्रवेश के समय समाज ने विशेष धूमधाम और उत्साह दिखलाया, जिससे अन्य नगरवासियो को जाहिर हो गया कि जैन–सन्त पधार गये हैं। ❑

यहाँ शाहपुर (सागर वाले पू जी) का प्रसग याद आ रहा है। (वह वर्षायोग–पूर्व का है)। क्षु जी सोचते कि कोई विद्वान यहाँ आते तो अध्ययन का सयोग भी बन जाता। चार–छह दिनो से सोच–विचार चल ही रहा था कि पू अमरचद जी दर्शनार्थ पहुँचे। उनसे वार्ता के मध्य क्षु जी ने कहा कि आपके अग्रज कहाँ है, कैसे है आजकल?

–जी, अस्वस्थ रहते है।

–कभी उन्हे लाइये, चर्चा करना है।

–जी, अवश्य।

पू अमरचद जी के अग्रज प श्रुतसागर जी शाहपुर (जिला सागर) विश्रुत विद्वान थे, उन्होने न्यायतीर्थ तक अध्ययन कर, विद्वता मे भारी नाम किया था। एक दिन वे क्षु जी के दर्शनार्थ उपस्थित हुए। तब क्षु जी ने अपना प्रस्ताव उनके समक्ष रखा।

प श्रुतसागर जी की वय 75 से अधिक हो चुकी थी। शरीर क्षीण, उठने–बैठने तक मे परेशानी होती थी। किन्तु क्षु जी का प्रस्ताव सुन प्रसन्न हो गये, विनय भाव से बोले–महाराज, मेरी हालत आपसे छुपी नही है, मै आपके समक्ष हूँ। आप देख रहे है। फिर भी मेरा प्रयास रहेगा कि प्रतिदिन एक घटा अवश्य पढाऊँ। काश, इससे अधिक कार्य की शक्ति होती तो ।

वे आगे कुछ बोलते कि क्षु जी बोल पडे–एक घटा पर्याप्त है। कल से आप समय दीजिये।

उनका साहस देख क्षु जी को हार्दिक खुशी हुई। फिर बोले– 'सचमुच आप स्वस्थ नही है, पर आपमे उत्साह है, आप से पढने मे आत्मसुख होगा। आपको अधिक कष्ट न होगा, मै मूल ग्रन्थ रो पढता रहूँगा, आप मात्र सुनते रहना। जहाँ त्रुटि हो जावे वहाँ बतला देना। मैं स्वत पढूँगा और अर्थ करुगा।'

क्षु जी के करुणापूर्ण उत्तर से प जी चकित हो उठे, उन्होने सन्तानुरूप वत्सलता पाई थी पात्र मे।❑

अध्ययन शुरु हो गया। पहले दिन एक घटा। दूसरे दिन से प जी अधिक समय देने लगे, उनका खूब मन लगता था पढाने मे। स्थिति यह कि धीरे–धीरे दो घटे, फिर तीन और फिर चार–पॉच घटे तक बैठने लगे।

पडितजी ने प्रमेय कमल मार्तण्ड का अध्ययन कराया, ग्रन्थ श्री गोपालदास दिगम्बर जैन सस्कृत महाविद्यालय मुरैना से उपलब्ध कर लिया गया था। सैद्धातिक–ज्ञान के साथ–साथ आध्यात्मिक–ज्ञान का अभ्यास बहुत प्रौढता से कराते थे।

कभी–कभी वे क्षु जी से कह देते– 'महाराज, मेरी आयु का भरोसा नही है, कब सास रुक जाये, नही जानता, मगर मेरी इच्छा है कि आपको श्लोकवर्तिका और उसके बाद अष्टसहस्त्री का अध्ययन कराऊँ।'

क्षु जी कहते– 'अवश्य ही आपसे पढूँगा।'

प जी कठिन प्रश्न भर नहीं पूछते थे, क्लिष्ट दार्शनिक–चर्चा भी क्षु जी से करते थे, मगर सब कुछ अत्यन्त सरल भाषा में समझाते थे। क्षु जी का बहुत मन लगता था, वे कभी ऊबते न थे।

पू जी ने अपनी घोषणा के अनुसार प्रमेय कमल–मार्तण्ड ग्रन्थ के पश्चात श्लोकवर्तिका और अष्टसहस्त्री की पढाई भी कराई।

प जी क्षु जी के साथ चलते रहने और पढाते रहने को तैयार हो गये। अत शाहपुर से विहार कर पिपरई मे रुके और अध्ययन चालू रखा। फिर वहाँ से मुँगावली, थूबोनजी गये, अत मे चँदेरी। वहाँ भी पठन–पाठन दृढता से चलता रहा। ❑

गर्मियो मे पू जी घर वापिस चले गये, फलत क्षु जी ने कार्यक्रम बदल दिया। वे आहार चर्या चँदेरी मे करते और रात्रि विश्राम खदार मे, उनके साथ क्षु सुपार्श्व सागर जी भी रहते थे। दोनो सत घटो तक ग्रन्थ पढते, याद करते और सामायिक के बाद विश्राम। ❑

पू गुणसागर जी की प्रेरणा से खदार मे 24 घटे का 'अखण्ड णमोकार महामत्र–पाठ' रखा गया, आयोजन सीमाधिक सफल रहा, फलत खदार जी के साथ–साथ, क्षु जी से भी, श्रावको का लगाव बढता गया। जगल होने के बाद भी श्रावकगण रात्रि के समय भी आने–जाने से न हिचकिचाते थे। हुआ यह कि एक रात श्री कमलेश हाथीशाह की माताश्री को रात्रि मे 12 बजे खदार से चॅंदेरी लौट पड़ने की विवशता समक्ष आ गई, घर मे किसी का स्वास्थ्य खराब हो गया था। पैदल का रास्ता था, जगल का वास्ता था, हिसक–पशुओ का भय था, अन्य भय पृथक। उन्होने आत्मबल सजोया, क्षु जी का जयघोष किया और चल पडी। देखते ही देखते घर पहुॅंच गईं, कोई परेशानी न आई।

फिर तो रोज रात मे युवकगण चाहे जब/जितने समय आने–जाने लगे, सभी का भय समाप्त हो गया। कृपा गुणसागर जी की। ❑

तो प्रसग चल रहा था ग्रीष्म काल का, अब वर्षाकाल की चर्चा करते हैं। चातुर्मास की स्थापना चॅंदेरी मे हो गई, जैसा कि पिछले पन्नो पर बतलाया था।

स्थापना के समय 'स्थान छूट' का सकल्प लिया था कि मौसम निरापद रहेगा तो खदार जी आ–जा सकेगे।

वर्षायोग के चलते वहाँ अनेको बार 48 से 72 घटो तक के पाठ किये गये। फलत खदार का वातावरण गरिमापूर्ण तो बना ही, लोगो मे भारी निर्भयता आ गई। स्थिति यह कि खदार जी मे कई बार आहार–चर्या की व्यवस्था भी की गई और क्षु जी के निरतराय–आहार भी हुए।

कभी–कभी जब पानी बरसता तो गुफाए गीली क्या, भर जाती थी, किन्तु मूर्तियों के समीप दो–तीन फुट तक फर्श सूखा रहता था, क्षु जी उतनी कम जगह मे बैठकर ही रात्रि निकाल देते थे। एक दो बार समीप से बिच्छू रेग कर निकल गये किन्तु क्षु जी विचलित नहीं हुए।

समय निकलते पता नहीं चलता, धीरे–धीरे चातुर्मास की विस्थापना का समय आ गया। खदार और चॅंदेरी एक हो गये थे। वर्षायोग के अत मे श्री शीलचंद जी (हाटकेपुशवाले) ने खदार जी मे, कार्तिक की अष्टानिका में–श्री सिद्ध चक्र विधान कराने का भाव क्षु जी के समक्ष रखा। आयोजन प्रारम्भ किया गया, तभी (31 अक्टूबर 1984) भारत देश की तत्कालीन प्रधान मत्री श्रीमती इंदिरा गाँधी की हत्या हो जाने के

समाचार मिले। सम्पूर्ण देश मे उथल–पुथल मच गई, दगे भडक गये, लूट–पाट चालू हो गई। नगर–नगर मे कर्फ्यू लगा दिया गया, लोगो को भीडभाड वाले कार्य स्थगित करने पडे। किन्तु क्षु. जी ने विधान का क्रम नही रोकने दिया, वह अपनी गति से चलता रहा। उस समय उन्होने बतलाया था कि यह धार्मिक अनुष्ठान है, इसके चलते–रहने से शाति–स्थापना मे बल मिलेगा प्रशासन–तत्र को। विधान निर्विघ्न सम्पन्न हुआ। लोग क्षु जी के दृढ आत्मबल की सराहना करते न थकते थे। विधान दस दिन चला था, दसो दिन विशाल कार्यक्रम भी किये गये थे। नगर तो नगर, समीपी नगरो से भी जैन समाज के लोग हाजिर होते थे।

विधान–अवधि मे ही परमपूज्य आचार्य पार्श्वसागर जी एव क्षु वर्धमानसागर जी भी आ गये, समाज ने उन्हे पूर्व मे ही आमत्रित कर दिया था। उन्होने भी प्रवचन के दौरान बतलाया कि विधान अभूतपूर्व कहा जायेगा, वह पूर्ण सफल रहा है।

आयोजको ने समय का लाभ लिया और मच से दान का आह्वान किया, फिर क्या था, देखते ही देखते साठ हजार की राशि दातारो ने स्वेच्छा से लिखवाई। लोग चकित थे, छोटे से कस्बे मे, तनिक से समाज से, बडी प्रभावना का कार्य जो हो गया था। लोग बोलते–यह सब क्षु जी की वाणी का चमत्कार है। कुछ जन कहते थे–यह अतिशय क्षेत्र खदार जी का अतिशय है, वरना सन 1984 के इस समयकाल मे, छोटे से समाज से, साठ हजार की राशि, कौन सोचता था? तभी से क्षेत्र की कायालट की गई, अब वह एक साफ–स्वच्छ तीर्थस्थान है। (नवीन–मदिर और धर्मशाला का निर्माण कार्य भी पूर्ण हो चुका है)

खदार मे तलहटी के कमरे उसी समय बनाये गये थे। माली सध्या के समय कक्ष मे लालटेन जलाकर लौट जाता था। एक रात जब वह लौट रहा था, नदी के पास सिह ने दहाड लगा दी, आवाज सुन वह घबरा गया और वापिस क्षु जी की तरफ लौट पडा। दहाड एक लकडहारे ने भी सुनी थी। अत वह भी अपनी साईकिल ले, जान बचाकर क्षु जी के कक्ष मे घुस गया। दोनो से समाचार की जानकारी क्षु जी को मिली, उन्होने दोनो को प्रतिबुद्ध किया–घबडाओ नही, वह (सिह) पानी पीने आया होगा, पी कर चला जावेगा, आपका कुछ न बिगडेगा। मैं तो रोज यहाँ रहता हूँ।

क्षु जी की वाणी इतनी दृढता से निकल रही थी जैसे सिह उनका पालतू जानवर हो, किन्तु हुआ भी वैसा, लोग सदा आते जाते रहे, कभी किसी को कोई क्षति नही हुई। ❑

बाद मे लोगो को ज्ञात हुआ कि क्षु जी वन मे फिरने वाले हिसक प्राणियो का डर नही मानते, न समीप रेगने वाले जहरीले साँप–बिच्छूओ का। तभी तो वे कई माह तक पहाडी पर बने एक खण्डहर मे बैठ कर डायरी लिखते रहे थे।

डायरी मे चिन्तनपूर्ण विचार थे। लौटते समय वे डायरी, पेन, कागज वहीं खण्डहर के आले मे रख आते थे। एक दिन कोई अनजान आदमी वह डायरी उठा ले गया। क्षु जी कुछ समय तक आकुल व्याकुल दीखे, फिर शातिधारण कर उसे भूल गये, दूसरे दिन से नई डायरी मे, नये शिरे से लिखना शुरु कर दिया। ❑

उस पहाड पर अनेक देवो की स्थापना है, हर देव की कोई न कोई कथा–कहानी है, अतं आम–आदमी अकेला जाने मे झिझकता–डरता था, किन्तु क्षु जी? उनकी लीला विचित्र थी, जिस जगह पर लोग अधिक डर बतलाते, दूसरे दिन वे वही बैठकर सामायिक करते थे। कहें–उन्हे किसी से कोई खतरा न था। उनके रुकने–बैठने से लोगो का सदियो पुराना डर, जाता रहा था। ❑

खदारजी और चदेरी के प्रवास के पश्चात, क्षु जी ने थूबोनजी क्षेत्र को विहार किया। सन 1984 का ग्रीष्म काल मिलाकर करीब तीन माह का समय वहाँ दिया, वहाँ ही प श्रुतसागर जैन को बुलवा लिया और श्लोकवार्तिक ग्रन्थ पर पुनराध्ययन किया।

थूवोन जी से पद्रह कि मी की दूरी पर एक पहाड है, वहाँ मियादाद नामक स्थान के समीप भगवान आदिनाथ की चमत्कारपूर्ण पद्मासन प्रतिमा विराजमान है। सैकडो लोग आते जाते रहते हैं।

जब चदेरी के लोग वहाँ आये तो वे क्षु जी को पुन चँदेरी ले गये। मगर उन्होने इस बार कम समय दिया और विहार कर मुँगावली चले गये। फिर वहाँ से सहराई। वहाँ कुछ ही दिन बीते कि ललितपुर–समाज के लोग लेने आ गये। वे लौटे तो पिपराई के आ गये। उन्हे भी खाली लौटना पडा, तब तक मुँगावली के आ गये, उनका अनुरोध स्वीकार हुआ, क्षु जी मुँगवली लौट आये। वहाँ प्रतिदिन प्रवचन का क्रम शुरु किया जिससे उत्तम प्रभावना हुई। ❑

वर्षाकाल के लिए एकाध माह बचा था, मुँगावली–समाज ने वही वर्षायोग स्थापना का अनुरोध किया, किन्तु क्षु जी न रुके, वे विहार कर गये। आठ कि मी दूर एक ग्राम मे पहुँचे ही थे कि मुँगावली से सैकड़ो श्रावक आये और क्षु जी को घेर कर बैठ गये, कुछ गणमान्य लोगो ने चरण पकड लिये और प्रार्थना की–महाराज, आषाढ की अष्टान्हिका सामने हैं, आप यह क्या कर रहे हैं? कृपया मुँगावली मे पधार कर हमे धर्म लाभ दीजिए। तब तक बालगोपाल आ गये, शोरगुल और अधिक बढ गया, कहे–जयघोष का क्रम बढ गया– 'क्षु गुणसागर जी की जय।' बच्चे–बूढे मिलकर चिल्ला रहे थे।

उनके वात्सल्य और भक्ति की अदृश्य–बेडी क्षु जी के चरणो को जकड चुकी थी। अत उन्होने एक नई बात कह दी, बोले–आप लोग ललितपुर जाकर पू क्षु सन्मतिसागर जी से आज्ञा ले आये तो लौटना सम्भव होगा।

बेचारे कार्यकर्ता विभिन्न साधनो से ललितपुर आये, आज्ञा लिखवाई और शाम तक वापिस क्षु जी के पास।

अब क्या था, आज्ञा पढ कर क्षु जी के पैर थम गये, दूसरे दिन सुबह शोभायात्रा के साथ श्रावको ने उन्हे मुँगावली मे प्रवेश कराया। कहे–भारी धूमधाम और उत्साह से हुआ था नगर–प्रवेश। ❑

निश्चित तिथि पर स्थापना की गई। वहाँ समाज के घर, उस समय, तीन सौ से अधिक थे। छह मदिर थे। धार्मिक– क्रियाएँ शातिपूर्ण ढग से चलने लगी। जिस श्रावक के घर क्षु जी के आहार होते वह बैंडबाजो के साथ उन्हे मदिर जी छोडने आते थे।

सध्याकाल मे धर्म की कक्षा चलती थी जिसमे सैकडो युवक–युवतिया सम्मिलित हो अपना ज्ञानवर्धन करते थे। प्रवचनो मे सभी जाति के श्रोतागण पहुँच जाते थे। आहार–चर्या के समय, देखने वालो की अधिक भीड हो जाया करती थी, तब अनेक युवक केवल व्यवस्था बनाने मे लगे रहते थे।

प्रवचनो की धूम सुनकर एक अशोकबुद्ध नामक आदमी भी प्रवचन सुनने आने लगा। वह चुपचाप आता, पीछे बैठ जाता और सुनकर लौट जाता। लोगो ने उसे देखा तो भारी आश्चर्य कर बैठे– 'यह मद्यपी है, फिर कैसे आने लगा?'

जब लोगो को ज्ञात हुआ कि प्रवचन सुनकर उसने मद्यपान का त्याग कर दिया है तो भारी प्रसन्नता हुई। पूरे नगर मे प्रभावना का गुणगान किया जाने लगा। क्षुल्लक जी मौन रह कर नव–परिवर्तन महसूस कर रहे थे।

चातुर्मास का वह समय/काल और अधिक सौन्दर्य बोध पा सका, जब वहाँ क्षु जी के सानिध्य मे इद्रध्वज–महामडल विधान सम्पन्न कराया गया। सावन का माह सामने था, परन्तु लोग सावन की नहीं, धर्म की झडी से आनन्दित हो उठे थे। श्रावको ने भिन्ड से पू शिखरचद जी जैन को भी आमत्रित कर लिया था। विधान की प्रभावना से धर्मध्वजाएँ घर– घर फहराने लगी थी।

विधान सानद सम्पन्न हुआ। फिर पू श्री श्रुतसागर जी जैन का अध्यापन शुरु हुआ, वे क्षु जी को अष्टसहस्त्री न्याय आदि के ग्रन्थो का नियमित अध्ययन कराने लगे। उसके बाद जो समय बचता, उसे क्षु जी व्यर्थ न जाने देते, वे सध्याकाल 4 बजे से प्रौढ–लोगो की कक्षा चलाते और उन्हे सैद्धान्तिक–ज्ञान प्रदान करते। बीच–बीच मे सप्ताह मे एक–दो बार, युवको के लिए 'युवागोष्ठी' की आयोजना करते जिसमे युवकगण–अच्छे वक्ता और अच्छे स्रोता बनने का–प्रशिक्षण पाते थे।

इतने अधिक कार्यक्रमो के चलते, एक कार्यक्रम और चलता रहता था, जिसे कोई नही पसद करता था, वह था– अतरायो का क्रम, सच, क्षु जी जिस दिन अधिक श्रम करते या व्यस्त रहते, दूसरे दिन आहारो मे अतराय अवश्य हो जाता। ऐसा क्यो होता था, कोई न समझ सका, न क्षु जी, न श्रावक जी। ❑

कार्यक्रमो की श्रृखला मे–एक कार्य और जुडा जब बाजार के मदिर मे, एक श्रावक परिवार की प्रार्थना पर, क्षु जी ने सिद्धचक्र महामडल विधान को सानिध्य प्रदान किया। वह भी सान्नद सम्पन्न हुआ था। ❑

क्षु जी एक श्रेष्ठ उद्धारक की भूमिका का निर्वाह करते चल रहे थे, यह बात तब स्पष्ट हुई जब एक दिन आहार से लौटते समय वे बडे मदिर जी के समीप से निकले, वही श्री वीरेन्द्र कुमार का परिवार निवास करता है, उनके पिताजी काफी दिनो से अस्वस्थ थे, उनकी इच्छा क्षु जी से आशीष और समाधिमरण व्रत की थी। वीरेन्द्र जी के अनुरोध पर क्षु जी उनके पिताश्री को सम्बोधने उनके निवास तक गये। पिताजी ने दर्शन कर प्रार्थना की। क्षु जी ने उनका अवलोकन किया फिर समाधिपूर्वक मरण पर प्रकाश डाला। कुछ मार्गदर्शन किया और आ गये। प्रतिदिन समय–समय पर देखते और सम्बोधते रहे, इस बीच समुचित त्याग भी कराया।

उनका समय समीप आ चुका था। क्षु जी ने सध्याकाल मे परिग्रह त्याग कराया, चारपाई से नीचे लिटाया। रात्रि को पुन सम्बोधा। पिताजी का सौभाग्य कि रात मे क्षु जी से णमोकारमत्र सुना और समाधिपूर्वक मरण प्राप्त कर अपना एव परिवार का गौरव बढाया।

उक्त प्रसग से न केवल वीरेन्द्र जी का वृहत्–परिवार, बल्कि सम्पूर्ण समाज प्रभावित हुआ था। ❑

एक दिन समाज के वरिष्ठ लोगो ने क्षु जी के समक्ष प्रार्थना की कि उनके नगर मे कोई विशाल ऐतिहासिक कार्यक्रम हो। क्षु जी ने शातिपूर्वक समझाया– 'अवसर आने दो, सभी प्रकार के कार्यक्रम हो जावेगे।'

अष्टसहस्त्री का पाठ्यक्रम पूर्ण कर प जी कार्तिक माह के पूर्व ही स्वघर लौट गये थे। उनके रहते हुए भी कार्यक्रमो मे विरलता न आ पाई थी। उन्हे पढाने का पूरा–पूरा समय दिया जाता था और उसके बाद शेष समय क्षु जी कार्यक्रमो को देते थे। खासतौर से भाद्रमाह तो अत्यधिक व्यस्तता और प्रभावना का माह बन गया था। भादो के बाद वहाँ 'विमानोत्सव' का विशाल समारोह होता था प्रतिवर्ष। इस वर्ष वह और बडे पैमाने पर सम्पन्न किया गया, बीस मडलो ने अपनी झाकियो का प्रदर्शन किया था। प्रेरणा थी क्षु जी की। रात्रि मे, रोज, सगीत का रगारग कार्यक्रम पृथक।

मगर प जी के चले जाने से क्षु जी के समक्ष समय बचने लगा। फलत वे आहारोपरान्त जगल की ओर चले जाते और वहाँ ही पढते रहते, ध्यान करते। नगर से डेढ कि मी दूर जगल मे अवस्थित उस स्थान का क्षेत्रीय नाम है—रामबाग—काफी प्रसिद्ध है। उसी के समीप एक प्राचीन गुमटी मे क्षु जी ध्यान करते थे। एक दिन जब वे ध्यान मे थे, तभी उनके कधे पर रखे दुपट्टे (उत्तरीय) पर कही से एक छोटा सर्प चढ गया, वह काफी समय तक कधे पर बैठा/चिपका रहा। वही थोडी दूरी पर ब्र प्रमोद जी (अब पू मुनि सुखसागर जी) बैठे थे।

त्यागी होने के कारण, ब्र जी ने त्याग, सयम और साधना का महत्व जीवित रखा, न वे घबडाये, न क्षुल्लक जी को सचेत या सूचित करने का प्रयास किया, बस दृश्य देखते रहे। सर्प पू क्षु जी की देह को पृथ्वी मानकर अटखेली/क्रीडा करता रहा। उसका पतला किन्तु रेशम जैसा चिकना, मुलायम और लहरदार शरीर नूतन—आनद की अनुभूति कर रहा था। अत कभी क्षु जी के बाये पैर पर तो कभी दाये पर। कभी भुजा को निसृयणी (नसैनी) समझ कर ऊपर को चढ जाता तो क्षु जी के स्कध तक पहुँच जाता। फिर बालको की घिसलपट्टी की याद दिलाता सा, पुन बॉह पर खिसकता हुआ पैरो पर आ जाता।

ब्र जी के लौटने का समय हो रहा था, मगर वे फिर वहाँ से उठ न सके, बैठे रहे और सोचने लगे कि जब पू क्षु जी उठेगे तब पूरा हाल सुनाकर जाऊँगा।

धीरे—धीरे एक घटा बीत गया। क्षु जी ने सामायिक पूर्ण कर नेत्र खोले और हाथ जोड कर माथे के सामने लाये। उनकी हलचल से सर्प घबडा गया और तुरन्त अपना रास्ता पकडा, पैरो से उतरा और बामी की ओर भाग गया।

उसे भागते हुए क्षु जी ने भी देख लिया, पर वे चुप रहे ब्र जी समझ गये कि क्षु जी को ज्ञात ही नही हो पाया कि सर्प अटखेलियॉ करता रहा है।

तब ब्र जी ने सविनय किन्तु विनोदभाव से, क्षु जी को पूरा समाचार सुनाया। वे सुनकर, हँसते रहे। ❑

एक दिन क्षु जी सुबह—सुबह जगल गये और वही स्वाध्याय आदि मे लग गये। ग्रामवासी उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। जब वे नही आये तो ग्रामीण—जन भारी समूह के साथ जगल जा पहुँचे। क्षु जी देखते है कि हजारो लोग जुलूस के रूप मे आ रहे हैं, जुलूस के आगे वाद्य—दल चल रहा है, युवको के हाथो मे ध्वज आदि है। सोचने लगे— 'जरूर ग्रामवासियो का कोई निजी—कार्यक्रम है।' जुलूस की ओर कौतूहल से निहारा और पुन लेखन—कार्य मे लग गये।

आश्चर्य तो तब हुआ, जब जुलूस उन्ही के समक्ष आकर रुक गया और उनकी जयघोष करने लगा। प्रमुख कार्यकर्ता जुलूस से निकल कर क्षु जी के चरण स्पर्श करने लगे। तभी क्षु जी ने सहजता से पूछा—आज कौन सा पर्व है जो ये जुलूस ? वे कुछ आगे पूछते कि अनेक युवक एक स्वर मे, आनद छलकाते हुए, बोले—हे महाराज, आज **5** नवम्बर है।

—तो?

—आपका 9 वॉ दीक्षादिवस।

—तो, यह जुलूस और बाजो की क्या आवश्यकता थी?

—हम लोगो का मन किया सो .. ।

–सो क्या? भैया, यह सब बन्द करो। मुझे बस्ती के मदिरो के दर्शन करना है। आप लोग यहाँ से जाये, शोर न करे।

तब कार्यकर्ताओ ने विनय की कि हम लोग तो आ ही गये हैं। अत हमारी प्रार्थना स्वीकार कर, दर्शनो के लिए हमारे साथ ही चलने की कृपा करे।

भोले–भाले क्षुल्लक जी कुछ बोल न सके, दर्शनो को चल पडे। जुलूस ने एक–एक कर छह मदिरजी के दर्शन कराये, हर प्रमुख स्थान पर जयघोष किया और अपना कार्यक्रम सफल बना लिया।

पश्चात् एक विशाल सभा का आयोजन किया गया जिसमे विद्वानो और समाजसेवियो ने क्षु जी के विषय मे उत्तम उद्‌बोधन दिये। अत मे भक्तो ने पुन क्षु जी को घेर सा लिया और सविनय बोले–महाराज, हमे वचनामृत प्रदान करने की दया करे।

क्या करते (बेचारे) क्षु जी। सभा का वजनी–अनुरोध न टाल सके। बोले दो शब्द।

बिना पूर्व सूचना के, उस दिन क्षु जी कुछ ऐसा बोले कि वात्सल्य के निर्झर हर श्रोता के हृदय से फूट–फूट कर उत्साह–धारा बहाने लगे। हुई श्रेष्ठ प्रभावना। ❑

नगरवासियो के उत्साह को क्षु जी का आशीष फलीभूत हुआ। फलत एक ऐतिहासिक कार्यक्रम का सयोग सामने आ गया–अष्टान्हिका पर्व पर विधान, विद्वत–गोष्ठी आदि की योजना। वर्तमान मे एक मुनि की उपस्थिति मे, जैसे, विराट–आयोजन होते देखे जा रहे हैं, वे वहाँ क्षु जी की उपस्थिति मे विशाल रुप ले रहे थे। समाज ने मुख्य बाजार मे विशाल पडाल बनाया, मच से लेकर एक किलोमीटर तक विद्युत सज्जा और माईक/लाउडस्पीकर की व्यवस्था, बाहर से आने वालो के लिए भोजन व्यवस्था, वाहन व्यवस्था, रथयात्रा–व्यवस्था, आदि।

नगर के आसपास की बस्तियो से भर नही, दूर–दराज बसे शहरो से भी अतिथिगण पहुँचे। विद्वानगण और कलाकार आदि पृथक। अखिल भारतीय शास्त्री–परिषद का अधिवेशन भी रखा गया। कहे कार्यक्रम इतना विशाल और प्रेरक हो पडा कि बाहर से आनेवाले सज्जनो को कह आया– 'हमारे यहा तो पचकल्याणक मे भी इतनी विशाल जनसख्या नही हो पाती जितनी आपके यहा विधान मे है।'

निश्चित समय पर हर कार्यक्रम सम्पन्न होता गया, कही कोई विघ्न न आ पाया। फलत आगत–श्रावकगण क्षु जी की सराहना करते रहे, तभी परिषद के कतिपय वरिष्ठ विद्वानो ने अधिवेशनोपरान्त क्षु जी को एक श्रेष्ठ उपाधि से अलकृत कर दिया, किन्तु उन्होने स्वीकृति न दी। विद्वानगण उनके इस गुण से गहराई तक प्रभावित हुए और बोले–आप सही मे गुणो के सागर हैं, आपकी निस्पृहता धन्य है।

गोष्ठी के सयोजक डा अशोक कुमार विलानी थे, जबकि विद्यानाचार्य थे–वाणीभूषण प विमलकुमार जी सौंरया, टीकमगढ।

क्षु जी की प्रेरणा से मुँगावली के उस वर्षायोग मे 'साहित्य विक्रय–केन्द' शुरु किया गया था जिसमे समस्त धार्मिक पुस्तके अर्धमूल्य पर बेचने की छूट थी। वे चाह रहे थे कि कम दाम कर देने से साहित्य घर–घर पहुँच जायेगा, वैसा हुआ भी, उस वर्ष धार्मिक किताबे काफी सख्या मे बिकीं। ❑

वर्ष समाप्त हो गया, नूतनवर्ष का शुभारम्भ–1 जनवरी 1986 का दिवस, पर यह क्या? क्षु जी तो विहार कर गये। नगर के सैकडो लोग पीछे–पीछे भागे, चले जा रहे थे। क्या वृद्ध, क्या युवक। सभी ने सजल नेत्रो से दी विदाई। क्षु जी बीना होते हुए ललितपुर पहुँच गये।

चार माह रुके और ललितपुर मे प्रज्ञा–ज्योति प्रज्ज्वलित की, वहाँ के ब्रह्मचारी–भाइयो और श्रावकों के लिए धार्मिक–अध्ययन की कक्षा लगाई। समाज को पता ही न चला कि चार माह किस तरह निकल गये। क्षु जी विहार करना चाहते थे, किन्तु समाज वहॉ ही चातुर्मास करने की प्रार्थना कर रहा था। मगर अधिक अवधि होती देख–क्षु जी ने विहार ही उचित बतलाया। ललितपुर से चदेरी पहुँच गये।

कुछ ही दिन बीते कि मुँगावली वाले आने लगे, वे हर वर्ष वर्षायोग की प्रार्थना करते थे। क्षु जी मुस्कराकर कह देते– 'समय आने दीजिए।' उनके साथ क्षु सुपार्श्वसागर जी भी थे।

चदेरी मे भी कुछ गुफाएँ और कदराएँ हैं, लोग वहॉ अकेला जाने मे भय मानते हैं। परन्तु क्षुल्लक जी ? उन्हे वे कदराएँ इतनी शातिदायक प्रतीत हुई कि चदेरी–प्रवास की अधिक अवधि उन्होने उनमे ही वास कर पूरी की। दोपहर को जाते तो शाम को लौटते, कभी–कभी रात्रि विश्राम भी वहॉ ही करते थे।

चँदेरी से प्रस्थान कर क्षु जी बूढी–चँदेरी गये, फिर बामोर। वहॉ भी श्रद्धालुजन मिले। परिचय बढता चला गया। एक दिन कुछ श्रावको ने बतलाया कि बामोर के समीप ही स्थित नगर खनियाधाना मे अनेक जैन ऐसे हैं जो मुनियो का नगर –प्रवेश आवश्यक नही मानते, न पधारने के लिए किसी सत से अनुरोध करते। फलत हम लोग भी, कभी किसी मुनि के साथ आते–जाते हैं तो उन्हे खनियाधाना के बाहरी मार्ग से ही विहार कराते हैं, नगर मे नही ले जाते।

क्षु जी श्रावको की कठिनाई समझ गये। अत बोले– 'भाई मेरा जब मौका आवे तो बाहर से न ले जाना।' इतना कह कर हॅस दिये। श्रावक विचार करते रहे। ❑

क्षु जी ने बामोर से विहार कर दिया। गूलर ग्राम पहुँचे, रात्रि विश्राम कर, पुन चले तो सीधे खनियाधाना बस्ती के अदर अवस्थित मदिर जी मे प्रवेश किया। बामोर और मुँगावली के भक्त साथ थे। क्षु जी मदिर मे, दर्शनादि के बाद, एक स्थान पर बैठ गये।

बस्ती के श्रावकगण, विद्वानगण और कलाकारगण अपने–अपने समय पर मदिर पहुँचे, पर किसी ने क्षु जी की ओर ध्यान न दिया, वे ऐसे पेश आये जैसे उन्होने उन्हे देखा ही नही है। धीरे–धीरे दोपहर के बारह बज गये, ग्राम के किसी व्यक्ति ने चौका लगाने का भी कष्ट न किया। साथ आये भक्तगण चकित। जिस निस्पृह त्यागी को वे मुनि तुल्य श्रद्धा प्रदान करते रहे हैं, उस विभूति को खनियाधाना मे कोई पूछ तक नही रहा है? वे एकान्त देख आपस मे बडबडाने लगे– 'जिस नगर के श्रावक व्रतियों को महत्व नहीं देते, वे कभी धर्मात्मा नही बन सकते।' क्षु जी ने उन्हे शान्त कराया और मौन रह कर वस्तुस्थिति समझने के लिए कहा।

साथ मे आये मुँगावली के भक्त के रिश्तेदार खनियाधाना मे रहते थे, वे उनसे मिले तो तुरन्त चौकादि की व्यवस्था हो गई। भक्तिपूर्वक क्षु जी को आहारो के लिये उन्होने पडगाहा और निरतराय आहार देने का पुण्य पाया। आगत भक्तो ने भी वही भोजन लिया।

क्षु जी को भक्तो ने बतलाया कि प छक्कीलाल जी पू राजकुमार जी आदि अनेक विद्वान यहॉ रहते हैं, पर्युषण पर्व के समय 15–20 विद्वान प्रवचन करने विभिन्न नगरो को जाते हैं, परतु जाने–क्या सोचकर वे, कोई यहॉ नहीं आये।

दूसरा भक्त तपाक से बोल पडा–अरे, विपरीत–विचार वाले हैं न।

उनकी वार्ता आगे बढती कि उसके पूर्व क्षु जी ने उन्हे चुप रहने को कह दिया।

भक्त चुप हो गये। फिर क्षु जी से धीमे स्वर मे बुदबुदाये– 'महाराज, प्रथम दिवस ही यहाँ के लोगो ने विनयशीलता नही दिखलाई, इनकी धारणा है कि जो साधुओ को नमस्कार करेगा, आहारादि देगा, वह सीधा नरक जायेगा।'

भक्त की बात पर क्षु जी पुन मुस्कराये और उसे शात रहने को कहा।

दिन तो दिन, रात भी मदिर जी मे कट गई। सुबह क्षु जी भक्तो के साथ छोटे मदिर जी गये, वहाँ शास्त्र सभा शुरु होने वाली थी। लोगो ने उन्हे सामने देख उनसे शास्त्र जी पढने का औपचारिक–अनुरोध किया, बाजोट पर नियमसार स्थापित था। क्षु जी ने अनुरोध स्वीकार किया और शास्त्रप्रवचन प्रारम्भ कर दिया। वहाँ के श्रावको ने प्रश्नो की झडी लगा दी। पहला चुप न हो पाता, दूसरा प्रश्न कर देता। लगभग आधे घटे तक प्रश्नोत्तर ही चलते रहे, उन सभी का शास्त्र–अध्ययन, कहे–स्वाध्याय, अच्छा था। मगर क्षु जी का अध्ययन भी कम न था, उन्होने हर प्रश्न का उत्तर मृदुतापूर्वक दिया, सटीक दिया, ससन्दर्भ दिया। अत हर विद्वान उनसे प्रभावित हो गया, उन्हे लगा कि जिस त्यागी जी से वे वार्ता कर रहे हैं, उनका अध्ययन पुख्ता है, धरातल ठोस है।

तीन–चार दिन तक, रोज, शास्त्र सभा मे अधिक प्रश्न किये जाते रहे और क्षु जी भी प्रमाण सहित समाधान प्रदान करते रहे। उनके ज्ञान से प्रभावित हो, नित्य समय पर चौका लगाये जाने लगे, श्रावक श्रद्धा सहित पडगाहने लगे। प्रवचन दोनो समय–सुबह और रात्रि–होते रहे। क्षु जी के ज्ञान और सोच की छाप विद्वानो पर पड गई। धीरे–धीरे भीड बढती चली गई। आहार देनेवालो मे उत्साह बढा, भक्तगण चकित कि जिस नगर मे कोई मुनि एक दिन भी नही रुक सका (या रोका गया), वहाँ क्षु जी अनेक दिन तक रहे और ज्ञान तथा चरित्र की बाते कर, प्रभाव स्थापित कर सके। लगा–लोगो की धारणाएँ परिवर्तित हुई हैं। युवा वर्ग मे भी रुझान बढा, क्षु जी के समीप मँडराते रहते थे।

श्रद्धा ज्ञान और चरित्र का माहौल बनाकर क्षु जी ने दसवे दिवस वहाँ से गमन कर दिया।

विहार की बात सुनकर ग्राम मे हलचल मच गई। सैकडो लोग दौड़े आये और क्षु जी से रुकने की प्रार्थना करने लगे। तब क्षु जी ने सभी को समझाया– 'अभी रुकना सम्भव नही है, पर बाद मे, कभी, अवश्य प्रयास करूँगा। देखूँगा कि आपकी श्रद्धा तब तक स्थित रहती है या नही?' श्रावकगण क्षु जी की बात हृदय तक ले गये, फिर बोले–ठीक है महाराज, आप अवश्य देखने का कष्ट करना, अब हम लोग पीछे नही मुडेगे, श्रद्धा के पथ पर जितने कदम धरे है, वे और–और बढते जावेगे। ❑

खनियाधाना (जिला–शिवपुरी, म प्र) से क्षु जी बबीना विहार कर गये। नगर–सीमा पर पहुँचे तो देखते है कि श्रावकगण भारी उत्साह से उन्हे लेने आये है। श्रावको ने जयघोष किये, शहनाइयो और बेन्डबाजो ने उत्साह सचार की ध्वनियाँ सुनाई, झडे हवा मे उडने लगे, बेनर मुस्काने लगे। देखते ही देखते श्रावको ने भावभीनी अगवानी की और क्षु जी को विशाल शोभायात्रा के साथ नगर–प्रवेश कराया।

पू क्षु गुणसागर जी कहने को खनियाधाना से विहार कर गये थे, पर उनकी चर्चा वहाँ घर–मदिरो मे हर पल होती रही। समाज ने निर्णय लिया कि क्षु जी का वर्षायोग खनियाधाना मे हो। बातो ही बातो मे तैयारी हो गई। फलत कुछ ही दिन बाद खनियाधाना से एक श्रावक सघ बबीना पहुँचा। क्षु जी के चरणो मे श्रीफल चढाया और वर्षायोग की प्रार्थना की। सयोग से उसी दिन मुँगावली का श्रावकसघ भी वहाँ पहुँचा और चातुर्मास हेतु क्षु जी को श्रीफल चढा कर प्रार्थना की।

क्षु जी ने दोनो स्थानो के लोगो को आशीर्वाद दिया और कहा कि समय आने दीजिए, जहाँ सम्भव होगा, पहुँच जाऊँगा। लोग विश्वास लेकर लौटे।

लौटते समय मुँगावली वालो को आश्चर्य हुआ कि ये खनियाधाना वालो पर क्या जादू हो गया है, जहाँ प्रथम दिन कोई व्यक्ति हाथ जोड कर नमस्कार नही कर सका था, पडगाह न सका था, उनमे वर्षायोग कराने का सकल्प किस तरह आ गया? लोग सोचते रहे, फिर बोले–कृपा क्षु जी की। उनके ज्ञान और अध्ययन ने ही इन लोगो मे उत्साह जगाया है।

समीपी अन्य अनेक ग्रामो मे भी यह चर्चा चली कि खनियाधाना वाले वर्षायोग के अनुरोध हेतु पहुँचे थे। सभी चकित थे। ❑

बबीना–समाज ने भी वर्षायोग हेतु क्षु जी से प्रार्थना की, श्री फल चढाये, पर उन्हे तो विहार करना था। अत लोगो को उपयुक्त देशना प्रदान कर, विहार कर गये। उनके चरण बबीना से सोनागिरि की ओर थे, रास्ते मे झाँसी को उपकृत किया और पुन विहार, साथ मे भारी सख्या मे श्रावकगण चल रहे थे।

उचित समय पर सोनागिरिजी पहुँच गये। अपने गुरु परमपूज्य आचार्य सुमतिसागर महाराज के दर्शन किये, फिर क्षेत्र की वदना।

शाम को उचित अवसर देख क्षु जी ने पूज्य गुरुवर से पूछा– 'चातुर्मास के लिए क्या निर्देश हैं? आपके साथ का मन है।' गुरुवर शात भाव से सुनते रहे, फिर बोले–'मन की बात छोडो, आपको तो ऐसा नवीन स्थान/क्षेत्र चुनना चाहिए जहाँ 'उपयोग' अधिक हो सके, साथ ही वह रत्नत्रय की साधना मे अनुकूल हो। स्थानीय वातावरण का ध्यान भले ही न रखे।'

क्षु जी–जो आज्ञा कह कर, विचार मे पड गये कि ऐसा कौन स्थान है वह? सोचते रहे।

कुछ ही दिन बाद मुँगावली और खनियाधाना के श्रावक आये और स–श्रद्धा क्षु जी को चातुर्मास हेतु प्रार्थना की। क्षु जी कुछ बोले नही, पर मुस्कराते रहे। ❑

कुछ दिन बाद गुरुवर से आज्ञा लेकर, सोनागिरि से विहार कर दिया। चलते चले गये। साथ मे कुछ श्रावकगण। रास्ते मे झासी नगर पडा, क्षु जी अदर नही गये। नगर की बाहरी बस्ती मे ही रुके, आहार चर्या की और आगे बढ गये। देखते ही देखते बबीना पहुँच गये। वहाँ समाज मे हर्ष की लहर दौड गई। भारी श्रद्धा। उच्च उत्साह।

क्षु जी चार दिन तक रोज प्रवचन करते रहे। लोगो को विश्वास हो आया कि उनकी प्रार्थना सुन ली जायेगी। अत उन्होने समूह मे उपस्थित हो श्रीफल चढाया और वर्षायोग की विनय की, किन्तु क्षु जी ने असमर्थता प्रकट की। दूसरे दिन वहाँ से विहार का मन हो गया। लोग चकित। तब तक खनियाधाना के श्रावक पहुँच गये, उन्होने श्रीफल चढाकर अनुरोध किया– 'हे महाराज, हम लोग फिरोजाबाद गये थे, वहाँ से पू क्षु सन्मतिसागर जी का सकेत लाये हैं। अत आप हमारे खनियाधाना पधारे, हमारी प्रार्थना है।'

क्षु जी मौन रहे किन्तु मुस्कराहट से लगा कि स्वीकृति दे दी। श्रावक चले गये।

आत्मसकेत के आधार पर क्षु जी ने बबीना से विहार कर दिया। लोग पीछे–पीछे भागते रहे, पर किसी की न सुनी। चलते गये। आगे छावनी का मार्ग था। मिल्ट्री के साफ–शुद्ध बगले, चौडे–चौडे काले रोड़ और चहारदीवारी से घिरा हुआ मैदान।

क्षु जी कुछ और चले कि मिल्ट्री के नौजवान सामने आकर खडे हो गये, उन्होने निवेदन किया कि आगे फायरिंग (बन्दूक और तोप चलाने का अभ्यास) चल रहा है। रास्ता बद है, कृपया लौट जाइये।

निवेदन सुनकर क्षु जी चकित, किन्तु साथ चल रहे श्रावक प्रसन्न, उन्हे विश्वास हो आया कि क्षु जी अब बबीना रुक जायेगे। कुछ लोग बोले–महाराज, यहाँ से आगे जाना मुश्किल है, श्रावकों को जान का खतरा है, रास्ता भी बद है। अत लौटने की कृपा कीजिए।

क्षु जी बगैर कुछ बोले, लौट पडे और रेल की पटरी के किनारे–किनारे चलने लगे, पीछे–पीछे श्रावकगण। मध्याह्न का समय था, कहे–सामायिक का समय। अत एक साफ स्थान पर क्षुल्लक जी सामायिक करने विराज गये। वे सामायिक करते रहे, तब तक लोग उत्साह मे आकर बेन्डवाजे आदि ले आये और भारी शोभायात्रा के साथ नगर–प्रवेश कराने का विचार करने लगे।

मगर उनके विचार मूर्त न हो सके, क्षु जी जब उठे तो मुँगावली और खनियाधाना वाले श्रावको के साथ चल पडे। बेचारे बबीना वाले जयघोष करते खडे रह गये।

छावनी से चल तो पडे किन्तु उक्त दोनो नगरो के लोगो को वहाँ से मुख्यमार्ग पर पहुँचने का रास्ता नही मालूम था। अत क्षु जी मदिरवाले मोड पर खडे हो गये। तेज धूप और लपट आग उगल रही थी। दो घटे से अधिक वहाँ रुके रहे, खडे रहे।

रास्ता के विषय मे उचित जानकारी लेकर जब श्रावक आये और उन्होने समझाया, तब क्षु जी आगे बढे। ''रास्ता चलना साफ, चाहे देर हो'' उक्ति लोगो के मन मे कौंध गई। शाम होते तक चार कि मी चले, फिर एक उचित स्थान पर रात्रि–विश्राम किया।

सुबह पुन विहार। किन्तु क्षु जी को ज्वर हो आया। धूप की मार प्रकट हो गई। मगर धूप–छाँव–बादल–ठड आदि का ध्यान ही वे कब रखते हैं? शरीर पर ज्वर हो या चौके मे अतराय, उन्हे जितना चलना है, वे चल ही लेते हैं। पीछे मुडने का भाव कभी नही आता।

क्षु जी चलते रहे, ज्वर और थकान बढते गये। किसी तरह पुरुषार्थ बनाये हुए मुहारी ग्राम पहुँच गये। श्रावको ने बुखार देखा, 103 डिग्री था। जुखाम और खाँसी पृथक। अत लोगो ने कुछ दिन तक वहाँ ही रुकना उचित माना।

दूसरे दिन ही खनियाधाना और मुँगावली से वैद्यराज आ गये। निरीक्षण। उपचार। दवा। आठ दिन लग गये स्वास्थ्य को काबू मे लाने मे। क्षु जी इतने कमजोर हो गये कि उठने–बैठने की शक्ति न रह गई, श्रावकगण चितित हो पडे। उधर यह भी भय था श्रावको को, कि स्थापना के लिए मात्र छह दिन शेष रह गये हैं, मगर कमजोरी नही जा रही है।

लोगो की चिन्ता क्षु जी से छुपी न रह सकी। अत नौवे दिन ज्योही मदिर जी से दर्शन कर लौटे तो विहार कर दिया। लोग मनाने लगे कि अभी अधिक कमजोरी है–आपको, दो–तीन दिन और रुकिये, पर वे न माने। बोले– 'अभी शरीर का नही, आत्मा का स्वास्थ्य देख रहा हूँ, चलिए कुछ न होगा।'

लोग हैरान कि विहार के पद्रह मिनट पूर्व तक तो चल पडने के न सकेत थे, न शक्ति, अभी–अभी यह क्या हो गया?

क्षु जी चार कि मी चले, फिर विश्राम लिया। दूसरे दिन फिर विहार। ज्यो ही मुँगावली का रास्ता पीछे छोडा तो मुँगावली के श्रावक निराश, खनियाधाना के हर्षित।

रात्रि विश्राम के पश्चात सुबह नगर खनियाधाना मे धूमधाम से प्रवेश। विशाल जुलूस। भारी उत्साह। हर श्रावक शीश झुकाता, 'इच्छामि' कहता और आत्मस्थ भक्ति की झलक देता। चारों ओर भीड।

एक भक्त चकित था– 'क्या यह वही खनियाधाना है जहॉ कुछ समय पूर्व, क्षु जी के आगमन पर किसी ने चौका लगाने का कष्ट नही किया था? उसे विश्वास हुआ कि ससार मे अभी चरित्र जीवित है, श्रद्धा है। बलिहारी क्षु जी की। ❑

खनियाधाना पहुँच गये। खनियाधाना का धान (आहार) भी स्वीकृत कर लिया, परन्तु क्षु जी ने वर्षायोग की स्वीकृति न दी। (शायद समाज को देखना–समझना चाहते थे!) यो शरीर पर कमजोरी थी, पर वहॉ अध्ययनशील–विद्वानो की सभा मे शास्त्रवाचन (प्रवचन) करने का पुरुषार्थ सम्भाले रहे। दोनो वक्त प्रवचन देते रहे। प्रवचनो मे भीड भी काफी होती थी, युवावर्ग अधिक रहता था।

एक दिन की बात कि क्षु जी जिस कमरे मे बैठे थे, उसके ऊपर वाले कमरे मे स्थानीय समाजसेवी श्री कैलाशचद बिजली व्यवस्था सुधार रहे थे, वे पडोस के मकान से तार ले रहे थे, बीच मे पुरानी चूने की दीवार थी। जाने क्या हुआ कि जब कैलाश जी ने दीवार का सहारा लिया तो वह टूट गई, वे तार पकडे हुए सीधे नीचे जा गिरे। नीचे–जहॉ–पहले ही बिजली के तारो का जाल फैला हुआ था, मे से छुटकते हुए फर्श पर गिर बेहोश हो गये। लोगो के समक्ष दुखद घटना का अदेशा हो गया, भीड लग गई। कोलाहल मच गया। समुचित उपचार के पश्चात् करीब एक घटे बाद वे होश मे आ गये, उन्हे अन्य शारीरिक क्षति न हो पाई। उन्हे स्वस्थ पा लोग बुदबुदाये– 'महाराज जी उसी कमरे मे बैठे थे, उनके पुण्य से कैलाश जी बच गये अन्यथा आज तो प्राणान्त हो जाता। बिजली के तारो के जाल ने उन्हे बख्शा ही, फर्श के पत्थरो ने भी कोई चोट नही पहुँचाई।'

कहे बातो ही बातो मे, घटना का चमत्कार विकीर्ण हो गया सारे गॉव मे। श्रावको ने मिलकर क्षु जी की जय बोली और उनके श्रीचरणो की उपस्थिति को अपना त्राता निरूपित किया।

दूसरे दिन से समाज का भारी दबाब परिलक्षित हुआ। हर व्यक्ति चाहता कि क्षु जी चातुर्मास की स्थापना कर ले। प्रार्थना मे शक्ति होती है, एकता मे ताकत होती है और भक्ति मे स्वीकृति प्राप्त कर लेने का बोध छुपा रहता है। वह सब वहॉ दृष्टव्य हुआ जब विशाल सभा के बीच क्षु जी ने समाज का अनुरोध स्वीकार किया। समाज ने तुरन्त उत्साहपूर्वक एक विशाल जुलूस निकाला, कहे–क्षु जी की शोभायात्रा। जुलूस के तुरन्त बाद क्षु जी ने विधिपूर्वक स्थापना की। श्रावक 'जय जय गुरुदेव' के घोष करते रहे।

घर–घर चौके लगने लगे। एक दिन मे दस–बारह द्वारो मे पडगाहन होता, क्षु जी विधि–अनुसार चलते और आहार चर्या करते। कुछ ही दिनो मे क्षु जी को स्थिति स्पष्ट हो गई कि यहॉ तो घर–घर मे धार्मिक–मतभेद बना हुआ है। पर मुख्य बात यह है कि किसी की धर्मपत्नी अनेकान्त–पक्ष लेकर चलती है तो किसी घर मे पति। किसी घर मे पुत्रादि तो किसी घर मे वधुऐं। क्षु जी समझ गये कि वर्षायोग की प्रेरणा कहॉ छुपी थी?

पारिवारिक तर्क–वितर्क मे कभी विनोद, कभी प्रेरणा और कभी कलह के दर्शन होते थे, क्योकि वे निश्चयनय, निमित्त, उपादान, क्रमबद्ध पर्याय और अक्रमबद्ध–पर्याय पर ही चर्चाऐं करते रहते थे।

परिवारो का वार्ताक्रम अपने स्थान पर रहता था और क्षु जी का चर्याक्रम अपने पर। धीरे–धीरे निश्चयनय वालो के यहॉ भी चौका लगने लगे। वे पडगाहन करने सपरिवार खडे होने लगे। हर दुआर (द्वार)

पर स्त्री, पुरुष और युवक युवतियॉ सश्रद्धा खडे होते। सम्पूर्ण अवधि मे, युवको ने अवलोकन किया तो ज्ञात हुआ कि सौ–सवासौ परिवारो की बस्ती मे, मात्र 10–15 परिवारो को छोड कर, सबके यहॉ चौके लगाये गये है, जिनमे सोनगढ के विद्वान भी सम्मिलित रहे है।

आहार के समय, प्रतिदिन महाराज जी के साथ युवको की टोली चलती थी जो व्यवस्था भी करती थी। सारे गॉव मे आहारदाता और दर्शको का तॉता लग जाता था घटे भर के लिये। आहार के बाद, दातारगण भारी धूमधाम से महाराज जी को मदिर तक पहुँचाने आते थे–आगे आगे बैन्डबाजे, फिर क्षु जी और उन्हे घेरे श्रावकगण। श्रद्धा और मनुहार का वह दृश्य हर कोई देखने को उतावला रहता ❑

दशलक्षण पर्व से पूर्व, समाज के अनुरोध पर क्षु जी ने इद्रध्वज मडल विधान मे मूल्यवान सानिध्य प्रदान कर समारोह का महत्व बढा दिया। विधान–विधि के लिए भिन्ड से प शिखर चद जी पहुँच गये थे। उत्साह के सरोवर मे चर्चा के कुमुद खिल–खिल उठे।

कहे पूरी अवधि, चार माह तक, नित–नूतन–उत्साह की सर्जना होती रही। वर्षायोग समाप्ति पर, अष्टान्हिका पर्व मे विधान। विद्वत गोष्ठी। अनेक सस्थाओ के अधिवेशन। सिद्ध चक्र विधान आदि तो उपलब्धि थे ही, फिर हुआ लघु पचकल्याणक समारोह। नाम से 'लघु' पर कार्यक्रम और पडाल–विशाल। प गुलाबचद जी जैन प्रतिष्ठाचार्य, टीकमगढ ने समारोह सम्पन्न कराया था।

समाज का मन था कि और भी बडे कार्यक्रम हो तो किये जावेगे। क्षु जी की उपस्थिति से उपजा उत्साह था वह। थी भक्ति की भावना। वर्षायोग समिति ने क्षु जी के सकेतानुसार अर्धमूल्य बिक्री का 'पुस्तक केन्द' भी खोला था जिससे साहित्य की खूब बिक्री हुई थी।

वर्षायोग मे क्षु जी का अध्ययन, पठन, कम नही हुआ। वे प श्रुतसागर जैन न्यायतीर्थ से अष्टसहस्त्री आदि ग्रन्थो का अभ्यास जारी किये रहे थे।

(कुल मिलाकर, खनियाधाना का चातुर्मास मील का पत्थर साबित हुआ था–देश भर के शहरो के मध्य। जय हो क्षु जी की) ❑

हो गया एक दिन विहार। प्रस्थान कर गये क्षु जी, हॉ, पू श्री 105 क्षुल्लक गुणसागर जी। खनियाधाना उनके लिए 'प्रमाण–पत्र' बना सन 1986 मे, कि विभिन्न मत और धारणावालो मे सौहार्द–श्रद्धा और चरित्र का प्रादुर्भाव कर, उनका अक "105" और–और तेज/प्रखर हुआ है, सर्वमान्य हुआ है। ❑

खनियाधाना से चल ललितपुर नगर मे प्रवेश किया। वहॉ के समाज का अनुरोध पहले से ही चल रहा था, मिला उसे समय। वहॉ पूज्य आचार्य बाहुबलिसागर जी ससघ विराजित थे, वही–हुआ था उनका वर्षायोग। साथ मे थे क्षु वर्धमान सागर जी।

क्षु गुणसागर जी ने आचार्यश्री के दर्शन किये। दर्शन बाद समुचित चर्चादि।

ललितपुर मे विमानोत्सव की तैयारियॉ चल रही थी, प्रतिवर्ष की तुलना मे कुछ अधिक, क्योकि अनेक सतो का सानिध्य उपलब्ध था। समाज ने क्षु जी को भी सविनय रोका, आचार्यश्री का वात्सल्यामृत मिला, क्षु जी रुक गये। सघ के साथ उनके प्रवचन हुए।

समय पर विमान–यात्रा–समारोह पूर्ण हो गया, बाद मे आचार्यसघ विहार कर गया। क्षु जी रुक गये क्योकि वे प दरबारीलाल जी कोठिया से पढने की वार्ता कर चुके थे। फलत न्याय से सम्बधित ग्रन्थ का पारायण कर दिया, प जी पढ़ाते, क्षु जी मनोयोग से पढते। क्रम एक माह से अधिक चला।

प जी, क्षु जी और समाज की मत्रणा से ललितपुर मे 'वाचना' न्याय विद्या के सयोजन का जन्म हुआ। एक समिति बनाई गई और रूपरेखा तय की गई। परमपूज्य आचार्य विद्यासागर जी महाराज के सानिध्य–लाभ हेतु एक भक्तमडल उनके पास भेजा गया। स्वीकृति मिल गई। तैयारियो की गति बढ गई। समग्र पत्राचारादि का कार्य डा अशोक जैन ने किया।

आचार्यश्री की प्रतीक्षा करते हुए, निश्चित समय पर कार्यक्रम शुरु कर दिया गया। डा दरबारीलाल जी कोठिया की तरह ही प्रसिद्ध और विद्वताप्राप्त प डा उदय चद्र सर्वदर्शनाचार्य भी पधार गये थे, वे बनारस से थे और समाज के कार्य मे प्रथम बार आये थे। उन्हे न्याय–दर्शन का अनुभवपरक ज्ञान है। अन्य अनेक आमन्त्रित विद्वान एव समाजसेवी भी समय पर आ गये।

सरस्वती–सूनुओ और क्षु जी के सानिध्य मे समाज ने जिनवाणीमाता की शोभायात्रा निकाली। विशाल जुलूस बन गया। सैकडो माताएँ–बहिने शीश पर या हाथो मे थालियॉ रख चल रही थी, हर थाली पर सुन्दर वेष्टन फैला था जिसपर एक दो श्रेष्ठ ग्रन्थ रखे गये थे। कुछ माताएँ कलश लेकर चल रही थीं। वाद्ययत्र, झडे और कपडपट्ट पृथक प्रभाव छोड रहे थे। कहे–जुलूस सामान्य न रह गया था, वह 'भव्य' की परिभाषा सार्थक कर रहा था।

प्रथम कार्यक्रम की प्रभावना से क्षु जी सहित समस्त विद्वानगण ललितपुर–समाज की व्यवस्था पर रीझ गये। सबने सराहना की। उसी दिन रात्रि मे विशाल प्रवचन सभा आयोजित की गई। फलत सम्पूर्ण शहर के नागरिको को समझ मे आ गया कि 'जैन समाज' के द्वारा विशेष कार्यक्रम किया जा रहा है।

दूसरे दिन क्षु जी की उपस्थिति मे वाचना का सविधि उद्घाटन कराया गया। प दरबारीलाल जी कोठिया ने वाचना की। प्रसगानुसार प्रति दिन एक अधिकारी विद्वान का अतिम उद्बोधन होता, फिर क्षु जी के प्रवचन।

न्यायदीपिका, न्याय परीक्षामुख आदि शुष्क कहे जाने वाले ग्रन्थो की वाचना से श्रोताओ की सख्या बढती गई, जो नगर के लिए एक मिसाल बन गई थी। सख्या सहस्रो मे पहुँच गई, मदिर जी परिसर मे बैठने वालो के लिए जगह न बचती, तब लोग बाहर खडे रह कर सुनते और दूसरे दिन कुछ पहले आकार स्थान ले लेते।

अतिम चरण मे 50–60 विद्वानो की उपस्थिति मे विराट अधिवेशन किया गया। कहे–वाचना और विद्वत सगोष्ठी की सफलता से प्राण–प्राण अभिमन्त्रित हो गया। हर घर, मुहल्ले मे प्रशसा।

अतिम चरण के अतिम दो दिन शेष थे कि समाचार मिला–पू आचार्यश्री नगर की ओर आ रहे हैं।

क्षु जी कतिपय विद्वानो–श्रावको के साथ उन्हे लेने चल दिये। 13 कि मी चल लेने के बाद एक स्थान पर आचार्य श्री मिल गये। क्षु जी ने सम्पूर्ण श्रद्धा से अगवानी की। रात्रि उन्ही के समीप, वहॉ, ही ठहरे। आचार्यश्री ने भी क्षु जी को भारी वात्सल्य प्रदान किया। अपने समीप ही पाटे पर उन्हे बैठने की आज्ञा दी।

दोनो मे धर्म–वार्ता चली। ❑

आचार्य सघ से मिलकर क्षु जी का रोम–रोम पुलकित था। रात भर आनदोत्सव मे रहे। सुबह विशाल शोभायात्रा के साथ आचार्य सघ को नगर–प्रवेश कराया। नगर मे उत्साह का भाव द्विगुणित हो गया। ❑

करीब बारह वर्ष के बाद आचार्यश्री ललितपुर पधारे थे। अत समाज के लोग कभी अपने भाग्य की, तो कभी क्षु जी के प्रेरक विचारो की सराहना करतें, जो निमित्त बने थे–आगमन के। ❑

क्षु जी सघ के अनेक साधुओ की वैयावृत्ति का सयोग पा सके थे, वे धन्य–धन्य हो रहे थे। मगर सघ के सदस्य क्षु जी की सराहना कर रहे थे, बतला रहे थे– "जैसा सुना था, वैसा ही पाया, पूर्ण गुणो का सागर–क्षु गुणसागर। उनमे तनिक भी अहम् का भाव नहीं है, न श्रेय लेने का भाव। सतो की सेवा मे बहुत समय देते हैं। आचार्यश्री को तो तन–मन से चाहते हैं। बडा सरल स्वभाव है। गहन चिन्तन है और प्रखर अध्ययन।"

दूसरे दिन सभी विद्वानो ने 'न्यायविद्या–वाचना' की सफलता का श्रेय क्षु जी को देते हुए आचार्यश्री से सराहना की और निवेदन किया कि 'धवला ग्रन्थ की वाचना' की तरह प्रतिवर्ष 'न्यायविद्या वाचना' का भी क्रम बनाया जाये।

आचार्यश्री को विद्वानो के विचार अच्छे लगे। बाद मे उन्होने भी क्षु जी की सराहना करते हुए कहा कि उनका उपयोग उत्तम है। वे अच्छे विद्वान तो हैं ही, मृदुभाषी भी हैं। ❑

कुछ ही दिनो बाद आचार्यश्री के समाधिस्थ गुरु परमपूज्य आचार्य ज्ञानसागर जी महाराज का *समाधि–दिवस–समारोह आयोजित किया गया। अनेक सतो और विद्वानों के प्रवचन हुए–उस दिन। शाम* को एक मत से क्षु जी के प्रवचन की सभी ने सराहना की। एक मायने मे, उनके उद्बोधन ने पू आचार्य विद्यासागर जी को भी प्रभावित किया था। सारा समाज चकित कि क्षु जी तो बहुत ज्ञानवान और प्रवचन–पारगत हैं।

क्षु जी पल–पल सबका (मुनिसघ का) ध्यान रखते थे, मगर आचार्यश्री उनका ध्यान रखते थे, बहुत वात्सल्य प्रदान करते थे। देर तक वार्ता करते और आशीष देते थे। ❑

क्षु जी के साथ, दो वर्षायोगो से, क्षु सुपार्श्वसागर जी भी थे। अत क्षु गुणसागर जी उनका भी बडा ध्यान रखते थे। ❑

सन 1987 के वर्षायोग के काफी–पूर्व, आचार्यश्री ने ससघ ललितपुर से विहार कर दिया, और राजघाट को समय देते हुए चँदेरी मे प्रवेश किया। आहार–चर्या के बाद क्षु जी ने खदार के विषय मे विस्तृत चर्चा की। दोपहर मे आचार्यश्री का प्रवचन रखा गया, किन्तु समाज और आचार्यश्री की इच्छा से पहले क्षु जी के भी प्रवचन हुए। सभी को अच्छे लगे। लोग चकित थे कि उतने बडे आचार्य के समक्ष बडे–बडे सन्त कॉप जाते हैं, तब क्षु जी ने पूर्ण निर्भयता से उद्बोधन दिया है। वे अति विशिष्ट हो गये है अब। ❑

शाम को आचार्यश्री ससघ, क्षु जी के साथ खदार जी गये, वहॉ के दर्शन किये, प्रसन्न हुए।

सुबह पुन विहार। पहुँचे थूबोनजी अतिशय तीर्थ क्षेत्र। सतो की परस्पर प्रभावना एव वत्सलता के चलते, क्षु जी भी साथ–साथ गये।

समय ने दस्तक दी, सामने वर्षायोग स्थापना की तिथि आ गई। आचार्यश्री ने सघ सहित वहॉ ही स्थापना की। वही क्षु जी ने। ❑

कुछ ही दिवस बीते कि क्षु जी बीमार हो गये। धीरे–धीरे एक माह निकल गया, स्थिति गम्भीर। आचार्यश्री ने उन्हें अपने कक्ष के पास बुला लिया। विशेष देखरेख रखते थे। अपने सामने आहार–चर्या कराते। स्वस्थ होने मे दो माह लग गये थे क्षु जी को।

धीरे-धीरे वर्षायोग पूर्ण। चातुर्मास-निष्ठापना। वहाँ से विहार कर आचार्य-सघ ललितपुर गया। वहाँ शीतकाल का समय, वाचना-शिविर के कारण, प्रभावनाकारी सिद्ध हुआ। क्षु जी साथ थे ही, अत ज्ञानगगा का अवगाहन करते रहे। पश्चात, आचार्यसघ देवगढ की ओर विहार कर गया, क्षु जी टीकमगढ़ की ओर।

क्षु जी कही ज्यादा न रुके, आहार जी पपौरा जी से चल कर टीकमगढ। कुछ समय बाद पुन विहार। फिर साढूमल, मडावरा होते हुए-अतिशय क्षेत्र मदनपुर। वहाँ वार्षिक मेला की आयोजना चल रही थी, कमेटी की प्रार्थना पर क्षु जी ने मेला-महोत्सव मे समय प्रदान किया, मगर अधिक न रुक सके। विहार कर दिया।

खिमलासा, बीना, गजबासौदा और फिर कुरवाई। वहाँ एक माह रुक कर छहढाला की कक्षा ली। कुरवाई के धर्मनिष्ठ श्रावक श्री खुशालचद्र जी के युवा सुपुत्र श्री राजेन्द्र कुमार (वर्तमान मे पू वैराग्य सागर जी मुनिमहाराज) पू क्षु जी से बहुत प्रभावित हुए और वैराग्य-पथ पर चलने का मन बना डाला। भावनाएँ ब्रत-नियम-सयम की ओर दृढतर होने लगी। 'एक मायने मे यह क्षु जी की प्रभावना का परिणाम ही था'-श्री राजेन्द्र स्वीकार करते थे।

तभी प दरबारी लाल जी कोठिया न्यायाचार्य आये और क्षु जी से 'न्याय विद्या वाचना' की अग्रिम चर्चा की। ❑

दो-एक दिन ही हुए थे कि क्षु जी को समाचार मिला कि परमपूज्य आचार्य विद्यासागर जी ससघ सोनागिरि जी सिद्ध क्षेत्र पहुँच चुके हैं। समाचार से क्षु जी प्रसन्न हो उठे। उन्होने विचार किया कि श्रेष्ठ-सयोग बनने जा रहा है सोनागिरि मे, क्योकि वही परमपूज्य आचार्य गुरुवर सुमतिसागर जी विराजे हुए है। वही पू क्षु सन्मतिसागर जी हैं। क्षेत्र के दर्शन का लाभ विशिष्ट है ही।

दूसरे दिन प्रात अकस्मात ही, क्षु जी ने कुरवाई से विहार कर दिया। चरण रुके मल्लारगढ में। श्रावकगण पुलकित हो क्षुल्लक जी को ठहरने की मिन्नत/प्रार्थना करने लगे, किन्तु वे समय न दे सके एव वहाँ से विहार कर सीधे सिद्ध क्षेत्र सोनागिरी जा पहुँचे। वहाँ से वे सीधे 'त्यागी-व्रती-आश्रम' गये, जो उनके परमपूज्य गुरुवर आचार्य सुमतिसागर जी के आशीष से कुछ वर्ष पूर्व स्थापित किया गया था। उस आश्रम मे स्थित भगवान चद्र प्रभु जी का रमणीक मदिर तीर्थयात्रियो की आत्मा-शुद्धि का प्रेरक है।

क्षुल्लक जी आश्रम मे प्रवेश करते ही अपने गुरुवर को पा गये। पा गये गुरुभाई क्षुल्लक सन्मति सागर जी को।

शिष्य को आया देख गुरुवर माँ की तरह करुणापूर्ण हो उठे, हाथ उठा कर जैसे खींच लेना चाहते हो अपने कक्ष मे।

क्षु जी ने नमोस्तु कर अपना श्रद्धासिक्त-मस्तिष्क गुरु-चरणो पर धर दिया। ❑

8

'मुनित्व का वरदान'

31 मार्च 1988 (वि स 2045, चैत्र शुक्ल त्रियोदशी), हॉ भगवान तीर्थंकर महावीर स्वामी का जन्म–दिवस। महावीर–जयती का पावन–दिवस चुना गया था दीक्षा–समारोह के लिए। दिवस का चयन किसने किया था? परमपूज्य, वात्सल्यमूर्ति, आचार्यप्रवर श्री 108 सुमतिसागर जी महाराज ने। वे सादगी और समता की जीवन्त–मूर्ति थे। सम्पूर्ण जीवन सादा रखा था और हर कार्य–अथ् से इति तक–सादगी से करते थे। उनकी कसौटी मे श्रावको की 'भीड़' कभी नही रही, वे 'कर्त्तव्य' को कसौटी पर रखते थे।

सोनागिरि की पर्वत श्रृखला पर स्थित 77 मदिरो मे से एक, सर्वाधिक मान्य और प्रमुख तीर्थंकर भगवान चद्रप्रभु के मदिर के विशाल प्रागण मे, शुभ मुहूर्त देख कर आचार्य श्री ने क्षु गुणसागर जी को जैनेश्वरी दिगम्बर दीक्षा विधि–विधानपूर्वक प्रदान की। फिर उन्होंने अपने श्रीमुख से, नवदीक्षित साधु का नामकरण किया–मुनि 108 श्री ज्ञानसागर जी महाराज। नाम सुनते ही उपस्थित श्रावको ने मुनिवर का जयघोष किया, गुरुवर का जयघोष किया और किया अन्य–अन्य सन्तो का।

देखते ही देखते गुरुवर सुमतिसागर जी ने भारत देश के कोट्याधिक श्रावको के समक्ष ऐसा मुनि उपस्थित कर दिया, जो भविष्य मे उपाध्याय–पद का भी श्रेष्ठ पात्र था। यह पृथक बात थी कि यह कल्पना समय के गर्भ मे शात पडी थी, अधरो तक न आ पाई थी–किसी श्रावक के।

उसी दिन, उसी मुहूर्त मे पू गुरुवर सुमतिसागर जी ने क्षुल्लक श्री सन्मतिसागर जी को भी दीक्षा प्रदान कर मुनि–बाना प्रदान किया था, वे हो गये थे–पू मुनि सन्मतिसागर जी महाराज।

जिस तरह पूज्य सुमतिसागर जी को महावीर–जयती का दिवस उचित लगा था दीक्षा प्रदान करने के लिए, उसी तरह अन्य सतो को भी लगा होगा। देश मे, हो सकता है, कई सतो ने उस दिन अपने शिष्यो को मुनि–दीक्षा दी हो। अवश्य दी होगी, क्योकि उसी दिन, उसी तीर्थ क्षेत्र पर दोपहर मे पू आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज ने अपने 8 शिष्यो को मुनिदीक्षा प्रदान कर 8 मुनि दिये थे– पू प्रमाणसागर जी, पू पवित्रसागर जी, पू आर्जवसागर जी, पू उत्तमसागर जी, पू चिन्मयसागर जी, पू पावनसागर जी, पू सुखसागर जी और पू मार्दव सागर जी।

बलिहारी थी तिथि–महावीरजयती की, बलिहारी थी–सिद्ध क्षेत्र सोनागिरि की, बलिहारी थी–आचार्यों के मौनमूक चितन की। ❑

पूज्य मुनि ज्ञानसागर जी 12 वर्ष तक क्षुल्लक रह कर देशाटन और अध्ययन करते रहे थे, तपपूर्ण चर्या आचरित करते रहे थे, सयमाधीन रह कर उपसर्ग सहते रहे थे। उनकी समस्त विशेषताएँ एव आगमानुकूल आचरण– चर्यादि, आचार्यश्री की दृष्टि मे वर्षों–पूर्व उत्तम स्थान ग्रहण कर चुके थे। अत आचार्यश्री ने उन्हे और अधिक तपाना आवश्यक नहीं समझा था। उनके मन मे एक ही विचार था कि यह 'ज्ञान का पुष्प' खिला है तो इसकी महक देश के कोने–कोने तक जानी चाहिये। वे अपने प्रिय शिष्य पर अतरग की गहराई तक प्रसन्न थे और उन पर पूर्ण विश्वास करते थे। अत एक दिन उन्होने मुनिवर ज्ञानसागर जी से कहा– 'आपका उदय हो चुका है, अब श्रावको के मध्य जाकर ज्ञान का दीप जलाओ, प्रवचन–गगा बहाओ तथा एक नये और निराश्रित व्यक्तित्व को स्थापित करो। आपकी धार्मिक–प्रगति गुरुदक्षिणा कहलाती रहेगी।'

नूतन मुनि पू ज्ञानसागर जी गुरुवर का सकेत समझ रहे थे। उन्होने उनके चरणो पर माथा टेक कर कहा–हे परमपूज्य! आपके कथन के अनुरूप अवश्य ही कुछ करूँगा, किन्तु अभी मेरा मन आपके चरण–कमल पर गुजन करता हुआ रहना चाहता है।'

— यह गुजन कही अनुराग तो नही है?
— नही गुरुवर, मात्र भक्ति।
— कही यह अदृश्य मोह की कोई सूक्ष्म बेडी तो नही है?
— नही गुरुवर, नही। केवल आपकी सेवा का मनोभाव है।
— सत अपने शिष्यो को भक्ति या सेवा के लिए अपने पास नही रोके रहते हैं। आप श्री जी की भक्ति कीजिए और जिनवाणी की सेवा।

गुरुवर की वार्ता धर्म–रस से पूर्ण थी। मुनिवर यह सब कुछ जानते थे, पर गुरु–चरणो के समीप रहने का भाव न त्याग पा रहे थे। किन्तु वार्ता पूर्ण होते ही वे सचेत हो गये और बोले–हे आचार्य श्री, आपके वचन, भीतर कोई दीप प्रज्ज्वलित कर गये है, मैं शीघ्र ही आपसे आज्ञा लेकर स्वतत्र–विहार करूँगा। ❑

दिगम्बर–बाना धारण कर पूज्य मुनिवर ज्ञानसागर जी महाराज अपने परमपूज्य गुरु आचार्य सुमतिसागर जी महाराज से आज्ञा ले सोनागिरि से विहार कर गये खनियाधाना की ओर। वहॉ के भक्तो को क्षुल्लक जी प्रथम बार 'मुनि' के रूप मे प्राप्त हुए थे। नगर मे भारी उत्साह था, पर मुनिवर रुके नही, बढ गये। वे अकेले नही थे, गुरुवर पू सुमतिसागर जी की आज्ञा के अनुरूप एक गुरु भाई साथ चल रहे थे।

चरण थमे सागर नगर मे। समाज की प्रार्थनाएँ और विनय वर्षायोग स्थापना के लिए नित्य चल रही थी, श्रावको–समाजसेवियो द्वारा नित्य श्रीफल पर श्रीफल चढाये जा रहे थे। सुनिश्चित तिथि पर स्थापना कर दी सत ने। सागर मे उत्साह के सागर उमड पडे। एक 'सागर'ने दूसरे को समा लिया अपने हृदय मे। पल–पल स्मरणीय वर्णी श्री 105 गणेश प्रसाद जी न्यायाचार्य की तपोभूमि कही जाने वाली सस्था–श्री गणेश दि जैन महाविद्यालय, वर्णीभवन, सागर का परिसर गमक उठा स्थापना की विधियो से।

श्रावको ने अनुभव किया कि पू ज्ञानसागर जी का, मुनि–अवस्था का यह प्रथम चातुर्मास है, पर वे झिझक–सकोच–शर्म पर विजय प्राप्त कर, पूर्ण–गम्भीरता से समय देते हैं। तत्वचर्चा मे उनकी प्रज्ञा सराहना पाती है। प्रवचन भी उनके प्राजल रहते है।

श्रावण शुक्ला सप्तमी को भगवान पार्श्वनाथ का मोक्ष–दिवस, समारोहपूर्वक मनाया गया। मुनिराज के प्रवचनो की सरलता की सराहना की गई विद्वतवर्ग द्वारा।

अभी अगस्त–माह ही चल रहा था कि मुनिवर ज्ञानसागर जी के प्रवचनो और दिनचर्या ने, दर्शनार्थ आने वाले श्रावको मे वैराग्यभावना का सचार कर दिया। अनेक युवक उनसे ब्रह्मचर्य–व्रत प्रदान करने की प्रार्थना करने लगे। मगर जब मुनिवर कहते कि अपने पालको (माता–पिता) से मेरे समक्ष अनुमति लो, तो बात अपने आप खिसक जाती। एक दिन आगरा निवासी युवक श्री अतुल कुमार जैन प्रार्थना कर बैठे। मुनिवर का वही प्रश्न था–माता–पिता से आज्ञा ली?

अतुल जी ने अपने पिता श्री सुमतप्रसाद आगरा का परिचय दिया, साथ ही उनकी स्वीकृति का विश्वास दिलाया, तब मुनिवर तैयार हो सके। फिर क्या था, दूसरे ही दिन, 7 अगस्त 1988 को मुनिवर ने उन्हे ब्रह्मचर्य–व्रत प्रदान कर 'श्री ब्र अतुल भैया' का नव स्वरूप दे दिया। वे मुनिवर के समीप रह कर विद्यार्जन एव तपाभ्यास करने लगे।

कुछ माह पूर्व जब मुनिवर क्षुल्लक रूप मे कुरवाई मे थे, तब वहॉ भी श्रेष्ठ नागरिक श्री खुशालचद्र जैन के कुलदीपक श्री राजेन्द्रकुमार जैन (वर्तमान मे पू मुनि वैराग्यसागर जी महाराज) अपने मनोभाव जाहिर कर चुके थे। उन्हे स्मरण भी था। अत मुनिवर को खोजते हुए श्री राजेन्द्र जी सागर जा पहुँचे।

पहुँचते ही मुनिवर के चरणो से लग गये। फिर वही प्रार्थना की, जो कुरवाई मे की थी। मुनिवर उनके दृढ–निश्चय से अवगत थे, उनके पिताश्री की सहमति भी जान चुके थे। अत फिर वे उनके निश्चय को टाल न सके, बल्कि फलित करने का मन बना चुके थे। चार दिन बाद ही, 11 अगस्त 88 को मुनिवर ने ब्रह्मचर्य–व्रत देकर, उन्हे 'श्री ब्र राजेन्द्र भैया' का शुभ गरिमामयी बाना प्रदान कर दिया।

वे भी मुनिवर के समीप ठहर कर तपश्चर्या को बढाने लगे। ब्र राजेन्द्र जी के गले की मिठास से सागर का जनमानस इतना प्रभावित हुआ कि मौका पाते ही भजन सुनाने का नम्र अनुरोध कर देते। वे गुरु आज्ञा के बाद, सुना भी देते थे। ❑

फिर आया रक्षाबधन का पावन–दिवस श्रावणी–पूर्णिमा। मुनि ज्ञानसागर जी का प्रवचन पुन. प्रभावनाकारी सिद्ध हुआ। नये–नये मुनि हुए थे, इसलिए लोग विशेष ध्यान देते थे, क्या बोले, कैसे बोले, किस भाव से बोले।

बारी आई शिविर की, आश्विन शुक्ला पचमी से पूर्णिमा तक की अवधि तय की गई। स्थानीय विद्वानो के साथ–साथ, बाहर के विद्वानों को भी बुलाया गया और शिविर की कक्षाऍ शुरु की गईं। वृद्ध और प्रौढ़ महिला–पुरुषो के साथ–साथ युवको ने भी उत्साह से भाग लिया। प्रात सभी वर्ग के लोग मिल कर भगवान का प्रक्षाल–पूजन करते, फिर मुनिराज प्रवचन देते। फिर तीन वक्त कक्षाओ का सचालन होता, कहे–सुबह की कक्षा, मध्याह्न की कक्षा और रात्रि की कक्षा। कक्षाओ मे तो सैकडो लोग बने रहते थे, किन्तु शिविरार्थी तीन सौ थे। श्रावको मे रुचि–सम्वर्धन की दृष्टि से, किसी–किसी कक्षा मे, मुनिराज ज्ञानसागर जी पढाने पहुँच जाते, श्रावक गदगद हो जाते।

शिविर के अतिम दिन लिखित परीक्षा ली गई और उत्तीर्ण होने वाले समस्त विद्यार्थियो को पारितोषक प्रदान किये गये। प्रथम, द्वितीय और तृतीय स्थान पाने वालो के लिए विशेष पुरस्कार रखे गये थे।

पर्युषण के पश्चात् सागर नगर के अन्य–अन्य मदिरो मे भी मुनिराज के प्रवचन आयोजित किये गये, उन्होने मना नही किया, गुरु–आज्ञा के अनुसार वे हर स्थल तक गये और जैनधर्म तथा जैनसत के यथार्थ स्वरूप की दुन्दुभि बजाने मे सफल रहे। 'सफल' शब्द इसलिए लिख रहा हूँ कि वह मुनिवर का प्रथम वर्षायोग था। पर चर्या अनुभवियो की तरह कर रहे थे। अत उनके कार्यक्रम देख कर कोई यह न कह सका कि वे 'नवोढा–साधु' हैं।

समय का जहाज सागर मे अनवरत चलता रहा, पता ही न चला और चातुर्मास का अतिम छोर आ गया, हॉ अतिम दिन। श्रावक बेचैन हो उठे–अब तो सत कभी भी विहार कर सकते हैं? मन मे प्रश्न घुमडने लगे।

मुनिराज ने समय पर निष्ठापना विधि पूर्ण की। समाज ने श्री नदीश्वर विधान की प्रार्थना की, तो कुछ समय और मिल गया। धूमधाम से वह भी पूर्ण कराया मुनिराज ने।

चातुर्मास सम्पन्न होते ही मुनिवर को अपने पू गुरुदेव से मिलने–दर्शन करने की भावना हुई, मगर गुरुवर आसपास न थे, सागर से सहस्त्राधिक कि मी दूर अविस्थित, सुप्रसिद्ध तीर्थ क्षेत्र हस्तिनापुर मे थे। मुनिवर के समक्ष दो धार्मिक लाभ थे– प्रथम, गुरुदर्शन और द्वितीय, तीर्थबदन। उन्होने ससघ विहार कर दिया सागर से। श्रावक देखते रह गये। व्यवस्थाओ से जुडे हुए लोग भारी जनसमुदाय के साथ मुनिवर को आगामी–पडाव तक पहुँचाने निकल पडे। कहे–एक सागर छूट रहा था किन्तु एक सागर/जनसमूह, साथ–साथ चल रहा था और एक 'सागर' के दर्शन का लक्ष्य था।

सघ बड़ा हो गया था, मुनिवर के साथ क्षु अतिवीरसागर जी थे ही। अब ब्र अतुल भैया और ब्र राजेन्द्र भैया भी उनके अनुसरणकर्ता थे, अनुगामी थे। था वह 2 दिसम्बर 88 का दिन। ❑

सागर से हस्तिनापुर का मार्ग सहज नही है, पर श्रावको ने उसे सहज बना दिया। वे एक पडाव से दूसरे तक श्रीसंघ को पहुँचाने जाते थे और मुनि–आज्ञा के पश्चात अपने नगर को लौट आते थे। देखते ही देखते मुनिवर के चरण वरायठा, अतिशयक्षेत्र गिरार, नवागढ, अतिशयक्षेत्र बडागॉव, टोडी फतेहपुर, चिरगॉव, भिन्ड, फूफ, इटावा, अलीगढ, बुलन्दशहर आदि को पार करते हुए 24 दिसम्बर 88 को हस्तिनापुर पहुँच गये। मात्र 22 दिनो मे पूर्ण की थी वह सुदीर्घ यात्रा। श्रावको के समक्ष नवकीर्तिमान बन गया था। स्वत गुरुवर पू सुमतिसागर जी चकित–'ये बच्चे, 22 दिनो मे कैसे पहुँच गये? क्या उडने की विद्या जानते हैं?'

एक मायने मे वे अपने युवाशिष्यो का, परोक्ष मे, गुणबखान ही कर रहे थे। यो वे स्वत कई बार इतने वेग से चल चुके थे। सो वे अपने प्रिय शिष्य ज्ञानसागर जी की दृढता और लगन पर खुशी जाहिर कर रहे थे। ❑

गुरुवर का वरद–सामीप्य पाकर मुनिवर गदगद् थे। जी भर कर दर्शन किये गुरु के और क्षेत्र के। मुनिवर अधिक से अधिक समय प्राप्त करते गुरुवर का और किसी न किसी चर्चा मे रत रहते। कभी 'कुछ' पूछते, कभी 'समाधान' चाहते।

गुरुदेव पू सुमतिसागर जी भी अपने शिष्योत्तम को लगातार समय और सीख देते रहे। सघ के शेष सदस्यगण गुरु–शिष्य की चर्या देख कर ही धर्मलाभ ले रहे थे। ❑

दो दिवस का समय दो मिनट की तरह कट गया, कुछ पता ही न चला। आचार्य श्री को विहार करना था। अत सभी सदस्य भीतर ही भीतर निर्णय की टोह मे थे कि क्या पता किसे कहॉ जाने की आज्ञा मिलती है?

मोह का सागर सोखने वाले और निर्मोह का सुमेरु चढने वाले आचार्य सुमतिसागर जी अपने कुछ शिष्यो को साथ ले गये, और दो मुनियो को पू ज्ञानसागर जी के सघ मे रहने की आज्ञा दे गये। 26 दिसम्बर 88 को हस्तिनापुर से उनका विहार मवाना की ओर हुआ, मुनिवर ज्ञानसागर जी उन्हे कुछ दूर तक पहुँचाने गये। ❑

हस्तिनापुर मे यात्रियो का तॉता लगा रहता है। एक दिन नगर सरधना से कुछ श्रावक आये। उन्होने मुनिसघ के दर्शन किये और सघ को सरधना पधारने की प्रार्थना की।

भक्तो के वात्सल्य एव भक्ति मे 'कुछ' अवश्य होता है, रहता है, जिसके कारण बडे–बडे साधुसत उनकी ओर खिच जाते हैं। वह यहॉ भी हुआ, भक्तो की अनुनय–विनय श्रीसघ को सरधना लाने मे सफल हो गई। पू मुनिवर हस्तिनापुर के दर्शन कर, आचार्यश्री के समीप पहले मवाना पहुँचे। फिर वहॉ से उनके साथ–साथ सरधना गये। ❑

30 दिसम्बर 1988 का दिवस सरधना के लिए ऐतिहासिक हो गया, उस दिन आगमन हुआ था श्रीसघ का। सयोग कुछ ऐसा बना कि समाज के चितन के अनुरूप एव आचार्यश्री की आज्ञानुसार, पाडित्य–सूरि, सरस्वती–सूनु पू ज्ञानसागर जी ने छहढाला की प्रात कालीन कक्षाऍ शुरु कर दी। मुनिवर पढाते, श्रावक पढते। श्रावको की सख्या इतनी अधिक हो जाती थी कि वहॉ 'कक्षा' तो दीखती ही नही थी, विशाल सभा नजर आती थी। उत्साह ने कुछ इस तरह अगडाई ली श्रावको के मनो मे कि सभा तो सभा, आहार–चर्या के समय भी भारी भीड बनी रहती। फलत मुनिवर की आहारचर्या के समय पचास–पचास कार्यकर्ता केवल व्यवस्था बनाने मे लगे रहते थे।

दोपहर के कार्यक्रम पृथक। रात्रिकालीन विचार गोष्ठियॉं पृथक। कहे—कार्यक्रमो की कडी बनी रहती थी। माताऍं—बहिने आदि सभी गृह—सदस्य उपस्थित होकर लाभ लेते थे। ❑

सरधना मे त्यौहार जैसा वातावरण बन गया था। बालाबाल—वृद्ध—नर—नारी उमग नाम के अश्व पर चल रहे प्रतीत हो रहे थे।

पू मुनि ज्ञानसागर जी ब्र राजेन्द्र कुमार जी की तप साधना देखते—परखते हुए चल रहे थे। अत उन्होने अनुभव किया कि ब्र जी को क्षुल्लक—दीक्षा देने का समय आ चुका है।

मुनिवर का सकेत व्यवस्था—समिति को समझते देर न लगी। अत श्रावकगण मत्रणा कर उनके पास गये तथा कार्यक्रम की तैयारियो एव तिथि की आज्ञा मागने लगे।

मुनिवर ने तब बतलाया कि 'क्षुल्लक दीक्षा—कार्यक्रम' 30 जनवरी 89 को रखा जा सकता है, आचार्यश्री भी सकेत प्रदान कर चुके है।

सरधना के लोगो के पास समय कम किन्तु उत्साह अधिक था, था धार्मिक अनुभव। अत शीघ्र ही ब्र राजेन्द्र जी के माता—पिता को आमत्रण प्रेषित किये गये। ❑

व्यवस्था समिति के लोगो ने स्थानीय जैन—मिलन के साथ मिल कर 'भारतीय जैन मिलन—हास्पिटल—केम्पस' मे विशेष साज—सज्जा की।

कहे, श्रीसघ के सरधना—प्रवेश करते ही, आचार्यश्री ने ब्र राजेन्द्र जी को विधिवत् क्षुल्ल्क—दीक्षा प्रदान करने का मन बना लिया था, मगर आचार्यश्री लगातार मुनि ज्ञानसागर जी को भी भीतर—बाहर बॉंच रहे थ, पढ रहे थे, जॉंच रहे थे। उन्हे विश्वास हो आया था कि ज्ञानसागर जी मे सघ—सचालन एव अध्ययन—अध्यापन के समस्त गुण विद्यमान है, तप अवधि भी दीर्घकालीन हो चुकी है। अत उन्हे उपाध्यायपद प्रदान करना उचित होगा।

अपने विचारो से आचार्यश्री ने सभा मे सभी को अवगत करा दिया। सुनकर श्रावकगण हर्षित, मुनिवर चकित। समाज का हर्ष और उत्साह दो गुना हो गया— उनके नगर को ऐतिहासिक सौभाग्य जो मिल रहा था। ❑

शोभायात्रा सीधी पडाल पहुची और धर्मसभा मे परिणित हो गई। मच पर आचार्यश्री और उनका विशाल सघ पधारा। कार्यक्रम शुरु। था वह 30 जनवरी 1988 का मगल—दिवस।

पहले, आचार्यश्री ने क्षुल्लकदीक्षा की विधि पूर्ण की और श्री ब्र राजेन्द्र कुमार जी को, उनके माता—पिता की उपस्थिति मे, उन सबकी प्रार्थना पर, क्षुल्लक—दीक्षा प्रदान की, नाम रखा—श्री 105 वैराग्यसागर जी महाराज।

पडाल मे जो जनमेदिनी खचाखच समायी हुई थी, उसके कठो से जयघोष होने लगे—आचार्य श्री की जय। मुनि ज्ञानसागर की जय। क्षुल्ल्क वैराग्यसागर की जय।

कुछ समय तक केवल जय ही जय सुनाई देती रही वातावरण मे। सचालक जी के निवेदन पर जयघोषो का क्रम थमा। अब सब की नजर थी—पू ज्ञानसागर जी पर।

पूज्य आचार्यश्री ने पुन विधि—विधान सम्भाला और मच पर विराजे हुए मुनिवर ज्ञानसागर जी के विषय मे दो शब्द बोल कर, उन्हे उपाध्यायपद प्रदान करने की विधि पूर्ण की। देखते ही देखते, आचार्यश्री

की कृपाकोर से, मुनिवर हो गये उपाध्याय जी। आचार्यश्री ने नव परिचय बतलाया—श्री 108 उपाध्याय ज्ञानसागर जी महाराज।

श्रोताओ ने पुन जयकार की और लगातार करते रहे— "परमपूज्य उपाध्याय ज्ञानसागर महाराज की—जय" फिर परमपूज्य आचार्यश्री की जय। फिर आर्यिकाश्री की जय। क्रम अधिक चले कि सचालक जी ने पुन रोक लगाई, तब कही आगे की कार्रवाई की जा सकी। ❑

एक महान समारोह सम्पन्न हो गया सरधना की पुण्य भूमि पर।

कुछ दिवस और साथ—साथ बीते सतो के, फिर आचार्यश्री की आज्ञा पर उपाध्यायश्री ने विहार कर दिया। उनके साथ क्षुल्लक श्री वैराग्यसागर जी एव ब्र अतुल भैया को भी प्रस्थान करने की आज्ञा मिली। वे चले गये।

आचार्यश्री ससघ सरधना मे कुछ दिवस और रुके। मेरठ—सभाग के अतर्गत अनेक क्षेत्र धर्मशुष्क हो चुके थे, मगर परमपूज्य उपाध्यायश्री की पीयूष—वाणी ने कुछ ऐसा धर्मसिचन किया कि श्रावको के मनो मे अध्यात्म की बगिया लहलहा उठी थी। उनके प्रवचन और उनकी दिनचर्या समाज को गहराई तक प्रभावित कर गये थे, कहे, मेरठ—सभागीय—विशाल क्षेत्र मे, धर्म की जागृति सरधना से ही शुरु हुई थी। जन—जन मे नूतन चेतना का सचार हो पडा था।

सरधना से प्रस्थान कर उपाध्याय श्री का सघ बिनौली ग्राम पहुँचा। दूसरे दिन उनके प्रवचन हुए, स्रोता—सभा गद्गद्।

वहाँ, उस समय, बिनौली मे रात्रिकालीन—विचार गोष्ठियाँ प्रसिद्धि पा रही थी। उनमे युवकगण बडी सख्या मे भाग लेते थे और धार्मिक—शिक्षा प्राप्त कर, आध्यात्मिक—विचार—विमर्श करते थे। ❑

एक दिन उपाध्यायश्री सघ सहित बिनौली से विहार कर अमीनगर सराय चले गये।

उनके आगमन से सम्पूर्ण ग्राम मे उत्साह का सचार हो पडा, समाजसेवीगण व्यवस्थाओ मे जुट गये। गुरुवर कुएँ का पानी स्वीकारते थे। अत लोगो ने कुएँ पर जाकर अवलोकन किया। वह बेचारा सुदामा की तरह दीन निकला, उसके पास उचित जलराशि नही थी। कार्यकर्ता परेशान हो उठे। कुएँ का यह हाल है, रात्रि का आगमन होने वाला है, कल गुरुवर के आहार कैसे सम्पन्न करायेगे।

लोग सोचते—विचारते अपने घरो को चले गये। कुछ युवक गुरुवर की वैयावृत्ति करने उनके पास चले गये।

रात बीती, पौ—फटते ही, चिंतित श्रावक उठे और सीधे कुएँ की ओर चल दिये। पर यह क्या? जो कुआँ शाम को खाली था, वह सुबह तक निर्मल—जल से कैसे भर गया? लोग जलराशि निहार कर आश्चर्य कर बैठे।

सारे ग्राम मे शोर हो गया कि ऐसा अतिशय तो कभी देखा नही, पचमकाल मे फिर यह कैसे? माताएँ—बहिने भला क्यो शान्त बैठतीं, वे भी कुएँ का अतिशय देखने दौडी।

कुएँ से लौटते हुए नर—नारी एक ही बात कह रहे थे, 'यह तो गुरुवर के पुण्य का प्रताप है।'

फिर चला गुरुवर के प्रवचनो का क्रम। भारी जनसख्या उपस्थित होती। भीड पडाल में न समाती, लोग घरो की छतों पर चढ कर वाणी का आनद लेते रहते।

ग्रामवासियो को सबसे बडी उपलब्धि यह हुई कि जो समाज मूल–आम्नाय और सोनगढ–खेमों मे विभाजित प्रतीत होता था, वह एक हो गया और एकता का अमृत समाज को नव–श्रृगार प्रदान कर गया।

अमीनगर से विहार।

फिर कुछ दिन अतिशय क्षेत्र बडागॉव मे रुके। वहॉ से खेकडा। खेकडा एक मायने मे अमीनगर सराय से कम न था, वहॉ भी दो मत वालो के मध्य द्वन्द्व चल रहा था, इतना प्रबल कि पॉच घर के श्रावक छोड कर, शेष कोई भी श्रावक मुनियो को आहार नही देते थे। समाज की स्थिति का अध्ययन कर उपाध्यायश्री श्रावको को धधकता छोड कर न जा सके, वे वहॉ एक माह रुके और प्राण–प्राण मे विराजित मैत्रीभाव को जगाते रहे। अनेकान्तवाद और एकान्तवाद के कथित ज्वार को शात किया, कहे द्वन्द्वरुपी ज्वर से ग्रस्त समाज को सुस्वास्थ्य प्रदान किया, 'न कोई जीता, न कोई हारा' का आत्मभाव पुष्ट किया। फलत वहॉ भी सम्पूर्ण समाज मे एकता का प्रादुर्भाव हुआ। घर–घर चौके लगने लगे। हर श्रावक का हाथ मुनि–सेवा के लिए उठने लगा। समाज की एकता का रग तब और प्रगाढ हो गया, जब, उपाध्यायश्री के सानिध्य मे, वहॉ, विशाल–विद्वत–गोष्ठी का आयोजन किया गया। भारत के कोने–कोने से जैन–विद्वानो को आमन्त्रित किया गया और तीन दिन तक भारी उत्साह और विशाल दिलो के साथ, जनसमूह के समक्ष स्वतत्र विचार रखे गये। गोष्ठी का सयोजन श्री डा श्रेयाश कुमार बडौत ने भारी श्रम और सूझबूझ से किया था। (इस गोष्ठी के पूर्व, एक विशाल सगोष्ठी मुजफ्फरनगर मे भी सफलता का ध्वज फहरा चुकी थी)

खेकडा से विहार। उपाध्यायश्री पहुँच गये बडौत। विद्वानजन विनोद मे उसे 'जैन–नगरी' कहते है। बडौत की धरती पर रामनवमी और महावीर जयती मनाने का अवसर हर वर्ष आता रहा है, पर सन् 1989 मे सानिध्य प्राप्त था उपाध्यायश्री का, सो, सोने पर सुहागा, चरितार्थ हो गया।

सार्वजनिक स्तर पर रामनवमी का समारोह, जैन समाज द्वारा मनाया जाना–एक ऐतिहासिक घटना बन गई। बडौत के सुप्रसिद्ध 'नेहरू–मूर्ति–चौक' पर विशाल जनमेदिनी के समक्ष उपाध्यायश्री के सर्वधर्म–समभाव के धरातल पर युगान्तरकारी प्रवचन हुए। सारा शहर चर्चाओ से भर गया– 'एक दिगम्बर सत आये है, रामनवमी पर बहुत अच्छा प्रवचन किया है।' ❑

बडौत के लोग प्रवचन सुनते हुए और विशाल जनसमूह देखते हुए विचार करने लगे कि ऐसा ही विशाल समारोह महावीर–जयती पर भी आयोजित किया जावे, पर यह क्या, उपाध्यायश्री तो उसी दिन वहॉ से विहार कर गये। तब लगा–सत किसी समारोह के लिए नही रुकते, उनका विहार समारोहो से ऊपर होता है।

बडौत से बुढाना, फिर शाहपुर, बरनावा, फिर बिनौली। सन् 1989 का चातुर्मास स्थापना का शुभ–सयोग मिला, मगर, अतिशय क्षेत्र बडागाव के श्रावको को। उपाध्याय श्री बिनोली से बडागॉव जो आ गये थे। (खेकडा विषयक प्रसग आगे दृष्टव्य हैं)

चातुर्मास के चलते उपाध्यायश्री ने समारोहो से अधिक–ध्यान, स्वाध्याय–पठन–पाठन मे दिया। खुद पढते, अन्यो को पढाते, वर्षायोग पूर्ण किया। समारोह के नाम पर केवल एक बडे समारोह की आज्ञा दी थी, वह था–तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ का मोक्ष कल्याणक–दिवस–समारोह। क्षेत्र के मदिर जी मे, मूलनायक की मूर्ति किसकी है? वही–विघ्नहर तीर्थंकर पार्श्वनाथ की।

चातुर्मासकाल का ही प्रसग है, इतिहास और पुरातत्त्व से सरोकार रखने वाले विद्वान श्री कुन्दन लाल जैन (दिल्ली) पूर्व स्वीकृति प्राप्त कर, बडागॉव पहुचे और प्राचीन मूर्तियो के मूर्तिलेख लिपि–बद्ध करते रहे,

किन्तु दो महत्वपूर्ण प्रतिमाओ, तीर्थकर आदिनाथ और तीर्थकर महावीर, के न कर पाये। कारण था—लिपि बॉचने के लिए आवश्यक स्थान की सकीर्णता। पूर्व मे भी कतिपय विद्वान बडागॉव की उक्त मूर्तियो के पूरे—पूरे लेख नही उतार पाये थे। अत कुदनलाल जी निराश होकर लौटने की रौ मे आ चुके थे, किन्तु गुरुवर ने उन्हे कुछ इस तरह प्रतिबुद्ध किया कि उनकी निराशा जाती रही। फलत वे प्राचीन मूर्तियो का कार्य छोड, प्राचीनग्रथो के अवलोकन मे लग गये। अलमारी का ताला खुलवाया और भिड गये कार्य मे।

गुरुवर की कृपा से उन्होने अन्यान्य ग्रन्थो के बीच से एक हस्थलिखित गुटका खोज निकाला जिसकी भाषा प्राकृत थी। सन् 1284 मे आयुर्वेदाचार्य श्री महिपाल जी द्वारा रचित वह गुटका महत्वपूर्ण था। अपने गर्भ मे दो महान कृतियो को धारण किये हुए था।

गुरुवर से आशीष लेकर श्री कुदन जी उसकी छायाप्रतियॉ अपने साथ ले गये, उनपर श्रम किया। कुछ ही वर्षों के बाद उनकी मेहनत रग ले आई, जब देश को, जैन आचार्यो की वह धरोहर, हिन्दी मे अनुवादित कर प्राप्त कराई गई। गुटके से जो दो कृतिया तैयार हुई, वे क्रमश 'योगनिधान' और 'प्राकृतवैद्यक' के नाम से प्रकाश मे आई। उनमे जडी बूटी से रोग शमन के उपचार गुम्फित हैं। कहे, सैकडो वर्ष प्राचीन, प्राकृतभाषा की कृति, हिन्दी मे आकार पा सकी।

न गुरुवर विद्वानो की कीमत करते होते, न कुदन जी वहॉ पहुँचते और न कृतिया प्रकाश मे आ पाती। अत ऐसे सत को 'विद्वानो का जौहरी' कहा जावे, जो हर विद्या के विद्वानो को समय, प्रेरणा और मार्गदर्शन प्रदान कर धर्म, समाज, सस्कृति, साहित्य के उत्थान और सरक्षण मे सहायक बने हुए है।

हे गुरुवर! आप 'ज्ञान—सूरि' है, आपका नाम सार्थक है, आपकी चेष्टा सही है। आपको नमन। ❑

9

‘तपः पूत’

वर्षायोग की निष्ठापना के पश्चात उपाध्यायश्री ने विहार कर दिया, सामने पुन था ग्राम बिनौली। श्रावको ने प्रार्थना की कि शीतयोग बिनौली मे ही सम्पन्न करे। सयोग से उपाध्यायश्री ने दो माह का समय प्रदान किया, किन्तु वहॉ भी स्वाध्याय और पठन–पाठन को ही अधिक महत्व दिया, कार्यक्रमो को नही।

पहले बिनौली ग्राम आगमन हुआ था, फिर सरधना नगर को पुन समय दिया। सरधना के समाज सेवियो के समक्ष एक ज्ञान कानफ्रेन्स (ज्ञानिक–सगोष्ठी) का भाव था। उपाध्यायश्री ने उचित मार्गदर्शन कर, मार्च मे रख लेने की आज्ञा दे दी। मगर वे वहॉ रुके नहीं, विहार कर गये। लोग तैयारियो मे लगे रहे, उपाध्यायश्री विहार मे। वे सरधना से राडधना और फिर खतौली पहुँचे। खतौली से मुजफ्फरनगर की यात्रा छोटी थी, पर रोमाचक हो उठी थी। हुआ यह कि खतौली के श्रावक इस विश्वास मे थे कि गुरुवर कुछ दिनो का समय प्रदान करेगे। मगर गुरुवर तो सरिता की तरह पल–पल वेगवान बने हुए थे। वे अपने समय के अनुसार खतौली से चल पडे। यह श्रावको की जानकारी मे न था। फलत उस समय वहॉ जो दो श्रावक थे वे उनके साथ हो गये। उनमे से एक श्री राकेश कुमार थे। गुरुवर चलते चले जा रहे थे, रास्ते मे शाम हो गई। कोई गाव/बस्ती मे न रुक कर वे समीप ही दीख रहे एक खण्डहर मे प्रवेश कर गये।

दोनो श्रावक परेशान–एक तो खण्डहर, जिसमे न किवाड, न ठिकाने का छप्पर। दूसरा यह कि वहॉ घनघोर जगल था हिन्सक पशुओ के साथ–साथ, लम्पट लोगो का भय।

श्रावको ने विनय की–हे महाराज, इस स्थान मे रात को चोर–लुटेरे आकर ठहर जाते हैं, वे हमे देख कर उत्पात करेगे। उनकी बाते सुन गुरुवर मुस्कराये, फिर बोले–कुछ न होगा रात मे। सुबह 6 बजे चल देगे।

गुरुवाणी पर पूर्ण विश्वास था श्रावको को। अत अपनी जान की परवाह न कर वे वही रुक गये और सुबह प्रस्थान भी कर गये। पर घटना कुछ बोध–चिह्न छोड गई–यह कि जहॉ सत रुकते है वहॉ से विपदाये स्वत विदा ले जाती है। जिस तरह दीपक के जलने से तम।

दूसरा बोध यह कि गुरुवर, जिनके पीछे, भेजने की दृष्टि से, हजारो श्रावक साथ–साथ चलते थे, वे मात्र दो श्रावको से भी सतुष्ट थे। उनमे भीड का दिखावा न था कि इतने बडे सत को हर कही, गाजे–बाजे और शोभायात्रा के साथ ही भेजने निकला जावे। ❑

पू उपाध्याय श्री ज्ञानसागर जी महाराज की निराडम्बरता की ऐसी अनेक कहानिया हैं जो गुम्फित की जा सकती है। गुरुवर खण्डहर से बडेगॉव चले गये। बाद मे शामली और सहारनपुर भी गये। तब तक सरधना नगर मे सक्रियता बढ गई क्योकि ज्ञान–गोष्ठी आदि की तिथियॉ, 18 से 27 मार्च 90, करीब आ चुकी थी। सरधना वालो से न रहा गया, अत समाज की ओर से एक प्रतिनिधि मडल सीधा सहारनपुर आ पहुँचा, और गुरुवर के चरणो मे श्रीफल चढाकर, सरधना चलने की प्रार्थना की।

सहारनपुर के समाज को आशीष दे गुरुवर प्रतिनिधि मडल के साथ सरधना को विहार कर गये। उपाध्यायश्री गुरुदर्शन की साध मन मे सम्भाले हुए थे। वे टोह मे थे कि शीघ्र ही गुरुवर के चरणो मे पहुँच जावे। साध पूर्णता की ओर हो पडी जब उपाध्यायश्री ने वहॉ से प्रस्थान कर दिया। बुढाना होते हुए बिनौली जा पहुँचे। परमपूज्य आचार्यरत्न सुमतिसागर जी महाराज ससघ वहॉ पधारे हुए थे। दोनो महान सयमधारियो का मिलन हुआ। उपाध्यायश्री के नमोस्तु के पश्चात् आचार्यश्री का प्रतिनमोस्तु। फिर आचार्यश्री ने शिष्य को गले से लगा लिया, वात्सल्य की एक नूतन–कथा दर्शको के चेहरे पर उभर आई।

सत–मिलन की सार्थकता का सुपरिणाम यह निकला कि बिनौली ही मे गुरुवर ने उपाध्यायश्री से मत्रणा कर क्षु वैराग्यसागर जी को मुनिदीक्षा प्रदान करने का निश्चय कर लिया।

बिनौली से लगा हुआ एक प्राचीन जैन तीर्थ है, अतिशय क्षेत्र बरनावा। जहा तीर्थंकर चद्रप्रभु की चतुर्थकालीन भव्य–प्रतिमा सदियो से शोभा बिखरा रही है। गुरुवर वही जा पहुँचे ससघ और सादगीपूर्ण समारोह मे क्षु वैराग्यसागर जी को विधिपूर्वक जैनेश्वरी दीक्षा प्रदान की। यद्यपि समारोह का सुमुचित प्रचार तब न हो पाया था, तथापि श्रावकजन अधिक सख्या मे उपस्थित हो गये थे। वह पावन तिथि थी–18 जनवरी 1990, तदनुसार वि स 2007।

दीक्षा समारोह के बाद, उपाध्यायश्री गुरुवर से आज्ञा लेकर पुन विहार कर गये। उनके साथ पूज्य मुनिश्री 108 वैराग्यसागर जी को भी विहार की आज्ञा प्राप्त हुई।

बरनावा क्षेत्र से चलने पर पुन नगर बिनौली मे सघ रुका। मुनि वैराग्यसागर जी की मुनि–अवस्था का यह प्रथम विहार था और विनौली–प्रथम ग्राम था। कहे–नूतन अनुभूतियॉ थी।

4 फरवरी 90 से 6 फरवरी 90 तक शाहपुर मे वेदीप्रतिष्ठा का कार्यक्रम प्रस्तावित था, उपाध्यायश्री ससघ वहॉ पहुँचे, कहे, समय दिया। उच्च प्रभावना के साथ कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। जनमानस का अध्यात्म और आत्मानद द्विगुणित हो गया। ❑

नियत समय पर सरधना की सस्कार प्रधान, शातिदायक पुण्य भूमि पर 25 और 26 मार्च 90 को ज्ञान–गोष्ठी सम्पन्न हुई। प्रमुख सयोजक स्व डा कस्तूरचद जी कासलीवाल थे। अन्य आमत्रित विद्वान–डा प्रेमसुमन उदयपुर, डा फूलचद प्रेमी वाराणसी, डा श्रेयाशकुमार बडौत, डा रतनचद जैन भोपाल, डा महेन्द्रसागर प्रचडिया अलीगढ, डा उदयचद जैन उदयपुर, डा कपूरचद खतौली, डा नदलाल जैन रीवा, डा रमेशचद बिजनौर, डा जयकुमार जैन मुजफ्फरनगर, डा शीतलचद जैन जयपुर, प प्रभुदयाल कासलीवाल जयपुर, डा प्रेमचद रावका जयपुर, डा अशोककुमार पिलानी, ब्र रेखा शास्त्री ललितपुर, डा कमलेश जैन वाराणसी, डा अशोककुमार जैन दिल्ली और डा राजीव प्रचडिया अलीगढ।

गोष्ठी मे वे सब विद्वान तारामडल की तरह छिटक रहे थे और उन सब के बीच सुप्रसिद्ध साहित्यकार श्री अक्षयकुमार जैन दिल्ली चद्रमा की तरह चमकते रहे।

हर सत्र मे उपाध्यायश्री पूरा समय प्रदान करते थे। सत्रात मे वक्ताओ के विचारो की आगम–सम्मत–समीक्षा करते थे और विद्वानो का मूल्य द्विगुणित कर देते थे।

नगर और वि–नगर के विद्वान आपस मे ताल–मेल बैठाते रहे। सभी के द्वारा वह गोष्ठी सार्थक और सफल निरूपित की गई। पू उपाध्यायश्री के आशीर्वाद को चमत्कारी कहा गया। ❑

(सतगण निरतर विहार करते हैं, फलत जीवन–भर वे योगीराज/यायावर, स्थानो को पीछे छोड कर, निर्मल–सरिता की भॉति गतिवान बने रहते है। ऐसे मे लेखन के दौरान कोई ग्राम छूट जावे, या ग्रामो के नाम आगे–पीछे हो जावे या गोष्ठियो आदि कार्यक्रमो का क्रम गडबडा जावे तो विज्ञ पाठकगण अन्यथा नही लेगे, विश्वास है। ऐसी गडबडियॉ गम्भीर–त्रुटि के रूप मे न ली जावे और स्थान क्रम/गोष्ठीक्रम के बजाय, कथानक और कथानायक पर ध्यान केन्द्रित किया जावे।)

कुछ ही समय बाद पुन विहार। अब चरण थे बुढाना की ओर। रास्ते मे कल्याणपुर नामक बस्ती पडी। यहा मुस्लिम–बधुओ, की सख्या अधिक है, मगर सभी जन हिन्दुओ से मैत्रीभाव रखते हैं और

मिलजुलकर सुख–दुख मे शामिल होते हैं। जैन सतो को आया हुआ देख, जैन तो जैन, हिन्दू भी दौड़ पड़े, सो मुस्लिम क्यो पीछे रहते, वे भी दर्शनार्थ पहुँचे। लोग अपने अपने द्वारों–चौराहो से देख रहे थे, दर्शन कर रहे थे, सतगण विहार करते आगे बढते चले जा रहे थे। एक मोड़ पर पू उपाध्याय ज्ञानसागर जी कुछ आगे ही निकल गये, मुनि श्री वैराग्यसागर जी पीछे रह गये।

गॉव मे सभी प्रकार के लोग रहते हैं, जाने कहॉ से दो ऊधमी युवक मुनिवर के पीछे लग गये, उनके हाथो मे डडे थे। पीछे चलते हुए उन्होने मुनि को चिढाना चाहा, तब साथ चल रहे श्रावको ने उनकी मस्तीभरी चाल देख कर उन्हे झिडक दिया। झडप से वे युवक रुक तो गये, पर 'देख लेगे' की धमकी दे बैठे।

श्रावकगण उन्हे पीछे छोड कर, सतो के साथ समीपस्थ नगर बुढाना मे रुक गये। बुढाना–समाज को जानकारी दी गई, तुरन्त कुछ जागरुक लोग थाने गये, उन युवको की रपट लिखानी चाही। तब तक बुढाना–जैन–समाज ने थाने का घेराव कर 'चक्का जाम' आन्दोलन कर दिया।

देखते ही देखते सभी उत्तरदायी–अधिकारी उपस्थित हो गये। नेतागण पहले ही से उपस्थित थे। वार्ता हुई, पुलिस ने अपराधियो को पकडने के लिये 24 घटे का समय मॉगा। दिया गया। समय से पूर्व पुलिस ने कल्याणपुर जाकर उन उपद्रवी युवको को धर–पकडा। अब क्या था, सारे गॉव मे खलबली मच गई। पुलिस उपद्रियो को लेकर वापिस हुई तो पीछे–पीछे उनके पारिवारिक जन भी दौडे आये।

बुढाना मे सतो के समक्ष, पुलिस ने दोनो युवको को खड़ा कर दिया। उनके पारिवारिक जन गिडगिडाने लगे– 'हे महाराज, ये मूर्ख हैं इन्हे क्षमा कीजिए।'

दिगम्बर सत तो वैसे ही क्षमा के अवतार होते हैं, फिर इन दो सतो मे तो क्षमाभाव की निर्झरणी सदा ही बहती रहती है। अत उन्होने सहज ही क्षमा कर दिया और पुलिस को हिदायत दी कि उन पर कानूनी कार्रवाई न की जावे, छोड दे।

लोग–बाग दृश्य देख चकित रह गये। कल्याणपुर के लोग सतो के चरणो मे नमन निवेदित कर लौट गये। एक बडा–साम्प्रदायिक–झगडा टल गया। ❑

बुढाना मे झगड़ा टल गया फिर नव–उत्साह का सचार हुआ लोगो मे। फलत भारी एकता और जोशखरोश के साथ 5 अप्रैल 1990 को महावीर जयंती–महोत्सव मनाया गया। श्रीसघ ने सानिध्य प्रदान कर गरिमा द्विगुणित करदी। पू. उपाध्यायश्री और प मुनिश्री के प्रवचनो का लाभ जनता को मिला। (यहॉ गोष्ठी की वृहत–आयोजना की गई थी, जो बहुत चर्चित हुई थी।)

बुढाना से विहार कर मुल्हेडा ग्राम जाना था सतो को, तब कुछ श्रावको ने याद दिलाया कि रास्ते मे वही कल्याणपुर ग्राम पडेगा, कही कुछ । तब उपाध्यायश्री ने समझाया कि उपद्रवी–तत्वो को उचित–बोध प्राप्त हो चुका है। अत अब उनकी ओर से कुछ नहीं किया जावेगा।

विहार हुआ। सतगण कल्याणपुर होकर मुल्हेडा पहुँच गये। यात्रा निरापद रही। समाज ने भारी उत्साह से स्वागत किया। शोभायात्रा के साथ नगर–प्रवेश।

कुछ दिन रुक कर उपाध्यायश्री ससघ मेरठ चले गये। फिर समीपी बस्तियो मे अहिसा और शाकाहार की अलख जगाते हुए जा पहुँचे–नगर शाहपुर (उ० प्र०), वहॉ का समाज झूम उठा। वह काफी दिनो से उपाध्यायश्री के चातुर्मास का भाव मन मे सजोये था।

गुरुवर ने समय पर वर्षायोग की स्थापना कर, समाज की मनोकामना पूर्ण करदी। ❑

शाहपुर एक छोटा सा उपनगर है, कस्बा बस्ती। उत्तर प्रदेश के विख्यात नगर मुजफ्फरनगर से मात्र 20 कि मी दूर। बडे शहरो के भक्त परेशान हो उठे कि उनके नगर को छोटा कर उपाध्यायश्री छोटी सी बस्ती मे रम गये, क्या बात है? लोग सोचते रह गये, उपाध्यायश्री के मनतव्य को शीघ्र न समझ पाये।

शाहपुर शोरगुल से दूर शाति का स्रोत जो था। सत–द्वय को शातवातावारण बहुत रास आया।

अपने गुरु के गुरु के गुरु, फिर उनके गुरु, गुरुणा गुरु से भी वरिष्ठ क्रम के गुरु–समाधिस्थ सत प्रशातमूर्ति बालब्रह्मचारी आचार्य शिरोमणि श्री 108 शातिसागर जी महाराज (छाणी) की सुप्तप्राय चर्चा पुन समाज के समक्ष छेड दी। फलत एक नगर शाहपुर भर नही, देश के अनेक नगरो के विद्वानो के समक्ष विषय स्थापित कर दिया। वे परमपूज्य आचार्यवर्य शातिसागर जी महाराज (दक्षिण) के समकालीन थे। दोनो की शिष्य परम्पराओ की और आदर्श जीवनचर्या की गुर्वावली प्रकाश मे लाई गई। गुरुणागुरु (छाणी) के शिष्यो का क्रम पू उपाध्यायश्री से ही प्राप्त हो गया, जो इस प्रकार है–प पू आचार्य शातिसागर जी (छाणी), फिर प पू आचार्य सूर्यसागर जी महाराज, फिर प प आचार्य विजयसागर जी महाराज फिर प प आचार्य विमलसागर जी महाराज (भिंड), फिर प पू आचार्य सुमति सागर जी महाराज (मुरैना)। स्पष्ट है कि उनकी पीढी ने दिये हमे–प पू उपाध्यायश्री ज्ञानसागर जी महाराज।

पू उपाध्याय श्री ने अपने गुरुणागुरु को पुन–प्रकाशित किया, वहाँ शाहपुर मे, यह कहना ही उचित होगा। उनसे सम्बन्धित साहित्य का शोध कराया, उनके द्वारा लिखित साहित्य की खोज कराई और अपने श्रेष्ठ–कर्त्तव्य का पालन किया। 'आचार्य शातिसागर छाणी' स्मारिका प्रकाशन की प्रेरणा विद्वतवर्ग को दी।

उक्त कार्यों के चलते, पू उपाध्यायश्री ने शाहपुर मे प्रवचनसार–ग्रन्थ की वाचना भी कराई जो घर–घर चर्चा का विषय बनी। वर्षायोग पूर्ण हो जाने के बाद, उपाध्यायश्री के सानिध्य मे हुए विधान और रथयात्रा के समारोह शाहपुरवासी कभी नहीं भूल सकते।

चातुर्मास समाप्ति के बाद भी, उपाध्यायश्री ने वहाँ समय दिया, अनेक धर्मवर्धक कार्यक्रम हुये। समाज का प्राण–प्राण उनसे बध गया, कोई न चाहता था कि वे विहार करे।

मगर गुरुवर तो मोह की श्रृखलाएँ सदा तोडते रहे हैं। वहाँ जो मजबूत श्रृखला बन गई थी श्रावको के मनो मे, उसे भी तोडा और श्रमण–पथ–विहारी उपाध्यायश्री ने सम्मेद शिखर जी की ससघ यात्रा की स्वीकृति प्रदान कर दी। समाजसेवी–जन तैयारियो मे जुट गये। ❑

10

‘ज्ञान के हिमालय की उतंग-चढ़ाई’

'सम्मेद शिखर–यात्रा' की भूमिका प्रेरक है। हुआ यह था कि जब गुरुवर शाहपुर में थे, (नवम्बर माह के अतिम सप्ताह में) तब कतिपय श्रावक उनकी वैयावृत्ति कर रहे थे जो वही के थे। वे सकोचवश अधिक बाते नहीं कर पा रहे थे, पर सभी का बाते करने का मन था। गुरुवर का मौन का समय था, सो वे मौन थे।

तब तक उदयगिरि–खण्डगिरि के विषय मे चर्चा चली। चर्चा करने वालो मे श्री जयतीप्रसाद जी और श्री मनीष जैन भी शामिल थे। गुरुवर ने श्री जयतीप्रसाद की ओर देख कर सकेत किया कि आप लोग उदयगिरि–आदि की यात्रा करो।

दोनो सज्जनो ने गुरुवर की बात को बढाते हुए प्रतिप्रश्न की तर्ज पर अपनी बात रखदी–गुरुवर, आप भी यदि ससघ तीर्थयात्रा पर निकले तो आप जहाँ कहेगे, हम लोग वहाँ चलने की व्यवस्था करेगे, कृपया स्वीकृति दीजिए!

सज्जनो की बात सुनकर गुरुवर क्षण भर को गम्भीर हो गये, फिर पूछा–कहाँ? (सकेत से)

सज्जनो ने विनयपूर्वक कहा–आपश्री का पावन साथ मिले तो सम्मेदशिखर जी और फिर जहाँ कहेगे, वहाँ।

गुरुवर पुन गम्भीर हो गये, सो चुप रहे आये। तब तक सज्जनो के स्वर पुन मुखरित हो गये–गुरुवर! आशीर्वाद दीजिए। गुरुवर मौन थे, बोले नही, मुस्कराये भर। सज्जनगण उनकी मुखाकृति पढ रहे थे।

कुछ दिन बीत गये। बात आगे बढती, उसके पूर्व गुरुवर आगे बढ गये थे, कर गये थे प्रस्थान शाहपुर से। तब वे ससघ बुढाना, बरनावा, बडौत, सोनीपत आदि स्थानो पर गये थे। फिर गुहाना रुके, वहाँ शीतकालीन सत्र चला।

तब तक शाहपुर के सज्जनगण भी अपनी मत्रणाएँ और तैयारिया पूर्ण कर वहाँ (गुहाना) जा पहुँचे। उनके साथ प धनराज जैन अमीनगर भी थे। सबने गुरुवर को 'यात्रा' का स्मरण दिलाया और शुभमुहूर्त हेतु चर्चाएँ की। गुरु–कृपा से तिथि तय–हुई–तीन फरवरी 1991, दिन रविवार।

सज्जनगण मुहूर्त तय कर और गुरुवर को आमत्रित कर वापिस अपने नगर आ गये।

धीरे–धीरे पुन कुछ सप्ताह निकल गये, तब तक गुरुवर हरियाणा प्रान्त के नगर गन्नौर, रोहतक की धूलि को चरणो का पावन स्पर्श दे, दिल्ली पहुँच चुके थे।

शाहपुर के सज्जन प्रतीक्षा मे थे, उन्हे लगा कि कही गुरुवर दिल्ली मे विलम न जाये। उनका सोचना उचित था क्योकि गुरुवर 'दिल्ली' जैसे व्यस्त महानगर मे थे। वर्ष के प्रथम माह जनवरी (1991) मे वे देश की राजधानी मे 'पचकल्याणक–प्रतिष्ठा–समारोह' सम्पन्न करा रहे थे। जिसे देख कर कहा जा सकता है कि कार्यक्रम यदि जनसमूह के वैराट्य के आधार पर छोटा या बडा माना जाता है तो, या गरिमा तथा सयम पूर्ण–श्रावकचर्या के आधार पर माना जाता है तो,– 'विशाल' था। कहे हर दृष्टि से विशाल था क्योकि उसे ऐसे सत का सानिध्य मिल रहा था जो शात–धीर–वीर–गम्भीर जाने जाते हैं सम्पूर्ण देश मे। जिनके समक्ष एक धनाड्य–भक्त के बराबर है एक निर्धन भक्त का महत्व। जो लक्ष्मी और सरस्वती से सम्बधित लोगो पर समभाव रखते हैं, जो सामान्य–जनो पर भी विशेष ध्यान देते हैं, जो भीड मे भी किसी की उपेक्षा नही करते।

कार्यक्रम का अतिम–चरण पूर्ण हो चुका था तभी शाहपुर के सज्जनगण एक वाहन (बस) से सीधे बलवीर नगर पहुँचे, वहाँ–श्री जयतीप्रसाद के साथ समाज के लोगो ने गुरुवर को श्रीफल भेट किया और यात्रा की तिथि का स्मरण दिलाया। प्रार्थना की।

गुरुवर बोले–मुझे याद है, आज 23 जनवरी 91 है 'यात्रा' का प्रस्थान तीन फरवरी रविवार को है।

उत्तर सुन सभी आगत जन गद्‌गद् हो गये। वे लौटते ही पुन शेष तैयारियो मे जुट गये। सात दिन ही बीते कि पुन 30 जनवरी को शाहपुर के प्रमुख सज्जन जीप से बलवीर नगर गये और गुरुवर से प्रार्थना की, उन्हे भय था कि कही महोत्सव के व्यस्त–कार्यक्रमो के कारण गुरुवर विलम्बित न हो जावे। मगर गुरुवर तो पूरे गुरुवर्य ही थे। अत सज्जनो का वात्सल्य ठुकरा न सके और उसी दिन मध्याह्न 3 बजे सज्जनो के साथ विहार कर गये।

यद्यपि बलवीर नगर के समस्त कार्यक्रम पूर्ण हो चुके थे, मगर वहॉ के भक्त यकायक गुरुवर के चले जाने से भारी दुखी हो गये, जैसे कोई निजी मूल्यवान वस्तु गुम गई हो। गुरुवर, मगर, निजी नही हैं, वस्तु नही है, वे सार्वजनिक है, जन–जन के हैं और राष्ट्रीय–वैभव है। समाज और सस्कृति की विभूति है। पर भक्त तो अपने दिल के दायरे मे ही सोचते है। अस्तु।

गुरुवर तीन दिन तक कडकडाती ठड मे लगातार विहार करते रहे। केवल स्वाध्याय और आहार–चर्यादि के लिए समय दिया और लोनी–मढोला, सुरुरपुर होकर पुसार ग्राम पहुँचे। खुली हुई जगह पर एक किसान के नलकूप के समीप रात्रि विश्राम कर सुबह पुन विहार। एक फरवरी 1991 का दिवस शाहपुर के लिए खुशी और उत्साह का दिवस था, क्योकि उस दिन उनके प्राणप्यारे गुरुवर पहुँचने वाले थे। ग्राम के नर नारी, युवक युवतियॉ और छात्रगण अगवानी के लिए नगर–सीमा पर एकत्र हो गये। अनेक सौभग्यवतियॉ सिर पर मगलकलश लिये थी। अनेक माताएँ आरती का थाल, अनेक श्रावक चरणो के प्रक्षालन की मन से प्रतीक्षा कर रहे थे, तो अनेक जन चरणरज लेने को उतावले थे। गुरुवर श्रावक–समूह के साथ करीब दस बजे (सुबह) पहुँच गये, भक्तगण जयकारो से आकाश गुजित कर बैठे। कुछ ही समय मे जो व्यक्ति जिस भावना से पहुँचा था, अपनी अभिलाषाएँ पूर्ण की, फिर एक विशाल शोभायात्रा के साथ नगर–प्रवेश। आगे–आगे कपडपट्ट (बेनर), उसके पीछे बैन्डबाजा–दल, उसके पीछे कलश लिये माताएँ–बहिने, उसके पीछे–गुरुवर के साथ विशाल श्रावक–समूह।

पहले मदिरजी पहुँच कर श्रीजी के दर्शन किये, फिर आहार–चर्या और मध्याह्न प्रवचन।

नियत समय पर तीन फरवरी को गुरुवर ने तीर्थयात्रा पर प्रस्थान किया। (यात्रा का सविस्तार वर्णन श्री मनीष जैन ने लिखा है जो 'अभिवदना के पुष्प' मे उपलब्ध है)

शाहपुर से चलते देख, प्रकृति को वात्सल्य हो आया, अपने प्रियपुत्रो की 'कठिन–यात्रा' पर रुचि देख खुशी से उसकी ऑखो मे पानी आ गया, प्रकृति की ऑखे जब नीर सिचन करती है तो पृथ्वी पर रह रहे लोग छाता/छतरी लगा लेते है सिर पर, परन्तु उस दिन किसी को भीगने या बचने की सुधि न थी, सभी अपने 'परमपूज्य' को विदाई देने–शोभायात्रा के साथ–जा रहे थे। धीरे–धीरे नगर पीछे रह गया, गुरुवर ने सभी श्रावको को लौट जाने के निर्देश दिये। बेचारे लौट पडे, पर जिन्हे साथ–साथ चलना था, वे उत्साह से चलते रहे।

श्रीसघ मे तीन मूर्तियॉ थी–परमपूज्य उपाध्यायश्री ज्ञानसागर जी महाराज, पूज्य मुनिरत्न वैराग्यसागर जी महाराज और वयोवृद्ध धर्मपुष्प क्षुल्लक वर्धमानसागर जी महाराज। साथ थी– व्यवस्था–समिति।

तीर्थयात्रा करने वाले श्रावक तो रेल से चलते हैं, अपने नगर से बैठे और दूसरे दिन ईशरी (पारसनाथ स्टेशन) पर उतर गये, पर यह पद–यात्रा थी। यहा सतो को प्रतिदिन सुबह कभी शाम, कभी दोनो वक्त,

30 से 45 कि0 मी0 चलना होता था। एक नगर मे विदाई–समारोह और दूसरे नगर मे अगवानी–महोत्सव देखने (झेलने) पडते थे।

प्रथम सात दिन का क्रम इस तरह था–मन्सूरपुर मोड, पुरवालियान, कल्याणदेव कालेज–मन्सूरपुर, खतौली–गगानहर, बहसूमा, हस्तिनापुर, गगानहर परियोजना स्थल, बिजनौर, नहटौर, धामपुर, स्योहारा, भीकमपुर।

सातवा दिन रविवार था, ता 10 02 91, अब पाठकगण यह तो समझ ही जावेगे कि चलते चलते आहार–चर्या की व्यवस्था करने मे शाहपुर के लोग ऐडी–चोटी से लगे ही थे, रास्ते के लोग भी चौका लगाते थे। जो लोग रात मे वैयावृत्ति करने आते वे सतो के पद–तल मे कढ आये छाले देखते और सी–सी कर बैठते। पर सतो ने छालो पर कब ध्यान दिया है, वे तो रोज उन्हे दलते हुए चलते थे। गुरुवर को कही–कहीं प्रवचन भी करना पडता था।

आनद प्रदायक बात हस्तिनापुर मे हुई थी–गुरुवर ने 6 फरवरी को वहाँ केशलौंचन किया था। वहीं सुप्रसिद्ध धर्मस्थल जम्बूद्वीप पर उपाध्यायश्री के दर्शनार्थ आर्यिकारत्न परमपूज्य ज्ञानमती माता जी पहुँची थी, उनके साथ क्षु मोतीसागर जी एव ब्र रवीन्द्रकुमार जी भी थे। ज्ञान मूर्तियो मे ज्ञान की चर्चा हुई, दोनो तरफ ज्ञान था, दोनो ज्ञानमय थे। वह 'ज्ञान' का ही उजास था जब एक दिन पूर्व, 5 फरवरी को, गुरुवर ने हस्तिनापुर की सीमा मे प्रवेश किया तो उनकी अगवानी के लिए–पू मुनि श्री आदिसागर जी, पू आर्यिका चदनामति जी और क्षु मोतीसागर जी के साथ जम्बूद्वीप के श्रेष्ठ कर्ताधर्ता ब्र रवीन्द्र कुमार जी, समस्त पदाधिकारीगण, अध्यापकगण, त्रिलोक शोध सस्थान के विद्यार्थीगण, क्षेत्र पर उपस्थित यात्रीगण सविनय जा पहुँचे।

शीघ्र ही पुन विहार हुआ गुरुवर ससघ बढ चले–भगवानपुर, मुरादाबाद, लाजपतनगर, बिलारी, धर्मपुरा, मगोली, टाडा वसीघर रामनगर–अहिछत्र, आवला, सरदारपुर, सौरऊर्जा केन्द्र–सरदारपुर, फरीदपुर, पचोमी, शाहजहाँपुर।

फिर सात दिन बीत गये, 17 फरवरी रविवार का दिन, गुरुवर पचोमी से शाहजहाँपुर की ओर थे। सयोग से वे शेष सघ से एक कि मी आगे थे और पू मुनि वैराग्यसागर जी और क्षु वर्धमानसागर जी एक कि मी पीछे। गुरुवर के साथ श्री कमलकुमार, श्री सदीपकुमार आदि श्रावक थे तो मुनिवर के साथ श्री अमितकुमार, श्री मनोजकुमार, श्री अजितकुमार आदि। कहे एक किलोमीटर के अतर से दो समूह चल रहे थे।

सडक, जिस पर वे चल रहे थे, वह एक 'बिजी–रोड' माना जाता है। हर पल वाहन आते–जाते रहते हैं, छोटे वाहन, बडे वाहन, खाली वाहन, भरे वाहन। अत श्रावकगण मुनियो के आजू–बाजू बने रहते थे, सुरक्षा की दृष्टि से।

यो तो पू मुनि वैराग्यसागर जी का समूह ठीक से चल रहा था, न सडक के बीच मे, न बिलकुल किनारे, पर जाने क्या हुआ कि आदत के अनुसागर एक ट्रक उस समूह के पास धीमा हुआ, ट्रक मे से एक व्यक्ति ने डडा हाथ मे लेकर समूह पर घुमा दिया। ट्रक तो एक सेकेन्ड मात्र मे गति तेज कर भाग गया पर डडे का उपसर्ग कहानी बन गया। जब ट्रक धीमा हुआ, उस समय मुनिवर रोड की तरफ थे, मगर पलान्श

मात्र मे अमितकुमार उनके वाजू मे पहुँच गये थे, फलत डडा मुनिवर को न लगा, अमितजी को लगा। लोग चकित–कैसे हैं ये ट्रक वाले? तब तक अन्य श्रावक बोले–अभी जीप पीछे लगाते हैं, उस पर कार्रवाई करेगे।

सुनकर मुनिवर मुस्कुराए–डडा मुझे लगता, या अमित को लगा, अब इसे भूल जाओ। एक छोटा सा उपसर्ग हुआ, उसे सहने की शक्ति ही भाग्योदय कहलाता है। जहॉ सहनशीलता नहीं होती, वहॉ भाग्योदय कैसे हो सकता है?

श्रावक चुप हो गये, फोन करने और जीप दौडाने की बात समाप्त। यात्रा यथावत। ❑

जो समूह आगे था, वह कटरा आदर्श बाल विद्यालय मे रुका हुआ था। मुनिवर का समूह कुछ ही देर मे वहॉ पहुँच गया। श्रावको ने उपसर्ग की चर्चा पू ज्ञानसागर जी से की। सुनकर वे सामान्य रहे, फिर बोले–सकट जिस गति से आया था, उसी गति से टल गया। अभी आगे, शेष रास्ते मे, पुन कुछ हो कि सभी चौकस रहे और क्षमा के भाव न त्यागे। दिगम्बर सन्त, किसी से बदले का भाव कदापि नही रखते।

सभी शात हो गये, अनावश्यक चर्चा समाप्त। वह 17 फरवरी 91 का रविवार, श्रावको को बोध का निमित्त बन गया। एक सतुलित–प्रवचन के बराबर बोध दे गई थी सतो की वाणी।

सोमवार, 18 फरवरी 91, पुन विहार यथावत रहा– आगे–आगे गुरुवर ज्ञानसागर जी, उनके पीछे मुनिवर वैराग्य सागर जी और उनके पीछे क्षुल्लकश्रेष्ठ वर्धमानसागर जी। पलको के मध्य ऑख की पुतली के तरह वे सतत्रय श्रावको के बीच चल रहे थे।

शाहजहापुर, (दुर्गामदिर) धम्मोपुर (हनुमानमदिर), फिर नेरी। नेरी मे 'श्री हरकचद निर्मलकुमार सेठी–जैन शिक्षा निकेतन' के कक्षो मे आहार–चर्या की व्यवस्था की गई थी।

अब नेरी से सीतापुर जाना था, मगर किसी कारण से, तीन सतो के साथ मात्र पाच युवक ही पैदल गये, इससे किसी सत का आत्मबल कम न हो सका, वे निहित कारण को जानते थे, श्रावको के पैर छालो के कारण चलने योग्य न रह गये थे। यात्राक्रम निरतर रखा–सीतापुर, बिसवॉ (विसमपुर), सरैया सादीपुर, महमूदाबाद, फतेहपुर, देवा, बाराबकी, प्रतापगज, फैजाबाद (कुआ), सुमेरगज–जैन मदिर, गनौली, बुरई खुर्द, रतनपुरी क्षेत्र, मुमताजनगर।

रविवार 24 फरवरी की रात मुमताजनगर मे कटी, सुबह पुन विहार–अयोध्याजी, मल्हारगज, नौवा, जफरगज, शागज, मुरारीबाजार, खानपुर ग्राम, जलालपुर, फूलपुर (थाना परिसर), शिवपुर (शिवमदिर)। हो गये पुन सात दिन। सोमवार दि 3 मार्च 91 को सुबह बनारस की ओर बढना था। करीब 5 कि मी ही चले, तब तक डा फूलचद प्रेमी, श्री बाबूलाल जी, डा सुरेश जैन आदि उन्हे लेने पहुँच गये। सबने मिलकर प्रस्थान किया, कुछ ही समय मे–बनारस। वहॉ मैदागिन जैन मदिर, भेलपुर–जैन मदिर, भदैनी जैन मदिर, नरिया जैन मदिर आदि के दर्शन। आहार चर्या। स्वाध्याय। फिर प्रसिद्ध 'पीपे का पुल' पार करते हुए गुरुवर मुगलसराय रामनगर, कठशिला, नौबतपुर (देवी मदिर), डिडखिली, कुदरा, (राम मदिर), मोर सराय, सासाराम डालमियानगर।

डालमिया नगर से 4 कि मी दूर ही, गुरुणागुरु आचार्यप्रवर शातिसागर जी महाराज (छाणी) के प्रथम पट्टचार्य शिष्य–आचार्य सूर्यसागर जी महाराज का समाधिस्थल है। गुरुदर ज्ञानसागर जी यात्रा का मुख्य मार्ग छोड, 4 कि मी अतिरिक्त चले और अपने दादागुरु के समाधिस्थल के दर्शन किये। फिर–औरगाबाद, शिवगज–(पेट्रोलपप), महापुरग्राम, गोपालपुर, बारहचट्टी, और मलवाग्राम।

अब यह समझने की बात है कि जिस नगर के साथ कोष्ठक मे–कुआँ या पेट्रोलपम्प आदि लिखा है, वहाँ गुरुवर ने आहारचर्या नगर मे नही, कुआँ या पेट्रोलपम्प पर की थी। अत उनका उल्लेख करना नहीं छोड सका, वे स्थल धन्य हो गये– 'आये थे कभी एक महा संत,' वहाँ के वातास से गूज आती रहेगी।

रविवार दि 10 मार्च 91 को गुरुवर मलवाग्राम मे थे। पर चौके की व्यवस्था एक स्कूल मे की गई थी, सो धन्य हो गया वह भी। पुन यात्रा–चौपारण, इसे चम्पारन भी कहते हैं। यहा से शिखरजी की उस टोक के दर्शन हो जाते हैं, जिसे चितामणि भगवान पार्श्वनाथ की टोक कहते हैं। श्रावको ने दर्शन किये, सतो ने किये।

(यह वही चम्पारन है जहाँ 10 जनवरी 1917 को, प्रथम बार महात्मा गाँधी जी पहुँचे थे, इतिहास गवाह है। यहाँ से गुरुवर का पुन विहार शुरु हुआ, यह एक विशेष सयोग है)

बरही, बरकट्टा, गोरहर, हसला, होते हुए गुरुवर 13 मार्च 91 बुधवार को पारसनाथ (ईसरी) पहुँच गये, सौभाग्य था–शाहपुर वालो का जो एक बडी बस से चलकर सघ की यात्रा– व्यवस्था कर रहे थे। बच्चो को जोड कर, बस मे 80 श्रावको का समूह था। पूर्व मत्रणा के अनुसार बस का समूह ईसरी के लोगो के साथ गुरुवर की आगवानीं के लिए 'डूमरी–मोड' तक गया, वहाँ गुरुवर के पहुँचते ही लोगो ने आकाशक्षेत्र जयघोषो से भर दिया। गुरु–पदार्चन–प्रक्षालन के पश्चात आरती और नृत्य तथा उसके बाद एक सुन्दर शोभा यात्रा। श्रावकगण अपने प्रिय और पूज्य सत को गाजे–बाजे के साथ लेकर ईसरी पहुँचे।

पहुँचे, मगर विश्राम का समय कहाँ? सभी मदिरो के दर्शन। आहार चर्या–श्री गणेशप्रसाद जी वर्णी–आश्रम मे। फिर सामायिक। दोपहर के साढे तीन बजे थे कि गुरुवर पैदल (पगडडी) के रास्ते से मधुवन (शिखरजी) को विहार कर गये। चौदह कि मी चले, जगलो–पहाडो को पीछे छोड़ा, तेज बरसते बादलो के प्रहार शीश पर सहे और तीर्थंकर पार्श्वनाथ की मोक्षस्थली की पादपीठ पर अवस्थित मधुवन नगरी की सीमा पर पहुँच गये। वहाँ सहस्रो श्रावक गुरुवर की अगवानी के लिए घटे भर से खडे थे। स्वागत और पदार्चना का भव्य दृश्य यहाँ भी साकार हो गया।

शोभायात्रा के साथ गुरुवर को तेरहपथी कोठी स्थित बडे मदिर जी मे ले गये।

सघ ने, श्रावको ने भारी भक्ति के साथ भगवान के दर्शन किये फिर सामायिक। जगतवन्द्य गुरुवर त्रिलोकवन्द्य नाथ की छत्रछाया मे ठहर गये। ❑

सडक–यात्रा पूर्ण हो गई थी, अब शिखरजी वदना सामने थी। सैकडो मील लम्बी यात्रा के कारण सतो के पगतल लहूलुहान हो चुके थे। छालो मे से मास झाकता था, रक्त बहता था, पर वे बेसुध बढते चले गये थे भगवान पार्श्वनाथ की तपस्थली की ओर।

श्रावको ने उपचार की भरसक कोशिश की थी, पर विश्राम के अभाव से आराम शीघ्र न मिल सका। तलवे छिलते रहे, श्रावको के दिल हिलते रहे, गुरुवर चलते रहे। धन्य है दिगम्बर–सत की सहनशीलता। धन्य है जैनेश्वरी दिगम्बर–दीक्षोपरान्त किया जाने वाला तप। ❑

शाहपुर के श्रावक पॉच दिनों तक छाया की तरह गुरुवर के साथ रहे–सम्मेदशिखर की वन्दनाये की और 18 मार्च 91 को गुरुवर से आशीष ले लौट गये। 'शिखर–पुरुष' शिखर पर रह गये, श्रावकगण अपने कर्त्तव्यपथ पर वापिस। ❑

शाहपुर से शिखरजी पहुँचने तक, याने 3 फरवरी 91 से 13 मार्च 91 तक, रास्ते मे कुछ ऐसी घटनाएँ घटी थी जिनका उल्लेख यहाँ इस कथा का महत्व बढ़ाता है।

12 फरवरी 91 की बात है। उपाध्यायश्री बिलारी से बढकर रामनगर (अहिच्छत्र) की ओर बढ रहे थे। धर्मपुरा मे सामायिक की और पुन चल पडे थे। धूप कुछ अधिक ही प्रभाव बतला रही थी, दोपहर के एक–डेढ बज रहे थे। श्रावक थकावट महसूस कर रहे थे, उन्हे लगा कि गुरुवर भी थके होगे। अत अपने और उनके निमित्त को मन मे रखकर, विनय की–महाराज, कुछ पल कही रुक ले, फिर चले।

– कहाँ? गुरुवर ने पूछा।

– यही, आगे देखते है। श्रावक ने उत्तर दिया।

भाग्य से कुछ ही दूरी पर एक छोटा सा भवन दिखा, वह था–विकलाग–स्कूल–मगोली।

श्रावको ने पहल की, अध्यापक ने मुख्य कक्ष (हाल) मे जगह बना दी। गुरुवर और श्रावक वही यथोचित स्थानो पर बैठ गये। तब तक स्कूल के शिक्षको, कर्मचारियो और विकलाग–छात्रो ने गुरुवर को घेर लिया, सब बारी–बारी से चरणो मे नमन कर प्रसन्नता अनुभूत कर रहे थे।

एक अध्यापक ने एक जिम्मेदार श्रावक से अनुरोध किया कि गुरुवर के प्रवचनो का लाभ हमे और हमारे छात्रो को प्रदान कराये। गुरुवर थके हुए थे, अत श्रावक सकोच करते हुए गुरुवर के समीप गया, अध्यापक का निवेदन सुनाया।

विकलाग–छात्रो का भाव देखते हुए, गुरुवर ने समय निकाला और प्रवचन किये। उनकी मिष्ठ–वाणी से कक्ष मे उपस्थित हर श्रोता के कर्ण–प्रदेश मे मिश्री घुल गई। सभी प्रभावित हुए। प्रवचनोपरान्त सभी ने गुरुवर का जयघोष किया, बार–बार किया।

कुछ मिनटो के बाद जब गुरुवर ने प्रस्थान किया तो सम्पूर्ण–शाला–परिवार उन्हे भावभीनी विदाई दे रहा था। छात्र वैशाखी लिये गुरुवर के पीछे चल रहे थे।

(गुरुवर के सकेत पर सघपति श्री जयतीप्रसाद जैन एक छोटी सी सहयोग–राशि, उस शाला को देना नही भूले थे।) ❑

गुरुवर पू उपाध्याय श्री ज्ञानसागर जी ने 18 फरवरी को, शहजहाँपुर के पास एक 'दुर्गा–मदिर' मे सामायिक की थी तो उसी रात धग्मोपुर के पास 'हनुमान मदिर' मे रात्रि विश्राम किया था। क्या यह घटना 'सर्वधर्म–समभाव' समझाने मे समर्थ नही है?

थकावट और पग–तल–कष्टो के कारण अनेक श्रावक पैदल चलने की स्थिति मे नही थे, सभी के तलवो मे रक्त –रजित–छाले हो आये थे। फलत 19 फरवरी को जब श्रीसघ ग्राम नेरी से सीतापुर की ओर विहार कर रहा था तब साथ मे मात्र पाच श्रावक थे। पाच सौ और पाच हजार की शोभायात्राओ के साथ चलने वाला वह एक महान सत–पाच श्रावको के साथ भी उतना ही खुश प्रतीत दीखता था, क्या इसे सत का निस्पृह–भाव नही कहेगे? ❑

'भक्तो की प्यास मिटाने वाल' सत भी है पू उपाध्याय श्री। हुआ यह कि 20 फरवरी को बिसवा ग्राम मे रुके थे, वही श्रीजी के दर्शन, वही आहारचर्या और वही रात्रि विश्राम। दूसरे दिन प्रात आगे बढ गये। सोलह कि मी चलने पर सरैया–सादीपुर ग्राम आया, वहाँ आहार और फिर सामायिक।

गुरुवर तो सामायिक मे लीन थे। मगर एक दिन पूर्व जिस बिसवा ग्राम मे रुके थे, वहाँ के श्रावक पुन दर्शन करने और प्रवचन सुनने के लिए बेताब थे। अत बेचारे भक्तिभाव से एक बडी बस मे सवार

हो गुरुवर की ओर चल पडे थे। उन्होने सरैया मे अपने प्यारे गुरुवर को पा लिया। बस से युवक, वृद्ध, महिलाएँ, एव बाल–बच्चे फुर्ती से नीचे उतरे, करीब 80 जन थे। सबने गुरुवर को घेर लिया। नमोस्तु कर समीप ही बैठ गये। बिसवा के लोगो के साथ सरैया के भक्त भी जम गये। सबकी ओर से एक श्रावक ने विनय की–हे गुरुवर! हमे वचनामृत का लाभ प्रदान कर उपकृत कीजिए।

भोलेपन के लिए देशभर मे विख्यात स्थितिप्रज्ञ सत पू उपाध्याय श्री ज्ञानसागर जी ने थकावट का आवरण देह तत्व से फेंक दिया और मुस्कराते हुए, बिना माईक, बिना सचालनकर्ता के, प्रवचन देने लगे।

प्रवचनो का अमृत श्रोताओ को ओर–कोर भिगो गया। पूर्ण हो जाने पर हर श्रोता तृप्त। प्रसन्न। जैसे प्यासे को शीतल जल मिल गया हो।

भारी जयघोषो के साथ गुरुवर को सबने विदा दी। वे बढ गये गन्तव्य की ओर। ❑

2 मार्च का प्रसग है। पू उपाध्यायश्री ससघ सुबह साढे छ बजे जी टी रोड पर चल रहे थे। कही अयोध्या और बनारस के बीच, थे एक स्थान पर। रोड के समीप जो गॉव था, उसका नाम फूलपुर था। कहने को गॉव, पर था पूर्ण शहर। श्रावको ने तलाशा तो मदिर, धर्मशाला, शालाभवन आदि खाली न मिले। अत श्रावकगण खोजते हुए एक पुलिस थाने मे जा पहुँचे। पहुँच तो गये, पर स्वभाव के अनुसार, थाने का भवन और थानेदार आदि को देख कर कुछ झिझके, तब तक थानेदार ने स्वत प्रश्न कर दिया– कहिए? श्रावक ने उत्तर दिया– 'हम लोग तीर्थयात्रा पर निकले है, हमारे साथ दिगम्बर –जैन–सत हैं, विश्राम के लिए स्थान चाहिए।'

थानेदार योग्य था, धर्म और सत का महत्व समझता था। अत बोला–अवश्य ही स्थान मिल जायेगा।

वह उठा, श्रावको के साथ उपाध्यायश्री के समक्ष पहुँचा। जानकारी–अनुसार–अभिवादन किया। फिर बोला–स्वामी जी, आप लोग तो मेरे क्वार्टर (निवास) पर ही चलिए, वहॉ शात–कक्ष है।

उसकी बात सुनकर श्रावकगण मन ही मन झूम उठे। वे थाना–प्रागण मे स्थान मिल जाने का भाव बनाये थे, मगर उन्हे तो पूरा मकान ही मिल गया।

शीघ्रता से थानेदार और उसके सहकर्मियो ने मकान के दो कक्ष खाली कर दिये। फिर गुरुवर से अदर आने का अनुरोध किया।

श्रीसघ ने मकान मे प्रवेश किया। उस समय सुबह के दस बज चुके थे। श्रावको ने साफ शुद्ध मकान और समीप ही कुऑ देख कर, आहारचर्या का मन बना लिया। कुछ ही समय मे आहार तैयार। श्रावको ने सतो की पडगाहना कर नवधा भक्ति–पूर्वक आहार देने का शुभ भाव बनाया।

उधर थानेदार साहब पू उपाध्यायश्री से बाते करने उनके समीप बैठ गये। गुरुवर ने बातो ही बातो मे उसे इतना प्रभावित कर लिया कि उसने जीवनपर्यन्त मदिरा न पीने का सकल्प कर लिया। उसके सकल्प से गुरु तो गुरु श्रावको मे भी प्रसन्नता दौड गई।

समय पर आहार–चर्या हो गई। फिर सामायिक। अगला ठिकाना 26 कि मी दूर था। अत शाम को यात्रा करना उचित न माना, उसी मकान मे सभी ने रात्रि–विश्राम किया।

सुबह सुनिश्चित समय पर–सवा छ बजे–श्रीसघ ने विहार कर दिया। आगे–आगे सतगण, पीछे–पीछे श्रावकगण। थाने के कर्मी विदाई देने कुछ दूर तक साथ चले। बाद मे उपाध्यायश्री ने वात्सल्यभाव से उन्हे लौटा दिया।

यात्रा–सघ सारे दिन चलता रहा, शाम के सवा छ बज गये। बनारस अभी भी पॉच कि मी दूर था, अत सघ सडक के समीप निर्मित एक शिव मदिर मे रुक गया, वह शिवपुर का मदिर कहलाता है।

कहे–फूलपुर मे शिवभक्त थानेदार के अतिथि बने थे, और यहा–शिवपुर मे–शिवमदिर के अतिथि। गुरुवर का यह 'सस्कृति–प्रेम' नवइतिहास लिख रहा था। ❑

एक और प्रसग–कि जिन्हे सस्कृति से प्रेम है, उन्हे सस्कृत से क्यो ने होगा? बनारस के बाद की बात है, उपाध्यायश्री की आहार–चर्या की व्यवस्था सघ मे चल रहे श्रावको ने 'यमुना–सस्कृत–महाविद्यालय' के कक्ष मे की थी। आहारो के पश्चात उपाध्यायश्री ने महाविद्यालय के विद्वान अध्यापको से काफी समय तक सस्कृत पर चर्चा की थी, बडी बात तो यह थी कि चर्चा का कुछ अश सस्कृत मे बोला गया था।

अध्यापकगण उपाध्यायश्री के सस्कृत–प्रेम से काफी प्रभावित हुए थे और गुरुवर से प्राप्त मार्गदर्शन पर गद्गद् थे। ❑

महाविद्यालय से चल कर आगे विहार करने वाले सतगण जब डिडखिली मे पहुँचे, तो देखा श्रावको ने चौका–व्यवस्था एक सामान्य, प्राथमिकशाला–भवन मे की है। उपाध्यायश्री मुस्कराए, फिर बोले– 'आप लोगो ने तो महाविद्यालय से प्राईमरी मे पहुँचा दिया, भक्तगण गुरुवर के विनोद पर हँस दिये। ❑

सघ मलवा ग्राम से दोपहर तीन बजे विहार कर चम्पारन की ओर बढ रहा था। वह 10 मार्च रविवार का दिन था। धूप तेज थी, हवाये गरम थी। श्रावक 8–10 किलोमीटर चल पाये होगे कि पसीने से तरबतर हो गये। भारी गर्मी का अनुभव कर रहे थे। तब तक एक भक्त ने, उपाध्यायश्री को सुनाते हुए, दूसरे भक्त से विनोद मे कहा– 'भैया, महाराज जी यदि अपनी पिच्छिका आकाश की तरफ कर, हिला दे तो अभी धूप–गर्मी–लू शात हो जावे।'

उपाध्यायश्री सुन रहे थे। अत गम्भीरता से बोले–'ऐसी बाते नही करते, दिगम्बर साधु पिच्छि से चेष्टा नही करते। वे प्रकृति के कार्य मे दखल क्यो दे? साधु अपना कार्य करे, प्रकृति अपना।'

उत्तर सुनकर श्रावक शात हो गये, पर यह क्या देखते ही देखते, कुछ ही मिनटो मे बादल छा गये। धूप शात लपट शात। गर्मी शात। ठडी बयार शरीरो को छूने लगी। तब लोग शात न रह सके, सभी ने गगनभेदी स्वरो मे काफी समय तक उपाध्यायश्री का जयघोष किया। सब प्रसन्न थे। सब चकित थे। कृपा–उपाध्यायश्री की। ❑

मार्च माह का वह दिन धन्य हो गया जब सघ ने मधुवन मे प्रवेश किया। सयोग ऐसा बना कि उसी दिन उत्तर–प्रदेश से बीस बसे वहॉ जा पहुँची। सभी मे श्रावक सपरिवार थे, वे आये थे अपने प्यारे सत की अगवानी करने और भगवान चितामणि–पार्श्वनाथ की टोक की वदना करने, हॉ, तीर्थराज सम्मेदशिखर जी की वदना करने।

बाहरी–भक्त और स्थानीय–भक्त गगा जमुना की तरह मिल गये। सभी ने चौके लगाये। धर्म–लाभ लिया। उपाध्यायश्री की उपस्थिति से उत्तम प्रभावना हुई।

आगत–भक्त लौट गये, बचे स्थानीय। वे सेवा, भक्ति, आदि मे समय तो खूब देते थे, पर उनके चेहरे पर उत्साह कम ही दिखता था। कारण जानना चाहा, तो ज्ञात हुआ कि कुछ दिवस पूर्व गिरिडीह के मदिर से मूर्तियाँ चोरी चली गई हैं। अत कतिपय प्रभावशाली–जन साधुओ पर नाराज है तो कतिपय श्रावको पर।

'कारण' का 'निवारण' पूज्यश्री की पीयूष–वाणी से अपने आप हो गया। धर्म की ज्योति ऐसी प्रज्ज्वलित हुई कि शात हुए चेहरो पर उत्साह की लहर दौड पडी। कहे जिन मे धार्मिक–चेतना लुप्तप्राय: थी, उपाध्यायश्री के कारण वे पूर्ण चैतन्य–श्रावक की पक्ति प्राप्त कर सके।

बीस तीर्थंकरो के मोक्ष कल्याणक की निमित्त–भूमि– 'तीर्थराज सम्मेद शिखरजी' की पावनताएँ उपाध्यायश्री को इतनी अच्छी लगीं कि वे एक या दो नही, ढाई माह वहाँ रुके। अनेक वन्दनाएँ की। अनेक अनुभव पाये। अनेक लोगो को प्रशस्त–पथ बतलाया।

शिखरजी मे पूज्यश्री ने समय का ही नहीं, समयसार का भी श्रृगार किया जब उन्होने अनेक आयोजनो को अपना कृपापूर्ण सानिध्य दिया। उनकी उपस्थिति के कारण हर आयोजन 'विशाल' हो जाते थे। पहले महावीर–जयती, फिर अक्षय–तृतीया और फिर श्रुतपचमी के आयोजन समय की किताब पर आज भी प्रकाश फैला रहे हैं। शिखरजी मे सम्पन्न की गई विद्वत–गोष्ठी का भी अपना महत्व रहा, जो देश भर के पत्र–पत्रिकाओ मे चर्चित हुई थी। ❑

शिखरजी माने मधुवन। मधुवन बस्ती के समीपस्थ दो अन्य बस्तियाँ हैं–ईसरी और गिरीडीह। यो तो अनेक हैं किन्तु ये अन्यो से अपेक्षाकृत पास हैं। कहे–उक्त तीन बस्तियो के श्रावको और समितियो को आशा बँधने लगी कि उपाध्यायश्री उनकी बस्ती मे वर्षायोग करेगे! यो बीसो नगरो से प्रतिनिधि मडल आकर श्रीफल चरणो मे चढा चुके थे और उपाध्यायश्री से प्रार्थना कर चुके थे, किन्तु उक्त तीन बस्तियो को, अपनी भौगोलिक–स्थिति की सुविधा पर अधिक विश्वास था। अत वे कुछ अधिक ही आशा कर रही थी। श्रावकगण प्राय रोज–रोज स्वीकृति माग रहे थे, किन्तु हुआ कुछ और। उपाध्यायश्री एक दिन शिखरजी से विहार कर गये। मई का अतिम सप्ताह था वह। मधुवन के श्रावक साथ चलते रहे।

सौभाग्य–कमल खिला–'गया' नगर का। वहाँ के श्रावको को अपनी प्रार्थनाओ पर गौरव हो आया।

श्रीसघ, 'गया' सीधा नही चला गया, वह पहले अन्य–अन्य क्षेत्रो के दर्शनार्थ गया। यथा– मधुवन से गिरीडीह, कोडरमा, नवादा फिर गुनावा और उसके पश्चात अतिशय क्षेत्र राजगृही।

भगवान महावीर के समोशरण की याद दिलाने वाली नगरी राजगृही मे महावीर के भक्त उपाध्यायश्री ने ससघ वदना की। झारखण्डान्चल के अनेको नगरो और ग्रामो के श्रीमदिरो के दर्शन उपाध्यायश्री ने किये, मदिरो और श्रावको की स्थिति समझी और तदानुकूल वाछित प्रवचन प्रदान किये।

वर्षायोग की तिथियाँ अधिक दूर न थी। उपाध्यायश्री गया मे थे। सम्पूर्ण समाज चातुर्मास स्थापना की स्वीकृति सुनना चाह रहा था। रोज गणमान्य नागरिक श्रावको के समूह के साथ श्रीफल चढा रहे थे और प्रार्थना कर रहे थे। उपाध्यायश्री मुस्कराते हुए आशीर्वाद दे रहे थे परन्तु स्पष्ट स्वीकृति नही।

गया से करीब 65 कि मी दूरी पर कोल्हुआ पहाड है। वहाँ की जैनमूर्तियाँ प्रसिद्ध हैं। पू. उपाध्यायश्री को जानकारी थी, अत रुक न सके, वहाँ चले गये। कुछ दिन रुके भी, क्षेत्र के विकास पर सम्बधित समिति को समुचित मार्गदर्शन दिया और उसकी समस्याये सुनी। मधुवन के श्रावकगणो ने वहाँ उपाध्यायश्री से शिखरजी मे वर्षायोग स्थापना की प्रार्थना की, श्रीफल चढाये। उपाध्यायश्री ने आशीष दिया, स्वीकृति नही।

कोल्हुआ पहाड की मौन वेदना जैसे सत ने समझ ली हो। वेदना की दवा जैसे गया नगर के समीप हो। जो हो, उपाध्यायश्री ने जब वहाँ से विहार किया तो सीधे गया आ गये। समाज मे उत्साह की लहर छा गई। प्रार्थनाओ की झडी लग गई।

यात्रा–सघ सारे दिन चलता रहा, शाम के सवा छ बज गये। बनारस अभी भी पॉच कि मी दूर था, अत सघ सडक के समीप निर्मित एक शिव मदिर मे रुक गया, वह शिवपुर का मदिर कहलाता है।

कहे–फूलपुर मे शिवभक्त थानेदार के अतिथि बने थे, और यहा–शिवपुर मे–शिवमदिर के अतिथि। गुरुवर का यह 'सस्कृति–प्रेम' नवइतिहास लिख रहा था। ❑

एक और प्रसग–कि जिन्हे सस्कृति से प्रेम है, उन्हे सस्कृत से क्यो ने होगा? बनारस के बाद की बात है, उपाध्यायश्री की आहार–चर्या की व्यवस्था सघ मे चल रहे श्रावको ने 'यमुना–सस्कृत–महाविद्यालय' के कक्ष मे की थी। आहारो के पश्चात उपाध्यायश्री ने महाविद्यालय के विद्वान अध्यापको से काफी समय तक सस्कृत पर चर्चा की थी, बडी बात तो यह थी कि चर्चा का कुछ अश सस्कृत मे बोला गया था।

अध्यापकगण उपाध्यायश्री के सस्कृत–प्रेम से काफी प्रभावित हुए थे और गुरुवर से प्राप्त मार्गदर्शन पर गद्‌गद् थे। ❑

महाविद्यालय से चल कर आगे विहार करने वाले सतगण जब डिडखिली मे पहुँचे, तो देखा श्रावको ने चौका–व्यवस्था एक सामान्य, प्राथमिकशाला–भवन मे की है। उपाध्यायश्री मुस्कराए, फिर बोले– 'आप लोगो ने तो महाविद्यालय से प्राईमरी मे पहुँचा दिया, भक्तगण गुरुवर के विनोद पर हँस दिये। ❑

सघ मलवा ग्राम से दोपहर तीन बजे विहार कर चम्पारन की ओर बढ रहा था। वह 10 मार्च रविवार का दिन था। धूप तेज थी, हवाये गरम थी। श्रावक 8–10 किलोमीटर चल पाये होगे कि पसीने से तरबतर हो गये। भारी गर्मी का अनुभव कर रहे थे। तब तक एक भक्त ने, उपाध्यायश्री को सुनाते हुए, दूसरे भक्त से विनोद मे कहा– 'भैया, महाराज जी यदि अपनी पिच्छिका आकाश की तरफ कर, हिला दे तो अभी धूप–गर्मी–लू शात हो जावे।'

उपाध्यायश्री सुन रहे थे। अत गम्भीरता से बोले–'ऐसी बाते नही करते, दिगम्बर साधु पिच्छि से चेष्टा नही करते। वे प्रकृति के कार्य मे दखल क्यो दे? साधु अपना कार्य करे, प्रकृति अपना।'

उत्तर सुनकर श्रावक शात हो गये, पर यह क्या देखते ही देखते, कुछ ही मिनटो मे बादल छा गये। धूप शात, लपट शात। गर्मी शात। ठडी बयार शरीरो को छूने लगी। तब लोग शात न रह सके, सभी ने गगनभेदी स्वरो मे काफी समय तक उपाध्यायश्री का जयघोष किया। सब प्रसन्न थे। सब चकित थे। कृपा–उपाध्यायश्री की। ❑

मार्च माह का वह दिन धन्य हो गया जब सघ ने मधुवन मे प्रवेश किया। सयोग ऐसा बना कि उसी दिन उत्तर–प्रदेश से बीस बसे वहाँ जा पहुँची। सभी मे श्रावक सपरिवार थे, वे आये थे अपने प्यारे सत की अगवानी करने और भगवान चितामणि–पार्श्वनाथ की टोक की वदना करने, हाँ, तीर्थराज सम्मेदशिखर जी की वदना करने।

बाहरी–भक्त और स्थानीय–भक्त गगा जमुना की तरह मिल गये। सभी ने चौके लगाये। धर्म–लाभ लिया। उपाध्यायश्री की उपस्थिति से उत्तम प्रभावना हुई।

आगत–भक्त लौट गये, बचे स्थानीय। वे सेवा, भक्ति, आदि मे समय तो खूब देते थे, पर उनके चेहरे पर उत्साह कम ही दिखता था। कारण जानना चाहा, तो ज्ञात हुआ कि कुछ दिवस पूर्व गिरिडीह के मदिर से मूर्तियाँ चोरी चली गई हैं। अत कतिपय प्रभावशाली–जन साधुओ पर नाराज हैं तो कतिपय श्रावको पर।

'कारण' का 'निवारण' पूज्यश्री की पीयूष–वाणी से अपने आप हो गया। धर्म की ज्योति ऐसी प्रज्ज्वलित हुई कि शात हुए चेहरों पर उत्साह की लहर दौड पडी। कहें जिन मे धार्मिक–चेतना लुप्तप्राय थी, उपाध्यायश्री के कारण वे पूर्ण चैतन्य–श्रावक की पक्ति प्राप्त कर सके।

बीस तीर्थंकरो के मोक्ष कल्याणक की निमित्त–भूमि– 'तीर्थराज सम्मेद शिखरजी' की पावनताएँ उपाध्यायश्री को इतनी अच्छी लगीं कि वे एक या दो नही, ढाई माह वहाँ रुके। अनेक वन्दनाएँ की। अनेक अनुभव पाये। अनेक लोगो को प्रशस्त–पथ बतलाया।

शिखरजी मे पूज्यश्री ने समय का ही नहीं, समयसार का भी श्रृगार किया जब उन्होने अनेक आयोजनो को अपना कृपापूर्ण सानिध्य दिया। उनकी उपस्थिति के कारण हर आयोजन 'विशाल' हो जाते थे। पहले महावीर–जयती, फिर अक्षय–तृतीया और फिर श्रुतपचमी के आयोजन समय की किताब पर आज भी प्रकाश फैला रहे हैं। शिखरजी मे सम्पन्न की गई विद्वत–गोष्ठी का भी अपना महत्व रहा, जो देश भर के पत्र–पत्रिकाओ मे चर्चित हुई थी। ❑

शिखरजी माने मधुवन। मधुवन बस्ती के समीपस्थ दो अन्य बस्तियाँ हैं–ईसरी और गिरीडीह। यो तो अनेक हैं किन्तु ये अन्यो से अपेक्षाकृत पास हैं। कहे–उक्त तीन बस्तियो के श्रावको और समितियो को आशा बँधने लगी कि उपाध्यायश्री उनकी बस्ती मे वर्षायोग करेगे। यो बीसो नगरो से प्रतिनिधि मडल आकर श्रीफल चरणो मे चढा चुके थे और उपाध्यायश्री से प्रार्थना कर चुके थे, किन्तु उक्त तीन बस्तियो को, अपनी भौगोलिक–स्थिति की सुविधा पर अधिक विश्वास था। अत वे कुछ अधिक ही आशा कर रही थीं। श्रावकगण प्राय रोज–रोज स्वीकृति माग रहे थे, किन्तु हुआ कुछ और। उपाध्यायश्री एक दिन शिखरजी से विहार कर गये। मई का अतिम सप्ताह था वह। मधुवन के श्रावक साथ चलते रहे।

सौभाग्य–कमल खिला–'गया' नगर का। वहाँ के श्रावको को अपनी प्रार्थनाओ पर गौरव हो आया।

श्रीसघ, 'गया' सीधा नही चला गया, वह पहले अन्य–अन्य क्षेत्रो के दर्शनार्थ गया। यथा– मधुवन से गिरीडीह, कोडरमा, नवादा फिर गुनावा और उसके पश्चात अतिशय क्षेत्र राजगृही।

भगवान महावीर के समोशरण की याद दिलाने वाली नगरी राजगृही मे महावीर के भक्त उपाध्यायश्री ने ससघ वदना की। झारखण्डान्चल के अनेको नगरो और ग्रामो के श्रीमदिरो के दर्शन उपाध्यायश्री ने किये, मदिरो और श्रावको की स्थिति समझी और तदानुकूल वाछित प्रवचन प्रदान किये।

वर्षायोग की तिथियाँ अधिक दूर न थीं। उपाध्यायश्री गया मे थे। सम्पूर्ण समाज चातुर्मास स्थापना की स्वीकृति सुनना चाह रहा था। रोज गणमान्य नागरिक श्रावको के समूह के साथ श्रीफल चढा रहे थे और प्रार्थना कर रहे थे। उपाध्यायश्री मुस्कराते हुए आशीर्वाद दे रहे थे परन्तु स्पष्ट स्वीकृति नही।

गया से करीब 65 कि मी दूरी पर कोल्हुआ पहाड है। वहाँ की जैनमूर्तियाँ प्रसिद्ध हैं। पू उपाध्यायश्री को जानकारी थी, अत रुक न सके, वहाँ चले गये। कुछ दिन रुके भी, क्षेत्र के विकास पर सम्बंधित समिति को समुचित मार्गदर्शन दिया और उसकी समस्याये सुनीं। मधुवन के श्रावकगणो ने वहाँ उपाध्यायश्री से शिखरजी मे वर्षायोग स्थापना की प्रार्थना की, श्रीफल चढाये। उपाध्यायश्री ने आशीष दिया, स्वीकृति नही।

कोल्हुआ पहाड की मौन वेदना जैसे सत ने समझ ली हो। वेदना की दवा जैसे गया नगर के समीप हो। जो हो, उपाध्यायश्री ने जब वहाँ से विहार किया तो सीधे गया आ गये। समाज मे उत्साह की लहर छा गई। प्रार्थनाओ की झडी लग गई।

निश्चित तिथि पर गुरुवर ने गया नगर मे चातुर्मास की स्थापना कर दी। स्थापना–दिवस–समारोह मे **सम्पूर्ण** नगर उमड कर मदिर जी परिसर मे एकत्र हो गया था। दिव्य ध्वनियाँ गूँज उठी। **डेढ माह से** साथ चल रहे मधुवनवासी दुखी हो गये।

बौद्धो का महान तीर्थ माना जाने वाला नगर गया, उस साल वर्षायोग की प्रभावना के कारण जैनो का महान तीर्थ बन गया था। हर सड़क, चौराहे पर उपाध्यायश्री के वर्षायोग स्थापना की दुदुभी बजाते हुए कपडपट्ट (बेनर) और झडे सारे नगर को जैनत्व का सदेश वितरित कर रहे थे। देश–विदेश के बौद्ध–यात्री जब नगर मे प्रवेश करते तो उन्हे आश्चर्य हो उठता कि यह पहले जैसा 'गया' नही है। यह तो जैन धर्म और जैन सत वाला गया है। ❑

उपाध्यायश्री के प्रवचन नगर की डगर–डगर मे चर्चा पा रहे थे। वृद्ध और प्रौढ श्रावक तो धर्म–कर्म मे लगे ही थे, युवको की टोलियो का उत्साह देखते ही बनता था।

वर्षायोग की सम्पूर्ण अवधि कार्यक्रमो से अट गई थी। हर सप्ताह कोई न कोई बडा कार्यक्रम आकार पा रहा था।

तब तक दशलक्षण पर्व आ गया। गुरुवर की व्यस्तता बढती चली गई। दस के बजाये, 12 दिन तक प्रवचन किये और धर्म की श्रेष्ठ प्रभावना के हेतु बने। विश्व–मैत्री दिवस के आयोजन से भारी प्रभावना हुई।

कार्यक्रम की गति से धर्मप्रभावना बढती गई। धीरे–धीरे वर्षायोग–निष्ठापना की दिनाक सामने आ गई। नवम्बर माह लग गया था। पूर्व तैयारियो के अनुसार 9 नवम्बर से 14 नवम्बर 91 तक 'द्रव्यसग्रह'पर जैन–सिद्धान्त–वाचना का अभूतपूर्व आयोजन हुआ। ख्याति–लब्ध विद्वान डा दरबारी लाल कोठिया कुलपति मनोनीत किये गये और डा फूलचद प्रेमी तथा डा श्रेयाशकुमार वाचनाकार। **प्राच्य श्रमण भारती सस्था का गठन यहाँ ही किया गया था।**

10 नवम्बर 91 को समाधिस्थ बालयोगी, आचार्यप्रवर शातिसागर जी महाराज (छाणी) के व्यक्तित्व, कृतित्व तथा कर्तृत्व पर विद्वत–सगोष्ठी की आयोजना रखी गई जिसमे देश भर से आमन्त्रित आधा–सैकडा विद्वानो ने विचार रखे। (सगोष्ठियो मे प्रतिष्ठाचार्य पू विमल कुमार सौरया, पू शिवचरण लाल, डा नलिन शास्त्री, नीरज जैन, डा जयकुमार जैन, डा शेखरचद, डा श्रेयाशकुमार, डा सुपार्श्वकुमार, पू राजकुमार, प उत्तमचद, प धर्मचद, डा कपूरचद खतौली, प बाबूलाल अनुज, डा कस्तूरचद डा रमेशचद आदि उल्लेखनीय नाम है) गोष्ठी की अध्यक्षता धर्मसेवी श्रावकरत्न श्री हरकचद जी पाण्डया ने की थी।

अब जब इतने सारे नाम बतलाये हैं तो विशिष्ट अतिथियो के नाम क्यो छोड़ूँ। पाठको तक वे आने ही चाहिएँ–मगध मण्डल के आयुक्त (कमिश्नर) श्री उमेश नारायण पजियार और समाजसेवी–श्री निर्मल कुमार सेठी, श्री सुमेरचद पाटनी, श्री पूनमचद गगवाल, श्री मानमल झाझरी, श्री महावीर प्रसाद सेठी आदि महानुभाव।

बीस शोध निबन्ध और पाँच व्याख्यानो की उपलब्धि हुई। उसी क्रम मे एक 'स्मारिका' भी प्रकाश मे आई जो पू आचार्य शातिसागर जी महाराज (छाणी) विषयक निबधादि समेटे थी अपने कलेवर मे। उसका विमोचन पू उपाध्यायश्री ज्ञानसागर जी महाराज के पावन कर–कमलो से कराया गया था।

आगामी दिवस कहे 11 नवम्बर 91 को पू उपाध्यायश्री ने गुरुणागुरु आचार्यश्री के कर्तृत्व पर महत्वपूर्ण जानकारियाँ प्रदान करते हुए प्रवचन किया।

उपाध्यायश्री की प्रेरणा से, गया निवासी, श्री वीरेन्द्रकुमार ने जैन–साहित्य बुलवा कर, सर्वसाधारण को आधी कीमत पर उपलब्ध कराया। श्रावको ने उनके प्रयास और सहयोग की मुक्तकठ से सराहना की।

उसी दिन, उसी स्थल पर भारतवर्षीय दि जै महासभा की प्रान्तीय–शाखा–विहार का वार्षिक अधिवेशन सम्पन्न हुआ। उपाध्यायश्री का मगलमय सानिध्य और आशीष मिला। श्री निर्मलकुमार सेठी, श्री पूनमचद गगवाल सहित अनेक पदाधिकारी उपस्थित हुए थे। उसी दिन कुलुहा पहाड़ क्षेत्र के सवर्द्धन के लिए–उपाध्यायश्री की दृष्टि के अनुसार–कार्ययोजना हाथ मे ली गई। सहयोग–राशियॉ घोषित की गई।

उसी दिन जैन युवको का बिहार–प्रान्तीय–युवा–सम्मेलन हुआ। दो सौ से अधिक प्रतिनिधियो ने पू उपाध्यायश्री से मार्गदर्शन प्राप्त किया। अत मे समस्त समाजसेवियो और विद्वानो के अनुरोध पर पूज्यश्री के मागलिक–प्रवचन हुए जो अपनी विषय वस्तु के कारण प्रकाशदीप की भॉति श्रोताओ के मन–मस्तिष्क रोशन कर गये। उन्होने स्मरण दिलाया कि अकलक और निकलक की तरह उपसर्ग सह कर भी धर्म, सस्कृति और साहित्य की रक्षा करनी होगी।

11 नवम्बर को भी कम कार्यक्रम न थे, 'अखिल बिहार–प्रान्तीय–दिगम्बर जैन युवा–परिषद' का गठन कर पूज्यश्री से आशीष लिया गया। फिर प विमलकुमार जैन (सौंरया) की अध्यक्षता मे अखिल भारतीय दि जै शास्त्री–परिषद का खुला अधिवेशन हुआ। सयोजक थे–डा श्रेयासकुमार जी। ❑

14 नवम्बर की रात्रि तक सभी आगत लौट गये। 15 नवम्बर को समारोह स्थल, मगर, खाली–खाली न लग रहा था, क्योकि देश का अत्यत महत्वपूर्ण व्यक्तित्व तो वहॉ ही था। ❑

पलक झपकता सा समय। आकुल श्रावक। निराकुल पूज्यश्री। 20 नवम्बर आ गया। निष्ठापना–दिवस। पूज्यश्री उपाध्याय जी ने ससघ, सविधि, वर्षायोग की विस्थापना–क्रिया पूर्ण की। वे काल और क्षेत्र की सीमा रेखा से मुक्त हो गये। श्रावको के मन सरोवर सुप्त हो गये। हा सूख गये, सभी को भय कि गुरुवर तो हवा की तरह चलते है, जल की तरह बहते है, आदि। ❑

गुरुवर के सकेतानुसार 24 नवम्बर 91 को 'जैन भवन' के विशाल कक्ष मे पिच्छिका–परिवर्तन–समारोह आयोजित किया गया। लोग सयम से बधे। कृपा गुरुदेव की। ❑

गुरुवर के प्रस्थान का समय आ चुका था, किन्तु उनके सघ के अति–महत्वपूर्ण–सदस्य, वयोवृद्ध तपसी, पू क्षुल्लक वर्धमानसागर जी का स्वास्थ्य हाथ मे न आ रहा था। वय का प्रहार उनके पुद्गल को रोज–रोज कमजोर कर रहा था। वे समुचित आयुर्वेदिक दवाएँ तक न लेना चाहते थे, पर सघ और श्रावकगण अपने कर्त्तव्य पर थे, उचित व्यवस्था कर रहे थे।

एक दिन पू उपाध्यायश्री ने क्षुल्लकजी से पूछा– 'विहार करना है, कैसे करोगे?' क्षुल्लक जी सुनकर शात रहे, फिर एक सच्चे साधु, निर्मोही–साधु, के स्वर मे बोले– 'महाराज, विहार आप कीजिए, इस शरीर मे अब हिम्मत नही है।'

उपाध्यायश्री चाहते तो उन्हे डोली मे लेकर साथ चल सकते थे। मगर वे उनके नियम–सयम पहिचान चुके थे कि जिस व्यक्ति ने श्रावक रह कर डोली का सहारा हेय समझा हो, वह जैन–मान्यता के क्षुल्लक के रूप मे क्यो डोली चाहेगे? ❑

3 दिसम्बर 91 को पू उपाध्यायश्री का 'अर्ध–सघ' विहार कर गया–उनके साथ थे पू मुनि वैराग्यसागर जी। बस। क्षु वर्धमानसागर के समीप दो कर्त्तव्यनिष्ठ ब्रह्मचारी अतुल भैया और मनीष भैया रुके

रहे। लोग चकित थे जैन–सत के न्याय और सोच से। मोह के हिमालय को लॉघने, पदघात करने का दृश्य, समाज ने पहली बार देखा था वहाँ।

विशाल जन–समूह उपाध्यायश्री के साथ चल रहा था, उन्हे भेजने। एक समूह रह गया था क्षु जी के पास, उन्हे देखने।

गुरुवर निकटस्थ नगर रफीगज पहुँचे। वह गया से 40 कि मी है। मध्यम–कोटि की बस्ती, न शहर, न गॉव। लग गया मन गुरुवर का। कुछ दिनो का समय प्रदान किया। लोगो मे उत्साह–सचार बढ गया। कुछ प्रबुद्ध लोगो ने प्रार्थना की गुरुवर से– 'महाराज, एक विद्वतगोष्ठी हमारे नगर मे भी हो। हमने गया की गोष्ठियॉ देखी हैं, ज्ञान और आनद बरसाती थी।'

मान गये महाराज उनकी प्रार्थना। नूतन–वर्ष पर नूतन–कार्य सुनिश्चित हो गया। तिथि भी निश्चित कर दी–4 फरवरी 92

समय जाते देर न लगी, वह तिथि भी आ गई। साथ मे लायी, विद्वानो का समूह–प नरेन्द्र प्रकाश जी, डा राजाराम जी, डा नलिन शास्त्री जी, डा अशोककुमार जी, डा फूलचद प्रेमी जी, पू नीरज जी, डा कस्तूरचद जी एव अन्य अनेक।

भारी सफल रही गोष्ठी। अखबारो मे प्रशंसा की लहर का कारण था–अप्रकाशित जैन साहित्य को प्रकाश मे लाये जाने का कार्य और शाकाहार का क्रान्तिकारी प्रचार–प्रसार। ❑

शीतकाल की यह घटना महत्वपूर्ण है–गुरुवर रफीगज से तीन किलोमीटर दूर स्थित 'पच्चर–पहाड' पर गये थे और विघ्नहर्ता–तीर्थकर भगवान पार्श्वनाथ की अतिशयकारी मूर्ति के दर्शन किए थे। देश के वर्तमान–परिवेश मे, वहाँ भी पहली बार कोई दिगम्बर सन्त पहुँचा था। वह तो उपेक्षित सा पडा था– एक युग से। गुरुवर के पहुँचने से 'सर्वप्रिय' हो गया। नगर के लोग दर्शन करने जाने लगे, क्रम अभी भी निरतर है।

पच्चर–पहाड को कोई विद्वान परिष्कृत नाम देकर यदि प्रचार–पहाड कहे तो अन्यथा नही कहा जावेगा, क्योकि पूज्यश्री के आगमन से धर्म के साथ–साथ उस पहाड का भी काफी प्रचार हुआ था। वहाँ अजैन बधु अपना अधिकार बना बैठे थे और जैन–यात्रियो के समक्ष, आये–दिन आतक मचाते रहते थे। फलत पुलिस का पहरा लगाना पडा शासन को। पुलिसवालो ने शाम 6 बजे के बाद किसी का भी प्रवेश वर्जित कर दिया था।

किन्तु उपाध्यायश्री के पहुँचने से, वातावरण मधुर बन गया आतक समाप्त हो गया, जैनाजैन निर्भय हो आने–जाने लगे।

पहाड से आतक समाप्त हुआ फलत, वह पहाड गुरु और गुरुवाणी के प्रचार का भी हेतु बना उस समय–काल मे अत रफीगज निवासी श्री दीनदयाल भी उसे प्रचार–पहाड कह कर सुखी हुए थे।

रफीगज मे जितनी ठड पडनी थी, वह मौसम के अनुसार कुछ अधिक ही पड चुकी थी। कहे जनवरी माह तक वह सतो और उनके भक्तो को अपना चरम दिखा चुकी थी, या यह कहे कि शीतऋतु अपने सम्पूर्ण अववयो (पल–छिन) सहित उपस्थित होकर पू गुरुवर के दर्शन कर चुकी थी और 'वदना कर तीर्थयात्रियो की तरह' लौटने लगी थी। फरवरी माह के दिन भी बच्चो की तरह यहाँ वहाँ भागते हुए निकल रहे थे। तभी गया से, पू क्षु वर्धमानसागर जी की निश्रा से दो श्रावक समाचार लेकर आये– 'क्षु जी का स्वास्थ्य अधिक खराब है, समाधि चाहते हैं।'

पूछ उठे गुरुवर– 'ब्र0 जी उन्हें प्रतिक्रमण सुनाते हैं?'

–जी सुनाते हैं। श्रावक ने उत्तर दिया।

– ठीक है, देखते हैं।

वार्ता समाप्त। चिंतन शुरु। गुरुवर विचार करते हैं– 'उनके एक परम हितैषी भक्त ने अतिम समय स्मरण किया है, उन्हे जाना चाहिए।' उचित समय पर गुरुवर ज्ञानसागर जी और मुनिवर वैराग्य सागर जी ने रफीगज से प्रस्थान कर– गया नगर की राह पकडी।

पहुँच गये गया। सारा नगर शात, समाज शात। 'क्या होगा' सभी के मन मे प्रश्न था।

गुरुवर ने एक श्रेष्ठ वैद्य की तरह क्षुल्लक जी के शरीर के साथ–साथ आत्म प्रदेश का निरीक्षण किया। उनका मूल्याकन था– 'क्षु जी का तन शिथिल हो चुका है। आत्मा मे पुरुषार्थ–भाव शेष है, उन्हे यथाशीघ्र समाधि की गरिमा जुटानी होगी।'

19 फरवरी 92 का प्रात काल। गुरुवर ने क्षु. जी को सम्बोधित किया। वे सम्बोधन करते हुए जान रहे थे कि जो कुछ वे (गुरुवर) कह रहे हैं, वह क्षु जी अच्छी तरह जानते हैं, उनका अध्ययन और अनुभव उनसे छुपा नही था।

गुरुवर के सम्बोधन के बीच ही क्षु जी ने हाथ जोड़ कर नमोस्तु किया, फिर लगोटी पर हाथ रख कुछ बुदबुदाये। गुरुवर समझ गये कि लगोटी भी त्याग कर वे मुनिदीक्षा की याचना कर रहे हैं। उस समय सुबह के साढे सात बजे थे। गुरुवर ने शीघ्र ब्रह्मचारियो के सहयोग से उनकी लगोटी निकलवाली। विधिपूर्वक उन्हे मुनि दीक्षा प्रदान की, नाम वही रखा, किन्तु नाम के साथ गुण सख्या बढ़ा दी– 'मुनिश्री 108 वर्धमानसागर जी।' कक्ष मे उपस्थित छोटे से समूह ने नवीन–मुनि की जय उच्चारित की, फिर अन्य सतो की।

गुरुवर शारीरिक कमजोरी बॉच चुके थे। अत बतौर निर्यापकाचार्य, वे उन्हे पल भर को भी न छोड सके। जहॉ क्षपक (समाध्याकाक्षी) वहॉ गुरुवर।

उपाध्यायश्री क्षपक को दशभक्ति प्रतिक्रमण सुना चुके थे। करीब डेढ घटे का समय खिसक चुका था, 9 बजने वाले थे। मुनि जी की सॉसो मे अतर आया देख, गुरुवर उन्हे जोर–जोर से णमोकारमत्र सुनाने लगे। मुनि जी ने णमोकार की ध्वनि के मध्य अपनी आत्मध्वनि समर्पित कर अतिम सास छोड दी। कहे जीवन मे जिन्होने घर परिवार छोडा था, बाद मे उन्होने लगोटी छोड़ी (त्यागी) और महान अपरिगृही बन कर आखरी मे सासे भी छोड़ दी। त्याग दीं।

मुनि जी की काया कक्ष मे थी, आत्मा विहार कर चुकी थी। सुबह के ठीक 9 बज चुके थे। आत्मारूपी पछी 9 का अक छू कर उड़ा था। ❑

इस समाधि से पूर्व, गया नगर मे, किसी अन्य जैन सत की समाधि न हुई थी गत सौ वर्ष मे, अत सभी के लिए वह एक नया अनुभव था।

पू गुरुवर के मार्गदर्शन मे पू मुनि वर्धमानसागर जी के पार्थिव–शरीर की विशाल शोभायात्रा के साथ, समाज ने 'मृत्यु–महोत्सव' मनाया और भौतिक–देह को चदन–चिता के सुपुर्द कर दिया। वहाँ की क्रियाऍ पूरी कीं और अग्नि–संस्कार के बाद लोग लौट आये।

समाज अतिम सस्कार की उस महान क्रिया से प्रभावित हुआ था। ❑

मुनिश्री वर्धमानसागर जी, जो कुछ समय पूर्व क्षुल्लक थे, वे सन्–1974 तक श्री शकरलाल जैन थे। एक श्रावक थे। उमेश नाम के एक कमजोर बालक के दादाजी थे। पर उस दिन उस दिन वे परम् ज्ञानी उपाध्यायश्री ज्ञानसागर के शिष्योत्तम थे, श्रेष्ठ शिष्य, जो त्याग की नगरी मे प्रवेश पाकर अपने गुरुवर से भी आगे हो गये थे। शकरलाल जी चले गये, क्षुल्लक जी चले गये, हॉ मुनि वर्धमानसागर चले गये समाचार गया नगर से उडकर मुरैना पहुँच चुका था। मुरैना–जहॉ श्री शकरलाल जी के पुत्र श्री शातिलालजी और पुत्रवधू श्रीमती अशर्फीदेवी जी निवास करते है।

स्व शकरलाल जी के पिताश्री–स्व आदरणीय हरिविलास जी राजस्थान–प्रान्त के थे। वे वहॉ ग्राम बिचपुरी (जिला धौलपुर) मे रहते थे उनकी धर्मपत्नी स्व आदरणीय रौनाबाई जी थीं। जैसवाल कुल के दीपक श्री हरिविलास जी घी और अनाज का व्यापार करते थे। उनके घर मे शकरलाल जी का जन्म भाद्र–कृष्ण–चतुर्दशी, वि स 1969 (तदनुसार, माह सितम्बर, सन 1912) को हुआ था।

श्री शकरलाल जी का विवाह सन् 1923 मे, श्रीमती **इद्रावलि** के साथ हुआ था। इस दम्पत्ति ने कालान्तर मे स्थान बदला और मध्यप्रदेश के सुविख्यात नगर मुरैना मे रहने लगे। वहॉ उन्हे चार पुत्र–रत्न हुए–श्री भगवानदास जी, श्री पूरनचद जी, श्री शातिलाल जी और श्री सुमतचद जी।

प्रथम पुत्र का जीवनकाल अल्प रहा, शेष अपनी–अपनी दिशा मे प्रगति करते रहे। तृतीय पुत्र आदरणीय शातिलाल के घर जन्मे थे–गुरुवर पू उपाध्याय ज्ञानसागर जी महाराज, जिनका पारिवारिक नाम रखा गया था–उमेश कुमार।

श्री उमेश जी, को साधुमार्ग पर चलता देख कर, आचार्यवर्य श्री सुमितसागर जी महाराज ने शकरलाल जी को प्रेरणा दी थी, फलत जीवन मे सयम धारण कर लिए और बासठ वर्ष की वय मे 17 मई 1974 को पू आचार्य कुथुसागर जी से, मुरैना ही मे, सप्तम–प्रतिमा के व्रत धारण कर रत्नत्रय की साधना मे रत हो गये, पश्चात् क्षुल्लक दीक्षा लेकर विविध नगरो मे विहार करते हुये साधनारत (दो–प्रतिमा के व्रत पहले ही, ले चुके थे।)

सन् 1981 मे जब वे पू आचार्य सुमितसागर जी के साथ दक्षिण भारत की तीर्थयात्रा पर थे, तब श्रवण बेलगोला के पावन वातास मे उनसे यम–सल्लेखना–व्रत लिया था, जो वारह वर्ष का होता है।

बाद मे, जब लौटकर ललितपुर आये और पू क्षु सन्मतिसागर तथा पू क्षु गुणसागर के साथ ठहरने का शुभावसर मिला तो सन्मतिसागर जी उन्हे सार्वजनिक रूप से 'बब्बा सागर' कह कर वात्सल्य प्रदान करते थे। पू बब्बा सागर, हॉ पू वर्धमानसागर मुनि महाराज, जीवन भर उत्तम भजनो का सुरुचिपूर्ण गायन करते रहे थे। ❑

अब न श्री हरिविलास थे, न शकरलाल जी, किन्तु उनके उत्तम वश का श्रेष्ठ पौधा, बट–वृक्ष की विशालता धारण कर, गया के ऐतिहासिक बट–वृक्ष–की बराबरी कर रहा था–पू गुरुवर ज्ञानसागर जी महाराज के नाम से। गया के 'बोधि–वृक्ष' का महत्व उस दिन और बढ गया था जब क्षु जी ने मुनि का बाना धर, आत्मबोध पाया था। ❑

कुछ दिन और ठहरे गुरुवर गया मे, फिर किया विहार, ससघ। सघ वही था, पर अब उसमे पू वर्धमानसागर जी नही थे। श्रीसघ डाल्टनगज पहुँचा। करीब तीस दिन का समय दिया वहॉ।

डाल्टनगज के श्रावको ने गुरुवर की अगवानी का ऐसा मनोहारी दृश्य उपस्थित किया था कि उसका वर्णन करना सहज नहीं है। वहाँ वह–वह तो था ही जो हर कहीं अगवानी के समय होता है; किन्तु एक विशेष तत्व भी था–शाति। चूँकि गुरुवर ज्ञानसागर जी मृत्युमहोत्सव देख कर यहाँ पहुँच रहे थे। अत: हर चेहरा शात–शांत, गम्भीर–गम्भीर दिख रहा था। तब समाज की अनाहूत–गम्भीरता का क्षय गुरुवर ने अपने प्रवचनो से किया।

धीरे–धीरे, दो–चार प्रवचनो के बाद ही, सब जन सामान्य किन्तु उत्साहित हो उठे। उनका उत्साह सार्थक भी हुआ– क्योकि उनके समक्ष तीर्थकर महावीर जयती का आयोजन था।

गुरुवर का सानिध्य–सौभाग्य तो प्राप्त था ही, श्रावको ने कार्यक्रमो के लिए समुचित मार्गदर्शन प्राप्त किया और धूमधाम से जुट गये तैयारियो मे। महावीर–जयती के अवसर विशेष को 'यादगार' बनाने की दृष्टि से, उसी क्रम मे शाकाहार–सम्मेलन और प्रदर्शनी का आयोजन किया गया था।

जिसमे स्थानीय विद्वानो–श्रावको के साथ–साथ कुछ बाहर के विद्वान भी थे। प निर्मल जैन सतना कुछ विशेष सक्रियता बनाये हुए थे। सम्मेलन 12 अप्रेल 92 को हुआ था। आगत विद्वान हैरान थे कि नगर मे मात्र 30–35 घर के जैन हैं, फिर कार्यक्रम हेतु मच, पडाल आदि बहुत बडे–बडे क्यो बनाये गये हैं? उनका समाधान उन्हे मिला–जब कार्यक्रम हुआ। देखते ही देखते सम्पूर्ण पंडाल खचाखच भर गया, मच भी। तब समझ मे आ गया कि गुरुवर को सुनने जैनो के साथ, बडी सख्या मे अजैन–श्रोता भी पहुँचे हैं। यह थी विशाल सफलता उस कार्यक्रम की, समस्त जनसमूह ने सही–शाकाहार अपनाने का मन बनाया। समस्त मासाहारी व्यक्तियो ने मासयुक्त भोज्यो का त्याग किया। मदिरा पान–प्रेमियो ने शराब छोडी और चमडा–उपयोग करने वालो ने चमडा।1

यही प्रेरणा प्रदर्शनी मे प्रदर्शित किये गये चित्रो और नारो से मिल रही थी, जो जीवन–ज्योति सस्था कलकत्ता के श्रावको द्वारा लगाई गई थी। कहे महावीर जयती के कार्यक्रम मे छाप छोड कर गये थे। गुरुवर के प्रवचनो ने वह कार्य किया था जो सगोष्ठियो और प्रदर्शनियो मात्र से नही किया जा सकता था। उनकी तप सिचित–छवि हर मन मे त्याग की प्रेरणा सचार कर रही थी।

अवसर विशेष पर बाहर के श्रावक समूह भी डाल्टनगज पहुँचते रहे थे। उनमे प्रमुख रूप से राची–समाज और आगरा–समाज के कार्यकर्ता गुरुवर को अधिक आकर्षित कर रहे थे। सभी की प्रबल भावना थी कि गुरुवर वर्षायोग हेतु उनके नगर मे पधारे।

परन्तु उपाध्यायश्री किसी आकर्षण मे कब पडे हैं? वे तो सहजता के धरातल पर बने रहते हैं। सहजभाव से सोचते हैं और सहजता से विहार करते हैं। ❑

जब, जिस दिन गुरुवर डाल्टनगज पधारे थे, उस समय वहाँ के छोटे से समाज को सामान्य नहीं पाया था, ऐसा प्रतीत होता था कि समाज किसी दहशत मे है। यह बात शायद श्री सुरेश पाड्या जानते थे। अत उन्होने भारी श्रम किया था गुरुवर को डाल्टनगज मे प्रवेश कराने के लिए। उनका श्रम और भक्तिभाव सफल हुआ जब गुरुवर के वचनामृत से दहशत, शत प्रतिशत् समाप्त हो गई और उमग स्थान पा गई।

बाद मे तो गुरुवर के आम–प्रवचनो ने अजैन बधुओ पर ऐसा प्रभाव छोडा कि अनेक जनों ने अडे के ठेले लगाना बद कर दिये। नये धधे अपना लिये। ❑

मुस्लिम भाई भी बहुत प्रभावित हुए थे। एक मुसलमान श्रद्धावश, गुरुवर को, गले मे पहिनाने के लिए अतिसुदर पुष्पहार/फूलमाला लेकर आया, किन्तु जब वह मच पर पहुँचा तो आयोजकों ने वात्सल्य से उसे बतलाया कि हमारे दिगम्बर सत पुष्प क्या, मोतियो तक की माला नही पहिनते। तब वह श्रद्धालु अपनी माला माईक को पहिना कर, सतुष्ट हुआ, गुरुवर की चरण-वदना की और लौट गया।

वह लौटा तो कुछ इस तरह कि एक नये जीवन की ओर लौटा, उसने सविनय घोषणा की कि गुरुवर के चरणो के सानिध्य मे मैं जीवन भर के लिये शाकाहार का नियम लेता हूँ, मासाहार का त्याग करता हूँ।

वह उत्तम-मुसलमान अपने स्थान पर बैठ गया, पर उसके बाद रोज, गुरुवर के प्रवचनोपरान्त, सैकडो लोग मासाहार-त्याग का नियम लेने लगे। कहे, वहाँ के सहस्रो लोगो ने शाकाहार अपना लिया।

धन्य हैं गुरुदेव। ❑

एक दिन हजारीबाग-जैन-समाज के कार्यकर्ता आये और गुरुवर से हजारीबाग-पच कल्याणक-प्रतिष्ठा समारोह मे पधारने की प्रार्थना की, श्रीफल चढाये। उन्हे मौन-स्वीकृति का आभास हो गया। ❑

डाल्टनगज से, तीव्र ग्रीष्म के चलते, गुरुवर ने विहार कर दिया; पहुँचे हजारीबाग। वहाँ भी भक्ति और श्रद्धा का समुद्र था श्रावको के मनो मे। देखे-गुरुवर कैसे पार कर पाते हैं उन सागरो को। हजारीबाग का हर श्रावक जैसे हजार-नेत्रो से दर्शन कर रहा हो, हजार शीशधारण कर नमोस्तु कर रहा हो, हजार हाथो से अर्चना-अभ्यर्थना कर रहा हो। जैसे हरेक श्रावक सोच चुका हो कि-

गुरुवर जाने न पावैं इस ठाँव से।
करुँ विनय भक्ति-भाव से।।

हजारीबाग, जहा हर श्रावक के मन मे हजार-हजार बाग खिल उठे थे गुरुवर के आगमन से, मई की तेज धूप मे शीतलता की अनुभूति कर सका, जब गुरुवर के सानिध्य मे वहाँ 'सराक-सम्मेलन' आयोजित किया गया। हजारो-सराक- बधु पहली बार वहाँ समझ सके थे कि उनके उद्धार के लिए एक दिगम्बर-मसीहा उनके समीप आ चुका है। प्रतिष्ठा-समारोह भारी प्रभावनाकारी सिद्ध हुआ था। वहाँ ही विमोचन हुआ एक विशेष पुस्तक का, जिसमे पू पू आचार्य शातिसागर जी (छाणी) का जीवन-परिचय दिया गया था।

हजारीबाग मे रोज चार-छह नगरो के समाज-सेवी समूह मे आकर, गुरुवर को अपने नगर पधारने की विनय करते थे। कभी-कभी इतने श्रीफल चढ़ाये जाते कि गुरुवर के समक्ष नारियलो का पहाड सा खड़ा हो जाता था। अपूर्व था वह-भक्तो का उत्साह, भक्तिभाव। ❑

हजारीबाग की भक्तिभावना श्रेष्ठ थी, किन्तु गुरुवर के विहार का मार्ग अभी लम्बा था। अतः वे वहा से रामगढ़ होते हुए राची चले गये। कहे-खिल गया सौभाग्य-कमल राची का। अब यह तो पाठक स्वत समझ जावेगे कि विशाल राची-समाज ने अगवानी कर कितनी विशाल शोभायात्रा के साथ गुरुवर को 'नगर-प्रवेश' कराया होगा।

ग्रीष्मकाल का पूरा एक माह मिला था राँची को, जिसमे कुछ दिन मई के और कुछ जून के सम्मिलित थे। सबसे पहले गुरुवर ने श्रावकों को चर्चा करने का समय दिया, फिर अन्य कार्यक्रमों के निर्देश। परमपूज्य आचार्य शातिसागर जी महाराज (छाणी) का 'समाधिमरण-दिवस-समारोह' मनाया गुरुवर ने भक्तो के

साथ। नई तो नई, पुरानी पीढी को भी गुरुवर ने समाधिस्थ आचार्यश्री के कर्त्तृत्व से परिचित कराया। उनका श्रेष्ठ एव संतुलित गुणगान किया।

एक मायने में गुरुवर के आगमन के बाद भी, कतिपय श्रावको मे चर्चा के प्रति शिथिलता बनी हुई थी, अत उन सोये हुए लोगो मे भी धर्म–रस का संचार करने उपाध्यायश्री ने रॉची की विशाल सड़कों पर से निकलने का क्रम बनाया, वे दूर–दराज लगाये जाने वाले चौको तक जाने लगे। फलत जैन तो जैन, अजैन लोगो मे भी धर्मबोध जाग पड़ा। स्थिति यह हुई कि समाज के अनेक श्रावक चौका लगाने लगे। कहें; धर्म के फूल रॉची मे फैलाने लगे सुगध। शिथिलता हो गई मद। जागरुकता और धार्मिक चर्चा से आने लगा आनद।

श्रुतपचमी पर 8 जून से 10 जून 92 तक तीन दिवसीय–विद्वत–गोष्ठी का विशाल कार्यक्रम रखा गया। स्थानीय–पचायत– अध्यक्ष श्री महावीरप्रसाद सेठी ने आगत विद्वानो का अभिनदन किया। विद्वान लगभग वे ही थे जिनके नाम पूर्व मे भी आये हैं–प नरेन्द्र प्रकाश जी, डा राजाराम जी, डा सुदर्शन लाल जी, डा फूलचद जी, डा नलिन क शास्त्री, डा अशोककुमार जी, डा कस्तूरचद कासलीवाल जी एव पू मनोहर लाल शास्त्री। कहे तीन दिन तक राची मे विद्वानो के मुँह से 'ज्ञान'' की बाते और पू उपाध्याय ज्ञानसागर जी से 'धर्म' की बाते सुनने को मिली। प्रतिदिन सत्र के अन्त मे जब गुरुवर समीक्षा दृष्टि रखते तो ज्ञान की बातो पर धर्म का रग चढ जाता था और विद्वानो को अपनी गहराई का परिचय मिल जाता था।

सगोष्ठी की सार्थकता यह कि हर मुहल्ले मे धर्म–चर्चा स्थान पा रही थी।

गुरुवर की वाणी ने माह भर वचनामृत की निर्झरणी बहाई जो अज्ञान से दग्ध ह्रदयो पर शीतलता का लेप सिद्ध हुई। ❑

लोग तो इसी विश्वास मे थे कि गुरुवर सन् 92 का वर्षायोग यहीं करेंगे, पर जाने क्यो, गुरुवर ने वहॉ से विहार कर दिया। सारा नगर थर्रा गया। क्या हो गया? क्यो चले गये गुरुवर? प्रश्न, प्रश्न ही रहे आये, उत्तर कोई न दे सका।

राची से चुटपाली घाटी गये, सहस्त्रो श्रावको की शोभायात्रा साथ थी। वहॉ जब गुरुवर के मर्मभेदी शब्द बरसे तो श्रोतागण सुनते ही रह गये। शाकाहार के स्वर जनसमूह गहराई से समझ रहा था।

पुन रामगढ होकर पहुँचे हजारीबाग। जनता जैसे वरदान पा लेने मे सफल हो गई हो, ऐसा लगा गुरुवर का आगमन। नित्य सार्वजनिक–प्रवचनो की श्रखला चली। जब कभी आवश्यक लगा तो स्थान/स्थल बदल देते थे ताकि हर वार्ड के नागरिक प्यास बुझा सके। गायत्री –मदिर–समिति के अनुरोध पर एक दिन गायत्री मदिर मे किये प्रवचन। जैनो से अधिक अजैन एकत्रित हो गये, सबने ध्यान से सुना दिगम्बर–देव को।

हजारीबाग के श्रावक काफी चतुर (स्मार्ट) और सुजान माने जाते हैं। अन्य शहरो की तुलना मे, संख्या भी उनकी खूब है। अत एक दिन गुरुवर के सानिध्य मे 'युवक–सगोष्ठी' का विशाल आयोजन किया गया। भारी सख्या मे युवक तो युवक–प्रौढ भी पहुँचे। उस दिन की प्रभावना अकल्पनीय थी और वह आगे भी बनी रही।

धर्म की धुरी पर चरित्र का चक्र चल रहा था। चारित्रचक्रवर्ती उपाध्यायश्री की चर्चा का क्रम ही न टूटता, हर घर–परिवार मे वे ही वे थे। तब तक डाल्टनगज के समाजसेवी आ गये, गुरुवर के चरणो मे श्रीफल चढाकर–अपने–नगर मे वर्षायोग की–प्रार्थना करने लगे। गुरुवर मुस्कराते रहे।

जिस नगर मे वे अवस्थित थे, वह हजारीबाग तो नित्य प्रार्थनाये–मिन्नते कर रहा था, ऊपर से कोडरमा और गिरीडीह के श्रावक–मडल भी आ गये। गुरु एक, भक्त अनेक, सभी के मन मे अपने नगर का चाव था। क्या करते बेचारे गुरु, उन्हे तो हर भक्त प्यारा है, हर नगर दुलारा है।

श्रावकगण आते–जाते रहे। श्रीफल चढाते रहे। प्रार्थनाये चलती रही। गुरुवर ने ससघ प्रस्थान कर दिया, चरण थे–रामगढ की ओर।

रामगढ जिसे धर्मज्ञ–जनो का गढ कहा जाये तो गलत न होगा। गुरुवर के आगमन से रामगढ–समाज को पूरा–पूरा विश्वास हो गया कि चातुर्मास का सौभाग्य उनके प्रिय–नगर को मिलेगा।

भक्तो का ठट्ट लगा रहता। प्रवचनो के समय जनमेदिनी देख कर आश्चर्य हो आता था। भीड क्यो न हो, नगर के अलावा, अन्य बीसो शहरो से लोग आते थे। हर शहर का समाज अपने नगर के लिए प्रार्थना कर रहा था। मगर चातुर्मास– स्थापना की तिथि देखते हुए, ऐसा लग रहा था कि रामगढ मे ही चौमासा होगा। समय था ही वैसा।

किन्तु गुरुवर पू उपाध्यायश्री ने वहॉ से भी विहार कर दिया, साथ मे सहस्त्रो भक्त चल पडे। था विशाल जनसमूह उनके साथ। समझ मे ही नही आ रहा था कि वह 'विहार' का दृश्य है या शोभायात्रा–का! जितनी सख्या मे रामगढ एव हजारीबाग के भक्त थे उतनी ही मे रॉची के। पहुँचाने वाले दुखी थे, अगवानी वाले सुखी।

सन 1992 का जुलाई माह चल रहा था। गुरुवर पू उपाध्याय श्री 108 ज्ञानसागर जी महाराज अपने धर्मानुज श्री 108 वैराग्यसागर जी मुनिमहाराज के साथ महानगर रॉची मे प्रवेश करने ही वाले थे। नगर सीमा पर भारी जनसमूह उपस्थित था, ढोल–ढमाको से उत्साह बरस रहा था, सैकडो की तादाद मे सौभाग्यवती और कुमारियॉ शीश पर मगलकलश धारण किये गुरुवर की प्रतीक्षा कर रही थी। सैकडो गृहस्थ (माता–पिता–भाई–बहिन) हाथो मे आरती की थाल लिये थे, सैकडो गृहस्थ बडी–बडी पराते और जल से भरे बर्तन लिये खडे थे–पाद प्रक्षालन के लिए, सहस्त्रो अधर गुरुवर की पूजा की पक्तियॉ बुदबुदा रहे थे–ऐसा उत्साह तो कभी पूर्व मे देखने को ही न मिला था बुजुर्गो को।

वह बारह जुलाई का दिन था जो पावनताओ से दमक उठा था। गुरुवर के चरण राची मे प्रवेश कर गये। जय हो उपाध्यायश्री की। 'देश का साधु कैसा हो।। उपाध्यायश्री जैसा हो।।' के नारे कर्णपटो मे कम्पन पैदा करने लगे थे। आकाश के उत्ताल आगन मे जयघोष नाम के अदृश्य पक्षियो के झुड उडते नजर आ रहे थे। सम्पूर्ण नगर सजाया गया था। हर सडक पर झालरे, चौराहो पर शोभाद्वार और भवनो पर केशरिया–ध्वज सन्त–यश का गान कर रहे थे। कपडपट्ट पर गुरुवर द्वारा कभी कहे गये–धर्मवाक्य, धर्म–प्रचार कर रहे थे। शाकाहार की शिक्षा वाले पट पृथक ही लहरा रहे थे। "ज्ञान सिधु" और "वैराग्य सिधु" अगवानी का 'नव सिधु' देख कर चकित हो पडे थे, बुदबुदाये थे–यह सब जरूरी नही था। फिर मुस्कराये थे।

शतायुपुरुष, विहार गौरव श्रावकरत्न श्री हरक चद जी पाण्ड्या सहित नगर के तमाम खास और आम अगवानी की बेला मे पैर से पैर मिला कर चल रहे थे। (श्री पाण्ड्या जी ने अपनी उम्र के अनुरूप एक अनुभव

बतलाया था उस रोज, कहने लगे—मैने अपने 90 वर्षीय जीवन मे किसी साधु का ऐसा प्रभाव और स्वागत नही देखा था। गुरुवर धन्य हैं।)

(श्रद्धेय पाडया जी को सारा देश 'रायबहादुर' कहता रहा है, उन्हे यह गौरवशाली उपाधि अंग्रेजों ने प्रदान की थी, पर मैं उन्हे 'धर्मबहादुर' कह कर अपने मन का सम्मान दे रहा हूँ, वे अब इस ससार मे नही हैं, पर उनके कार्य समाज को उनका स्मरण कराते रहेगे।)

राची के विशाल मदिर के सिहपौर के समीप शोभायात्रा एक विशाल धर्म सभा में परिणित हो गई। गुरुवर को विशाल मच पर स्थापित काष्ठासन पर आसीन होने की प्रार्थना की गई। गुरुवर मच पर पधारे। सहस्त्रो कठ चुप न रह सके, जयघोषो की झडी लग गई।

गुरुवर की पूजा—अर्चना—आरती की जैन समाज के वरिष्ठ कार्यकर्ताओं ने, फिर की प्रार्थना मगल—प्रवचनो के लिए।

गुरुवर ने भक्तो के उत्साह की चर्चा की, प्रशसा नही और जतलाया कि उत्साह की भी सीमा होनी चाहिए, यहा तो सब कुछ सीमाधिक प्रतीत हुआ है। वे बोले—प्रभुकी भक्ति सीमाधिक हो जावे, यह उचित है, किन्तु कुछ बाते बिलकुल न रहे, ऐसा प्रयास हो। वे बाते आपके यहाँ ही नहीं सम्पूर्ण देश मे हैं—हिसा, आतक, मासाहार, शराबखोरी, पशुक्रूरता, भ्रष्टाचार, प्राचीन—मदिर सुधार कार्यो मे शिथिलता और सामाजिक समितियो मे फूट। वर्षायोग की स्थापना के पश्चात, यदि उसकी निष्ठापना—अवधि तक, उक्त बातो मे सुधार किया गया तो यह स्थापना सार्थक होगी।

गुरुवर के क्रातिकारी वक्तव्य से लोगो के दिल हिल गये। क्या समाजसेवी, क्या जिलाधीश, क्या प्रशासन के अन्य अधिकारी और क्या समाज—सभी को सोचने पर विवश कर दिया था प्रथम दिन ही। ❑

तेरह जुलाई का मगल—प्रभात। चातुर्मास स्थापना की खुशी में, समाज ने वृहत् शोभा—यात्रा का आयोजन किया। शोभायात्रा मे वे ही अवयव दीख रहे थे जो कल की मे थे—ध्वज, बेनर, बैन्ड, कलश आदि आदि। किन्तु आज एक नई बात थी। युवावर्ग, खासतौर से छात्र—छात्राये, अपने हाथो मे रगबिरगी तख्तियाँ लिये थे जिन पर शाकाहार—पोषक नारे या विचार लिखे हुए थे। कुछ आप भी जान ले—

"गुरुवर का है क्या कहना।। हिसक बनकर कभी न रहना।।"
"तन मन करता कौन खराब।। अण्डा, मछली और शराब।।"
"दिन मे शादी, दिन मे ब्याह।। निशाभोज का हो परित्याग।।"
"अनाचार का अन्त हो।। पशुधन हिसा बन्द हो।।"
"जैन मुनि को देख लो।। त्याग करना सीखलो।।"
"देश का साधु कैसा हो।। उपाध्यायश्री जैसा हो।।"

कहे कि नन्ही तख्तियो के जिम्मे थी उस दिन सडक की नैतिक पढाई। जैनाजैन पढते और विचार करते।

शोभायात्रा के पश्चात गुरुवर ने विधिविधान पूर्वक, मध्याह्न—बेला मे चातुर्मास की स्थापना कर दी। सहस्त्रो श्रावक धर्मसभा मे उपस्थित हो 'धर्म की नीव पुख्ता है' का सदेश दे रहे थे। ❑

(यहाँ कथा के इस भाग मे, चातुर्मास का सविस्तार वर्णन करना था मुझे, किन्तु यह निबन्धों या समाचारो का सकलन नहीं है, यह है 'महाकथा' अत यहाँ और आगामी चातुर्मासो मे भी, केवल वे प्रसग स्पर्श करूँगा जिनसे 'कथा' को गति मिलती है।)

वर्षायोग स्थापना एक महान घटना के रूप मे समस्त शहरवासियो द्वारा ली गई थी, हर समाज/जाति/वर्ग/वर्ण के लोगो के कान गुरुवर की वाणी सुनने कभी सुबह तो कभी मध्याह्न आते रहते थे। भीड का जमावडा अद्‌भुत होता था, हर तरफ आदमी ही आदमी।

गुरु और उनके भक्तो के मध्य धर्मक्षेत्र का कोई अदृश्य चुम्बकत्व कार्य कर रहा था कि भीड के दृश्य सिर्फ प्रवचनो भर मे नही, आहारो और शौच को जाते वक्त भी विशेष हो पडते थे। राची वाले बतलाते हैं कि प्रात काल शौच की बेला मे भी दस या बीस नही, अनेको युवा नागरिक आ धमकते थे और गुरुवर को मैदान ले जाते थे। आहार–चर्या के समय तो कई बार 'सडक–बद' (ट्रेफिक–जाम) का दृश्य बन जाया करता था। व्यवस्था के लिए सैकडो नौजवान उपस्थिति बनाये रहते थे।

कार्यक्रमो का ऐसा सधन क्रम बना कि रोज त्यौहार जैसा दृश्य बना रहता था। गुरुवर के मगल–सानिध्य मे राची–वर्षायोग मे अनेक विशाल आयोजन हुए जिनमे –शाकाहार–सम्मेलन और अहिसा–रैली की धूम सर्वाधिक रही। सर्वधर्म सम्मेलन, विश्वमैत्री–दिवस कृष्ण–जन्माष्टमी के कार्यक्रम सर्व–वर्ग और सर्व–वर्ण के समक्ष प्रेरणाकारी सिद्ध हुए।

23 अगस्त 92 का वह व्यस्त दिवस कौन भूल पायेगा जिस दिन राची नगर के विराट वक्षस्थल पर शाकाहार– सम्मेलन का उद्‌घाटन नगर के प्रथम नागरिक तुल्य, वरिष्ठ श्रावक शिरोमणि, धर्मबहादुर श्री हरकचद जी पाण्डया ने, गुरुवर ज्ञानसागर जी के चरणो मे श्रीफल चढाकर किया था। कार्यक्रम की अध्यक्षता कर रहे थे–श्री ए के मिश्र (एच इ सी) और आमत्रित विद्वान थे–पू नीरज जैन सतना, डा डी सी जैन दिल्ली, डा एस पाण्डे, श्रीमती शशि पाटनी, पत्रकार श्री सी जी नावड, श्री आर के सरावगी। प्रदेश सरकार की ओर से विधायक श्री इद्रजीत सिह नामधारी और जिला प्रशासन से– श्री एम पी अजमेरा (ए डी एम) थे।

गुरुवर के उस पावन–मच से हर विद्वान ने अत्यत प्रेरक उद्‌बोधन दिये थे। गुरुवर ने तो जैसे अमृत–भरा–कलश ही ढार दिया हो, ऐसा लगा था उनकी वाणी से उन्होंने कहा था– "विश्व को शाकाहार और अहिसा के दम पर ही सुरक्षित और सदाचारी रखा जा सकता है। उक्त दोनो गुणधर्मों की चर्चा तभी सार्थक होगी जब प्राण–प्राण उन्हे अपने स्वभाव और आचरण मे पल–पल जीवित रखे।"

24 अगस्त 92 को शाकाहार–रैली निकाली गई थी, जिसमे मुख्य आकर्षण था– 'पशुदल'। शकाहारी पशु–हाथी, घोडा, ऊँट, गाय, बैल, भैस आदि। सकेत, उन्हे कटने से, बचाने का था। ऐसा नही कि रैली मे दो पैर वाले प्राणी न थे, वे सहस्त्रो की तादाद मे थे जिनके सिर पर, चार पैर वालो को बचाने का भार था। दो पैर वालो मे प्रमुख–माननीय अधिकारीगण, नेता–विधायकगण, पत्रकार–कलाकार– साहित्यकारगण एव नागरिक तथा माताएँ और बहिने थी।

रैली की समाप्ति पर परमपूज्य उपाध्यायश्री का प्रवचन अत्यन्त प्रभावनाकारी सिद्ध हुआ था। वह अनेक पुस्तको, स्मारिकाओ और कैसिटो मे आज भी सुरक्षित है। ❑

फिर आये पर्वराज पर्युषण। कहे–पर्युषणपर्व को पर्वाधिक पावनता प्राप्त करायी थी गुरुवर की परोपकारी–उपस्थिति ने। विश्व मैत्री दिवस पर सारे नगर मे 'मैत्री भाव' की गगा बह पडी थी, कृपा गुरुवर की। फिर गोवश–रक्षक गोपीश्वर श्री गोपाल जी जयती। जैनाजैन की सयुक्त उपस्थिति ने कृष्ण जयती समारोह को एक सार्थक उपक्रम सिद्ध कर दिया था। कहे–समारोह ने राची के हर समाज के इतिहास मे नवकीर्तिमान दर्ज करा दिया था। ❑

फिर तीर्थ-क्षेत्र-कमेटी के अधिवेशन से प्राचीन तीर्थों की तरफ देश का ध्यान आकर्षित कराया गया, कृपा गुरुवर की। श्रीमान साहूश्री अशोक कुमार जैन ने अधिवेशन के दौरान गुरुवर से मार्गदर्शन प्राप्त किया और आगामी योजनाओ को तदनुसार स्वरूप देने जुट सके।

फिर महासभा का अधिवेशन। समाजरत्न श्री निर्मलकुमार सेठी ने समाज-सेवा के लिये सकेत प्राप्त किये। उसी क्रम मे दिगम्बर जैन बिहार प्रातीय युवा अधिवेशन किया गया जिसमे सहस्त्रो नवयुवको ने दिशा प्राप्त की गुरुवर से। फिर श्री इद्रध्वज मडल विधान की आयोजना से सम्पूर्ण समाज ने नियम-सयम के व्रत लिये, चर्या मे सयम बढाये, असयम क्षीण किये।

राची के विख्यात मेकोन-हाल और टाउन हाल मे जिस दिन गुरुवर ने प्रवचन किए थे, उस दिन भी वहॉ नव इतिहास बना था, क्योकि वे सार्वजनिक स्थल माने जाते हैं, वहॉ उसके पूर्व कभी कोई सत ने उपस्थिति दी हो-लोग नही जानते।

गुरुवर के सार्वजनिक, प्रवचनो मे प्रान्त के मत्री/नेतादि तो आते ही थे, प्रशासन से कभी आयुक्त, कभी कलेक्टर, कभी पुलिस अधीक्षक (एस पी) भी बने ही रहते थे। शिक्षा क्षेत्र से कुलपति और व्याख्यातागण, न्याय क्षेत्र से न्यायाधीशगण और अधिवक्तागण अखबारो से वरिष्ठ सम्पादकगण तो पत्र-समूह के मालिकगण हाजिर होकर प्रवचन सुनते थे।

राची चातुर्मास का प्रचार कार्य वहॉ के प्रचार मत्री आदि ने भारी श्रम और उत्साह से किया था। फलत राची के समस्त अजैन-अखबारो के साथ-साथ, बाहरी-पत्रो मे भी, प्रवचन और कार्यक्रमो के समाचार निरतर बने रहते थे-आशीष गुरुदेव का।

दो माह ही बीते थे कि समाज और नगर पालिका के विचार-विमर्श के बाद, वहॉ के एक व्यस्त-चौराहे का नामकरण 'गुरु ज्ञानसागर चौराहा' किया गया जो समाज के लिये महत्वपूर्ण उपलब्धि निरूपित की गई।

लोग बतलाते है कि जब शाकाहार-रैलियॉ निकलती थी गुरुवर के साथ, तो वहॉ के अजैनगण भारी आत्मीयता प्रकट करते थे, गुरुद्वारा-कमेटी के लोग आदर सहित, रैली मे चल रहे जैनाजैन लोगो के मध्य फल-वितरण करते थे, तो मस्जिद-कमेटी के लोग बच्चो को शाकाहारी-टाफियॉ बॉटते थे।

पर्युषण की पावन-बेला मे प्रभावना द्विगुणित हो गई। फलत 40 पुरुष और महिलाओ (युवक-युवतियो) ने पर्युषण पर्व के दशो उपवास किये। कई ने बेला-तेला के आत्महितकारी व्रत लिये।

उसी वर्षायोग मे, ज्योतिषाचार्य श्री नेमीचद जैन द्वारा विरचित ग्रन्थ 'भगवान-महावीर और उनकी आचार्य परम्परा' का समारोहपूर्वक विमोचन किया गया था, गुरुवर के गरिमामय-मच से।

समय पूर्ण हो गया। लोगो को खबर ही न हुई (पता ही न चला)। वर्षायोग की निष्ठापना का दिवस आ गया। गुरुवर ने विधिपूर्वक वह सम्पन्न किया।

दिगम्बर सत के मार्ग खुल गये। विहार की सनसनी फैलने लगी। लोग परेशान- 'बिना गुरुवर के राची मे अच्छा न लगेगा।' ❑

11

'प्रज्ञा - श्रमण'

गुरुवर परख रहे थे कि राची के नागरिक भक्ति भर नही कर रहे हैं, वे मोह भी कर रहे हैं सतो से। अत उन्हे मोहाध से प्रकाश की ओर ले चलना होगा।

गुरुवर ने उपाय निकाल लिया। उन्होने राची–समाज के साथ उदयगिरि–खण्डगिरि की यात्रा का मन बना लिया। पर बोले कुछ नही। मन के भाव मन मे रखे। ❑

एक दिन उन्होने राची से विहार करने का विचार किया। लोगो को आभास हो गया। अत देखते ही देखते विशाल जनसमूह इकट्ठा हो गया, सब जन रोकने लगे। कतिपय भक्तो ने, कदमो मे गिरकर, चरण पकड लिये, गिडगिडाये–

'विनय हमारी हाथ जोड कर।
नाथ न जाओ हमे छोड कर।।'

यद्यपि वे सभी जन विद्वान थे, जानते थे कि दिगम्बर–सत तो सरिता की तरह पल–पल गतिमान रहते हैं, किसी के कहने से नही रुकते, पर मोह के कारण विद्वता भूल बैठे थे।

तब गुरुवर ने जगाया–हम लोग छोडकर नही जा रहे, हम तो उदयगिरि–खण्डगिरि जा रहे है यात्रा पर, आपको चलना है तो आप भी चल सकते है?

गुरुवर के प्रश्न ने मोह की कारा तोड दी, लोगो के मन से विहार का दुख क्षीण हो गया। सत के साथ चलने का उत्साह जाग गया। ❑

कुछ ही दिनो मे उदयगिरि–यात्रा की तैयारी राची–समाज ने पूर्ण कर ली। आवश्यक सामान, कार्यकर्ता, वाहन आदि देखते ही देखते जुट गये।

निश्चित समय पर यात्रा शुरु। एक विशाल शोभायात्रा के साथ गुरुवर ने प्रस्थान कर दिया राची से। अब कोई दुखी न था, भोले–भक्त समझ रहे थे कि गुरुवर ने विहार नही किया, वे तो 'खण्डगिरि–यात्रा' पर जा रहे हैं हमारे साथ।

(धन्य है गुरुवर की शैली! हजारो लोगो को रोने–कलपने से बचा लिया, मोह के पाप से बचा लिया, उनका 'उपयोग' बदल कर निकल गये, दुखियो को सुखी बना कर गये।) ❑

एक यात्रा गुरुवर ने शाहपुर–समाज के साथ की थी। एक यह राची–समाज के साथ। पहले दिल्ली से बिहार प्रान्त आये थे, अब बिहार से उडीसा की ओर थे। ❑

राची सूना हो गया। जैसे किसी महल के सभाकक्ष मे उजास बिखराने वाला मणिदीप, किसी ने अन्य कक्ष मे रख दिया हो। गुरुवर के जाने के पश्चात केवल श्रावक ही नही, हर वर्ग के लोग सूनापन महसूस कर रहे थे।

तय है कि राची के बाद अन्य जिस किसी भी नगर को छोडकर, विहार करेगे, उस नगर के लोगो को भी आत्मपीडा और सूनापन झेलना पडेगा। वे भी वही कहेगे, जो राची के लोग कह रहे थे।

रिक्शा, टेम्पो, टैक्सी चलाने वाले लोग कह रहे थे–जो कमाई गुरुवर के चातुर्मास मे हो गई, वह अब कहाँ? गुरुवर के कारण जैन लोगो के पॉव घर मे रुकते ही नही थे। वे तो वे, वृद्ध माताएँ–बहिने, बाल–बच्चे, विद्यार्थी, सभी गुरुवर की तरफ भागे चले जाते थे। हमारी गाडियॉ सुबह और मध्याह्न दौडती ही रहती थी। सारे दिन व्यस्तता बनी रहती थी।

वासरमेन (धोबी) अपने सूनेपन पर व्यथित थे, कि अब उतने कपडे नही आते। कुली अपनी जगह दुखी थे, जैन भोजनालय वाले अपनी जगह। शाक सब्जी वाले, दुग्ध विक्रेतागण, फल व्यापारी, किराना–व्यापारी आदि सब अपना–अपना राग सुना रहे थे। गुरुवर के विहार से वे भारी सकट मे आ गये थे। व्यापार कम हो जाना तो उनका दुख था ही, पर वे बेचारे, प्यारे सन्त के नाम मे ऐसे रम गये थे कि सुबह से रात्रि तक उनके कानो मे सन्त–चर्चा के जो शब्द पहुँचते रहते थे, वे अब नही पहुँचते। रेलवे स्टेशन, बस स्टाप, रिक्शा स्टेन्ड आदि किसी भी स्थान पर अब उन्हे वह रस नही मिलता। वे दुखी थे। ऐसे दुखी, जो अपना मंतव्य बयान नही कर पाते थे। उसी क्रम मे थे टेन्ट हाउस और माईक वाले जन।

दुखियो के समूह मे श्रमजीवी–वर्ग भर नही था, गुरु प्रस्थान से हर वर्ग दुखी था। क्या व्यापारी, क्या बुद्धिजीवी, क्या समाजसेवी, सब। मगर उनके पास अपना दुख समाप्त करने के लिए मन वाणी थी, वे गुरुवर की चर्चा तो कभी प्रशसा कर, अपना दुख भुला लेते थे– गुरुवर के प्रवचन किसी भी जाति का आदमी सुनता था तो सुनता ही रह जाता था और दूसरे दिन से नियमित हो जाता था। उनकी सरल–भाषा लोगो के हृदय छूकर आनदित कर देती थी। अनेक जैन जो मदिर आने मे नियमित नही थे, वे नित्य देवदर्शन करने लगे हैं। प्रथम तो मैं ही हूँ, रोज 'मदिर जाने लगा हूँ।' ये वाक्य है वर्षायोग समिति के सरक्षक श्री रतनलाल जी पाटनी के।

द्वितीय सरक्षक श्री मानकचद जैन (गगवाल) ने बतलाया– 'उनकी वाणी से प्रभावित हो अनेक जैन–जैनेतर भाइयो ने रात्रि भोजन का त्याग कर दिया है।'

समाज सेवी युवा, श्री कमलकुमार ने कहा– 'गुरुवर को सभी विषयो का तलस्पर्शी अध्ययन है। वाणी से तो अमृतवर्षा होती है। सत तो काफी आये है यहाँ, अभी और–और आवेगे, पर गुरुवर पू उपाध्याय ज्ञानसागर जी जैसा प्रभावनाकारी शायद ही मिले।'

"पहले साधुसत धार्मिक ग्रथो को देख कर बोलते थे, पर पू उपाध्याय श्री तो स्वत ग्रन्थ बन जाते है, रोज नये–नये पाठ सुनाते जाते है वे कभी वैज्ञानिक, तो कभी मनोवैज्ञानिक, कभी तार्किक तो कभी उपदेशक की तरह साधिकार प्रवचन करने मे प्रवीण हैं।" –बतलाया था जैन युवा परिषद के प्रदीप कुमार बाकलीवाल ने। लगभग इसी कथन की पुष्टि की थी श्री सुभाष चद सेठी ने, उनने कहा– "महाराज श्री" ने सुस्वास्थ के लिए शाकाहार की अनिवार्यता एक चरकसिद्ध वैद्य की तरह वर्णित की है।

श्री अशोक सिघई, श्री सजय बडजात्या, श्री वीरेन्द्र जैन, श्री दिलीप अजमेरा, श्री राजकुमार जैन आदि के कथन भी महत्वपूर्ण है। आरा नगर की लेखिका श्रीमती डा विद्यावती जैन ने एक स्वतत्र शब्दबोध दिया है, जो स्मारिका 'अभिवदना–पुष्प' मे दृष्टव्य है।

"धर्मबहादुर" के शब्द भी जानना चाहते हैं? धर्मबहादुर माने–राची जैन समाज के सरक्षक एव सुविख्यात समाजसेवी श्री हरकचद जी जैन– "जैन समाज की युवा और किशोर पीढी जो सुबह 8–9 बजे तक बिस्तर छोडने का मन नही करती थी, परमपूज्य उपाध्यायश्री के प्रवचनो से कुछ ऐसी प्रभावित हो गई कि प्रात 5 बजे उठ कर मदिर जी पहुँचने लगी। युवक सूर्यास्त के पूर्व भोजन के नियम मे बध गये हैं। युवावर्ग के साथ–साथ प्रौढ और वृद्धो मे भी आस्था बढी है।"

दो बुद्धिजीवी भी इस श्रृखला मे हैं, वरिष्ठ पत्रकार श्री रतनेश कुमार जैन और श्री कुलदीप सिह दीपक। प्रथम ने बतलाया– पूज्यश्री के प्रवचनो से नैतिक जागृति हुई है नगर मे। अहिसा और शाकाहार का ठोस प्रचार हुआ है। युवको मे धार्मिक चेतना और कर्त्तव्यबोध का भाव बढा है। गुरुवर की वाणी प्रभावशील है।

द्वितीय ने कहा--गुरुवर के प्रवचन का अश–अंश तो अनुकरणीय होता ही है, धार्मिक कार्यक्रमो की जो श्रृखला चातुर्मास मे चली, वह भी अनुकरणीय कही जावेगी। कार्यक्रमो से गुरुवर की वाणी और शिक्षाएँ जन–जन तक पहुँची। वे मात्र धर्म के सम्बन्ध मे नही बोलते थे, वे दीन–दुनिया से जुडी समस्याओं पर भी बोलते थे और समाधान स्पष्ट करते थे।

सत्य तो यह है कि नगर का हर व्यक्ति गुरुवर की प्रशसा मे बोलता मिल रहा था। काश वहाँ के लाखो लोगो के विचार पृथक–पृथक लिखना वश मे होता! फिर भी उन लक्ष–लक्ष लोगो की बाते चार वरिष्ठ समाजसेवियो से जानने को मिल गई हैं, जो इस तरह हैं–

रॉची दिगम्बर जैन समाज के अध्यक्ष श्री माहवीर प्रसाद सेठी ने बतलाया–गुरुवर चमत्कारी नहीं हैं, उनकी तो वाणी अतिशयकारी है, उसी से समाज मे चमत्कार हो सका है। हर जैन व्यक्ति का मंदिर और धर्म के प्रति आकर्षण बढा ही, नगर के अन्य–अन्य वर्ग और समाज के लोगो मे भी धर्म की भावना जागी है, लोग त्याग और अहिसायुक्त जीवन का रहस्य समझ सके हैं। युवा–शक्ति के धार्मिक–झुकाव मे भी ऐतिहासिक–चेतना का प्रादुर्भाव हुआ है।

श्री हरकचद काला, मत्री जैन समाज कह रहे थे–उनके प्रवचनो ही से समाज मे सक्रियता और एकता आई है, एक मायने मे नूतन–चेतना आ गई है। उनके शब्द इस नगर के भविष्य के प्रति शुभ सकेत कर गये है। उन्होने अन्य नगर के समाजो पर भी प्रभाव डाला है, यही कारण है कि हर नगर के श्रावक चाहते है कि गुरुवर का वर्षायोग या शीतयोग या ग्रीष्मयोग उनके शहर मे हो।

जैन समाज मे, बहुमान प्राप्त श्री महावीर प्रसाद जी अजमेरा के विचार हैं–पू. उपाध्यायश्री के वचनो और प्रवचनो से सामाजिक–सदभाव की नीव गहरी हो सकी है। महाराज की वाणी मे विश्वशाति के सूत्र समाये हुए हैं, जो लोगो को धर्माचरण के साथ–साथ समाज–सेवा और राष्ट्रसेवा के सकेत भी करते हैं। यही कारण है कि उनकी प्रवचन सभा मे सभी जाति के लोगो का मन लगा रहता है।

श्री महावीर प्रसाद सोगानी, जो चातुर्मास–व्यवस्था समिति के सयोजक थे उस समय, ने स्वीकारा था कि जैनो मे धर्म के प्रति भावना शिथिल पड रही थी, महाराजश्री के प्रवास से वह दृढ हो गई। गुरुवर मे कोई तप शक्ति है जो लोगो को सत्पथ की ओर चलने को प्रेरित करती है। जो धर्म–ज्योति उन्होने प्रज्ज्वलित की है इस नगर मे, वह भविष्य मे भी इसी तरह तेजवान रहे, ऐसा सभी का प्रयास हो। ❑

हर व्यक्ति के पास 'दो शब्दो'की पूँजी बन गई थी, गुरुवर के सम्पर्क से, सो यदि विचार जानने का क्रम चलता रहता तो एक बडा ग्रन्थ तैयार हो जाता, पर गुरुवर के शब्द याद है–'हर वस्तु की सीमा/मर्यादा होनी चाहिए।'अस्तु। ❑

तो कथा चल रही थी –गुरुवर के राची से प्रस्थान की और उदयगिरि–खण्डगिरि यात्रा की। बिहार प्रान्त के बाद उडीसा प्रान्त की ओर जाना। प्रान्तों की अपनी परम्पराये होती है, उड़ीसा की परम्परा देख कर, गुरुवर के साथ चल रहे भक्तो को नव–प्रेरणा मिली–नमोस्तु–करने की। वहाँ के लोग जो रास्ते के गावो मे मिल रहे थे, क्या जैन, क्या अजैन, सभी का नमन करने का ढग प्रभावित कर रहा था– वे लोग गुरुवर के समीप आते और सड़क पर ही, साष्टाग मुद्रा मे लेट कर नमोस्तु–नमन–नमस्कार करते थे। उनकी वह मुद्रा भुलाये नही भूलती।

गुरुवर जब राउरकेला शहर पहुँचे तो चकित, लोग कह रहे थे–हमारे जीवन मे प्रथम बार दिगम्बर–सत यहाँ तक आये हैं। लोगो मे भारी भक्ति, बहुत अधिक समर्पण का भाव, वह भी जैनो भर मे नहीं; अजैनो में भी।

गुरुवर धर्म के प्रति बन आये इस झुकाव से प्रसन्न हुए थे, पर वहाँ के लोगो मे मास–मछली खाने की वृत्ति से दुखी। गुरुवर ने प्रेरणा की कि ये अभक्ष्य हैं, इन्हे त्याग कर ही जैन–धर्म के पथ पर चला जा सकता है।

गुरुवर की वाणी ने चमत्कार दिखलाया, लोगो ने ससमूह त्याग की घोषणा का मन बनाया। तब तक कटकवासी नागरिक आ गये, उन्होने कटक चलने की प्रार्थना की। गुरुवर तो नित्य चल रहे थे, अत वे वहाँ के लिए भी चल सके।

कटक की सीमा पर समाज ने श्रद्धा के दीप जलाकर ऐसी अगवानी की गुरुवर की कि साथ चल रहे श्रावक देखते रह गये। वहाँ, औपचारिकताओ से परे, केवल श्रद्धा और भक्ति की धाराये बह रही थीं चेहरो पर। श्रावको ने चरण पकड लिए– 'गुरुवर, दो शब्द बोले बगैर न जाना। हमे वाणी से धन्य कर दीजिए।'

आहार चर्या, सामायिक के बाद श्रावको को प्रवचनो का लाभ मिल गया। गुरू की वाणी से वहाँ भी एकता का सचार हुआ और खानपान, शाकाहार, अहिसा का प्रचार।

प्रवचनो के पश्चात गुरुवर ने विहार कर दिया। अब साथ चल रहे लोगो का समूह और बडा हो गया, उसमे राउरकेला और कटक के श्रावक जो समाहित हो गये थे। ❑

गुरुवर ने 13 दिसम्बर 92 को उदयगिरि–खण्डगिरि क्षेत्र स्पर्श कर लिया। हो गया क्षेत्र प्रवेश। समीपस्थ बसा महानगर भुवनेश्वर–उडीसा की राजधानी–स्वागत के लिए आतुर था। वहाँ के श्रावक भी यात्रा मे सम्मिलित हो गये।

उदयगिरि की सौ फुट से अधिक ऊँची पहाडी गुरुवर के सानिध्य से मुस्करा उठी। पाषाणो मे मौन वार्ता छिड गई– 'आओ सन्त आओ, स्वागत है। कभी भगवान महावीर भी हमारे समीप आये थे, समवशरण के साथ आये थे, तब उनके प्राण–प्रदायक–प्रवचन हमे सुनने को मिले थे। हम तभी से प्राणवान हो गये हैं, मनुष्य से अधिक शीघ्रता से हम धर्मवाणी सुन लेते हैं और उसे दिशा–दिशा मे गुजायमान करते रहते है। हमारे हर पाषाणखण्ड पर समयसार टकित है, यह पृथक बात है कि मनुष्य की कमजोर दृष्टि उसे बॉच नही पाती। हे गुरुवर, आप उसे बॉचने पधारे है, आपका स्वागत है। यहाँ जो बारह गुफाएँ हैं, वे इस अतिशय क्षेत्र के हृदय के बारह कक्ष ही तो हैं, उनमे भीत्तिचित्र और तीर्थकरो की प्राचीन प्रतिमाओ का अवलोकन कीजिए। महाराज, आप तो जानते हैं, पर्व मे, इन गुफाओ मे मुनिगण तपस्या करते थे। उदयगिरि की तुलना मे खण्डगिरि की ऊँचाई ज्यादा है, वह सवा सौ फुट से अधिक है। इस क्षेत्र को पहले– 'कुमारी–पर्वत' कहा जाता था, पर कालातर मे इसका नाम विद्वानो ने बदल दिया। खण्डगिरि पहाड़ी मे 99 गुफाए हैं, उनका अवलोकन भी कीजिए। हे गुरुवर नमोस्तु!, ❑

गुरुवर करीब आठ दिवस क्षेत्र पर रुके। अनेक शहरो के समाजसेवी हाजिर रहे। गुरुवर ने श्रद्धापूर्वक क्षेत्र की वदना की। क्षेत्र के धार्मिक और ऐतिहासिक महत्व से वे पूर्व परिचित थे। अत अपने प्रवचनो के माध्यम से उन्होने क्षेत्र के जर्रे–जर्रे का परिचय प्रदान कर दिया श्रावको को। फिर क्षेत्र का सदेश भी

सुनाया–यह महान क्षेत्र दयनीय अवस्था मे पहुँच चुका है, देख कर मानवो मे उदासी आना स्वाभाविक है। यह हमारे पूर्वजो की महत्वपूर्ण धरोहर है। इसकी सुरक्षा कर, विकास करना हमारा नैतिक धर्म है।

गुरुवर ने सभा मे स्पष्ट आह्वान किया कि क्षेत्रीय लोग एव समितिया पहले प्रयास करे, तब उनके अनुरोध पर देश की तीन–चार राष्ट्रीय स्तर की सस्थाएँ अवश्य ध्यान देगी और क्षेत्र के विकास का हेतु बनेगी।

गुरुवर का उद्‌बोधन प्रभावनाकारी था। अत समाज ने तुरन्त घोषणा कर दी कि छह माह के भीतर तलहटी मे मदिर निर्माण कर दिया जावेगा, जिसके एक कक्ष से क्षेत्र–विकास की गतिविधियॉ सचालित की जा सकेगी।

समाज के आश्वासन से गुरुवर को सतोष बँधा। एक दिन पहाडियो से विदा ले गुरुवर विहार कर गये। लौट पड़े बिहार प्रान्त की ओर। पहाड़ियॉ विचार करती रह गईं कि कभी महावीर भी ऐसे ही लौटे थे यहॉ से। ❑

‘सराकों के राम’

नूतन वर्ष सामने था। एक जनवरी 1993 को गुरुवर के पावन चरण बिहार प्रान्त की सीमा में स्थित उपनगर चाईवासा मे पडे। वहॉ के पत्रकारो ने घेर लिया। फलत एक प्रेस कान्फ्रेन्स (पत्रकार वार्ता) को आकार मिल सका। गुरुवर ने पत्रकारो को भी वही श्रेष्ठ सदेश प्रदान किया कि पत्रकार गौरवान्वित हो उठे, जब उन्हे गुरुवर के श्रीमुख से सुनने को मिला– "देश मे बिहार प्रदेश का महत्व सर्वाधिक है चाहे इतिहास से पूछो और चाहे धर्म, सस्कृति, साहित्य, राजनीति और भूगोल के बिशेषज्ञो से, देश का अर्थशास्त्र बिहार के अर्थशास्त्र से जुडा हुआ है।" ❑

चाईवासा से टाटानगर (जमशेदपुर) पहुँचे, ससघ। वहॉ भी प्रेरणाकारी प्रवचन। शब्द क्रान्ति बरसा रहे थे– 'आज के जैन–मदिर पूर्व मे सिर्फ जैनियो के लिए नही थे, वे सर्वसमाजो के लिए प्रकाशदीप थे।'

सयोग से टाटानगर मे भी पत्रकार वार्ता का आयोजन किया गया। तब गुरुवर ने अनेक विषयो को स्पर्श करते हुए सभी पत्रकारो के उत्तरो के यथायोग्य सटीक उत्तर दिए। जब एक पत्रकार ने शाकाहार पर प्रश्न रखा तो मुनिवर को विशाल धरातल मिल गया बोलने को, जिससे सभी पत्रकार प्रकाश पा सके। गुरुवर ने कहा था कि शाकाहार मे ही रामराज्य की कल्पना छुपी है और उसी मे विश्वशाति के सूत्र हैं। जो देश जब भी शाकाहार अपनायेगा, स्वत अनुभूति करेगा। ❑

टाटानगर मे सराकबधु निवास नही करते हैं किन्तु समीपी ग्रामो मे तो हैं ही अत वे आये। स–समूह आये। गुरुवर के दर्शन किये। फिर पूजा–अर्चन–आरती। वे प्रार्थना कर बैठे कि गुरुवर उनके क्षेत्र मे भी चरण धरे। पधारे। उपकृत करे।

सराको की बोली महत्वपूर्ण है, वे हिन्दी तो कुछ ही जानते है, शेष लोग बगाली बोली, तो कुछ बिहारी–बोली और कुछ उडीसा–प्रभावित बोली जानते हैं। उनकी बाते सुनकर अच्छा लगता था।

दूसरे दिन पुन सराक बधुओ सहित विशाल श्रावक समूह गुरुवर के दर्शनार्थ आया, फिर प्रार्थना की। उस दिन की प्रार्थना विशेष थी, उन्होने करबद्ध हो कहा था– हे नाथ। हम वाणी या पोशाक से जैसे भी दिखते हो, पर इस क्षेत्र के प्राचीन जैन हम ही है, हम जैनो के वशज हैं, जैनधर्म के अनुयायी हैं, किन्तु समय के थपेडो ने हमे जैन समाज की मुख्य धारा से दूर कर दिया है। हमारे मदिर छूट गये है। हम जैन होकर भी जैन नही कहलाते, हमे 'सराक'कहा जाता है। हमारे क्षेत्र मे, देश के किसी दिगम्बर–मुनि का आज तक आगमन नही हुआ है। सो आप अपना मूल्यवान समय प्रदान कर हमे कृत्कृत्य करे। (क्षण भर को लगा जैसे अभिशप्त अहिल्या राम को पुकार रही हो!)

उनकी प्रार्थना से गुरुवर का रोम–रोम खडा हो गया, जैसे वे उन्हे रोम–रोम से आशीष दे रहे हो। गुरुवर ने विचार किया, फिर उत्तर दिया–आप निश्चिन्त रहे, यह सघ आपके क्षेत्र मे जायेगा। आपको कोई व्यक्ति 'सराक'कहता है तो इसमे आपका ही गौरव है, क्योकि आज का सराक ही कल का श्रावक था। श्रावक समाज को कालान्तर मे 'सराक'कहा गया होगा, यह हैरान होने की बात नहीं है। आप जैन हैं, आदिजैन है, श्रेष्ठ श्रावक है, इसलिए सराक सम्बोधन को अपना सार्थक–परिचय माने।

गुरुवर के सम्बोधन से उपस्थित समूह गद्गद् हो गया, कई लोगो के तो खुशी से ऑसू प्रवाहित हो पडे। ❑

धारणा संकल्प मे बदल गई। गुरुवर ने टाटानगर से सराक–क्षेत्र मे प्रवेश कर दिया। साथ मे विशाल समूह में श्रावकगण ग्राम– ग्राम रुक कर सराक–सस्कृति को सम्मान जुटाते और आगे बढ जाते।

धीरे–धीरे चरण उस गॉव मे पहुँच गये जो सराक–क्षेत्र की चेतना से जुडा है–तड़ाई। (तडाई गॉव जहॉ बाद मे गुरुवर ने वर्षायोग कर सारे देश को चकित कर दिया था) वे हर गॉव मे प्रवचनो–उद्‌बोधनो के दीप बोलते चल रहे थे।

यात्रा टाटानगर से बुडु उपनगर के लिये थी पर रास्ते का हर गॉंव पुकार रहा था गुरुवर को। जब गुरुवर तडाई ग्राम के समीप पहुँचे तो देखते हैं कि भक्तगण अगवानी के लिए उपस्थित हैं। गुरुवर ने उन्हे प्रसन्नता से समय दिया। वे भक्त चरणो के प्रक्षालन के पश्चात् प्राप्त चरणोदक को श्रद्धासहित पी सकते थे, पर वे जानते थे कि जैनधर्म मे श्रद्धा चरणोदक को पीने मे नहीं है, नेत्रो–माथो पर लगाने मे है।

भारी स्वागत–सत्कार के बाद वे भक्त, शोभायात्रा के साथ गुरुवर को बस्ती मे ले गये। रुके एक पुराने जैन मदिर के समक्ष। गुरुवर ने जब वह मंदिर देखा तो आश्चर्य मे पड गये। विश्वास पुष्ट हो गया कि सराकबधु जैनत्व और जिनवर से अभी भी जुडे हैं।

जब तक गुरुवर ने जिनबिम्ब के दर्शन किये तब तक सराको ने गुरुवर के। हर सराक का मन–मयूर नाच रहा था। उनके भीतर जो उत्साह था यदि उसे (मैं) शब्दो मे वर्णित करता तो कहता–

आये, हॉ आये, हमारे महाराज।
द्वारे पर आये हमारे महाराज।

श्रावक–श्रावक विहँस गये है,
नगर गॉव मिल उमड़ पडे हैं,
पुलकित हो, चरणो तुम्हारे महाराज।
आये, हॉ आये, हमारे महाराज।।

चरणों का कर परस औ बदन,
धूलि यहॉ की बनगई चदन।
वचनो का अमृत पिला दो महाराज,
आये, हॉ आये, हमारे महाराज।।

पाकर गुरुवर थारे दर्शन,
आज गॉव यह हुआ सुदर्शन
दर्शन के पुण्य प्रबल महाराज,
आये, हॉ आये, हमारे महाराज।।

जो गौरव हैं आज विश्व के,
तीर्थंकर हैं जो भविष्य के,
सराकोद्धारक हमारे महाराज।
आये, हाँ आये, हमारे महाराज। ❑

भक्तो के ह्रदय–मन मौनगान करते रहे, तब तक गुरुवर आहारचर्या के लिए निकल पडे। भोलेभाले सराको के चौके मे गुरुवर के निरतराय आहार हुए। पुन एक बार सम्पूर्ण ग्रामवासियो के ह्रदय नाच उठे– 'जगतगुरु उपाध्यायश्री के आहार उनके नगर मे सम्पन्न हुए' इन भावो से हर सराक पुलकित था।

आहार के बाद पुन गुरुवर ने कुछ समय चर्चा के लिये दिया--श्रावकों--सराकों को। फिर सामायिक पर बैठ गये। सामायिक के बाद विहार। नगर मे 12 जनवरी 93 का दिवस स्वर्ण अक्षरो से लिपिबद्ध हो गया आत्माओ के शिलालेख पर। ❑

जगलो के मध्य, राची से 80 कि मी दूर, बसा है तडाई। टाटानगर से 55 कि. मी.। आप पूछेंगे वहाँ कितने मकान होगे? सुन लीजिए, 'मकान'तो हैं ही नही, 'घर' हैं वहाँ, घर। मकान और घर का अर्थ समझ रहे होगे? जहाँ सीमेंट, लोहा, पत्थर का उपयोग किया जाता है, वह कहलाता है मकान। और जहाँ मिट्टी, लकडी और कच्ची ईंटो का उपयोग किया जाता है, वह होता है घर। तो तडाई में घर थे, मकान नहीं। सख्या? मात्र साठ घर। उन्ही मे सराक, उन्हीं मे अन्य के थे। घरो के पास ही भगवान महावीर की मूर्ति से खिला हुआ एक छोटा सा मदिर वहाँ की शाति और भक्ति का प्रकाश स्तम्भ है। वह 12 जनवरी 93 का दिवस था।

गुरुवर सामायिक के बाद तडाई से चले तो देवलटाड गॉव पहुँचे। वहाँ भी वही परिदृश्य--जगल के मध्य, छोटा सा गॉव, आधुनिक--युग की सुविधाओ से अछूता, मेहनत और मजदूरी करने वाले लोगों से भरा हुआ। वहाँ भी एक प्राचीन जैन मदिर उसमे तीर्थकर भगवान की दो प्रतिमाओ के दर्शन। स्थिति जीर्ण शीर्ण। गुरुवर ने सराकोद्धार के साथ--साथ प्राचीन मदिरो के उद्धार पर भी ध्यान देने की बात, साथ चल रहे श्रावको से कही। श्रावको को विश्वास हो आया कि गुरुवर का ध्यान जहाँ पहुँचा है, वे कार्य शीघ्र आकार पा जायेगे।

गुरुवर ने वहाँ से विहार कर दिया। उनके चरण इतने छोटे--छोटे और पिछडे ग्रामो में पड रहे थे कि साथ चल रहे राची, टाटानगर, आदि शहरो के प्रतिनिधि चकित हो रहे थे। पहले नवाडीह, फिर अगसिया, रागामाटी ग्रामो की हालत देखी, फिर तमाड, बुडु की ओर बढे। उनके विहार--क्रम को देख कवि की वाणी मुखरित हो पडी--

> तुम घूम रहे हो गॉव--गॉव,
> तुम जगा रहे हो खोर--खोर।
> छू सका न ऐसा कोई सन्त
> तेरे यश का यह ओर--कोर।।

बुडु ग्राम के ग्रामीण अपने गॉव की सीमा पर गुरुवर की प्रतीक्षा कर रहे थे। पहुँचे गुरुवर। हुई अगवानी। श्रद्धा और भक्ति के सागर मचल पडे थे बुडुवासियो के मनो मे।

ग्रामीणो की प्रार्थना थी कि गुरुवर रुके। पर गुरुवर उस समय न रुक सके. प्राचीन मंदिर के दर्शन किये और विहार को उद्यत। ग्रामीणो के अश्रु देख गुरुवर ने सकेत किया--बाद मे इस नगर से ही रास्ता रहेगा, निश्चिन्त रहे, तब यहाँ अल्प--प्रवास सम्भव होगा।

गुरुवर जब मदिर के रास्ते मे थे, तब उनकी दृष्टि मे वह स्थान आ गया जहाँ मास बिकता था। वे कुछ सोचने लगे, तब तक जिले के कलेक्टर श्री अजमेरा साहब सामने आ गये, उन्होने गुरुवर के दर्शन किये। गुरुवर का सकेत समझा।

उसी समय उन्होने मास दुकान हटाये जाने के आदेश दिए। आदेश से मांसाहारी लोग चकित हो उठे। शाकाहारी लोग प्रसन्न। गुरुवर सामायिक पर बैठ गये। शाकाहारियो को लगा कि आदेश के कारण गॉव मे तनाव फैल सकता है, पर वह मिथ्या साबित हुआ।

दूसरे दिन वह मास–दुकान वहाँ नही थी। गुरुवर के निकलने मात्र से इतना बडा कार्य हो गया। ग्रामवासी सोचने लगे कि जब गुरुवर यहाँ कुछ दिन रुकेगे तो जाने कितने परिवर्तन हो सकेगे! गुरुवर, हर गॉव मे अहिसा, शाकाहार और निर्व्यसन–जीवन की प्रेरणा करते बढ रहे थे। लोग धन्य हो रहे थे। गुरुवर के प्रवचन कही होते थे, कही सिर्फ वार्ता, और कही–मौन ही रहे आते थे। उनका दिगम्बर–बाना हर स्थान पर छाप छोडता आगे बढ रहा था।

पागुरा ग्राम मे प्रवेश किया। चेतना जगाई लोगो मे। फिर चल दिये तमाड की ओर। जगल का रास्ता। धर्म का वास्ता। पागुरा के भक्त सम्बोधनामृत पा चुके थे, तमाड के प्रतीक्षा कर रहे थे।

बीस जनवरी को पागुरा छूट गया पीछे, सामने था तमाड। वहाँ के भक्तो ने भारी जयघोषो के साथ गुरुवर की अगवानी की। पादप्रक्षाल। आरती। दोनो सत फिर चले शोभायात्रा के साथ। उन्हे देख हिन्दूवर्ग के लोग कहते–राम लक्ष्मण का वन प्रवास हुआ है शायद। वे सत्य कह रहे थे। मगर यह कहना भूल गये थे कि समग्र सराक बधु अहिल्या की तरह अभिशप्त है एक युग से, उन्हे युगराम पू. ज्ञानसागर जी महाराज श्रापमुक्त करेगे, उन्हे प्रगति के प्रभात तक ले जायेगे।

गॉव मे गुरुवर ने अपनी गरीयस गिरा से वचनामृत की धारा गिरायी, ग्रामीण चहक उठे। उस समय वहाँ ग्रामीण भर नही थे, शहरो के समाजसेवी भी थे, उनमे प्रमुख श्री हरखचद पाण्ड्या राची, चुप न रह सके, उन्होने ग्रामीणो की ओर से प्रार्थना की– 'हे गुरुवर आप जैसे सत ही इन ग्रामो और ग्रामीणो के उत्थान का प्रशस्त मार्ग बतला सकते है। अत आप अपना समय इस क्षेत्र को, लगातार, देने की कृपा कीजिए। आप पच्चीसो ग्रामो मे कब तक पहुँचेगे, ऐसा क्षण दीजिए कि 25 ग्राम के सराक एक स्थान पर आपको सुन सके और विनती सुना सके।'

पाण्ड्या जी के वचनो से, ग्रामीणो को बल मिला। फलत वे सब अपने मनो के भाव शब्दो मे ले आये और पुज की तरह गुरुवर के समक्ष रख दिये।

गुरुवर समय और समस्या पर ही विचार कर रहे थे। अत उन्होने स्पष्ट किया– 'जिस गॉव तक सभी जन बराबर श्रम कर पहुँच सके। उस ग्राम मे रुक कर विचार विमर्श करना होगा।'आने–जाने की सुविधा से, सभी ग्रामीणो को बुडु ग्राम उचित जँचा जो अनेक ग्रामो के मध्य मे है। उसकी भौगोलिक स्थिति हर गॉव के लिए अनुकूल है।

देखते ही देखते उपस्थित श्रावको की अनाहूत बैठक सम्पन्न हो गई, सबने गुरुवर से ही कहा, 'सराक–क्षेत्र' आप देख–समझ चुके हैं। आप जिस ग्राम को उपयुक्त समझेगे, हम उसे ही 'सराक–केन्द्र' मान लेगे। गुरुवर बोले "हमेशा के लिए न सही, समय विशेष के लिए 'बुडु' सभी ग्रामीणो को सुविधाजनक रहेगा।"

गुरुवर के सकेत सभी को शिरोधार्य थे, मगर भक्ति के वशीभूत, भक्तगण कह पडे विनय पूर्वक–हे गुरुवर! हमारे तमाड मे आपके चरण पड चुके है यह हमारा अहोभाग्य है, अब कुछ दिवस यहाँ ठहर कर हमे ज्ञान प्रदान कीजिए।

गुरुवर ने समझाया–आप लोग ठीक कह रहे है, किन्तु आप अकेले लाभ क्यो लेना चाहते है। अन्य ग्रामो को भी लाभ मिले ऐसा सोचिए।

ग्रामीण, बेचारे चुप रह गये। कहते भी तो क्या? ❑

अगला पडाव वही था, जो सोचा था–बुडु।

गुरुवर ने बुडु गॉव मे इतना अधिक समय दिया कि एक या दो नहीं, पच्चीस से अधिक ग्रामो के सराक उनके दर्शन करने, उपदेश सुनने रोज पहुँचने लगे।

विदुषी बहिन ब्र अनीता जी और ब्र मजुला जी सहित ब्र मनीष जी भी थे। राची आदि के अनेक सामाजिक कार्यकर्ता भी, अतएव गुरुवर ने 9 फरवरी से 17 फरवरी 1993 तक सराक भाइयों के लिए–शिक्षण–शिविर–की आज्ञा दे दी। यह प्रथम शिविर था। चुस्त/कर्मठ कार्यकर्ताओ के समक्ष गुरु–आज्ञा का पालन भारी तत्परता से किया जाता है। वह क्षण यहॉ भी आया, देखते ही देखते, व्यवस्थाऍ पूर्ण हो गई।

शिविर प्रारम्भ। प्रथम दिवस ही गुरुवर का कल्याणकारी उद्‌बोधन भी। शिविर मे आये सराक धन्य हो गये। रोज समय पर उठना, पूजा–प्रक्षाल करना। शिविर के दो सत्रो मे भाग लेना। शाम को आरती। वैयावृत्ति।

समय पर नाश्ता, समय पर भोजन और समय पर अथऊ (शाम का भोजन), नौ दिवस मानो नौ घटे बनकर निकल गये हो। किसी को विश्वास ही न होता कि इतनी जल्दी नौ दिन निकल गये। पर सत्य तो यही था कि नौ दिन बीत चुके थे।

समापन दिवस पर समारोह किया गया। राची से मान्य पाण्ड्या जी अनेक समाजसेवियो के साथ पहुॅचे, उनकी अध्यक्षता मे समापना–समारोह चला। छात्रो (शिविर मे आये–सराको) को योग्यतानुसार ग्रहीत ज्ञान के आधार पर पुरस्कृत किया गया। पॉच सौ से अधिक थे छात्र। वे 28 ग्रामो से आमन्त्रित किये गये थे। अन्य जन पृथक। सभी को 'शिविर' की सार्थकता समझ मे आ गई। अहिसाव्रत–पालन। शाकाहार/निर्व्यसनता/रात्रि भोजन–त्याग/दहेज–त्याग आदि।

अत मे विशाल शोभायात्रा के साथ तीर्थंकर भावना चद्रप्रभु जी की नयनाभिराम झॉकी निकाली गई। नगर–यात्रा। जगल मे मगल। हर कठ जयघोष उच्चारित करता चल रहा था– 'परमपूज्य उपाध्याय ज्ञानसागर महाराज की जय।'

यात्रा के बाद गुरुवर का प्रवचन। वही मत्र जो नित्य–नित्य कर्णकुन्डो मे फूॅका जाता था, दिया गया– "सराको को अपने दैनिक आचरण से सिद्ध करना है कि वे मूल रूप से जैन थे, जैन है। फिर जैनो/श्रावको को सिद्ध करना है कि सराको की तरक्की के लिए प्राणपण से जुटे हैं, जुटे रहेगे।" ❑

शिविर–विसर्जन के समय हर गॉव के सराको ने गुरुवर के चरणो मे श्रीफल चढाये और अपने गॉंव आने की प्रार्थना की। गुरुवर सभी को आशीष दे रहे थे। धीरे–धीरे 28 ग्रामो के प्रतिनिधियो ने प्रार्थना की। तब तक बिहार प्रान्त (अब झारखण्ड) के 'सबसे बडे–गॉव' रॉची के सराक/श्रावक माननीय पाण्डया जी भी प्रार्थना कर बैठे–राची पधारने की। गुरुवर मुस्कराये, फिर बोले–राची आ जाऊॅगा तो फिर यहॉ का कार्य ?

प्रश्न सुन पाण्डया जी हॅस पडे, फिर बोले–महाराज, आप जो उचित समझे। ❑

बुडु से गुरुवर ने विहार किया और पुन उस नगर को पहुॅचे, जहॉ के युवक साथ–साथ चल व्यवस्थादि पर ध्यान दे रहे थे, वह भाग्यशाली ग्राम था–पागुरा। वहॉ गुरुवर ने काफी समय दिया। फलत 'पद्रह–दिवसीय सराक शिविर' का आयोजन रखा गया। गुरुवर, 22 फरवरी 93 को पागुरा, पहुॅचे थे और पाचवे दिन से ही शिविर शुरु–27 फरवरी से 11 मार्च 93 तक।

पू उपाध्यायश्री यहाँ श्रेष्ठ शिक्षक सिद्ध हुए। वे रोज 5–7 घटे तक पीरियड लेते और पढाते। प्रयास यह था कि एक गॉव से कम से कम दो विद्यार्थी अवश्य शामिल हो। प्रयास सफलता मे परिणित हो गया। पागुरा मे 18 ग्रामो से 40 छात्र (सराक) शामिल हुए। शिविर के मुख्य स्वर थे कि हर सराक का सबन्ध जैन–जगत से हो जावे, हर सराक बौद्धिक स्तर पर भी जैनो की बराबरी करे, हर आगत छात्र इतना सीख ले कि वह अन्य ग्राम मे जाकर शिविर की शिक्षा का प्रचार–प्रसार कर सके, हर सराक णमोकार मत्र का सही/साफ उच्चारण करे, हर सराक परमेष्ठी का पूजन–प्रक्षाल सीख ले और विश्वास करे कि वह जैन है। उन्हे तीर्थंकर भगवान पार्श्वनाथ और भगवान माहवीर का इतिहास समझाया गया, साथ ही जैन सत की चर्या, व्रत–नियम, आहारविधि के विषय मे भी जानकारी दी गई। 'जिनवाणी' का महत्व प्रतिपादित किया गया।

समस्त शिविरार्थी मूलरूप से जैन थे ही, देव, शास्त्र, और गुरु के प्रति उनमे जन्मजात श्रद्धा थी। अत शिविर का वातावरण उन्हे जगा देने मे श्रेष्ठ निमित्त बन सका। वे शिविर मे जागे ही भर नही, उन्होने जीवनपर्यन्त 'निभाने' की प्रेरणा भी पाई, गुरुदेव जो नित्य उनके समक्ष उपस्थित होते थे।

शिविर की सफलता से दो विशाल पक्षो मे शाति के सूर्य उदय हो चुके थे, दोनो प्रसन्न थे। प्रथम पक्ष उन श्रावको का था जो आयोजक थे, दूसरा उनका था जो छात्र/शिविरार्थी थे। शिवरार्थियो मे शिक्षण के कारण धर्म, ज्ञान और सस्कार के सकल्प इस्पात की तरह दृढ हो पडे थे, हो भी क्यो न, वह क्षेत्र भी तो इस्पात का है। एक मार्च 1908 को वहाँ 'टाटा इस्पात कम्पनी' की स्थापना जो हो चुकी थी। इस्पात–क्षेत्र के लोगो के सकल्पो मे इस्पात पैदा कर देने वाले सत कौन थे ? लौह–पुरुष परमपूज्य उपाध्याय ज्ञानसागर जी। सच उनका पुष्प सा हृदय, अमृतसी वाणी और गॉधी सा सामान्य कलेवर, वहाँ–सराक क्षेत्र मे–इस्पाती परिवेश गढने मे पूर्ण सफल रहा। ❑

जिन 70 प्रमुख युवको ने प्रशिक्षण प्राप्त किया था, उन्हे गुरुवर ने एक–एक, दो–दो की टोली मे, 21 ग्रामो मे शिविर चलाने और व्यवस्था करने रवाना कर दिया। हर टोली के साथ एक ब्रह्मचारी जी या पडितजी या विशेष सामाजिक कार्यकर्ता को भेजा। 12 से 27 मार्च तक शिविर चले। कुछ ग्रामो मे 26 मार्च से 3 अप्रैल तक, कुछ मे 7 से 14 अप्रैल और कुछ मे 14 मई से 21 मई 93 तक। इस तरह ग्राम रुगडी, देवलटाड, नौढी, माझीडीह, आगसिया, हराडीह, तडाई, चोकाहातु, हुरुण्डीह, नवाडीह, तमाड, चिपडी, रडगॉव, बेडाडीह, पाण्डाडीह, खरसोवा, सरपाद, गुटट्हातु, पागुरा और बुडु सहित 21 ग्रामो मे धर्मचेतना, सामाजिक चेतना, सस्कार चेतना और ज्ञानचेतना की ज्योति गुरुवर ने प्रज्ज्वलित कर दी।

गुरुवर को तो ग्राम–ग्राम मे जागृति लानी थी। उसका सूत्रपात हो गया था–शिविरो से 907 सराको ने ज्ञानार्जन किया था।

मुझे गुरुवर के कार्य और कार्यशैली देखकर देश के स्वातत्र्य–समर के दिन याद हो आये, जब महात्मा गाधी जी गॉव–गॉव पहुँच कर लोगो मे नूतन–ऊर्जा का सचार करते थे, ठीक उसी तरह गुरुवर ज्ञानसागर जी विहार कर रहे थे उस अचल मे। पागुरा के बाद उन्होने जिस गॉव की सुध ली, वह नौढी कहलाता है। यह भी उन्हीं ग्रामो जैसा है, जैसे अन्य।

गुरुवर नौढी पहुँचे कि वहाँ के ग्रामीणो में भी प्रेरणा का सचार हो पडा, उनके समक्ष महावीर जयती का समारोह था, तिथियाँ निकट थी। उन्होने प्रार्थना की गुरुवर से कि उत्सव यहाँ ही मनाइए। गुरुवर मौन रहे, पर मुस्कराते रहे, मानो स्वीकृति मिल गई।

किसी श्रावक ने ग्रामीणो को बतला दिया कि जयती के दिन ही गुरुवर का 'मुनि--दीक्षा--दिवस' पडता है अब क्या था, लोगो मे उत्साह दोगुना हो गया, एक के बजाय, दो समारोह मनाने की धुन सवार हो गई।

गुणीजनो ने हिसाब लगाया तो स्पष्ट हो गया कि गुरुवर को मुनिदीक्षा धारण किये हुए, जयंती पर, पाच वर्ष हो जावेगे। ग्रामीणजन कहने को ग्रामीण थे पर उनमे धर्म और सत के प्रति शहरियो से कम समझ न थी। अत महावीर जयती पर विराट--समारोह के आयोजन के साथ उन्होने, मुनि--दीक्षा दिवस समारोह का सुखद आयोजन किया, उनके आयोजन मे राची और टाटानगर भर के श्रावक आये हो, ऐसा नहीं, दूरस्थ बसे नगर आगरा, चदेरी, खेकडा आदि के भक्त श्रावक भी पहुँचे। अनेको के मध्य श्री पाण्ड्या जी अलग ही पहचान मे आ रहे थे। राची के कलेक्टर श्री अजमेरा और एस एस पी श्री काशवान भी पूर्ण श्रद्धासहित गुरुवर के दर्शनार्थ उपस्थित हो गये थे।

अनेक महानुभावो के भाषण--उद्‌बोधन हुए, सभी ने सराको के उद्धार--विषयक परामर्श दिए और रास्ता दिखलाया। मगर जब सराको की ओर से एक विद्वान श्री गोविन्द दास जी ने भाषण दिया तो सभी का दिल जीत लिया। उन्होने धर्म और सत के प्रति अपनी उत्तम जानकारी की छाप छोडी, वे बोले--सत की प्रथम भावना होती है कि वह 'पचम गति'प्राप्त करे। वे पच महाव्रत धारण करते हैं। पाच समितियो का पालन करते हैं। पॉच--पापो का परित्याग करते हैं। हमारे बीच ऐसे महान सत विराजे हैं, परमेष्ठी--पद प्राप्त कर चुके है। वह महान पद, महान--बाना धारण किये उन्हे आज पाच वर्ष हो चुके हैं। ऐसे पॉच पावन अको का सुख देने वाले राष्ट्रसत परम पूज्य उपाध्यायरत्न ज्ञानसागर जी महाराज के चरण हमारे गॉव मे पडे हैं। अत हम उनका सश्रद्धा जयघोष करते हैं। जीवन भर करते रहेगे।

उनका इतना कहना था कि श्रोता--समूह से स्वर तीव्र हो आकाश स्पर्श करने लगे-- 'उपाध्याय ज्ञानसागर महाराज की जय हो।' फिर पॉच दीपक बाले गये, पाचो से गुरुवर की आरती। पुन श्रोता समूह मे काफी समय तक जयकारा होती रही। कार्यक्रम आगे बढा। "श्री कुदकुद भारती" नामक ग्रन्थ का विमोचन कराया गया गुरुवर से।

उस महान दिवस के कार्यक्रम दो भागो मे थे। प्रात काल भगवान महावीर की मगलमय मूर्ति का अभिषेक और पूजन गुरुवर की उपस्थिति मे सम्पन्न हुआ था फिर मध्याह्न मे धर्म--सभा।

श्रीमन्त हरकचद ने भाषण के दौर मे स--गौरव स्पष्ट किया कि जो कार्य आगामी पॉच वर्षों मे भी नहीं किये जा सकते थे, वे गुरुवर की उपस्थिति से मात्र पाच माह मे सम्पन्न हो गये हैं और आगामी कार्यक्रमो के लिये समयबद्ध--योजना भी बन चुकी है। मैं ही क्या, सम्पूर्ण देश गुरुवर के साथ है। अत सराक--क्षेत्र मे विकास और ज्ञानोजास की गति अब धीमी नही पड सकती।

कलेक्टर श्री अजमेरा भी गुरुवर से काफी प्रभावित हुए थे। अत उन्होने अपने उद्‌बोधन मे उनकी सीमाधिक, ठोस--प्रशसा की थी, और सम्पूर्ण जनसमूह को बतलाया था कि गुरुवर तो अहिसा और शाति की दिशा मे वह कार्य कर रहे हैं जो कभी ईसा मसीह तथा भगवान महावीर ने अपने--अपने समय काल मे किया था। उन्हे शाति--अहिसा का दूत कहे या अवतार, कम ही है। वे तो अब सदा 'सराकोद्धारक' कहे जावेगे।

भारी हर्ष की उत्पत्ति कर गया था आयोजन। गॉव और आनगॉव (अन्य ग्राम) मे केवल उत्साह और भक्ति देखी जा रही थी सराको के चेहरो पर। ❑

पू उपाध्यायश्री नौढी मे ही थे कि समाचार मिला– 'पू आचार्य 108 श्री सुमतिसागर जी महाराज बुडु ग्राम पहुँचने वाले है।' उपाध्यायश्री ससघ विहार कर बुडु चले गये। उन्हे अपने परमपूज्य गुरुवर की अगवानी जो करनी थी।

उपाध्यायश्री ससघ बुडु स्थित मदिर मे पहुँचे, दर्शन किये, फिर आगत जन–समूह के साथ गुरुवर की आगवानी हेतु नगर–सीमा पर जा पहुँचे। 'गुरु–शिष्य–मिलन' वह भी सराक–क्षेत्र मे? सब कुछ अद्‌भुत लग रहा था। उपाध्यायश्री के मुखमडल पर उत्साह की कलियॉ खिल–खिल जा रही थी, वैराग्यसागर जी को भी उतना ही हर्षोत्साह था। ब्र अनीता जी, ब्र मजुला जी और ब्र श्री मनीष भी भारी प्रसन्न थे। उन सब की प्रसन्नता देख नगरवासी प्रसन्न थे। एक मायने मे जन–समूह को दोहरी प्रसन्नता थी, उपाध्यायश्री के आगमन की और आचार्यश्री की अगवानी की। वाद्ययत्र मधुरलय से बज रहे थे। श्रावको के कठ गुरु–शिष्य की जयघोष कर रहे थे।

कुछ ही समय बाद आचार्यश्री ससघ सीमा पर आ गये। वहॉ उपस्थित श्रावको ने भारी जोश से जयकार किया। उपाध्यायश्री तीव्रता से बढ कर अपने गुरु के चरणो मे पूजा के पुष्प की मानिद गिर गये। दोनो हाथो से पिच्छिका सम्भाले हुए उपाध्यायश्री गुरु के चरणो मे ऐसे झुके हुए थे जैसे द्वय नेत्र–कमल चढा रहे हो चरण–कमलो पर। कमलो पर कमल यो ही झुके रहते यदि गुरु न उठाते तो। गुरु ने भारी वात्सल्य से शिष्य को उठाया, जैसे कोई सम्राट अपने मुकुट–मणि को उठा रहा हो। उठाया गुरु ने। नजर भर निहारा गुरु ने शिष्य को, फिर अपनी बाहो से खीच कर गले से लगा लिया। गुरु शिष्य का वह वात्सल्यपूर्ण मिलन, वह दृश्य, दुर्लभ था। जो व्यक्ति जहॉ खडा था, मत्रमुग्ध हो देख रहा था। सारे वातास मे कुछ क्षणो के लिए सन्नाटा छा गया। शाति बरस रही थी शॉतिदूतो पर। पावन–ग्रन्थ मे जैसे एक बडा अध्याय और जोड दिया हो समय–सम्राट ने।

'मिलन' का पावन दृश्य सभी निहार रहे थे। फिर प्रकृति क्यो पीछे रहती, सूरज ने निहारा, वृक्षो ने निहारा हवा ने अहसास किया, और धरा की धूल–मुस्करा उठी। 'जगल मे मगल' तो सभी कहते है, वह तो मगलमय 'दगल' (जमावडा, समूह) था, जहॉ दर्शन करने वाले श्रावको का पुण्य अपने पाप नाम के दुश्मन से कुश्ती लड विजयी हुआ था। सभी के पुण्य विकसित हुए और पापकर्म क्षीण।

अभी दृश्य पूरा नही हुआ था, कुछ शेष रह गया था–गुरु ने शिष्य को भुजाओ से मुक्त किया, उपाध्यायश्री उनके समीप सहजता से खडे हो गये, एक हाथ मे पिच्छि और दूसरे मे कमडलु। तब तक आचार्यश्री अपने शिष्योत्तम को फिर निहारने लगे, निहारते हुए उन्होने अपनी पिच्छिका दोनो हाथो मे साधकर, अपने शिष्य को प्रतिनमोस्तु किया। दृश्य यहॉ पूर्ण हो गया था। शिष्य के सम्मुख गुरु का प्रतिनमोस्तु–ऋजुता की गगा का उद्‌भव। वहॉ मान–गुमान समाप्त था, न कोई गुरु था, न शिष्य, एक दिगम्बर मुनि, दूसरे दिगम्बर मुनि के समक्ष अपनी मान–कषाय गलाकर विजयी की मुद्रा मे खडा था, दूसरा उसका निमित्त बना था और दोनो ने मान कषाय पर समान रूप से विजयश्री हासिल की थी। दर्शको की आखो से जो गगाये बह पडी थी, वे क्या थी? वे उनमे भरी हुई भक्ति की प्रतीक थी। धर्मवत्सलता की वेदी पर 'जलम्' की आहुति थी।

कुछ क्षणो के बाद समस्त समूह दृश्यो की दुनिया से निकला और जयघोष करने लगा। उन्ही जयघोषो के मध्य मुनिवर वैराग्यसागर जी ने अपने गुरु के चरणो मे गिर कर अपना आदर–पुष्प चढा दिया।

अद्‌भुत् था वह दिन। अद्‌भुत थे वे दृश्य।

शोभायात्रा के साथ आचार्यश्री को नगर मे लाया गया। वे अपने शिष्य की यश पताका को आकाश की ऊँचाई मे उडता देख सके थे, उस रोज। उन्हे नाज हो आया अपने शिष्योत्तम पर। श्री दिगम्बर जैन मदिर बुडु मे रुके आचार्यप्रवर और सम्पूर्णसघ। किये दर्शन।

समस्त श्रावको मे जिज्ञासा जागी कि देखे–गुरु और शिष्य किस तरह आहार चर्या पर निकलते हैं, किस तरह सामायिक और किस तरह सयुक्त–प्रवास । क्या स्थानीय और क्या बाहरी व्यक्ति, सभी के मनों मे उक्त दृश्य देखने की लालसा थी।

दर्शनोपरान्त पहले आचार्यश्री मदिर से निकले आहार चर्या के लिये। फिर उपाध्यायश्री, फिर मुनिश्री और उनके बाद अन्य व्रती। सभी के निरन्तराय आहार हुए। श्रावकगण गद्‌गद्।

फिर दोपहर की सामायिक। जिस कक्ष मे आचार्यश्री बैठे, उसी मे उपाध्यायश्री। जय हो गुरु–शिष्य की।

सामायिक के बाद सत–चर्चा। गुरुवर सुमतिसागर जी के समीप उपाध्यायश्री बैठे वार्ता कर रहे थे, वही मुनि वैराग्यसागर जी आ गये। तीनो मे घुलमिल कर बाते हुई। तीनो एक दूसरे के रत्नत्रय आदि की जानकारी प्राप्त करते रहे।

तीन बजे, अपरान्ह, समाज ने प्रवचन–सभा रख दी। नियम कहे या परम्परा, पहले उपाध्यायश्री के प्रवचन शुरु हुए, उन्होने गुरुवर के समक्ष, सराक क्षेत्र की प्रगति की चर्चा सुनाई फिर इतिहास। उस क्षेत्र मे आने वालो के कष्ट और उनके निराकरण पर भी प्रकाश डाला।

उपाध्यायश्री के बाद आचार्यश्री के प्रवचन हुए। प्रवचनो के दौरान आचार्यश्री ने अपने शिष्य की लगन की भारी सराहना की। वे बोले कि आज जब हर साधु बडे शहरो के बडे–बडे पडालो या हालो मे प्रवचन कर रहे हैं और शहरी–भीड के बीच अपनी चर्या कर रहे है, तब ये ज्ञानसागर जी जगलो और बीहडो की सुधि ले रहे है। ग्रामीणो के मध्य समय दे रहे है। सत की सुविधाओ पर उनका ध्यान है ही नही, वे तो मात्र ग्रामीणो की सुविधा और खुशी देख कर चल रहे है। उन्हे यह महान कार्य हाथ मे लिये हुए पाच माह से अधिक का समय हो गया है, मुझे उनका उत्साह देख कर लगता है कि वे जनकल्याण के भाव से चातुर्मास भी सराक क्षेत्र मे करेगे। वे जो कार्य हाथ मे लेते है, उसे पूरा अवश्य करते है, चाहे जो श्रम करना पडे, चाहे जो उपसर्ग सहना पडे। मेरा आशीर्वाद सदा उनके साथ है। वे एक मनीषी कोटि के विचारक सत हैं। मेरी कामना है कि उनका स्वास्थ्य अच्छा रहे ताकि वे निरतर अपने मिशन को समय प्रदान करते रहे।

आचार्यश्री के प्रशसा–भरे उद्‌बोधन से हर छोटे–बडे श्रोता को आत्मिक खुशी हुई। उन्हे आश्चर्य भी हुआ कि पॉच माहो से उनके साथ ऐसे महान उपाध्यायश्री हैं जिनकी सराहना श्रावक–समाज सेवी या सरकारी–अधिकारी भर नही करते, देश के वरिष्ठ आचार्य भी करते हैं।

लोगो ने उपाध्यायश्री के जयघोषो से नगर के आकाश को भर डाला। ❑

कार्यक्रम के चलते, सचालक महोदय ने सराक–प्रतिनिधि से भी दो शब्द बोलने कहा। सम्पूर्ण सराकगण हिन्दी कम जानते थे, बगाली–बोली अधिक। बिहारी और उडिया बोली का ज्ञान भी उन्हे है। प्रतिनिधि ने हिन्दी में बोला। पहले तो उन्होने क्षेत्रीय–समाज की ओर से आभार ज्ञापित किया कि उनके क्षेत्र मे देश के महान साधु ने आने की कृपा की। फिर अपनी और अपनी–दुनियॉ की तकलीफे स्पष्ट की।

उन्होने बतलाया कि सराकगण लिखाई–पढाई में पीछे रह गये, सदियो से कृषि, मजदूरी और नौकरी कर रहे हैं, जगलो मे बसे ग्रामो मे रह रहे हैं। बडा धधा न खोल सके, न विद्यालय बना सके। हम हर क्षेत्र मे पिछड कर रह गये। समाजसेवा और राजनीति हमारे लिये स्वप्न की बाते हो गईं, क्योकि हम आर्थिक रूप से पीछे हैं। हम मदिर और धर्म जानते हैं, पर उन्हे सचालित करने और निभाने की विधियॉ भूल चुके हैं। हम सच्चे न्यायप्रिय है, पर नैतिकता के विषय मे कुछ जानते नही हैं। हम सही जैन हैं, पर देश के जैन समाज से बिछुड गये हैं। अब पूज्य उपाध्यायश्री ने हम पर ध्यान दिया है, सो लगता है कि हम प्रगति के पथ देख सकेंगे। यहॉ और पुरुलिया–अचल के सैकडो ग्रामो के लोग ऐसे ही गुरु की प्रतीक्षा कर रहे थे।

पुरुलिया जहॉ 1962 से 1993 तक कोई जैन सत नही पहुँचे थे, 31 वर्ष निकल गये थे। सराको के नेत्र, पथ देख–देख पथरा चुके थे। छठवे दशक के बाद, सन 1962 मे वहॉ साहू श्री शातिप्रसाद जी ने एक मदिर का निर्माण कराया था, तब पहली बार क्षुल्लक श्री मनोहर प्रसाद जी वर्णी वहॉ पधारे थे। धूमधाम से वेदी–प्रतिष्ठा की गई थी और 'अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन सराक सम्मेलन' आयोजित किया गया था। गुरुवर ज्ञानसागर जी उसी पुरुलिया मे वात्सल्य बरसाने जाना चाहते थे।

पुरुलिया पहले बिहार प्रान्त मे ही था, किन्तु तत्कालीन शासन–प्रशासन की व्यवस्थाओ के चलते, कालान्तर मे वह पश्चिम बगाल मे शामिल कर दिया गया था। व्यवस्था की छडी घूमती रही और 15 अक्टूबर 2000 को बिहार प्रान्त के कुछ जिलो को पृथक कर झारखण्ड प्रान्त का गठन कर दिया गया था। बगाल–बिहार का क्षेत्रफल कम बढ होता ही रहा है, भूगोल के विद्यार्थी जानते होगे कि 16 अक्टूबर 1905 मे बगाल का भी विभाजन किया गया था। ❑

बुडु से प्रस्थान का समय आ गया। दो श्रीसघ मिलकर एक हो गये थे। आचार्यश्री के साथ आर्यिकारत्न दयामती माता जी, आर्यिकारत्न ज्ञानमती माता जी आदि व्रती थे तो उपाध्यायश्री के साथ मुनिवर वैराग्यसागर जी, ब्र अनीता दीदी, ब्र मॅजुला दीदी, ब्र मनीष भैया। सभी ने गुरु–आदेश पा साथ–साथ विहार किया, चरण थे पागुरा ग्राम की ओर।

पागुरा के भोले–भाले श्रावक, हा सराक, ग्राम–सीमा पर आकर खडे हो गये अगवानी के लिए। श्रीसघ जैसे ही पहुँचा अगवानी का श्रद्धापूर्ण दृश्य खिल उठा।

उपाध्यायश्री बोल उठे– 'गॉव से दो मील दूर तक चले आये–आप लोग, इसकी आवश्यकता नही थी, हम लोग तो स्वत आ ही रहे थे।' ग्रामीण मौन रह गये उपाध्यायश्री का वाक्य सुनकर, बेचारे कैसे बोलते कि गुरुवरो को अगवानी की जरूरत नहीं थी, पर ग्रामीणो को अपना कर्तव्य याद था। अत श्रद्धा के वशीभूत हो, चलते चले आये।

अगवानी का स्वरूप पूरे देश मे एकसा है। वही–भाव सहित पहले पाद–प्रक्षाल, फिर आरती, फिर जयघोष। इधर एक बात लम्बी हो गई थी, अन्यत्र श्रावकगण नमोस्तु करते हैं नदी–आसन मे या गवासन मे, यहॉ सराक क्षेत्र के श्रद्धालु श्रावक–साष्टाग प्रणाम् करते हुए भूसात हो जाते हैं, गुरु–चरणो के समक्ष बिछ जाते हैं, कटे वृक्ष की तरह चरणो मे गिर जाते हैं। श्रद्धा का यह अनोखा चलन देखने वालो को करुणार्द्र कर देता है। वह यहॉ भी हुआ।

वाद्ययत्रो की गूँज। कपड़पट्टो के समूह। ध्वजाओ की कतारे। सौभाग्यवती माताओ के शीश पर मगल कलश। कहे–एक विशाल शोभायात्रा।

ग्राम मे प्रवेश से पूर्व अनेक तोरण द्वारो से गुजरना पडा संतों को। जनसमूह जयकार करता संतसघ को दिगम्बर जैन मंदिर परिसर मे ले गया। ❑

पागुरा से बेडाडीह। वहाँ भी अगवानी।

मध्याह्न के बाद ग्रामीणो की प्रार्थना पर प्रवचन प्रदान किये संतो ने। स्वाभाविक है कि हर सराक उनकी वाणी से धन्य-धन्य हो उठा। वे चकित थे-कि जिन्हे कभी दिगम्बर साधुओं के दर्शन करने का सौभाग्य नही मिलता था, अब उन्हे आहार देने का मगलकारी क्षण भी मिलेगा।

दूसरे दिन सराक बधु के चौको मे सतो के निरंतराय आहार सम्पन्न हुए। आहारों की विधि बतलाने-सिखलाने ब्र द्वय श्रम करती थीं।

भक्त खुशी से झूम उठे और सत-बसतिका के समीप ही, ससमूह भजन गाने बैठ गये। उनकी बोली-वाणी। उनके शब्द। उनके वाद्ययत्र। उनके भाव-प्रसून। बस सुनते ही बन रहे थे। ❑

पुन विहार। बेडाडीह छूट गया, चरण जा पहुँचे नौढी। वह 17 अप्रैल 93 का मगल दिवस था, जब नौढी के सराको को सतो के प्रवचन सुनने को मिले ही, सघस्थ आर्यिकारत्न पू दयामती माता जी के केशलोच देखने का सुयोग भी मिला।

सराको के हित मे, सतो की वाणी अमृत बन बरसती रही। उन्हे केशलुचन-क्रिया और उसके महत्व के विषय मे जानकारी प्रदान करने की दृष्टि से पू उपाध्यायश्री ने सुबोध शैली मे समझाया। उनसे पूर्व कनिष्ठ साधु-ऐलक सूर्यसागर जी आर्यिका कीर्तिमती जी एव गाणिनी आर्यिका ज्ञानमती जी के भी प्रवचन हुए थे।

दो दिन का समय दिया सतो ने नौढी वालो को, लगा कि उनके दो भव सुधर गये। कृपा सतो की।

वहॉ से विहार कर श्रीसघ तमाड ग्राम जा पहुँचा, वह मात्र चार कि मी की दूरी पर था। मगर यहाँ तो तैयारी बडी आकर्षक थी, अगवानी के लिये ग्रामीणो के साथ-साथ रांची के समाज-सेवी भी खड़े थे, उनमे सबसे आगे दिखे 'धर्मबहादुर' श्री हरकचद जैन पाण्डया, उनके समीप ही थे-कलेक्टर श्री अजमेरा। और   और अनेक गणमान्य लोग। कहे तमाड की सीमा पर धूम मच गई। अगवानी की।

सत जन रोज-रोज की अगवानी से परेशान हो उठे थे। अत वे कडे शब्दो मे अगवानी को अनावश्यक निरूपित करने लगे, परन्तु सराकबधु कहाँ मानने वाले थे।

तमाड मे समुचित समय दिया श्रीसघ ने, की समुचित मत्रणा।

आचार्यश्री को शारीरिक कष्ट अधिक हो रहे थे, उनकी वय जो अधिक थी। फिर उन्हे अन्य दिशा मे अन्य-अन्य कार्यों को गति प्रदान करनी थी। अत उन्होने अपने प्रिय शिष्य उपाध्यायश्री से चर्चा की और अपने पूर्व सदस्यों सहित नवाडीह को विहार करना चाहा। शिष्य को रुकने और कार्यों को गति देने का सकेत किया।

उनके पृथक विहार की बात पर उपाध्यायश्री क्षण भर को विचलित हो गये, फिर स्मरण हो आया-जैनधर्म के पथ पर ऐसा ही होता है, होता रहा है, होता रहेगा। अत शीघ्र ही अपने भीतर स्थिर हो-गये, 'कहे' स्व-स्थ हो गये।

उपाध्यायश्री अपने पूज्य गुरुवर को नगर से बाहर तक भेजने गये। गुरुदेव चले गये। शिष्यगण रुक गये। ❑

उपाध्यायश्री तमाड क्या रुके वह देखते ही देखते अनेक ग्रामो के मध्य, समय विशेष के लिये–सस्कारधानी–बन गया। उन्होने समाजसेवियो और बुद्धिजीवियो की बैठक मे मार्गदर्शन किया। फलत सराको के शैक्षिक, नैतिक, धार्मिक, बौद्धिक, राजनैतिक और सामाजिक विकास की योजनाएँ बनने लगी। सबसे पहले सर्वेक्षण का कार्य हाथ मे लिया गया। 21 युवको की टीम गठित की गई जिसे बिहार–झारखण्ड, बगाल और उडीसा क्षेत्र के सराको की वस्तुस्थिति के अध्ययन का कार्य सौपा गया। कार्य कठिन था, पर गुरुवर के आशीष से सरल हो जाता था। पच्चीस प्रश्नो वाला एक प्रपत्र प्रकाशित कराया गया, जिसके आधार पर यह जाना जा सके कि किसी ग्राम मे कुल कितने सराक हैं, कितने घर हैं, मदिर हैं या नही, सराक जन छान कर पानी पीते हैं या नही, उनकी शिक्षा व पेशा क्या है? गोत्र क्या है, रात्रिभोजन त्याग है या नही। दहेज प्रथा, आदि आदि।

पूज्य उपाध्यायश्री ने तमाड मे दस दिन से अधिक का समय दिया। 18 अप्रेल से 29 अप्रेल 93 तक रुके और सर्वेक्षण कार्य को गति दी।

21 युवको मे, जिसे जो ग्राम दिया गया था सभी वहॉ गये, सर्वेक्षण किया। युद्धस्तर पर।

हर कार्यकर्ता गुरु–आशीष पाकर निकला था। अत जितनी शीघ्रता से बन सका, किया। लोग पहाडी–नदी की धारा की तरह गये, समुद्र की लहरो की तरह लौटे, अपने साथ काफी कुछ जानकारियो का जुलूस लिये हुए। बिहार और बगाल प्रान्त से अधिक प्रपत्र प्राप्त हुए, किन्तु उडीसा से कम, क्योकि उस क्षेत्र के ग्रामो का पहुँच मार्ग अधिक कठिन था। पैदल–यात्रा का भाग लम्बा था।

ज्यो–ज्यो कार्यकर्ता लौटते गये, गुरुवर उनके द्वारा सकलित की गई रपट गम्भीरता से पढते गये। हर प्रपत्र को समय दिया गया, हर प्रपत्र (फार्म) पर विचार किया गया। प्रपत्र साधारण नही थे। वे सराको की कहानी कहने मे सक्षम थे। जानकारी–पढ कर राष्ट्रसत के हृदय मे सराको के प्रति करुणाभाव द्विगुणित हो गया।

तमाड मे आनेवाले श्रावकगण गुरुवर से सर्वेक्षण के विषय मे पूछते रहते थे कि सराको के प्रति क्या नजरिया बना। गुरुवर ज्ञानसागर जी ने उनकी करुण–गाथा का जिक्र एक दिन विशाल सभा मे कर दिया। लोगो को रोमाच हो आया। प्रपत्रो के अध्ययन के पश्चात गुरुवर ने जो तथ्य बतलाये थे, वे देश/समाज की ऑखे खोलने के लिये पर्याप्त थे। उन्होने कहा– 'मैं नही बोलता, ये प्रपत्र बोल रहे हैं, सराक सुखी नही है। वे जिस तरह समाज की मुख्यधारा से कट कर रह गये है, उसी तरह उन बेचारो के ग्राम भी मुख्यमार्गो से कटे हुए हैं। अनेको ग्रामो मे पहुँचने के लिए उपयुक्त मार्ग नही हैं, कच्ची पगडडियो और गडहट पर से पैदल चलना होता है। रास्ते मे घने जगल पडते हैं। कुछ सराक खेती/कृषिकार्य कर रहे हैं, उनसे अधिक लोग मजदूरी। कुछ निजी–क्षेत्र के उद्योगो मे नौकरी पेशा। सीमित आय, असीमित कष्ट हैं। जहॉ मदिर है, वहॉ शास्त्र नही है और जहॉ मदिर हैं वहॉ जैन नहीं है। जैन मदिर कुछ ग्रामो मे ही हैं, हर जगह नही है– वहॉ घरो मे भी कोई धार्मिक–पोथी उपलब्ध नही है। अत तय है कि ऐसे ग्रामो मे मुनि क्या, व्रती श्रावक भी नही जाना चाहेगे। बगाल की सीमा मे बसे ग्रामो मे, कुछ लोग ही शाकाहारी बचे हैं, नई–पीढी के युवक मछली–अण्डे पर झुक गये हैं। जबकि कुछ सराक भाई प्याज तक नही खाते। वे अपने आप को भगवान पार्श्वनाथ या भगवान महावीर के अनुयायी कहते है और धर्म से रहते हैं। अत्यन्त निर्धनता झेल

रहे हैं। अत बच्चो मे शिक्षा का अभाव है, वहाँ बच्चा युवक होने से पहले, स्कूल–कालेज नहीं, कृषि–मजदूरी की ओर धकेल दिया जाता है। जहाँ बच्चे ही पढाई नहीं कर पाते, वहाँ बच्चियाँ क्या पढेगी? फलत. नारी समूह तो बिलकुल अशिक्षित है। उन्होने प्राइमरी की पहली कक्षा तक का मुँह नहीं देखा कभी। ग्रामवासियो की एक ओर मजबूरी है कि उन्हे हिन्दी बोलने का ज्ञान नही है, मिश्रित बगाली–बिहारी बोली बोलते हैं, कुछ ग्रामीणस्तर की बगाली बोलते हैं। अत उन्हे बगला–भाषा मे साहित्य अनुवादित कर देना होगा। बगाल की सीमा पर अवस्थित बॉकुडा और पुरुलिया जैसे अनेक ग्रामो के लोगो का सकेत है कि उनके पूर्वज जैन ही थे। अत यदि उन्हे वर्तमान–परिवेश मे–जैनशिक्षा, जैनधर्म, जैनसस्कार बतला दिये जावे तो वे सहर्ष पालन करेगे और अपने–आप को सम्पूर्ण रूप से जैनत्व मे ढाल देगे। इतना ही नही, वे अपने–आपको बिहार–अचल के सराको से हीन समझते हैं और चाहते हैं कि उनके बहू–बेटी के सम्बध झारखण्ड के सराको से होने लगे तो विकास का प्रशस्त–पथ पा जावेगे। दो प्रदेशो के लोगो के खान–पान एक होते ही, सामाजिक–चेतना बढ सकेगी।

जिन ग्रामो मे मदिर नही हैं, वहाँ के लोग घरो मे तीर्थंकर पार्श्वनाथ और महावीर के चित्र/कलेन्डर कच्ची दीवारो पर टॉगे हुए हैं। उन्ही के दर्शन कर कार्य चला रहे हैं।

गुरुवर ने आगे बतलाया– 'मिदनापुर जिसे मेदिनीपुर कहा जाता है, की सर्वेक्षण–रपट से स्पष्ट होता है कि वहाँ के ग्रामीण जैनधर्म के स्थान पर 'अनतधर्म' या 'महिमाधर्म'मानते है, जिसमे सस्कारादि जैनधर्म जैसे ही है। यथा–छानकर जल पीना, रात्रिभोजन न करना, केवल शाकाहार लेना। वे लोग अपना 'तीर्थकर–गोत्र' का परिचय देते है।

उडीसा–अचल के सराक भी पिछडे हैं। वे कपडे–रगने का कार्य करते है। उन्हे वहाँ 'रगिया' कह कर सम्बोधा जाता है, किन्तु सस्कार मिदनापुर वालो जैसे ही है।

रपट से स्पष्ट हो गया है कि बिहार–अचल (सिहभूमि, राची) आदि के सराक अधिक प्रगति कर चुके हैं। अन्य स्थानो के कम।'

गुरुवर ने कहा– 'हमारे विराट–समाज को इन सभी पर ध्यान देने का समय आ गया है। सबसे पहले उन ग्रामो मे मदिर, शास्त्र और वसतिकाओ की व्यवस्था की जावे ताकि सतगण वहाँ रुक कर समय दे सके।'

गुरुवर के उद्बोधन से लोग विचार करने लगे। फलत सभी समाजसेवियो के मन मे प्रेरणा का सचार हुआ कि सराक भाइयो के लिए अवश्य ही कुछ करेगे। ❑

गुरुवर की कृपा कुछ ऐसी हुई कि सराक–उद्धार की दिशा मे हर प्रकार से प्रयास शुरु कर दिये गये। ❑

विहार का क्रम फिर शुरु। तमाड छूट गया। चरण थे ग्राम–चौकाहातु की ओर। जगल का रास्ता। पगडडी जैसा। ऊँचा नीचा। धूल, मुरुम, वोल्डर की पर्त। ठीक से चलने वाले भी, नही चल पा रहे थे। मगर चलना जरूरी था। प्रेरणापुन्ज जो साथ मे थे।

चौकाहातु, मे गुरुवर के आशीष से, पूर्व मे ही 12 मार्च से 21 मार्च 93 तक श्री जगदीश माझी और उनके मित्रो के सहयोग से, शिविर लगाया जा चुका था। अत गुरुवर के आगमन की सूचना से परिवेश पुलकित हो गया।

30 अप्रैल 93 को पावन चरणों ने चोकाहातु की धूल को स्पर्श प्रदान कर दिया। जयघोषो के मध्य श्रीसंघ कुछ दिन रुका। गॉव मे 350 श्रावको (सराकों) का समाज है। कहे 60–65 घर के लोग हैं। लोग शिविर मे सीख ही चुके थे, किन्तु गुरुवर के आगमन की प्रेरणा से कुछ अधिक ही लिखाई–पढाई की थी, बच्चो से लेकर वृद्धो तक को और मजदूर से लेकर किसान तक को भजन, आरती, पूजा और णमोकार मत्र याद हो गये थे, कुछ लोगो ने गुरुवर को सुनाये भी।

उनके मनोभाव समझते हुए गुरुवर ने यह भी देखा कि पूर्व–प्रवास के समय मंदिर जी की मूर्ति और वेदी के विषय मे जो प्रेरणा की गई थी, उसका भी समाज ने पालन किया है, वेदी हेतु तीसरी प्रतिमा लायी जा चुकी है।

गुरुवर ने विधिविधान–पूर्वक प्रतिमा जी की स्थापना का आशीष दे दिया। पहले विराट शाति विधान का आयोजन, फिर अतिम दिन प्रतिमा–स्थापना।

पूरा समाज और पूरा गॉव ही नही, समारोह के समय तो आसपास के ग्रामो के लोग भी पहुँच गये थे। कार्यक्रम ग्रामीण स्तर का था पर झलक शहरी से कम न थी। न कम थे–उत्साह, समर्पण, भक्ति और सेवा। ❑

गुरुवर जितने दिन रुके, गॉव मे मेला का दृश्य बना रहा, किन्तु विहार की भनक पडते ही समाज के लोगो के मन मे सतापो का मेला लग गया। कोई नहीं चाहता था कि गुरुवर इतनी जल्दी विहार करे। पर गुरुवर के सामने तो विशाल क्षेत्र के लिए समयबद्ध कार्यक्रम था। अस्तु।

विहार हुआ। भक्तगण क्या बडे–बूढे, क्या माताऍं–बहिने, रो पडे। गुरु के आगे पत्तो की तरह बिछ गये श्रावक। मन मे एक ही बात– 'हे नाथ, हमे छोडकर न जाये। हमे अपनाया है तो अपनाये ही रहिए।'

कतिपय लोगो ने झिझकते हुए प्रार्थना को शब्द भी दिये, उन्हे सुनकर गुरुवर क्षण भर को रुके, उन्हे समझाया–'आप मुनि के प्रति भक्तिभाव रखे, मोहभाव नही।' वाक्य सुनते ही लोगो मे श्रावकत्व जाग उठा। वे हाथ जोड कर खडे हो गये, मौन। जैसे पूछ रहे हो–हम आपके हैं कौन?

मगर तुरन्त श्रावको (सराकों) ने अपनी भूल सुधार ली और बोले– 'हे गुरुवर, हम तो आपको विदा करने, कुछ दूर आपके साथ चलना चाहते हैं।' अनेक बिहारियो के साथ कुछ बगाली–ग्रामीण भी चल रहे थे।

अब गुरुवर मौन। पावन–चरणो के पीछे–पीछे सैकडो पैर चल रहे थे। तब तक एक पॉच वर्ष का बालक अश्रु पोछते हुए, बगाली–बोली मे पुकार उठा – 'आमि आपनार साथे जाव' (हम आपके साथ चलेगे।

मुडकर देखने लगे गुरुवर। वे और सघ के सभी सदस्य बीते हुए माहो मे, बाग्ला–भाषा जानने लगे थे। फलत गुरुवर ने बच्चे को सम्बोधा– 'प्रिय बेटे, अभी तुम छोटे हो, कुछ समय बाद साथ चलना।'

गुरुवर के वाक्य सुन कर बालक ने रोना–सिसकना बद कर दिया। नमोस्तु हेतु हाथ जोडे और चरणो मे बिछ गया। हो गया भूसात। किये साष्टाग प्रणाम। गुरुवर आगे बढ गये।

एक वृद्धामाता मन ही मन बुदबुदायी अपनी बाग्ला भाषा मे– 'वेशी पाये हाटवेन ना।' (हे स्वामी, अधिक पैदल न चलना) एक वृद्ध व्यक्ति का हृदय निवेदन कर रहा था– 'वेशी उपवास करवेन ना।' (हे नाथ, लगातार उपवास न कीजिए।)

दोनो के आत्मप्रदेशो मे उचित विचार उठे थे, क्योकि ग्रीष्मकाल अपना ताप बतलाने लग गया था। भक्त सोचते थे कि एकदम काफी दूरी तक, उनके गुरुवर लगातार न चले, न लगातार उपवास आदि करे।

यह तप चरण के प्रति शैथिल्य–भाव का प्रतीक नही था। वह था–भक्तों की गहरी–भक्ति का उजास। भक्ति की प्रतीति। ❑

यात्रा थी निरतर। गुरुवर चोकाहातु से चले तो फिर ग्राम चीपडी के भाग जागे। वहाँ भी कुछ दिन पूर्व, 12 मार्च से 21 मार्च 93 तक श्री हेमचद मॉझी और उनके सहयोगी के साथ शिविर सम्पन्न हो चुका था। वहॉ भी वैसा ही भक्तिभाव और जागरण देखने को मिला।

फिर देवलटाड और हुरुण्डीह। मार्च–माह मे इन्हे भी शिविर का लाभ मिला था।

क्रम आ गया फिर ग्राम नवाडीह का। गुरुवर पहुँचे ही थे कि डा विश्वनाथ चौधरी भी वहाँ जा पहुँचे। गुरुवर के दर्शन किये, आशीष लिया। वे पावापुरी महाविद्यालय में प्राकृत विभाग के अध्यक्ष है। उन्हे सराक क्षेत्र का सर्वेक्षण–निरीक्षण करने श्री सुबोध कुमार जैन (आरा) ने, निवेदन कर, भेजा था।

उनका उद्देश्य समझ गुरुवर ने उनसे आवश्यक चर्चा की, कुछ दिशा निर्देश दिये। डा साहब भक्ति मे रग गये। अत गुरु आशीष पाकर, कुछ सराक भाइयो के साथ पैदल ही गॉवो की ओर निकल गये। जून का माह चल रहा था, कई स्थानो पर बादलो और वर्षा ने डा साहब का साक्षात्कार ले डाला। फिर भी उन्होने प्रयास जारी रखा। फलत देवलटाड, चीपडी, हुरुण्डीह, रुगडी, आगसिया, रागामाटी, तडाई और रडगॉव आदि की स्थिति समझ सके।

लौट कर उन्होने अपनी सूचना समाज को सौंप दी। उसका एक अश इस तरह था कि इस क्षेत्र के निवासी सरल स्वभावी है। उनमे आडम्बर नही हैं। गुरु के प्रति आज्ञाकारी हैं। बिहारी बोली बोलते हैं। एक–दो लोग बगाली भी बोल लेते हैं। हिन्दी सीखने मे रुचि है। जैन धर्म मानते रहे हैं, किन्तु चर्या शिथिल हुई है। गुरुवर के आगमन से बहुमुखी विकास हुआ है। परम पूज्य उपाध्याय ज्ञानसागर जी असाधारण सत है। उनकी वाणी और छवि जनमानस मे प्रभावनाकारी सिद्ध हो चुकी है। ❑

गुरुवर नवाडीह मे थे, सो नवाडीह और समीपी ग्रामो के लोगो से घिरे रहते थे। चातुर्मास–स्थापना की तारीख समीप आ चुकी थी। ग्रामीण चकित थे कि दिल्ली, बम्बई, कलकत्ता, चेन्नई, बेगलोर आदि बडे–बडे शहरो और उनकी कालोनियो मे वर्षायोग बिताने वाले सतगण इसी देश के हैं, और इस ग्राम मे विराजे सतप्रवर भी इसी भारत देश के हैं। फिर इनमे यह ग्राम्यप्रेम कैसे आ गया? क्या सचमुच गुरुवर छोटे से गॉव मे चातुर्मास स्थापना करेगे? जो हो, प्रार्थना करने में क्या हर्ज? हो सकता है कि हमारे भाग्योदय का समय आ गया हो!

अत नवाडीह के भोलेभाले लोगो ने श्रीफल चढाकर प्रार्थना की। गुरुवर हँसते रहे।

चूँकि गुरुवर बुडु ग्राम को पूर्व मे काफी समय दे चुके थे। अत वहाँ के श्रावको (सराकों) को पूर्ण विश्वास था कि गुरुवर वहॉ के लिए स्वीकृति प्रदान करेगे। उन्होने भी समय पर पहुँचकर श्रीफल चढाये, प्रार्थना की। गुरुवर मुस्कराते रहे।

तब तक जादोडीह (ग्राम) से वयोवृद्ध श्रावक (सराक) श्री लखन लाल मांझी स–समूह पहुँचे। गुरुवर से प्रार्थना की। श्रीफल चढाये। गुरुवर कुछ बोल न सके, आशीष भर दिया।

ग्रामीणो की भीड़ नित्य बढ रही थी। एक समूह तडाई ग्राम से आया था। उसने भी प्रार्थना की थी। ❑

समय सरकता रहा। गुरुवर को जो उचित लगा, वह किया। प्रस्थान कर दिया—तडाई की ओर। भारी जन—समूह साथ—साथ। देखने वाले देखते रह गये। सुनने वाले सुनते रह गये। गुरुवर ने तडाई पहुँच कर सब को चकित कर दिया। कुछ माह पूर्व भी यहॉं पहुँचे थे।

2 जुलाई 93 को विधिवत वर्षायोग—स्थापना की श्रीसघ ने। गुरुवर के साथ वे ही सदस्य थे— पू वैराग्यसागर जी महाराज, ब्राह्मी अनीता दीदी, ब्राह्मी मंजुला दीदी और ब्र मनीष जी, अतुल जी एव शाति कुमार जी।

नवाडीह के श्री दयाल चद जैन को कलश स्थापना का सौभाग्य मिला। ध्वजारोहण श्री जगबन्धु चौधरी तडाई ने किया था। उपस्थित लोगो मे श्री नरेन्द्रकुमार जैन राची और श्री अरुणकुमार जैन बुडु के नाम उल्लेखनीय हैं। अनेक लोगो के भाषण। फिर गुरुवर के प्रवचन। उन्होने बतलाया कि दिगम्बर साधु के लिये चातुर्मास का क्या महत्व है और चातुर्मास—स्थापना के साथ, सराक क्षेत्र—तडाई—का क्या सम्बध है।

चातुर्मास समिति के अध्यक्ष धर्मबहादुर श्री हरकचद पाण्डया छाया की तरह उपस्थित थे। उन्होने इस चातुर्मास को ऐतिहासिक महत्व का निरूपित किया। वरिष्ठ पत्रकार श्री रत्नेश जैन राची ने विशाल आयोजन का सुदर—सतुलित—सचालन किया। श्री गोवर्धन चौधरी और श्री भोलानाथ माझी ने गुरुवर को शास्त्र भेट किये। ❑

इतिहासकारो को नूतन सामग्री मिली कि सराक क्षेत्र मे सैकडो साल के बाद, सन 1993 मे—तडाई चातुर्मास—सदा 'प्रथम' निरूपित किया जायेगा। गौरव—वर्धन का यह श्रेय परमपूज्य उपाध्यायश्री के नाम के साथ जुडा रहेगा—सदियो तक। ❑

चातुर्मास के कुछ ही सप्ताह बीते कि सिद्ध हो गया कि गुरुवर यहॉं 'स्व—पर—हित' का नव कीर्तिमान स्थापित कर रहे हैं। अपने आत्म—कल्याण के साथ सराको के उद्धार की योजनाएँ साक्ष्य प्रदान कर रही थीं। वे चार माह तक दोनो दिशाओ को पुरुषार्थ प्रदान करते रहे। कभी धार्मिक—आयोजनो के माध्यम से तो कभी सम्मेलनो के माध्यम से।

उपाध्यायश्री तडाई मे थे, पर उन्होने सम्पूर्ण सराक—क्षेत्र के लिए कार्य करना शुरु किया। पूर्व मे जिन 4 ग्रामो के 15 लोगो को प्रशिक्षित किया गया था, उन समर्पित—कार्यकर्ताओ को बुला लिया गया। उन्हे सयोजको ने निर्देश दिये कि वे सराक क्षेत्र के दस जिलो मे फैल जाये एव तीन सौ से अधिक ग्रामो की जानकारी एकत्र करे। उन ग्रामो तक गुरुवर का जागरण—सदेश ले जाये। वहॉं जैन—साहित्य वितरित करे और वहॉं के लोगो मे मदिर, मुनि, मानवता और धर्म से जुडने की भावना जगाएँ।

देखते ही देखते कार्यकर्तागण गुरुवर द्वारा निर्दिष्ट सूचियॉं लेकर निकल पडे। जिला पुरुलिया की सूची मे सर्वाधिक ग्रामो के नाम थे, कुल 80 तथा वीरभूम जिले की सूची मे सबसे कम नाम थे, मात्र तीन। अन्य आठ जिलो मे—दूसरा जिला (झारखण्ड प्रान्त) 29, धनबाद जिला (झा ख प्रा) 12, बाकुडा जिला (पश्चिम बगाल) 31, वर्धमान जिला (पू. ब) 28, मेदनीपुर जिला (पू ब) 40, जगन्नाथपुर जिला 36, और रांची—सिहभूमि जिला (झारखण्ड) 53, कहे कुल 312 ग्राम।

जो सुशिक्षित और प्रशिक्षित विद्वान भेजे गये थे उनके नाम इस योजना के पटल पर सदा चमकते रहेगे। पुरुलिया के 80 ग्रामो के लिए श्री नकुलचद्र माझी, श्री धीरेन्द्रनाथ माझी, श्री राजकिशोर आचार्य,

थे तो राची सिहभूमि के 53 ग्रामो के लिये श्री सृष्टिधर माझी, श्री अर्जुनकुमार मांझी, श्री संतोषकुमार मांझी, दिलीपकुमार माझी, श्री बलराम चद्र माझी। मेदनीपुर के 40 ग्रामो के लिए श्री राजेन्द्रनाथ माझी, श्री अजीतकुमार माझी तथा उडीसा प्रान्त के ग्रामो के लिए श्री धीरेन्दनाथ माझी, श्री सुरेन्द्रनाथ माझी। पश्चिम बगाल के बाकुडा और वर्धमान जिले के क्रमश 31 एव 28 ग्रामो के लिए श्री दीनबंधु माझी और श्री अजितकुमार माझी (नौढी)।

(कुछ उत्साही कार्यकर्ताओ को दोबारा भी भेजा गया था)

तडाई मे सराकोद्धार–कार्यक्रम ने गति पकड ली। गुरुवर की वाणी से भारी प्रभावना हो रही थी। नित्य अनेक ग्रामो के श्रोता आते थे और कार्यकर्ता बनकर लौटते थे। प्रभावना का चरम तीन सप्ताह मे ही समझ मे आ गया जब पागुरा निवासी युवक श्री देवेन्द्रकुमार जी, जो गत कुछ माहो पूर्व ही गुरुवर का सानिध्य पा सके थे, शिखरजी मे परमपूज्य आचार्य सुमतिसागर जी महाराज से, 25 जुलाई 93 को क्षुल्लक दीक्षा पाने मे सफल हो गये थे, उनका नामकरण हुआ–श्री 105 क्षुल्लक श्रमणसागर जी महाराज।

समाचार से सम्पूर्ण सराक क्षेत्र मे खुशी की लहर व्याप्त हो गई, सराकों को हृदय से विश्वास हो गया उस रोज कि वे सयम धारण कर श्रावक ही नही, पूज्य श्रमण भी बन सकते हैं। जिस–जिस ग्राम में समाचार पहुँचा हर जगह उपाध्यायश्री की पहल की सुदर चर्चा हुई, हुआ उनका जयगान। सराको को उनकी आरती के समय कही जाने वाली पक्तियो– 'ज्ञानसागर की ।। गुण आगर की।।' मे सत्य के दर्शन होने लगे। उन्हे जीवन मे पहली बार लगा कि गुरुवर 'आप समान' बनाने मे सच्चा मार्गदर्शन कर रहे हैं, सहयोग और वात्सल्य दे रहे हैं।

योजना का कार्य अपनी जगह चलता था, धार्मिक–कार्यक्रम अपनी जगह। फलत. वहॉ 25 जुलाई को 'मुकुट सप्तमी' का विराट 'समारोह' आयोजित किया गया तो 2 अगस्त को 'रक्षाबधन' का। फिर धार्मिक अताक्षरी–प्रतियोगिता। सभी समारोहो–कार्यक्रमो के माध्यम से गुरुवर सराक भाइयो मे धर्म की लगन और दिनचर्या की सात्विकता बढा रहे थे। ❑

'विशाल सराक सम्मेलन' के आयोजन की भी योजना फलीभूत हुई, जब 5 सितम्बर 93 को तड़ाई मे वह सम्पन्न हुआ। उसमे दूरस्थ ग्रामो मे बसे सराक तो आये ही थे, देश के विभिन्न नगरो मे रहने वाले सामाजिक कार्यकर्ता भी पहुँचे थे। उसका सक्षिप्त विवरण यहाँ दिया जाना अनिवार्य प्रतीत होता है– 'तामझाम और वैभव प्रदर्शन से परे, एक सतोचित मच पर पू उपाध्यायश्री ससध उपस्थित हैं। समीप ही श्री हरकचंद जी पाण्डया सहित श्री पूनमचद गगवाल, श्री भागचद पहाडिया, श्री राजकुमार सेठी बैठे हैं। मच के ठीक सामने, समीप ही, सराक क्षेत्र के विभिन्न ग्रामो से आये मुख्य प्रतिनिधि हैं, सभी की पोशाक पर बैज (फूल) लगाये गये है, सभी विद्वान है, मुखर–वक्ता हैं। प्रतिनिधियो के पीछे दो हजार से अधिक धर्मप्रेमी सराक भाई विराजे हैं। सूची के अनुसार कुछ प्रतिनिधि बारी–बारी से माईक पर अपने ग्राम/क्षेत्र मे आई चेतना के विषय मे जानकारी देते हैं। बाद मे चातुर्मास–समिति के महानुभाव अपना उद्‌बोधन देते हैं।

इस बीच कार्यक्रम मे उत्साह बढ गया जब घोषणा हुई कि आचार्य शान्तिसागर छाणी स्मृति ग्रन्थमाला द्वारा आयोजित निबन्ध–प्रतियोगिता मे प्रथम स्थान पाने वाले विद्वान श्री निर्मल जैन सतना को, गुरुवर के सानिध्य मे, 'आचार्य शातिसागर (छाणी) स्मृति स्वर्ण पदक' भेट किया जायेगा। निबंध का विषय था–शाकाहार एव विश्वशाति मे अहिसा का योगदान।

गुरुकृपा से वह कार्य भी पूर्ण हुआ। अन्त मे पू उपाध्यायश्री का प्रवचन।

इसी प्रवचन की प्रतीक्षा मे था सारा जनमानस। गुरुवर ने कहा–सराक–बधु तो, मुझे श्रावको से कम कर्मठ नहीं लगे। उनके पास वह सब नहीं है जो श्रावको के पास है, यहॉ तक कि उन्हें साधु और विद्वानो का सहवास/सगति भी उपलब्ध नही है, फिर भी वे अपनी सभ्यता और सस्कृति को बचाये रहे हैं। उनमे धर्म और ज्ञान की अनुगूँज, भीतर ही भीतर, कभी धीमी नहीं हुई। अब उनके सर्वांगीण–विकास का समय आ गया है, जो समाज के राष्ट्रीय–सगठनो और राष्ट्रीय–समाजसेवियो के सहयोग से सभव भी है। केवल कार्य शुरु करने का विलम्ब है।'

गुरुवर के आह्वान से प्रभावित होकर अध्यक्ष की आसदी पर बैठे राष्ट्रगौरव साहू अशोक कुमार जैन ने कहा कि पू गुरुवर के सकेत के अनुकूल हर कार्य शुरु किये जायेगे और समयसीमा मे पूर्ण भी करेगे। मैं इस क्षेत्र की सेवा मे तन–मन–धन से समर्पित होता हूँ और अपने मित्रो से भी ऐसी आशा रखता हूँ। मैंने मित्रो के सहयोग से एक ट्रस्ट–गठन की योजना सोची थी, जिसे गुरुवर के समक्ष घोषित करता हूँ– 'भारतवर्षीय दिगम्बर जैन सराक ट्रस्ट' उसका नाम है। घोषणा सुन श्रोताओ ने हर्ष से तालियॉ बजाईं। सराक प्रतिनिधि श्री विशेश्वर माझी, श्री मृगुराम मडल, श्री रमेशचद माझी एव श्री विश्वनाथ चौधरी ने साहूजी का आभार ज्ञापित किया –ट्रस्ट गठन के लिए। ❑

वहॉ के कुछ आयोजन आज भी ऑखो मे झूलने लगते है। बच्चो का साक्षात्कार। प्रश्न–मच का आयोजन एव बच्चो के उत्तर। विदुषी दीदी ब्र अनीता जी प्रश्न उठाती थी, बच्चे समाधान रखते थे, दर्शक गद्गद् होते थे।

बच्चो और युवक–युवतियो की धार्मिक रुचि मे निरतर वृद्धि होते देख लोग आश्चर्य करते थे और अपना सौभाग्य मानते थे कि सतसमागम के कारण, अल्प समय मे, उनका बहुत अधिक आत्मविकास हुआ है। ❑

वहॉ, एक ओर आसमान से होने वाली वर्षा की झर लगी रही वर्षायोग के कतिपय विशिष्ट माहो मे, तो दूसरी ओर गुरुवर की गिरा से अमृत वर्षण होता रहा। श्रावक दोनो मे भीगते रहे। उक्त दोनो क्रम के चलते, गुरुवर ने सराक–प्रगति की गति भी तेज रखी। फलत हर कोण से जागृति का वपन हो गया।

वर्षायोग के चलते चालीस से अधिक गॉवो के लोगो का आगमन हुआ तो उधर नगरो से आने वालो की सख्या भी कम न रहती थी। टाटानगर और राची सौ कि मी के अदर थे, पर वहॉ तो हजारो कि मी दूर से लोग पहुँच रहे थे। सरधना, बडौत, बुढाना, शाहपुर, खेकडा, खतौली, चदेरी, ललितपुर, जयंपुर, देहली, सतना शहर के नागरिक साक्ष्य दे रहे थे। मध्यम दूरी के स्थान वाले भी वहॉ थे, वे नगर हैं– चाईवासा, कोडरमा, तमाड, डाल्टनगन्ज, बुन्डु, हजारीबाग और कोलकाता।

चातुर्मास का प्रमुख कार्यक्रम सराक–भाइयो के हाथ मे था। वे सुबह गुरुवर की पूजा–अर्चना और सध्याकाल मे सामूहिक–आरती मे प्रतिदिन, घडी के काटो के साथ चलते मिलते थे। वह श्रद्धा और समर्पण की भावना दूरदराज नगरो से आये श्रावको मे प्रेरणा सचार कर देती थी। लोग सोचने लगते–जब गुरुवर हमारे नगर पधारेगे तब हमे ऐसे क्षण अवश्य ही निरतर मिलेगे।

गुरुवर की कृपा से धर्म और ध्यान के साथ–साथ लोगो मे सदाचार और शाकाहार का स्थायी प्रचार हो रहा था। समय के अनुरूप एक दिन 'अखण्ड–णमोकार मत्र–जाप' का आत्माप्रधान आयोजन रखा गया,

24 घटे तक पडाल से लेकर सम्पूर्ण ग्राम मे 'जाप' चलता रहा। फिर आचार्य 108 श्री शातिसागर जी महाराज (छाणी) का 'दीक्षा दिवस–समारोह' मनाया गया। इसी के अतर्गत अखिल भारतीय लेख प्रतियोगिता। आदि–आदि।

विद्वानो एव श्रेष्ठियो के आने–जाने का क्रम भी बना रहा। कुछ के नाम ऊपर आ चुके हैं। कुछ ये हैं–डा कस्तूरचद कासलीवाल, श्री महावीरप्रसाद सेठी, श्री शिवकुमार, श्री हस कुमार, श्री निर्मलकुमार, श्री पकज कुमार एव श्री निहालचद चद्रेश आदि।

पर्वराज–पर्यूषण के समय का हाल यह था कि गॉव का हर सराक व्रत–उपवास कर रहा था। दस दिन तक गुरुवर के प्रवचन से लाभ यह हुआ कि गॉव के जो सराक मछली–पालन का कार्य करते थे, उन्होने धधा बदल दिया। जो मछली मारते–खाते थे, उन्होने आजीवन के लिए त्याग कर दिया। देखते ही देखते सम्पूर्ण ग्राम ने मास–मदिरा और मधु जैसे अभक्ष्यो को तिलाजलि दे दी। किसी के पास कोई व्यसन न रह गया था। तडाई एक निर्व्यसनी ग्राम बनकर उदित हुआ सराक क्षेत्र मे। कृपा–गुरुवर ज्ञान सागर जी महाराज की। ❑

कहते है 'तडाई की लडाई, बन गई बडाई।' इसे तनिक समझना होगा–गुरुवर की कृपा से तडाई मे जो मिथ्या–धर्म और व्यसनो से सराको ने सघर्ष (लडाई) किया था, वह सम्पूर्ण देश के लिए बडाई का हेतु बन गया था। देश के समस्त पत्र–पत्रिकाएँ और सगठन आदि गुरुवर की प्रशसा करते न थक रहे थे। उस वर्ष, (और उसके बाद भी) तडाई की ही चर्चा देश के विभिन्न अचलो मे होती रही।

गुरुवर का ध्यान और प्रवचन चलते रहे, सराको के त्याग और समर्पण चलते रहे–वर्षायोग बीत गया। सारे ग्राम ने निर्वाणोत्सव–समारोह मनाया गुरुवर के सानिध्य मे , घर–घर लाडू (लड्डू) बने थे। हर घर से लोग निर्वाण–लाडू चढाने हाजिर हुए थे।

समारोह के तुरन्त बाद गुरुवर ने अपना 'निजी–समारोह' विस्तार लिया–विधिपूर्वक श्रीसघ सहित 'निष्ठापना' कर दी। ❑

गुरुवर विहार के लिए स्वतत्र हो गये। सराको ने सुना तो उनके कान खडे हो गये– 'अब क्या होगा? कौन सुनायेगा धर्म की बाते? कैसे चलेगा विकास का रथ? कौन दिखायेगा पथ?'

उचित दिवस देखकर– 'पिच्छिका परिवर्तन समारोह' आयोजित किया गया, विशाल जनसमूह था उस दिन। गुरुवर ने पिच्छिका के विषय मे प्रकाश डाला, फिर साधु से शास्त्र, पिच्छिका और कमडलु का जगविख्यात नाता बतलाया। सच तो यह है कि वह समारोह 'परिवर्तन' की लहर लेकर आया था–सतो ने पिच्छिकाएँ बदली, श्रावको (सराको) ने हेय मान्यताएँ बदली और देखते ही देखते सारा समूह सयम मे बॅध गया, प्रभावना सयम–उपकरण की, आशीष गुरुवर का। ❑

बारी आ गई 'विहार' की। सतो का तडाई से विहार। सम्पूर्ण ग्राम मे मातम छा गया। लोग रोते–बिलखते घरो से बाहर निकले और गुरुवर के पथ पर खड़े हो गये। सब के हाथ जुडे हुए थे, अधर कॉप रहे थे, नेत्र गीले। साहस कर एक वरिष्ठ सराक ने बगाली भाषा मे एक वाक्य बोला रोते हुए– 'श्रद्धाएस्पदेशु, आपनि आकार ताछे थाकुन।' (हे श्रद्धेय, हे पूज्यवर, आप हमारे पास रहिए) उसका वाक्य सुन समीप खडी समस्त माताएँ रो पडी। ऑखे बहती रही।

गुरुवर ने समझाया, उन्हे मोह की कारा से निकाला और विवेक से कार्य करने को कहा। तब तक कुछ युवक ऑसू पोछ कर बगाली मे बोले– 'आमरा एक साथे जाव।' (हे नाथ, हम सब साथ–साथ चलेगे) गुरुवर ने उनकी ओर शाति से देखा, ऑखो के माध्यम से ज्यो बोध करा रहे हो। फिर चल दिये। आगे–आगे श्रीसघ, पीछे–पीछे . पूरा गॉव। हॉ, सौ–दो सौ जन नही, पूरा गॉव अपने नाथ को विदा देने चल पडा साथ–साथ।

एक फर्लांग चले, एक मील चले फिर दो मील। गुरुवर से रहा न गया। माताओ बहिनो की गोद मे बच्चे थे,। वे जानते थे कि चलने मे उन्हे, परेशानी आ रही होगी। फिर जितना श्रीसघ के साथ चलेगे, उतना ही लौटना भी तो होगा। अत उन्होने वात्सल्यपूर्वक पुन समझाया कि साथ चल रहे लोग लौट पडे।

ब्रह्मचारिणी बहिनो ने भी जनमानस से कहा कि आपके इस तरह चलने से गुरुवर को आकुलता आ सकती है। वाक्य सुनते ही चलने वाले लोग रुक गये। सभी ने गुरुवर के चरणो मे धोक दी। गुरुवर ने सभी को आशीष–छॉव प्रदान की। 'मोही' खडे रह गये, 'निर्मोही' बढ गये। ❑

तडाई–चातुर्मास के कतिपय मार्मिक–प्रसग उद्‌घोषित करना यहॉ उचित मान रहा हूॅ।

तडाई से रॉची जाना–पहुॅचना सहज नही था। कार्यकर्ताओ को पहले 12 कि मी पैदल चलकर सोनाहातू के बस–अड्‌डा तक जाना पडता था, फिर वहॉ से बस पकड कर रॉची। बसे सवारियो से ठसाठस भरी रहती थी। अत अनेक लोगो को सीट पर बैठना न मिलता, खडे रहकर यात्रा करनी पडती थी। ❑

चातुर्मास के समय भक्तो ने मदिर मे स्थानाभाव देखते हुए , मदिरजी से लगे खेत मे एक झोपडी तैयार की थी, जिसमे पू उपाध्यायश्री दिवसकालीन सकल–साधना उसी मे करते थे। वह कुटी एक लघु–आश्रम की झलक देती रहती थी। किन्तु शाम होते ही पूज्यश्री मदिर जी के छोटे से कक्ष मे चले जाते थे, करते थे वही रात्रि–विश्राम। ❑

भौगोलिक प्रभाव कुछ ऐसा था कि वहॉ दिन–रात वर्षा की झडी लगी रहती थी। कभी हल्की, कभी तेज। कभी कुछ समय के लिए थमती तो ऑखे बादलो मे छुपे सूर्य को खोजने लगती थी। सूर्य बदलियो के साथ ऑख–मिचौली खेलता रहता था। वैसे ही मे, एक दिन चादनी (चदोवा) के गिरने से पूज्य श्री काफी देर तक बौछार सहते सामायिक करते रहे। भक्तो ने शीघ्रता से नूतन–व्यवस्था की। ❑

एक दृश्य मनोहर था, खेत के पास मदिर, मदिर के समीप छोटे–छोटे घर और घरो के समूह के समीप से कल–कल करता छोटा सा नाला। वह सदा पानी से गले तक भरा रहता था। गॉव की गैल (पगडडी) नाले मे से ही होकर जाती थी, अत ग्रामीणो ने नाले के आर–पार एक खम्भा (इलेक्ट्रिक–पोल) बिछा दिया था, बन गया था 6 इच चौडा सेतु। बच्चे से लेकर वृद्ध तक उसी सेतु पर से आते–जाते थे। खास तौर से सुबह–शौचादि के लिये अनिवार्य रूप से उसी पर से निकलना होता था।

वह खम्भा धन्य, हो गया था क्योकि उस पर से पूज्यश्री भी आते–जाते थे। जब गुरुवर उस पर पैर धरकर चलते तो भक्तो की सासे थम जाती थी। सभी जन प्रभु का स्मरण करते कि कभी कोई साधक उस पर से फिसल कर नाले मे न पहुॅच जाये। ❑

दीदियो के कार्यक्रम इतने हृदयग्राही हो गये थे कि बच्चे तो बच्चे, वहॉ के ग्वाले तक णमोकार मत्र का शुद्ध–शुद्ध उच्चारण करने लगे थे।

जब दीदी (ब्र अनीता जी) जिनवाणी की स्तुति गातीं– 'माता तू दया करके' तब उनकी आवाज पर सारा गाँव गा उठता था, जो जहाँ होता, वही गाने लगता। ग्रामीणजन दीदियों को साक्षात् देवी जैसा मान देते थे और पू उपाध्यायश्री को तो भगवान ही कहते थे। बडी सहजता से बतलाने लगते–हमने कभी तीर्थंकर तो देखे नहीं, पर अब विश्वास से कह सकते हैं कि वे हमारे पू. उपाध्यायश्री जैसे ही रहे होगे। ❑

सम्पूर्ण ग्रामीण, स्त्री–पुरुष और बालाबाल, शाम को समूह मे उपस्थित होकर, भक्ति–भाव से पूज्यश्री की आरती करते थे। वायुमडल मे आरती की मधुर ध्वनि– 'ज्ञानसागर की, गुण–आगर की, शुभ मंगल दीप सजाय के, हम आज उतारे आरतियाँ' काफी समय तक तैरती रहती थी। पहले 'अरहत जय जय' गुजित करते थे और उसके पूर्ण होते ही, दूसरी आरती करते थे। ❑

अधिकाश लोगो को हाथ का शुद्ध आटा 80 कि मी दूर से लाना पडता था। कार्यकर्ता लगे रहते थे दिन–रात, फिर भी, कभी–कभी वर्षा–पानी–हवा के कारण विलम्ब हो जाता था। ऐसी स्थिति मे धर्मज्ञ दीदियाँ मात्र खिचडी से कार्य चला लेती थी और वातावरण की मधुरता जीवन्त बनाये रहती थी।

एक दिन तेज वर्षा के कारण चौका लगाने के लिए भी आटा शेष न था, ग्रामीण भक्त घबड़ा गये, अब क्या होगा, हमारे भगवान को हम भूखा रखेगे क्या? तब दीदियो ने उन्हे वात्सल्य से समझाया–भाई, क्यो घबडाते हो? पूज्यश्री को कोई अतर नही आयेगा। उन्हे आभास ही न हो पायेगा।

सराक बधुओ ने चौका लगाया। केवल खिचडी बनाई। पूज्यश्री को पडगाहा। वे आये। खिचड़ी का आहार लिया और मुस्कराते हुए अपने कक्ष की ओर चले गये।

निरतराय आहार हो जाने से ग्रामीणो की आखे खुशी से गीली हो पड़ी। उन्हे बोध हुआ– 'कभी भगवान महावीर ने महासती चदनबाला से उबली हुई उडद को इसी तरह स्वीकार किया होगा।'

उस रोज सारे ग्राम मे नूतन–उत्साह जागा भक्तो मे, कि हमारे भगवान, गरीबो के भगवान, साक्षात् दीनदयालु है। ❑

यह तो उदाहरण मात्र था, वास्तविकता यह थी कि वर्षायोग की पूरी अवधि तक श्री नरेन्द्र बडजात्या और श्री सजय बडजात्या (राची) ने तथा अन्य श्रावको ने चौका से सम्बधित सम्पूर्ण सामग्री की बहुत अच्छी व्यवस्था की थी। हर वस्तु ज्यादा और साफ–शुद्ध होती थी। वे स्वत राची से लेकर आते थे, कभी किसी चीज की कमी नही होने दी। ❑

एक चैत्यालय मे मूर्तियो की स्थापना करनी थी। परमपूज्य आचार्य विमलसागर जी महाराज उस समय शिखरजी मे थे, वे जानते थे कि उपाध्यायश्री सराक क्षेत्र मे प्रभावना कर रहे हैं। अत उन्होने अपने प्रयास से वाछित मूर्तियाँ उपाध्यायश्री के पास भिजवाई थी।

धर्म की डगर पर वात्सल्य और समता का वह अनुपम उदाहरण बना था। ❑

कतिपय गावदियो को, पू उपाध्यायश्री का सराकों के यहाँ आहार लेना अच्छा न लगा। अत दबी जवान से आलोचनाएँ शुरु कर दी। तब प पू आचार्य विमलसागर जी और प पू आचार्य सुमतिसागर जी ने उपाध्यायश्री का पुरजोर समर्थन किया और सम्पूर्ण देश के सामने यह स्पष्ट किया कि जो कार्य उपाध्यायश्री कर रहे हैं, उससे देश के श्रावको और साधु–समाज की गरिमा बढेगी।

आचार्य–द्वय के सशक्त समर्थन से विघ्नसतोषी शात हो गये। उदारता की धूप सारे देश मे फैली, फिर कोई उसे रोक नही सका।

कालान्तर मे पू उपाध्यायश्री को सारे देश ने एक मत से स्वीकारा कि वे राष्ट्रसत, राष्ट्र के प्रथम सराकोद्धारक–सत हैं। ❑

कथा चल रही थी कि मोह की श्रृखला से परे, निर्मोही सत ने तडाई से विहार कर दिया।

तडाई सूना हो गया था। चार माह से एक 'महागीत' की तरह गुरुवर जन–जन के अधरो से गाये जा रहे थे, आठो–याम उन्ही की चर्चा, उन्ही का नाम रहता था लोगो की जुबान पर, अब वह 'महागीत' उनसे दूर हो गया था। ऐसा मधुर गीत जिससे तडाई–क्षेत्र के निवासियो के अर्थ, धर्म और मोक्ष के पथ/साधन प्रशस्त हो रहे थे। अब तडाई मे लोग थे, किन्तु अनुगूँज शात थी।

मगर वह अधिक समय तक शात न रह सकी, गुरुवर द्वारा दिये गये नियम–सयमो मे वह पुन जीवत हो उठी। श्रावक गुरु द्वारा दर्शित/इगित दिनचर्या मे रम गये। गुरु की अनुगूज मदिर से घर तक अनुगुजित होती रही। लोगो को ध्यान हो आया कभी अयोध्या से राम चले गये थे, परन्तु रामचर्चा घर–घर बनी रही थी। ❑

सन 1993 विदा ले गया था। सन 94 का आगमन हो चुका था। गुरुवर झारखण्ड–क्षेत्र से निकल कर मध्य प्रदेश के आदिवासियो की ओर चल रहे थे। हर ग्राम मे मासाहार और शराब का त्याग करा रहे थे लोगो से। जहाँ उचित देखते वहाँ शाकाहार सम्मेलन के आयोजन के लिए आशीष दे देते थे। शाकाहार का ठोस प्रचार उनके विहारो से वनान्चल मे गति पा रहा था। 21 जनवरी 94 को जशपुर नगर मे शाकाहार–सम्मेलन किया। 300 नरनारियो ने गुरुवर के समक्ष मास–मदिरा का त्याग कर, नगर–गॉव का गौरव बढाया।

उस कार्यक्रम से जुडे–मद्य–निषेध–रैली और 'साक्षरता–अभियान' ने भी गति पाई। स्थानीय ए डी एम – श्री मनोज श्रीवास्तव कार्यक्रम की विशालता और गुरुवर की प्रभावना देख चकित हो गये, वहाँ के ही एक विशेष मान्यताप्राप्त नागरिक, जिन्हे सम्पूर्ण इलाका आज भी 'राजासाब' का सम्माननीय सबोधन देता है, कार्यक्रम की भूरि–भूरि सराहना कर रहे थे। उन्होने और ए डी एम साहब ने अपने विचार रखे और गुरुवर का आभार माना।

वहाँ समाजसेवियो और अधिकारियो के मध्य एक गोपन स्पर्धा ने जन्म ले लिया कि देखे कौन कितने लोगो से मद्य छुडवाते हैं और कितने लोगो को साक्षर बनाते हैं। स्पर्धा गरिमामयि थी, अत सभी कार्यकर्ता अपने–अपने उद्देश्य मे पर्याप्त सफलताएँ पा सके।

कार्यक्रम के पूर्व लोग, समूहो मे मसाल जलाकर आये थे, कहे हर हाथ मे मसाल थी। वे मसाले देखने मे अच्छी तो लग ही रही थी, वे सदेश भी दे रही थी कि अब गॉव–गॉव मे अक्षरज्ञान का प्रकाश फैलना चाहिए। ❑

जो रुझान 21 जनवरी को जशपुर मे था, वही 27 जनवरी 94 को मनोरा ग्राम मे परिलक्षित हुआ। त्याग, त्याग, त्याग। मास त्याग। अडा–त्याग। दारु–त्याग। व्यसन–त्याग।

आश्चर्य की बात यह थी कि मनोरा ग्राम मे जैन–समाज नही होने के बावजूद भी, वहाँ के धार्मिक और सामाजिक कार्यो पर रुचि रखने वाले ग्रामीण पू उपाध्यायश्री को अपने ग्राम ले गये थे। उस दिन बस्ती

मे स्थित सभी कार्यालयो और स्कूलो मे अवकाश–घोषित कर दिया था शासन ने, फलत छात्र, कर्मचारी और अधिकारी भी, आम–आदमी की तरह, गुरुवर के कार्यक्रम मे पहुँच गये थे। विशाल भीड हो गई थी।

गुरुवर के प्रेरक–प्रवचन सुनकर, एक कुप्रथा का त्याग किया जनमानस ने, वहाँ के लोग सामूहिक–भोज के बाद किसी एक जानवर की बलि चढाते थे और उसके रक्त से कुल्ला करते थे। प्रथा उस दिन समाप्त करने की घोषणा की गई। जय हो उपाध्यायश्री की। जयवत रहे उनके प्रवचन।

शाकाहार की दुदुभी बज उठी उस अचल मे। लोगो मे व्यसन त्याग और सयम–धारण करने की स्पर्धा सी हो आई।

गुरुवर ने चरण बढा दिये तो ग्राम लोहखडी मे भी आचरण का अभिनदन हो गया, जब 17 फरवरी 94 को वहाँ भी शाकाहार–सम्मेलन सम्पन्न हुआ। जैन–साधु और जैनधर्म की प्रभावना का ऐसा फैलाव और स्थापना, पूर्व मे कभी नही हुई थी वहाँ। उस ग्राम मे। उस अचल मे।

बाद मे ऐसा ही माहौल अम्बिकापुर, कुनकुरी एव बगीचा को प्राप्त हो सका था। शीतकाल की अवधि विदाई ले गई तो ग्रीष्मकाल ने चरण जमाने शुरु कर दिये। फरवरी से अप्रैल के मध्य गुरुवर अम्बिकापुर मे थे। छत्तीसगढ के पिछडे इलाको मे से एक है यह। पश्चिम बगाल या उडीसा या झारखण्ड से पृथक नही है यहाँ का पिछडापन। गुरुवर 'पिछडो' को 'अगडो' से जोडने निकले थे।

22 फरवरी से 24 फरवरी 94 तक वहाँ त्रि–दिवसीय समारोह होने वाला था–वेदी प्रतिष्ठा का। समाज की मनोकामना के अनुरुप पू गुरुवर का सानिध्य उपलब्ध हो गया था। तीनो दिन समसामयिक विषयो को लेकर धार्मिक प्रवचनो ने भारी प्रभावना की। अतिम दिवस मदिर जी पर, गुरुवर की आशीष–छाया के तले–कलशारोहण सम्पन्न हुआ।

प्रभावना का क्रम शिथिल न पडा, वृद्ध, युवक, और किशोरो के साथ–साथ माता–बहिने भी, धर्म क्षेत्र मे कुछ करने के भाव से, जुडती चली जा रही थी। सुपरिणाम यह कि 8 मार्च 94 को 'उपाध्याय श्री ज्ञानसागर–पाठशाला' की प्रथम ईट भूसात की गई, कहे–शिलान्यास समारोह सम्पन्न किया गया।

प्रभावना का क्रम बना रहा, और नित नये कार्य होते गये।

अप्रैल मे 18 से 20 तक, स्व प महेन्द्रकुमार न्यायाचार्य के स्मृति दिवस पर राष्ट्रीय–सगोष्ठी के कार्यक्रम मे भी गुरुवर ने पावन सानिध्य प्रदान किया।

वे जब तक वहाँ रहे, शाकाहार और सराक–बधुओ पर अधिक चर्चाएँ की। सम्पूर्ण–अचल के समस्त निवासी गद्गद थे। प्रसन्नता का एक कारण और था, मध्यप्रदेश का 'हीरा' पुन मध्यप्रदेश की सीमा मे था। अत ऐसा प्रतीत हो रहा था कि अब मध्यप्रदेश के माथे पर सौभाग्य–कलश की बारी है। गुरुवर मध्यप्रदेश की ओर बढेगे! पर उनके शात नेत्रो मे बगाल के सराक झूल रहे थे। अत अम्बिकापुर (सरगुजा) के कार्य ही हो पाये। (वहाँ ही स्व प महेन्द्रकुमार जी के सम्मान मे एक 'वृहत् स्मृति ग्रन्थ' के सम्पादन–प्रकाशन की रूपरेखा बनाई गई। एक समिति बनाकर कार्य सौंपा गया। श्रीमान डालचद जी जैन सागर अध्यक्ष एव प्रो डा भागचद जैन भागेन्दु दमोह मत्री मनोनीत किये गये। (पॉच खण्डो,, 620 पृष्ठो, मे सम्पादित वह यादगार ग्रन्थ करीब तीन वर्ष मे आकार पा गया। फलत गुरुवर के आशीष के अनुरूप 18 मार्च 1997 को दिल्ली मे, देश के राष्ट्रपति श्री शकरदयाल शर्मा के करकमलो से एक विराट–आयोजन मे, उसका लोकार्पण–समारोह कराया गया।)

वहाँ चौका लगाने का क्रम परिष्कृत था। हर श्रावक सावधानी रखता था। उन्ही के मध्य डा अभयकुमार जैन (चौधरी) और उनकी धर्मपत्नी श्रीमती आशा चौधरी भी सपरिवार चौका लगा रही थी। प्रेरक बात यह थी श्रावको के लिए, कि डा अभय स्वय ही कुएँ तक जाकर पानी भरते थे और कलश कॉधे पर धरकर भोजनशाला मे लाते थे। लोग उपालम्भ देते कि आप स्वत क्यो जाते हैं पानी भरने, किसी अन्य सदस्य को भेज दे। तब वे मुस्कराकर उत्तर देते– अपने हाथो को धन्य कर रहा हूँ। ❑

हम अम्बिकापुर की चर्चा कर रहे थे, जहाँ के श्रावको ने भगवान महावीर–जयती के साथ–साथ उपाध्यायश्री का छठवॉ– 'मुनि दीक्षा दिवस–समारोह' भी आनद से मनाया और 23 अप्रैल 94 के दिवस को 'मन पुस्तिका' मे ऐतिहासिक महत्व का कर दिया।

पुरुलिया–समाज और दुर्ग–समाज के लोग गुरुवर से प्रार्थना करने अम्बिकापुर आये। श्रीफल चरणो मे चढाये और अपने क्षेत्र पर पधारने का सविनय अनुरोध किया।

धीरे–धीरे श्रावको को बगैर गुरुवर के रहने का क्षण समक्ष आ गया, गुरुवर विहार कर गये।

3 जून से 14 जून 94 का समय प्राप्त करने मे बगीचा नगर सफल रहा। वहाँ ही गुरुवर ने पू आचार्य शातिसागर जी महाराज (छाणी) की पचासवी–पुण्य–तिथि मनाई और जनसामान्य के मध्य गुरु–परम्परा तथा सन्त–परम्परा का महत्व प्रतिपादित किया। फिर गये–कुनकुरी। फिर सेनई, सिमडेगा आदि नगरो को चरणसानिध्य प्रदान करते हुए पुरुलिया जिले की सीमा मे प्रवेश किया। लोग तो आशा कर रहे थे कि गुरुवर वर्षायोग के निमित्त ही यहॉ पधारे है, पर उनकी आशा पूर्ण होते न दिख रही थी। समाज रोज–रोज श्रीफल चढाकर प्रार्थना कर रहा था चातुर्मास के लिए, किन्तु गुरुवर कुछ अन्य सोच विचार मे थे। विचार करते हुए, उन्होने समाज को धर्म और ध्यान मे लगे रहने की प्रेरणा की, मगर वहॉ रुक न सके। सराको के पुरुलिया मे धर्म की मुरलिया बजा कर विहार को उद्यत हो गये।

एक मायने मे पुरुलिया को कुछ ही दिन का समय मिला था, क्योकि परमपूज्य उपाध्यायश्री ज्ञानसागर के मानस मे एक विचार चक्रमण कर रहा था सराक क्षेत्र के उद्धार मे लगे सैकडो कार्यकर्ता और समाजसेवियो की सुविधा कहाँ निहित है? कौन स्थान उपयुक्त होगा कि जब बरसात के समय भी कार्यकर्तागण जगल, नदी, पहाड लॉघ कर कार्य कर सके, सम्पर्क बना सके। एक ओर उडीसा प्रान्त का भूभाग था जहाँ कटक, नोयगढ, गजाम, पुरी, खुर्दा और गुन्जाम जिलो के 760 ग्रामो मे करीब एक लाख पैतीस हजार सराक थे, दूसरी तरफ पश्चिम बगाल था जहाँ वर्द्धमान, बाकुडा, पुरुलिया, मेदिनीपुर जिलो के 191 ग्रामो के लगभग पचास हजार सराक थे और तीसरी ओर बिहार–झारखण्ड–सथाल परगना की धरती थी जहाँ सिहभूमि, राची, दुमका, वीरभूमि, धनबाद और बोकारो जिलो के 22 ग्रामो के साढे बारह हजार सराक थे।

गुरुवर ने तीनो अचलो का अध्ययन किया और निर्णय लिया कि बोकारो के समीप वर्षायोग स्थापना की जावे तो तीनो विशाल क्षेत्रो के लोगो को आवागमन की सुगमता रहेगी। वर्षायोग के पश्चात पुन पुरुलिया को स्पर्श कर लिया जायेगा।

सतो–साधुओ के निर्णय जन–मन के कल्याण के लिए होते हैं अत पूज्य उपाध्यायश्री, ससघ, पुरुलिया से चल बोकारो जा पहुँचे और समीप ही एक छोटी सी बस्ती 'पेटरवार' मे चातुर्मास की स्थापना कर दी, साथ मे श्रीसघ। वे ही सदस्य–मुनिवर वैराग्यसागर जी, ब्रह्मचारिणी बहिन अनीता जी, ब्र मजुला जी, ब्र अतुल जी और ब्र मनीष जी। सभी सदस्य एव श्रावकगण समझ गये कि गुरुवर को पेटरवार से

तीनो तरफ ध्यान देना है, तीनो तरफ से आने वाले कार्यकर्ताओ को निर्देश देना है, तीनो तरफ से पहुँचने वाले समाजसेवियों को प्रेरणा देना है और तीनों–क्षेत्रों के दस सौ पचास ग्रामों के लगभग दो लाख सराको के उद्धार की योजना चलाना है। इतना सब करते हुए आत्महित की सभी क्रियाएँ भी पूर्ण करना है, नित्य–नित्य। ❑

पेटरवार मे धार्मिक–कार्यों और कार्यक्रमो की कमी नहीं थी। नित्य पर्व जैसा माहौल बना रहता था। वहाँ की जैनेतर कलाकारो की सगीत–मडली गुरुवर को पाकर, केवल धार्मिक कार्यक्रमो में सगीत दे रही थी। फलत उन्हे 'ज्ञान–तरग' नाम से एक विशेष संगीतमय प्रस्तुति का कैसिट बनाने और उसे प्रचलित करने का शुभावसर भी मिला। कृपा गुरुवर की।

वहाँ ही एक विद्वान श्वेताम्बर साधु, परम आदरणीय श्री जयति मुनि जी उपाध्यायश्री के दर्शनार्थ पधारे। यद्यपि वे उम्र मे अधिक थे। पर दिगम्बर–सत के प्रति उनका सौहार्द–भाव और भगिमा समझने लायक थे। वे हृदय के ओर–कोर से उपाध्यायश्री को सम्मान प्रदान करते दीख रहे थे और उपाध्यायश्री अपने वात्सल्य का सिचन कर उनका रोम–रोम हर्षा रहे थे। विशेष था वह मिलन। ❑

पेटरवार के नेत्र चिकित्सालय मे जो भी रोगी या विजिटर (भ्रमणकर्ता) आते जाते थे, श्री जयति मुनिजी उन्हे उपाध्यायश्री के दर्शन कर आने की प्रेरणा सदा देते रहते थे। तब लगा, सतो के इस 'परस्पर–वात्सल्य' पर ही धर्म और धार्मिक–जन टिके रहते हैं मैत्री की परिधि मे।

बडे कार्यक्रमो पर दृष्टि डाली जावे तो रक्षा का महत्व प्रतिपादित करने वाला–रक्षाबधन पर्व–पहले लेना होगा। उस दिन साडम, जैनामोड, राची, गोमिया, हजारीबाग, पुरुलिया आदि के भक्त पेटरवार के भक्तो के साथ शामिल थे। विशाल जन–समूह गुरुवर की वाणी का प्रसाद प्राप्त कर सका था। गुरुवर इस तरह प्रवचन देते थे कि मुख्य विषय के साथ–साथ सराक–कल्याण का विषय अपने आप चर्चा मे स्थान पाने लगता था।

मोक्ष सप्तमी को गुरुवर ने तीर्थंकर पार्श्वनाथ के प्रसग इस तरह सुनाये कि हर श्रावक गद्गद् हो गया।

स्वतत्रता दिवस, 15 अगस्त 94 को पेटरवार पुन अतिथियो से भर गया था। दिल्ली, आगरा, शाहपुर, शामली, राची, गया, पुरुलिया के श्रावक जो पहुँचे थे। गुरुवर ने देश की स्वतत्रता की रक्षा का सकेत कर, आत्म–स्वातत्र्य पर भी प्रकाश डाला। उसी दिन महाविद्यालय के छात्र–छात्राओ की भाषण प्रतियोगिता–'सन्तान का माता–पिता के प्रति कर्त्तव्य' अत्यत महत्वपूर्ण कदम माना गया–सराकोद्धार की दिशा मे। फिर विजयी विद्यार्थियो को पुरस्कार दिये गये।

सितम्बर माह की पाँच तारीख को गुरुवर के सकेतानुसार शाकाहार का महत्व प्रतिपादित करने वाली 'भाषण प्रतियोगिता' लोगो मे उच्च भावनाये जगा गई थी।

रविवारो का अपना एक पृथक क्रम था ही, हर रविवार को गुरुवर के प्रवचन सुनने बाहर से भी श्रोतागण पहुँचते थे। कई बार तो दूर–दूर तक से आते थे, हाँ दिल्ली, मेरठ, तक से भी और अचल मे बसे नगरो–राँची, पुरुलिया, गया, हजारीबाग, डाल्टनगज और जशपुर से भी। पेटरवार के पडोसी नगर भी क्यो चूकते? बोकारो, साडम, गोमियो और जैनामोड के लोग तो बने ही रहते थे।

इस वर्षायोग मे पू मुनि वर्द्धमानसागर जी महाराज (जो पूर्व अवस्था मे गुरुवर के दादा जी/ग्रेण्ड फादर होते थे) के परिचय मे लिखित पुस्तिका 'मुनि वर्द्धमान सागर एक परिचय' का विमोचन एव लोकार्पण समारोह भी हुआ।

इधर पेटरवार मे गुरुवर के सानिध्य मे आयोजनो का क्रम चल रहा था, उधर मध्यप्रदेश स्थित अतिशयतीर्थ श्रीसोनागिरि जी मे, 3 अक्टूबर 94 को परमपूज्य आचार्य श्री 108 सुमतिसागर जी महाराज ससार का त्याग कर गये थे।

समाचार ए उपाध्यायश्री तक पहुँचा। वे चकित तो हुए क्षण भर को, किन्तु मोहग्रस्त नही। कार्यकर्ताओ ने मत्रणा की और एक श्रद्धाजलि–सभा का आयोजन किया। उपाध्यायश्री ने अपने पूज्य गुरु आचार्य सुमतिसागर जी के जीवन और जीवनदर्शन का सागोपाग वर्णन किया, अनेक धार्मिक प्रसग सुनाये भक्तो को। फिर आशा मे निराशा के स्वर घोल कर बोले– 'गुरुवर के अतिम समय, यदि मै उनके चरणो के समीप होता तो मेरा शिष्यत्व और अधिक धन्य होता, कृतज्ञ होता मै।' कुछ देर तक चुप रह गये उपाध्यायश्री, जैसे अपने आपको सम्हाल रहे हो। फिर आगे बतलाया–हमारे पूजनीय गुरुदेव, सोलहकारण–पर्व मे एक माह का उपवास करते थे। उनकी तपश्चर्या अद्वितीय थी। स्वभाव मृदुल था, वात्सल्य और सरलता की जीवन्त मूर्ति थे।

अनेक सस्मरण सुनाये उपाध्यायश्री ने। सामूहिक श्रद्धाजलि के पश्चात सभा समाप्त। गुरुवर ने मौन धारण कर लिया समय–विशेष के लिए और अपने कमरे मे सामायिक–लीन हो गये। ❑

वर्षायोग भले ही पूर्ण हो गया था, कार्य तो अभी पूर्ण करने थे। अत गुरुवर ने सराक और शाकाहार की प्रगति के रथ को पल भर भी न रुकने दिया।

नवम्बर 94 मे ही, वही, पेटरवार (बोकारो) के समीप साडम मे, एक धार्मिक–आयोजन के चलते, विशाल– 'शाकाहार– सम्मेलन' रखा गया और लोगो मे शाकाहार के प्रति निष्ठा तथा आदर उत्पन्न किया गया। सहस्रो लोगो ने उस दिन मच के समीप आ गुरुवर के समक्ष अभक्ष्य–त्याग का सकल्प लिया। वह दिन विशेष हो गया था अत गुरुवर की आज्ञानुरुप, समाजसेवी श्री पूनमचद गगवाल ने, मासाहार–मदिरा आदि व्यसनो का त्याग करने वाले व्यक्तियो को पुरस्कृत किया। साडम की जमीन से जुडे कार्यकर्ता श्री कमलकुमार जैन ठेकेदार का नाम उल्लेखनीय है वे सराक–क्षेत्र की गतिविधियो की देख–रेख करते है और धर्म तथा समाज के प्रति समर्पित है।

आयोजनो का सतत् क्रम था। अत उसी क्रम मे 13 से 15 नवम्बर 94 की अवधि मे बीस से अधिक विद्वानो की उपस्थिति मे राष्ट्रीय स्तर पर 'विद्वत गोष्ठी' सम्पन्न की गई। सयोजन किया था–सुप्रसिद्ध प्रतिष्ठाचार्य प विमलकुमार सौरया ने। आमत्रित विद्वानो मे श्री निर्मल जैन (सतना), डा कस्तूरचद कासलीवाल, प्रो उदयचद्र जैन (वाराणसी), डा रतन चद जैन (भोपाल), डा नलिन शास्त्री (गया), डा फूलचद जैन (प्रेमी) डा शीतलचद जैन (जयपुर), योगाचार्य फूलचद जैन (छतरपुर) आदि प्रमुख नाम थे।

गुरुवर की पावन उपस्थिति के फलस्वरुप हर विद्वान की वाणी जनता ने सुनी थी और प्रेरणा ली थी। अत मे गुरुवर ने विद्वानो के आलेखो–लेखो–वचनो पर अपनी दृष्टि रखी और सराक–उद्धार से लेकर शाकाहार तक विवेचना की।

अतिम दिवस 15 नवम्बर को वहाँ ही, साडम के उस भव्य–मच और पडाल मे 'पिच्छिका परिवर्तन–समारोह' शातिपूर्वक सम्पन्न हुआ। ❑

साड़म से विहार। गुरुवर पुरुलिया पहुँचे। वही पुरुलिया जहाँ चार माह पूर्व जागृति का शख फूँका गया था–उनके द्वारा। यहाँ भी 'विराट–सराक–सम्मेलन' आयोजित किया गया जिसमे तीनो प्रमुख प्रान्तो के सैकड़ो ग्रामो से कई हजार सराक बंधु उपस्थित हुए थे।

'सराक–सम्मेलन' से सराकों मे विश्वास दृढ होता था कि उन पर ध्यान देने वाला भी 'कोई' है। गुरुवर सदा उनकी विस्मृत–संस्कृति की याद दिला कर, उन्हे आत्मविकास की प्रेरणा प्रदान करते थे प्रवचनो के द्वारा।

पुरुलिया आया हुआ हर ग्राम का सराक, उन्हे अपने ग्राम ले जाना चाहता था। हर गॉव के लोग गुरुवर के चरणो मे–श्रीफल चढाते और प्रार्थना करते थे। गुरुवर उन्हे यथोचित उत्तर देकर सतुष्ट करते थे। वे बतलाते कि अभी शिखर जी–वदना करना है, भगवान पार्श्वनाथ के चरणो मे पहुँचना है। भक्त शान्त रह जाते। पुरुलिया मे उत्साह का सागर हिलोरे लेता रहा और 'ज्ञान का हिमालय' एक दिन वहॉ से विहार कर गया।

यो पार्श्ववदना का भाव साडम मे ही बन गया था। गुरुवर पुरुलिया से झापडा, रघुनाथपुर होते हुए मिहिजामपुर गये, वहॉ भी 'विराट–सराक–सम्मेलन' सम्पन्न कराया। वहॉ भी लोगो ने मास–मदिरा–मधु का त्याग किया गुरुवर की उपस्थिति मे। माहौल देख कर लगा–नूतन सात्विकताऐं जन्म ले रही थी, म्लेच्छताऐं भू–सात हो रही थी, हर सराक नवजागरण का अनुभव कर रहा था। आर्यत्व पहिचान रहा था।

वहॉ नवमदिर–निर्माण का कार्य धीमा क्या अधूरा था, जबकि मूर्ति लाई जा चुकी थी। कार्य रुक जाने के पार्श्व मे एक ही सूत्र था–सामाजिक–समन्वय का अभाव। किन्तु गुरुवर की उपस्थिति ने समाज मे समन्वय, एकता और अनुशासन की त्रिवेणी बहा दी, भक्तो मे परस्पर सामजस्य की भावना जागृत हो गई फलत कार्यों को गति मिल गई, समाज को सुदिशा।

गुरुवर ने पूरे दो वर्ष का समय प्रदान किया था सराक–क्षेत्र को। बगाल, संथाल, परगना, झारखण्ड, बिहार और उडीसा के सैकडो ग्रामो मे जागृति की लहर ला दी थी। आप पूछेगे क्या कार्य हुए वहॉ?

भाई, पहला सबसे बडा कार्य यह हुआ कि तीन प्रान्तो के दस से अधिक जिलो मे, करीब पाच सौ ग्रामो मे, धर्म और सस्कृति की पकड मजबूत हुई। यह ऐसा कार्य था जिसे कोई सरकार, सस्था, श्रीमान या धीमान अपने बलबूते नही कर सकते थे।

देश के सराको ने सबसे बडा पुरुषार्थ त्याग के क्षेत्र मे बतलाया था। जब उन्होने गुरुवर की प्रेरणा से, परम्परा पर अतिक्रमण कर बैठा 'मासाहार' का त्याग किया था और आजीवन 'शाकाहार' लेने का व्रत अगीकार किया था। यह 'शाकाहार व्रत' छोटी–मोटी घटना नही थी। इसका वजन और वजूद महात्मा गॉधी जी के उस व्रत के बराबर था, जब 31 अगस्त 1920 मे उन्होने 'आजीवन खादी' का व्रत लिया था।

यदि प्राकृतिक घटनाओ से तुलना करने को कहा जाये तो मैं कहूगा–15 जनवरी 1934 मे आये भूकम्प से बिहार मे बीस हजार लोग सदा के लिए सो गये थे। मगर सन 1993 और 94 मे, गुरुवर द्वारा की गई प्रेरणा से दो लाख लोग जागे थे, निर्व्यसन–जीवन की दिशा मे चलने के लिए।

इसे, इस घटना को, आत्मिक–धरातल पर वर्णित करना हो तो मुझे कहना होगा कि पश्चिम–बगाल मे 28 फरवरी 1941 को हुगली नदी पर 'हावड़ा ब्रिज' शुरु किया गया था। गुरुवर ने 93 व 94 के वर्षायोगो से 'श्रावक और सराक' के मध्य एक वैचारिक–सेतु (ब्रिज) निर्मित कर दिया था जिसके ऊपर से धर्म,

आचरण, सस्कृति, शिक्षा, रोजगार और सौहार्द्र का आवागमन शुरु हो सका जो आगामी शताब्दियो मे और अधिक घनत्व प्राप्त कर सकेगा।

गुरुवर द्वारा प्रणीत 'सराक–क्राति/सराकोद्धार की योजना साधारण नही है। एक नये–देश के निर्माण जैसा है वह कार्य। नव तीर्थ–निर्माण के कार्य और प्राचीन मदिर जीर्णोद्धार के कार्य भी उक्त योजना से अधिक महत्व प्रतिपादित नही करते। सबका अपना महत्व हो सकता है, पर गुरुवर की योजना के समक्ष सभी 'महत्व' और 'महत्वाकाक्षी–पुरुष' विनत मिलेगे। भूसात मिलेंगे, नमन निवेदित करते मिलेगे। योजना के समस्त कार्यो को गहराई से समझने का प्रयास किया जावे।

तीन प्रान्तो मे, 350 ग्रामो के छह हजार परिवारो के तीस हजार से अधिक सदस्यो का सर्वेक्षण कार्य सम्पन्न कराया गया, जो समाज और इतिहास मे 'पहला अवसर' निरूपित किया गया।

अन्य कार्य ऐसे है जो हर माह प्रगति पा रहे हैं। अत उनके आकडे गिनाना आवश्यक नहीं हैं, क्योकि आज जो सख्या लिखी जावेगी, गुरुवर की कृपा से कल तक वह और बढ जायेगी। अत उनके नाम ही स्पष्ट करना उचित होगा–ग्रामो मे धार्मिक पाठशालाएँ चलाई जा रही हैं, वे दो घटे भौतिक–शिक्षा और आधा घटे धार्मिक–शिक्षा देती हैं। उनमे प्रशिक्षित–युवक पारिश्रमिक पर शिक्षक रखे गये हैं।

वर्ष मे एक–दो बार धार्मिक शिक्षा की परीक्षा ली जाती है और उत्तीर्ण छात्र–छात्राओ को योग्यतानुसार पुरस्कृत किया जाता है।

बेरोजगार युवको को ड्राईविग, टाईपिग, कम्पाउन्डरी आदि की शिक्षा नि शुल्क देकर, उन्हे रोजी–रोटी जुटाई जा रही है। जो अधिक शिक्षित है, उन्हे आर एम पी कराकर वैद्य/डाक्टर/कम्पाउन्डर बनाया जा रहा है।

माता–बहिनो को रोजगारोन्मुखी बनाने के उद्देश्य से, उन्हे सिलाई–बुनाई की शिक्षा दी जा रही है। जो सीख जाती है, उन्हे सिलाई मशीन प्रदान कर, सिलाई–केन्द्र सचालित कराये जा रहे हैं।

निर्धन छात्र–छात्राओ को हर स्तर की पुस्तके नि शुल्क प्राप्त कराई जा रही है। बेसहारा/विधवा बहिनो को आर्थिक–सहयोग देकर जीवनयापन कराया जा रहा है। लम्बी बीमारियो से ग्रस्त रोगियो का उपचार कराया जा रहा है। टी बी लकवाग्रस्त मरीजो के अलावा, पागलपन से पीडित व्यक्ति भी लाभ पा रहे है।

जहॉ, जिस ग्राम मे जीर्णशीर्ण मदिर है, उन्हे सुधरवाया जा रहा है। जहॉ नही हैं, वहॉ 3–4 गॉवो के मध्य एक जिनालय का निर्माण कराया जा रहा है।

ग्रामो मे 'दिगम्बर सराक कमेटी' या 'ग्राम्य–कमेटी' का गठन किया जा रहा है। मिनी–सेन्टर (लघु उपकेन्द्र) खोले जा रहे है, उनके लिए कमरो/भवनो के निर्माण कराये जा रहे हैं।

गरीब बहिनो के विवाह के लिए आर्थिक सहयोग किया जा रहा है। अच्छे और कर्मठ–कार्यकर्ताओ के उपयोगार्थ मोटरसाईकिल दी जाती है। जो छात्र स्थानीय–स्तर पर पढ लिख कर और अधिक पढना चाहते है उन्हे पावापुरी और बनारस आदि भेज कर शिक्षा दिलाई जाती है।

(कतिपय कन्याओ को आरा स्थित विद्यालय भेजा गया था, पढने के लिए, वे वहॉ से अध्ययन पूर्ण कर वापिस आ चुकी हैं और अपने समीपी क्षेत्र मे जागरण का हेतु बन गई हैं)

हर ग्राम मे 'धार्मिक–शिक्षण–शिविर' का क्रम रखा जाता है एव वर्ष मे एक या दो बार, दस या पद्रह दिवसीय शिविर लगाये जा रहे हैं। सराको के लिये तीर्थ–यात्रा–बस नि शुल्क चला कर, तीर्थयात्रा कराई जाती है। (वर्तमान मे भी गुरुवर जहॉ होते हैं, सराक–बंधु शिविर मे बुलाए जाते हैं।)

स्थिति इतनी अच्छी हो पडी है कि कुछ केन्द्रो को जीप–वाहन दिया जा सकेगा तो कुछ स्थानो पर कम्प्यूटर–केन्द्र खोले जा सकेगे।

अब कोई कहे कि सराकक्षेत्र मे क्या कार्य हुए? क्या प्रगति हुई? तो उस पर झुँलाइए नही, किसी भी प्रान्त के सराकक्षेत्र मे सचालित उक्त कार्यो का उल्लेख कर दीजिए। वे कल्पना या स्वप्न नहीं हैं, 'सराक–योजना' के अतर्गत सम्पन्न कार्य हैं उनकी सराहना होगी ही। उनसे छह लाख सराको को लाभान्वित करना है। गुरुवर की कृपा से वह सब सम्भव है। अत बोलिये–परमपूज्य उपाध्याय ज्ञानसागर महाराज की जय।

मगर मात्र 'जय' बोलने से उक्त कार्य नही सधेगा, उसके लिए हमे भी कुछ करना होगा। गुरुवर ने दो वर्ष तक समय दिया और आज भी दे रहे हैं, हम सराक–केन्द्रो के लिए आर्थिक–सहयोग तो दे ही सकते हैं। हमे अपनी राशि सराक ट्रस्ट के पते पर भेजना चाहिए। तुरन्त भेजना चाहिए। दान के हर अवसर पर भेजना चाहिए। हमारा यह क्षेत्र कोलकाता से लगा हुआ है, कोलकाता, जहॉ 7 अक्टूबर 1950 को आदरणीय मदर टेरेसा ने 'मिशनरीज–आफ चेरिटी' की स्थापना की थी, जो आज भी सफलता से चल रही है। तो हमारे सराक भाइयो की सेवार्थ गठित समितियॉ और केन्द्र क्यो न चलेगे? वे अवश्य चलेगे, चलते रहेगे क्योकि उनके ऊपर गुरुवर की छत्रछाया है और श्रावको का सहयोग। ❑

वृक्षारोपण करने वाले दूरदर्शी विद्वान, वृक्ष लगा कर चले जाते हैं अपनी सुविचारित–दिशा मे, वृक्ष के पास बैठे नही रहते। किन्तु आने वाले कल मे–समीपी–परिवेश के लोग उस विशाल वृक्ष से छाया लेते रहते हैं। लेते हैं–फल, पत्र– पुष्प–सुगन्ध आदि। सराक क्षेत्र मे रोपित, परोपकार और आत्म–उद्धार जैसे फल देने वाले 'महावृक्ष' की सराहना करे, उसे समय पर मिट्टी, खाद, पानी दे ताकि वह हर सराक को वह–वह दे सके, जिसकी चाह/ जरूरत उन्हे है। सच गुरुवर की योजना 'अमीर का हलुवा' नही है जो एक–दो महलो मे बन कर रह जावे, वह तो निर्धनो की खिचडी है जो हर एक कुटी/झोपडी मे नित–नित आवश्यक है। ❑

13

'नाम की सुगंधि'

मिहिजाम से पाण्डेडीह और फिर गिरिडीह। 17 दिसम्बर 94 की प्रभातबेला मे गुरुवर ने ससघ तीर्थराज सम्मेद शिखर जी की तलहटी—मधुबन—मे प्रवेश किया। गुरुवर चार वर्ष के पश्चात लौटे थे, अत मधुबन—समाज ने बढ़—चढ़ कर स्वागत किया, श्रावको के साथ अनेक मुनिगण, आर्यिका—माताएँ और ऐलक—क्षुल्लक नगर सीमा तक गये और उपाध्यायश्री की भावपूर्ण अगवानी की।

सत्य तो यह है कि दिगम्बर—सतो का स्वागत—सत्कार नहीं होता, न वे चाहते हैं, पर भक्ति का मारा श्रावक—समाज बिना भक्तिप्रदर्शन के कब चुप बैठता है। सो वहाँ मधुबन मे, पारस—प्रभु की देहरी पर—भारी स्वागत किया गया उपाध्यायश्री का। ऐसा, कि लोग बतलाते हैं—इतिहास मे पहली बार— भक्ति श्रद्धा और वत्सलता का मेला लगा गया था वहाँ।

उपाध्यायश्री ज्योही धर्मशालाओ के मध्य से बने हुए मार्ग पर आगे बढे, वाद्ययत्रो की धुन सारे वातास मे फैल गई। जयकार की ध्वनिया शिखरजी के शिखर का आरोहण करती लग रही थी। तभी अपनी वसतिकाओ और परिसरो का घेरा लाघते हुए, परमपूज्य आचार्य विमलसागर जी एव उपाध्याय भरतसागर जी बाहर निकल आये, आचार्यश्री ने उपाध्याय ज्ञानसागर जी को गले से लगा लिया। उन्होने छोड़ा तो भरतसागर जी ने लगा लिया। सागरो मे भरा हुआ वात्सल्य खुल—खिल कर देख रहे थे श्रावक। कुछ भक्तों के नेत्र गीले हो पडे। ❑

व्यवस्थापकगण पू उपाध्याय ज्ञानसागर जी को तेरहपथी कोठी स्थित बडे मदिरजी में ले गये। ❑

दोपहर दो बजे से प्रवचन—सभा का आयोजन हुआ। विशाल मच पर पू आचार्यश्री के आजू—बाजू दो उपाध्यायश्री पधारे थे, एक तरफ पू ज्ञानसागर जी दूसरी तरफ पू भरतसागर जी। फिर यथाक्रम से अन्य मुनि—आर्थिका आदि।

तीनो महान विभूतियो के वचन—प्रवचन सुनने का सौभाग्य उपस्थित श्रावकों और व्यवस्थापको को मिला। आचार्य श्री विमल सागर जी एव उपाध्याय श्री भरतसागर जी ने सराकोद्धार की दिशा एव कार्यशैली के साथ—साथ उपाध्याय ज्ञानसागर जी की खुले हृदय से सराहना की और बतलाया कि न केवल सराकक्षेत्र मे, अपितु बिहार, झारखण्ड, पश्चिम बगाल और उडीसा मे जैन धर्म की ज्योति पुनर्प्रज्ज्वलित करने का श्रेय भी श्री ज्ञानसागर जी को जाता है। ❑

उसी दिन, 17 दिसम्बर को ही, गुरुवर सघ सहित पर्वत पर चले गये। रात्रि—विश्राम पर्वत पर ही सत—वसतिका मे किया। 18 दिसम्बर 94 को, सुबह 6 बजे वदनार्थ निकल पडे। शातिपूर्वक बीस टोको की वदना सम्पन्न कर लौटे तो लगभग ग्यारह बजे तलहटी—मधुबन—आ पहुँचे। श्रावको ने भक्तिपूर्वक आहारदान दिया।

विराम, आराम, विश्राम के लिए कोई क्षण न था पू उपाध्याय श्री ज्ञानसागर जी की दैनिक चर्या में, अत दोपहर दो बजे पुन जो सभा उनके सम्मान मे आयोजित की गई थी, उसमे उपस्थिति दी। वैदुष्य की साक्षात आगार पूज्य आर्यिकारत्न स्याद्वादमती माता जी (जिन्हे 20 अप्रैल, 2003, दिन रविवार को गोम्मटगिरि, इदौर मे प पू आचार्यरत्न भरतसागर जी महाराज ने गणिनीपद प्रदान किया है) ने अपने प्रवचनो मे स्पष्ट किया कि न केवल बिहार प्रान्त, वरन् तीन प्रान्तों के सराक क्षेत्र मे भी पू. उपाध्याय ज्ञानसागर जी ने धर्म—सस्कृति और समाजिक जागृति की हरीतिका फैलाई है। वह जन—जन के लिए कल्याणकारी हैं, अन्यथा यह विशाल प्रान्चल तो शुष्क ही पड़ा था। उनके बाद उन के स्वरो को पू. उपाध्याय भरतसागर जी ने समर्थन देते हुए प्रवचन किया। फिर दोनो की धारणा को पू. आचार्य श्री विमलसागर जी

महाराज ने पुष्ट करते हुए उपाध्याय ज्ञानसागर जी महाराज के दो वर्षों के 'धर्म-सग्राम' पर वृहत् प्रकाश डाला और सराहना की।

पू उपाध्याय ज्ञानसागर जी ने अपने प्रवचन मे सराको की दीनता और साधनहीन-जीवन-प्रणाली की चर्चा की और बतलाया कि उन्हे दिगम्बर-सतो और दिगम्बर-जैन-समाज की आवश्यकता-आज भी है, दोनो वर्गों को समय निकालते रहना चाहिए।

19 दिसम्बर को मधुबन स्थित श्री बाहुबली भगवान के मदिर-परिसर मे पू ज्ञानसागर जी के प्रवचन हुए। 20 दिसम्बर को पाडुक-शिला के समीप फैले मैदान मे विशाल सभा हुई जिसमे जैन-अजैन विद्वान और श्रोता उपस्थित हुए। मधुबन-ग्राम-पचायत के सरपच, वही के श्रीमान महन्तोजी आदि ने पू ज्ञानसागर जी की ऐतिहासिक सफलता का गुणगान किया। अत मे उपाध्यायश्री के प्रवचन। उन्होने अपने श्रम को 'नाकुछ' कहते हुए बतलाया कि सतो को तो कटकाकीर्ण मार्ग से चलना ही पडता है, उनके चलने से मार्ग के कॉटे पुष्प मे परिवर्तित हो जावे तो यह क्षेत्रीय-निवासियो के सहयोग का प्रतीक माना जाना चाहिए। ❑

21 दिसम्बर 94 को पू उपाध्यायश्री सभी वरिष्ठ-कनिष्ठ सतो से पुन मिले। कही वचन और कही प्रवचन का क्रम पूर्ण करते हुए, मध्याह्न मधुबन से ससघ विहार कर दिया। शिखरजी स्थित सभी सतो ने उन्हे भावभीनी विदाई दी। अब उनके चरण सरिया की ओर थे।

पू उपाध्याय ज्ञानसागर जी पूर्वान्चल से चल, भारत के उत्तराचल की ओर बढ रहे थे। झारखण्ड, उडीसा और पश्चिम बगाल पीछे छूट रहे थे। तीन प्रान्तो के 800 ग्रामो के दो लाख भक्त याद कर रहे थे। मदिरो और सराक-केन्द्रो पर केवल उनकी ही चर्चा चलती थी। जिन तेरह नगरो-गॉवो मे सन 1992 से 1994 के मध्य विशाल-सराक-सम्मेलन सम्पन्न हुए थे, वहॉ के लोग कुछ अधिक ही याद कर रहे थे। हजारीबाग, राची, बुण्डु, नौढी, तडाई, साड़म, पुरुलिया, मिहिजाम, सरिया, आदि पूर्वान्चल के वे भाग्यशाली नगर और वहॉ के भाग्यवान-जन अपने महानायक को पल भर भी न भुला पा रहे थे।

बोदमाग्राम, राजडाग्राम, राजमेला, काशीवेडिया आदि बगाल स्थित बस्तियो के भक्त बगाली बोली मे बुदबुदाते रहते थे, कोई -मदिर जी मे गुरुवर का चित्र देखकर कहता- 'ये गुरुजी आपनार जय होक।' (हे गुरुवर, आपकी जय हो) तो कोइ कहता था- 'आपनि ज्ञानेर आछेन।' (आप ज्ञान के सूर्य हैं)। बोदमावाला भक्त कहता- 'ये गुरुजी, आपानि जगत वरन्य आछेन।' राजडा का बोलता- 'आपानि आबार आसबेन।' (आप पुन पधारिये) तो राजामेला का भक्त कामना करता- 'आपनि आमार भाल करुन।' (आप हमारा कल्याण कीजिए।) काशीबेडिया के भक्त कहते- 'आपनि आमार प्रणाम नेवेन।' (आप मेरा नमन स्वीकार कीजिए)

पुरुलिया के भक्त तो स्वप्न मे भी गुरुवर से बाते करते रहते थे। एक भक्त स्वप्न मे देखता है कि गुरुवर उसके नगर से विहार कर रहे हैं, वह दौडता हुआ मदिर आता है, गुरुवर सडक पर ही मिल गये। वह (भक्त) करबद्ध प्रार्थना करता है- 'ये गुरुजी ! आपनि आमार ग्राम थेके जावेन ना।' (हे गुरुवर आप हमारे ग्राम से न जाइए)

गुरुवर चले जाते हैं, भक्त का स्वप्न भग होता है, उसके हाथ ऑखो पर चले जाते हैं, जहॉ भक्ति की शक्ल मोतियो मे तब्दील हो गई है। वह चद्दर से अश्रु पोछ लेता है। स्वप्न के कारुण्य पर सोचता रहता है। फिर परिवार के लोगो को बतलाता है। सदस्यो को अनुभूत हुआ कि वे भर नही उनके साथ सम्पूर्ण पूर्वान्चल के भक्त अपने-अपने अश्रु पोछ रहे हैं, क्योकि उन्हे गुरुवर के पदचाप तक नही सुनाई दे रहे हैं।

वे उनके क्षेत्र से काफी दूर निकल गये हैं। भक्तो के मन. सरोवर मे, प्रथमपूजा की कुछ पंक्तियाँ हंसों की तरह तैर रही थीं–

गुरु आचारज उवझाय साध,
तन नगन रतन त्रग–निधि अगाध।
संसार देह बैराग्य धार
निरवांछि तपै शिव–पदनिहारि।।
गुण छत्तिस पच्चिस आठ–बीस
भव तारन–तरन जिहाज ईश।
गुरु की महिमा बरनी न जाय
गुरु नाम जपों मन–वचन–काय।। ❑

तो कथा चल रही थी कि तीर्थराज सम्मेद शिखरजी की पावन धरा पर अंतिम प्रवचन प्रदान कर गुरुवर ने 21 दिसम्बर 94 को विहार कर दिया। पहले नगर सरिया पहुँचे और पूर्व तैयारियों के आधार पर दूसरे दिन ही, 22 दिसम्बर को विराट–सराक सम्मेलन के लिए समय प्रदान किया।

सम्मेलन मे वही विचार रखे कि श्रावक समृद्ध हैं, शिक्षित है, वे सराको पर ध्यान दें और उन्हें अपना जैसा बनाये। श्रीमन्त हरकचद जी अपने समाजसेवी–मित्रो के साथ यहाँ भी उपस्थित थे, सक्रिय थे।

23 दिसम्बर को पुन भक्तो को गुरुवर का वचनामृत लाभ हुआ। उसके बाद गुरुवर परसाबाद, जयनारायण ग्राम, झूमरीतिलैया, कोडरमा, पिबौरघाटी, बाड़ीग्राम होकर सिद्धक्षेत्र गुणावा पहुँचे, वह 28 दिसम्बर का दिन था। जाहिर है कि शीतकाल देखते हुए हर नगर–ग्राम के भक्तो ने पृथक से प्रार्थना कर, गुरुवर को उनके नगर मे शीतयोग सम्पन्न करने का अनुरोध किया, विनय की, पर. . .गुरुवर तो 'सदाविहारी' हैं अस्तु।

कोडरमा और नवादा का प्रसग कौन भूल सकता है? हुआ यह कि जब गुरुवर कोडरमा से चले थे, तो रास्ते मे अनेक प्रतिकूलताएँ आई, उनमे से सर्वाधिक कष्टकर था–गुरुवर के देहतत्व पर ज्वर का आक्रमण। पर वे सहते रहे, रुके नहीं, अनाहार चलते रहे। नवादा मे आहार ले रहे थे, पर देह शिथिल हो जाने से बैठ गये, अतराय हो गया, परन्तु चर्या मे ढील न आने दी। प्रवचनो के लिए शक्ति सचित कर भक्तो को प्रवचन–पीयूष से वंचित नहीं रखा। फिर विहार किया तो रास्ते भर गति कम न होने दी। ❑

गुणावा मे गणधर गौतम स्वामी के चरण–चिह्नो की वदना कर गुरुवर, तीर्थंकर महावीर की निर्वाण भूमि पावापुरी पहुँचे। वह 29 दिसम्बर का दिवस था। भावपूर्ण वदना।

गुरुवर पावापुरी मे थे, उधर प्रकृति–नटी कुछ पृथक ही खेल खेल रही थी–शिखरजी मे। जहाँ परमपूज्य आचार्य विमल सागर जी समाधि–मरण के परिवेश मे थे। वे उस दिन देह त्याग कर ऊर्ध्वगामी हो गये थे। शाम 4 27 बजे।

मरण–समाधि का समाचार दूसरे दिन 30 दिसम्बर 94 को पू. उपाध्यायश्री को मिल गया पावापुरी मे। वे नि स्वाश छोड़कर बुदबुदाये थे– 'कल तक वहाँ (शिखर जी) से बीस तीर्थंकर जिस दिशा मे गये थे, आज पू. आचार्यश्री भी उसी पथ की खोज मे चले गये, कल हम सब की बारी होगी।'

भक्त देखते रहे, गुरुवर ज्ञानसागर अपने नजदीकी आचार्य के निधन पर चिन्तन करते हुए, मोह पर विजय पा रहे थे। वे खो गये वीरप्रभु के ध्यान मे। ☐

उसी दिन उन्होने वहाँ से विहार कर हरनौद ग्राम मे रात्रि–विश्राम किया। हरनौद जहाँ नालदा विश्वविद्यालय का भवन अनेक दशको से, ससार के कोने–कोने मे, प्रकाशदीप प्रज्ज्वलित कर भेज रहा है हर वर्ष। वर्ष का अतिम दिवस–31 दिसम्बर 94 और वर्ष का अतिम प्रवचन–हरनौद की हरियाली मे सम्पन्न हुआ।

नूतन वर्ष मे नूतन नगर का स्पर्श, गुरुवर 1 जनवरी 1995 को चम्पापुर के समीपस्थ बसे कोशियाना ग्राम में थे। नूतन–प्रभात का बालारुण यहीं देखा था। बालारुण यो ही नहीं आया था ससार के क्षितिज पर, उसे तो गुरुवर के प्रवचन सुनने थे। श्रोताओ के साथ वह शामिल हो गया, सुने प्रवचन, तब टला।

गुरुवर ने भी सूर्य की तरह चलते रहने पर विश्वास किया है। अत वे भी न रुके वहाँ, चले गये वेंकटपुर। वह एक बडा तीर्थ है, जैनियो का नही, हिन्दुओ का। मगर उससे क्या? गुरुवर तो हिन्दुओ के मन में भी जगह प्राप्त किये हुए हैं। अत जैनो के साथ हिन्दुओ ने की गुरुवर से प्रार्थना–हे गुरुवर, वचन के अमृतबिन्दु हमे भी दीजिए।

गुरुवर का प्रभावनाकारी प्रवचन हुआ वेकटपुर मे। फिर पुन विहार। साथ मे पटना आदि के भक्तगण भी चल रहे थे। वे सौ किलोमीटर पूर्व से ही, गुरुवर के साथ लग गये थे, साथ–साथ रहे थे ताकि गुरुवर पटना होकर, समय प्रदान करे। रात्रि–विश्राम सबलपुर मे। 2 जनवरी को, आगम–पुरुष–सेठ सुदर्शन (स्वामी) की निर्वाण–स्थली गुलजारबाग गये। दर्शन। चिन्तन। वहाँ के समाज ने कुछ दिवस पूर्व ही 'उपाध्याय ज्ञानसागर सभागार' का निर्माण किया था। भवन बन कर तैयार ही हुआ था कि सयोग ऐसा बना कि सर्वप्रथम गुरुवर के चरण ही उसमे पडे। हो गया भवन का मगलाचरण। मगलप्रवेश। मगलगान। (हाँ, सात्विक–उद्घाटन)

भक्तों की प्रार्थना पर दूसरे दिन गुरुवर ने उसी सभागार मे मगलप्रवचन प्रदान किया। ☐

विहार का क्रम थम नहीं सकता था। अनेक नगरो के भक्त रोये, गिडगिडाए, पर 'आचरण' के 'चरण' अधिक दिनो के लिए कही न थमे, वे आचरण का प्रसाद जन–जन तक वितरित करने रोज–रोज बढते रहे।

4 जनवरी 95 को पाटलिपुत्र की मुरादपुर–कालोनी तो 6 जनवरी को आरा नगर। बिदुषी मॉ, ब्र प चन्दाबाई जी की सस्कारधानी–आरा। विद्वत समाज के चर्चित पुरुष डा राजाराम की कर्मभूमि आरा। महान बौद्ध विद्वान श्री अखिलेश स्वामी की धर्मभूमि आरा, जहॉ से वह रोज ससार के 52 देशों तक अहिसा का प्रचार प्रसार करते हैं। बडी बात तो यह कि वे स्वय अपने अनेक सहकर्मियो सहित, जैन–समाज के साथ, पू उपाध्यायश्री की अगवानी हेतु आये थे।

आरा नगर को भी गुरुवर की वचनसुधा के छीटे प्राप्त हो सके थे। शीतकाल अपने चरम पर था, रात तो रात, दिन मे भी वहाँ गलाव पड़ रहा था। वहाँ कल तक शीत बरस रही थी, पर गुरुवर के पहुँचते ही धर्म बरसने लगा। डा जैनमती जी चौका लगाती हैं। पुत्री सहित आहार–दान का सौभाग्य पाती हैं। वे गुरु के तेज से प्रभावित होती हैं। गुरुवर के विहार कर जाने के बाद उनकी हृदय–पुस्तिका पर कुछ शब्द टँक जाते हैं–'हे गुरुवर! आप ज्ञानपुन्ज हैं, धर्मवत्सल हैं, सरलता की मूर्ति हैं, प्रात स्मरणीय हैं, आपके वचनामृत मे जैन–अजैन बराबरी से आनदानुभूति करते हैं।'

आरा से खटोला, रामगढ, कृष्ण ब्रह्मपुर, गाजीपुर, जौसपुर, देवकुली, कैंटीग्राम, सारनाथ होते हुए गुरुवर ने चद्रपुरी मे प्रवेश किया, दिनांक 13 जनवरी 95, उसका पूरा नाम चंद्रपुरी--सिहपुरी कहलाता है।

अगला स्थान विशेष था–ज्ञान का केन्द्र–वाराणसी। अगवानी के लिये अनेक श्रावको के मध्य डा सागरमल जी भी उपस्थित हुए थे। श्रीसघ को शोभायात्रा के साथ, भेलपुर स्थित दिगम्बर जैन मंदिर ले जाया गया। श्वेताम्बर जैन समाज के अतर्गत सचालित श्री पार्श्वनाथ विद्यापीठ मे गुरुवर ने रात्रि विश्राम किया। विश्राम के पूर्व मध्याह्न मे गंगा–जमुनी सस्कृति की प्रतीक दिगम्बर–श्वेताम्बर समाज पर प्रेरक प्रवचन किया था।

दूसरे दिन विहार। रूपापुर होते हुए, गति थी इलाहाबाद की ओर। 'सगम' के लिए जगविख्यात नगर इलाहाबाद की सीमा पर डा प्रेमचद जैन ससमूह प्रतीक्षा कर रहे थे गुरुवर की। गगा–यमुना–सरस्वती के सगम को यहॉ भी परिभाषित किया–हिन्दू, श्वेताम्बर और दिगम्बर जैन समाज के सम्मिलित समूहों ने। श्वेताम्बर समाज के महातपसी श्री सोमसागर जी उपस्थित थे, वे आचार्य सुशीलकुमार जी महाराज के सुयोग्य–शिष्य हैं। वह 18 जनवरी 95 का दिवस था, तीन रोज पूर्व, मकर सक्रांति पर भारी भीड़ को अपने वक्ष पर धारण करने वाला सगम–क्षेत्र अब खाली–खाली था, पर सूना नहीं।

श्रीसघ शोभायात्रा के साथ बढ रहा था। रास्ते ही मे इलाहाबाद का प्रसिद्ध किला है, जो मिलैट्री–प्रशासन के अतर्गत है, वह देखने योग्य तो है ही, उसके परिसर मे लगा एक प्राचीन वट–वृक्ष भी दर्शनीय है। अनेक धार्मिक कथा–किवदतियो से जुडा है। डा प्रेमचद किले के अदर जाने की पूर्व–स्वीकृति लेकर आये थे। अत श्रीसघ को भीतर ले जाने के लिए अनावश्यक समय नहीं खोना पडा। परिसर में भारी भीड हो गई। भीड का अनुरोध कि गुरुवर के प्रवचन मिल जावे। कृपालु गुरुवर ने किले मे प्रवचन किया। श्रोता दग। किले के अधिकारी चकित। हिंसा और मासाहार पर चोट की थी गुरुवर ने।

किले से चले तो अकबरपुर रुके। दूसरे दिन सराय अकिल। तीसरे दिन 21 जनवरी 95 को कौशाम्बी नगरी मे रात्रि–विश्राम। आगम मे वर्णित यह वही कौशाम्बी है जहॉ महासती चदनबाला ने, कभी, महामुनि भगवान महावीर को आहार प्रदान कर नारी–चेतना की नई ज्योति प्रज्ज्वलित की थी। वर्तमान मे अनेक माताओ–बहिनो के भाग्य धन्य हुए जब उन्होने महामुनि महावीर के उत्तराधिकारी–तुल्य सत पू उपाध्यायश्री को आहार देने के क्षण पाये। गुरुवर 29 जनवरी तक रुके, रोज दो–चार 'चदनबालाएँ' आहार–दान का पुण्य पाती रही। जिन–मदिर मे भगवान पद्मप्रभु, मूलनायक की प्रतिमा, के दर्शन रोज मिलते रहे गुरुवर को। फिर विहार किया तो प्रभाषगिरि मजनपुर, अजुवा, फतेहपुर, रेवाड़ी, दुर्गागज और रूपाग्राम। किसी ग्राम को आहार देने का पुण्य मिला, किसी को रात्रि–विश्राम जुटाने और वैयावृत्ति करने का तो किसी को प्रवचन–लाभ लेने का।

शीत की परवाह किये बगैर गुरुवर चल रहे थे। श्रीसघ चल रहा था। वे चल रहे थे या उड़ रहे थे, समझ के परे था, एक दिन मे 30–35 कि मी सहज लगता था उन्हे।

जनवरी 95 का समयकाल। शीत की प्रखरता। गुरुवर कानपुर के समीप रूपागॉव स्थित एक सीमेन्ट–फैक्टरी–परिसर मे रात्रि विश्राम हेतु रुके। डा सुशीलकुमार सुबह–सुबह उनके दर्शनार्थ जा पहुँचे। दर्शन तो किए, पर दृश्य देख कर चकित रह गये– 'भीषण ठंड के घातों–आघातों की चिन्ता से परे, गुरुवर मात्र लकडी के पाटे पर रहे रात भर, चटाई तक नहीं ली। सच गुरुवर परिषहजयी हैं, सौ–सौ बार मन ने स्वीकारा। ठड के उपसर्ग उनके देह के रोम न हिला सके, वे अपने–अपने स्थान पर तपस्वी से खड़े थे।'

रूपागॉव एक मायने मे कानपुर शहर का प्रागण ही है। अत दूसरे दिन सुबह से ही वहाँ ऐसा लगने लगा जैसे सम्पूर्ण कानपुर नगर चलकर रूपाग्राम मे समा जाना चाह रहा हो। श्रावको की ऐसी सघन भीड़ कि जो देखता सो चकित होता।

सत–स्वागत का परिदृश्य पृथक से वर्णन चाहता है, किन्तु कितने वर्णन करेगे? हर नगर–प्रवेश के पूर्व उनकी अगवानी, स्वागत और पूजादि होती है। वह दृश्य तो पाठको को स्वय ही समझना होगा।

विशाल शोभायात्रा के साथ कानपुर के समाज ने गुरुवर को नगर प्रवेश कराया, वह 26 जनवरी 95 गणतत्र–दिवस का राष्ट्रीय–पर्व था। कहे राष्ट्रीयपर्व मे, राष्ट्रसत का नगरागमन हुआ था।

दिगम्बर जैन मदिर आनदपुरी मे रुक कर श्रीसघ ने जिन दर्शन से मन आनद बढाया। रात्रि विश्राम। सुबह जनरलगज स्थित मदिर मे दर्शन, वहीं प्रवचन, उसी क्षेत्र मे आहार चर्या। मध्याह्न पुन विहार। मलियाग्राम, गजराजपुर पार कर कन्नौज के निकट खादी–आश्रम मे निशा–विराम।

प्रात पुन प्रस्थान। पर यह प्रस्थान सहज ही न था। अत्यत महत्वपूर्ण और ऐतिहासिक था क्योकि कन्नौज समाज नगर से चार कि मी तक, विशाल सख्या मे, चलकर उपाध्यायश्री की अगवानी हेतु आया था। समाज–समूह मे केवल श्रावकगण नहीं थे, वहॉ पूर्व से उपस्थित, आचार्य पुष्पदन्तसागर जी ससघ समाज के साथ उपस्थित हुए थे।

नगर–सीमा पर भरत–मिलाप जैसा दृश्य बन गया था। एक तरफ आचार्यश्री, दूसरी ओर उपाध्यायश्री। कदम–कदम चले, और आमने–सामने हो गये। एक तपसी के भुजपाश मे दूसरा समाया जा रहा था। एक का हृदय दूसरे मे प्रवेश कर जाना चाहता था। एक सतपुडा था तो एक विध्याचल था। कहे–हिमालय की शीतलता और पावन पर्वत शिखरजी की गरिमा एक साथ कन्नौज के प्रागण मे बरस रही थी। वह मिलन सचमुच अद्भुत् था। न कोई राम था, न भरत, किन्तु उस मिलन को लोग 'भरत मिलाप' ही कह रहे थे, किस आधार पर? शायद ऋषि–वत्सलता देख कर।

दोपहर कन्नौज के विशाल जैन मदिर परिसर मे दोनो सतो के प्रवचन। आचार्यश्री ने सुन रखा था कि दो वर्ष तक सराक क्षेत्र का भ्रमण कर उपाध्यायश्री ने श्रमण–ससार मे नूतन–क्राति का सचार किया है। अत वे प्रवचनो मे यही–कुछ सयास बोले थे। दोनो सतो ने एक दूसरे की उपलब्धियो को अपने प्रवचन मे रेखाकित कर दिया। दोनो ने एक–दूसरे के साधुत्व के विशिष्ट गुणो की चर्चा की। श्रोताओ को उस रोज रसराज की श्रेष्ठ अनुभूति हुई। संतसगति के आनद के दर्शन हुए। उस दिन कन्नौज मे सदियो से महकते इत्र की सुगधि पर सतसुगधि की महीन पर्त अपना रग दिखा चुकी थी। लोग पहली बार सुगध को भूल कर श्रमण मे खोये थे। ❑

दूसरे दिन पुन विहार। एक श्रीसघ की पिच्छिकाएँ, दूसरे को सवात्सल्य नमोस्तु–प्रतिनमोस्तु कर चल पडी थी। देखते ही देखते, जलालाबाद, शाहजहॉपुर, नबीवगज, छाछा, भोगॉव के वातास को भी पिच्छिकाओ ने पावनताऍ दी, फिर एक फरवरी 95 को कुरावली मे प्रवेश किया। मैनपुरी का समाज भी आ गया। यहॉ भी वही हुआ जो सत–आगमन पर सदियो से हो रहा है–पादप्रक्षाल, पूजादि। फिर आहार चर्या। प्रवचन।

मगर प्रवचन के पश्चात रुकना न हो सका, उसी दिन गुरुवर ने विहार कर दिया। फिर वही क्रम–आगे आगे गुरुवर, पीछे–पीछे पूरा शहर। विदाई जो दे रहे थे भक्तगण।

2 फरवरी को एटा से निकले, फिर महुवा, अलीगढ़, नगलापाला, हरनिया, खुर्जा, बुलन्दशहर, गुलावठी, होते हुए श्रीसघ 7 फरवरी 95 को हापुड़ पहुँच गया। अब अगला पड़ाव मेरठ ही था। मेरठ जहाँ 9 से 16 फरवरी तक पचकल्याणक प्रतिष्ठा–समारोह गुरुवर के सानिध्य में होना था। मेरठ, जहाँ के भक्त गुरुवर को सराकक्षेत्र से लाने मे सफलता पा गये थे। मेरठ जिससे शाहपुर पृथक नहीं है। मेरठ–शाहपुर के श्रावक धन्यता अनुभूत कर रहे थे, वे सम्पूर्ण विनय के साथ श्रीसंघ को तीर्थराज सम्मेद शिखर जी से अपने नगर तक ले आये थे।

शहर आधुनिक शैली से सजाया गया था, हर मार्ग, चौरस्ता, सिंहद्वार गुरुवर की अगवानी की प्रतीक्षा मे थे। उस दिन मेरठ तो मेरठ ही था, पर बुजुर्गजन कह रहे थे–इसे तो अयोध्या सा सजा दिया है। श्री रामचद्र जी के लौटने पर आयोध्या नगर सजाया जा सकता था तो गुरुवर के लौटने पर मेरठ भी क्यो पीछे रहता। अस्तु। हर माता वहाँ कौशल्या की तरह आरती लेकर खड़ी थी जगतवन्द्य 'लाल' की आरती करने के लिए।

फरवरी 1995 मे गुरुवर ने मेरठ नगर की सीमा स्पर्श करली, 8 फरवरी का वह दिनाक अजब था – सारा मेरठ नगर उमड कर सीमा पर आ गया था अपने गुरु की अगवानी के लिए। वहाँ की पहली कालोनी 'शास्त्रीनगर' मे देव, शास्त्र, गुरु के 'प्रतिनिधि' पू उपाध्यायश्री का चरण प्रक्षाल और आरती। फिर शोभायात्रा के साथ नगर–प्रवेश। शहर के सम्पूर्ण महत्वपूर्ण स्थानो से होकर शोभायात्रा चलती रही, करीब 15 कि मी चल लेने के पश्चात आया वीरनगर, जहाँ श्री जिनबिम्ब–प्रतिष्ठा–समारोह की आयोजना की गई थी। ❑

भक्तो का ताँता लगा रहता, अत गुरुवर ज्ञानसागर की वसतिका मे विशेष व्यवस्था करनी पड़ी समाज को। दूसरे दिन से पचकल्याणक के कार्यक्रमों को सानिध्य मिलने लगा। प्रथम प्रवचन में ही पडाल मे खाली जगह न दिख रही थी, सारा नगर, अचल, आ कर समा गया था। गुरुवर ने कहा – धर्म है, जीवन और आत्मा को शक्तिशाली और परोपकारी बनाने का 'टानिक' । जब जनगण इसका उपयोग करने लगते हैं तो आपदाओ और दोषो से सघर्ष करने की शक्ति वे पा जाते हैं।

10 फरवरी 1995 को उसी विशाल पडाल मे 'शाकाहार सम्मेलन' आयोजित किया गया। गुरुवर ने शाकाहार अपनाने और उसका सच्चा प्रचार करते रहने की आवश्यकता पर बल दिया।

पचकल्याणक के चलते अनेक कार्यक्रम गुरुवर की उपस्थिति से जग–प्रकाशित हो रहे थे। उसी क्रम मे उत्तराचल दिगम्बर जैन महासमिति का अधिवेशन हुआ जिसमे सामाजिक समस्याओं के निराकरण का पथाकन किया गया। सौभाग्य से इस अधिवेशन मे सराक–बधुओ को भी आमत्रित किया गया था। अत शताधिक प्रतिनिधि झारखण्ड, बिहार, उड़ीसा और पश्चिम बगाल से उपस्थित हुए। उन्होने बतलाया कि महान सत के सानिध्य मे सम्पन्न होने वाले विशाल 'पचकल्याणक समारोह' मे उन्हें पहली बार आने का शुभअवसर मिला है। वह 11 फरवरी 95 का दिवस था।

पचकल्याणक–कार्यक्रमो के चलते, सराकों का भाग लेना, एक नूतन इतिहास घड़ गया था 'मेरठ–महान' मे। उस दिन लगभग हर सराक ने गुरुवर के द्वारा सराक क्षेत्र में लाई गई प्रगति का 'अभिनन्दन–पत्र' प्रस्तुत किया तो हर श्रावक–वक्ता ने गुरुवर के सराक क्षेत्र के समयदान की सराहना की। सराकों ने कहा कि वे भगवान आदिनाथ द्वारा स्थापित सस्कृति को लेकर सराक क्षेत्र में जीवन निर्वाह करते हैं। श्रावकों ने कहा कि सही–चर्या वही है, हम तो मशीनी–युग मे आकर शिथिलता अनुभूत करने लगे हैं। ❑

प्रतिष्ठा समारोह चल रहा था। नगर तो नगर जन–जन की प्रतिष्ठा बढ़ रही थी उसी अवधि मे 13 और 14 फरवरी को गुरुवर की कृपा से 'आचार्य समन्तभद्र' विषयक एक राष्ट्रीय–सगोष्ठी का आयोजन सामने आया, सयोजक थे मूर्धन्य विद्वान प्रा नरेन्द्र प्रकाश जैन फिरोजाबाद। अन्य आगत विद्वान थे– डा कस्तूरचद कासलीवाल, डा भागचद्र जैन भास्कर, डा राजाराम जैन आरा, डा प्रेम सुमन उदयपुर, डा रमेशचद्र बिजनौर, डा अभयप्रकाश जैन ग्वालियर, डा अशोककुमार लाडनू, प निर्मलचद्र जैन सतना, प शिवचरणलाल जैन मैनपुरी, प्रा निहालचद जैन बीना, डा श्रेयाशकुमार बडौत एव डा जयकुमार जैन मुजफ्फरनगर।

सभी ने महत्वपूर्ण तथ्य प्रस्तुत किये। गुरुवर ने भी ऐसी सार्थक जानकारी दी कि विद्वान चकित। पचकल्याणक–समिति वीरनगर, मेरठ इतनी प्रभावित हुई कि सम्पूर्ण कार्यक्रम को एक विशाल–ग्रन्थ मे प्रस्तुत करने का मन बना लिया। गुरुवर ने आशीष भी प्रदान कर दिया। फलत बाद मे, प्रा नरेन्द्र प्रकाश जैन एव डा जयकुमार जैन के सम्पादकत्व मे 'आचार्य शातिसागर (छाणी) स्मृति ग्रन्थमाला' के अतर्गत वह ग्रन्थ प्रकाश मे आया।

14 फरवरी 95 का दिन भी गुरुवर ने भारी व्यस्तता से पूर्ण किया, अनेक कार्यक्रम हुए। दूसरे दिन वरिष्ठ विद्वान डा शेखरचद्र जैन अहमदाबाद की पुस्तक 'ज्योतिर्धरा' का लोकार्पण–समारोह।

दो दिन का समय और दिया गुरुवर ने वीरनगर को, फिर 18 फरवरी 95 को विहार। वीरनगर के लोग रो पडे। चरणो मे आकर गिडगिडाते रहे, पर गुरुवर ने आगामी कार्यक्रमो के महत्व को बतलाते हुए, प्रस्थान कर दिया। वीरनगर हतप्रभ। हर मन प्यासा।

तब गुरुवर के विषय मे श्री रवीन्द्रकुमार जैन ने एक जगह लिखा– "सन 1995 का वह समय, मेरठ–मडल के चमत्कृत–भाग्योदय का वर्ष कहा जावेगा। पूर्वान्चल से उत्तराचल की ओर सहस्राधिक कि मी की पद यात्रा, घोर शीतकाल मे, करते हुए पू उपाध्यायश्री जी ससघ पग–पग बढाते हुए मेरठ नगर मे पचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव सम्पन्न कराने पधारे। उनके विराट् व्यक्तित्व के सम्पर्क मे आने वाले सभी जनो के लिए वे नयनपथगामी बन गये हैं। आशीष का अमृत भक्तो पर सीचते हुए सभी को धन्य कर रहे हैं। भक्तो के जीवन मे आमूलचूल परिवर्तन की प्रेरणा जगा रहे हैं।

पारस पुरुष, गुरुवर, की अद्‌भुत वाणी की अनुगूँज, लौह–तामसिक–चित्रवृत्ति को गलाकर, चेहरे कातिमडित कर रही है । देखते ही देखते वे (गुरुवर) मालवा–निमाड मे भी, जन जन के हृदय–सम्राट बन गये हैं। उनकी हितमित प्रिय वाणी सत्यस्पर्शी आकर्षक शब्दावली एव सुसस्कृत भाषा–बोली आदमी मे भक्ति–आन्दोलन का सचार कर रही है। उनके सम्पर्क मे आने वाला हर व्यक्ति स्नेह और विश्वास से भर उठता है कि गुरुवर किसी व्यक्ति, समाज, और क्षेत्र से बधे नही हैं। उनमे आगमोक्त साधना के अनुकूल, निर्विकार, निर्द्वन्द, निर्मल–नीर की गति सदा बनी रहती है। ❑

गुरुवर समाज के साथ कमलानगर (मेरठ) पहुँचे। शोभायात्रा देखते ही बनती थी। फिर भावपूर्ण आगवानी।

उसी दिन मध्याह्न – अखिल भारतवर्षीय तीर्थक्षेत्र कमेटी एवं सराक–ट्रस्ट के अध्यक्ष श्री साहू अशोक जैन ने कुछ महत्वपूर्ण मुद्दो पर गुरुवर से मार्गदर्शन प्राप्त किया । बाद मे भाषण के दौरान श्री साहू जी ने गुरुवर के सराकोद्धार की दिशा मे किये गये कार्यों का वर्णन किया, सराहना की। फिर गुरुवर का प्रवचन हुआ, 'धर्म और स्वास्थ्य' विषय पर शोधपूर्ण वक्तव्य था वह।

कमलानगर–समाज ने भारी श्रम कर, कुछ दिवस पूर्व ही, ' ज्ञानसरोवर–अतिथि–भवन' का निर्माण कराया था। अत गुरुवर के चरण– सानिध्य में उसका उदघाटन–समारोह सम्पन्न करा लिया गया।

एक पल निरर्थक नहीं जा सका। 20 फरवरी 95 को 'विराट–डाक्टर्स–सगोष्ठी' का आयोजन रखा गया, नामी– गिरामी डाक्टर उपस्थित हुए। गुरुवर ने दिशादर्शन प्रदान किया।

21 फरवरी को बीस पत्रकारो की 'पत्रकार–वार्ता' मे समय दिया और हर पत्रकार को उचित उत्तर देकर गुरुवर ने सतमनीषा के नये झडे गाड दिये। ❑

मेरठ शहर का क्षेत्रफल इतना अधिक बढ़ चुका है कि उसमे दर्जनो–कालोनियॉ उग आई हैं, पुराने मोहल्ला (वार्ड) तो पूर्ववत् हैं ही। कमलानगर से गुरुवर को फूलबाग कालोनी जाना था , फिर वैसा ही दृश्य बना , जैसा वीरनगर से प्रस्थान के समय बना था। दोनो नगरो , नहीं अब तीन नगरो– वीरनगर, कमलानगर और फूलबाग के भक्तों का विशाल जुलूस था गुरुवर के साथ। हॉ, एक विशाल शोभायात्रा। श्रीसंघ 23 फरवरी के प्रात फूलबाग जैन मदिर पहुँच गया।

मध्याह्न मे विशाल सभा। 'तनाव मुक्त समाज' जैसे समसामयिक विषय पर विचार गोष्ठी हुई। गुरुवर ने तनाव से बचने के लिए एकमात्र सहारा 'सामायिक' को बतलाया और श्रोताओ को तनाव से होने वाली बीमारियो के विषय मे आगाह किया। ❑

स्थानीय समाज और स्थानीय प्रशासन की सूझबूझ से एक सुदर–सुनहरा–सुप्रेरक सुअवसर मिला समीप अवस्थित अब्दुल्लापुर–जेल के बदियो को, जब 23 फरवरी को गुरुवर ने कारागार–परिसर मे विराजकर प्रवचन किये। पहले जेल के अधीक्षक (जेलर साहब) श्री सुरेन्द्र कुमार गेरा ने कारागार के सिहपौर पर गुरुवर की आरती उतारी, स्वागत किया और मच तक ले गये। साथ मे समाज के अनेक प्रतिष्ठित नागरिक। गुरुवर ने उपस्थित कैदियो को महत्वपूर्ण उपदेश दिये और बतलाया कि प्रयास करने पर बडे से बडे कलक धुल जाते हैं और दोषी व्यक्ति पुन सामान्य नागरिको की तरह जीवन जीने का सुफल पाते हैं। जो आज बदी है , वह कल बदी नहीं रहेगा , विश्वास है । हर बदी जानता है कि उसके जन्म के समय उत्सव मनाने वाले माता–पिता को, उसके जेल के कारण , सुनना पडता है कि उनका बेटा तो बन्द है । सुनने और सहने की यह अनाहूत–पीडा कैदी अपने आप को सुधारकर, समाप्त कर सकते हैं।

गुरुवर के उदबोधन से बदीजन काफी प्रभावित हुए , कुछ तो लगातार ऑखे ही पोछते रहे। दूसरे दिन एक समाचार–पत्र मे समाचार प्रकाशित हुआ शीर्षक था– 'गुरुवर ज्ञान सागर जी जेल मे'।

शीर्षक पढकर भक्तो ने आनद लिया, चुटकियॉ ली और अपने प्राण प्यारे सन्त का प्रवचनसार पढकर ज्ञानवर्धन किया। ❑

26 फरवरी को पुन विहार। गुरुवर फूलबाग से विहार कर तीरगरान चल पड़े, रास्ते मे महावीर जयती–भवन, दिल्लीचुगी, शारदा रोड, सर्राफा बाजार मे शोभायात्रा को रोक रोक कर भक्तो ने आरती उतारी।

तीरगरान मे श्री दिगम्बर पचायती मंदिर मे श्रीसघ रुका। यहॉ भी व्यस्ततम दिनचर्या। एक मार्च तक रुकना हुआ।

2 मार्च 95 को गुरुवर ने जैन बोर्डिंग हाउस मे 'शाकाहार–सम्मेलन' को सानिध्य प्रदान किया। वरिष्ठ चिकित्सकों और विद्वानों को उद्‌बोधन दिया। इसी क्रम मे विद्वत–गोष्ठी का आयोजन रखा गया। गुरुवर की कृपा से हर आयोजन की सार्थकता सामने आ रही थी। लोग चकित थे। भीड़ इतनी अधिक होती थी कि लोगों के अदाज गलत हो जाते थे। ❑

गुरुवर मेरठ शहर के हर कोने मे अहिसा और शाकाहार की जयकार कराते हुए, पुन. कमलानगर चले गये। कुछ दिवस का समय और प्रदान किया वहॉ के प्यासे भक्तो को, फिर मेरठ से विहार। कहने को गुरुवर ने 8 फरवरी से 3 अप्रैल 95 तक, करीब 53 दिनो का सुदीर्घ समय दिया था समाज को, किन्तु कोई भी श्रावक उनके विहार को राजी न था, सभी जन कहते– महाराजश्री, चातुर्मास यहाँ ही करे, तब कुछ संतुष्टि होगी जनता को।

एक कार्यक्रम मे गुरुवर के प्रवचनो से प्रभावित होकर, वहॉ स्थित चौधरी चरण सिह विश्वविद्यालय के माननीय –कुलपति जी के होनहार युवा–पुत्र ने यावज्जीवन मास–मदिरा का त्याग कर दिया था। वे अण्डे के शौकीन थे, किन्तु लोगो ने बतलाया कि अब तो वह त्याग मे शामिल हो गया। युवक ने खुशी–खुशी अडे का त्याग स्वीकारा और उसे मांसाहार का एक हिस्सा माना।

भारी कशमकश के बीच, गुरुवर ने ससघ विहार कर दिया। मेरठ के श्रावक रो पड़े– अभी न जाइए महाराज! अभी न... ..... । भारी जनसमूह उनके साथ चल रहा था, सभी के चेहरे मुरझाये हुए थे।

4 अप्रैल को अतिशय क्षेत्र बरनावा पहुँचे गुरुवर । फिर दाहा ग्राम, बुढाना होते हुए– शाहपुर की ओर।

6 अप्रैल को समूचा शाहपुर नगर उमडकर नगर–सीमा पर आ खडा हुआ गुरुवर की आगवानी के लिए। सभी भक्तो को विश्वास था कि गुरुवर एक माह का समय अवश्य प्रदान करेगे, किन्तु वह विश्वास मिथ्या सिद्ध हुआ। गुरुवर तो दो दिन रुक कर ही विहार कर गये। फलत शहर मे शोक सा छा गया।

गुरुवर मुजफ्फरनगर की ओर थे। 9 अप्रैल को दिगम्बर जैन समाज मुजफ्फरनगर ने गुरुवर की सानद अगवानी की, और शोभायात्रा के साथ उन्हें मदिरजी तक लाये।

जिन्हे हम 'कार्यक्रम' शब्द से पाठको के सामने ला रहे हैं, धर्म क्षेत्र मे, उन्हे धार्मिक–क्राति या आदोलन कहे तो अन्यथा न होगा। दिगम्बर–सत कार्यक्रमो के बीच अपनी बात रखते हैं, उन्ही बातो से समाज मे धर्म, सस्कृति और एकता के सूत्र पुष्ट होते हैं।

इधर, मुजफ्फरनगर मे भी एक विराट–आन्दोलन ने जन्म लिया। आन्दोलन से अभिप्राय है श्रावकाचार जैसे महत्व के विषय पर विचार गोष्ठी, हॉ, विद्वत–सगोष्ठी। 11 अप्रैल को प्रेमपुरी स्थित अतिथि–भवन मे, गुरुवर के सानिध्य मे विद्वानो ने लेख पढ़े , जनता–जनार्दन ने सुने। किसी ने श्रावकाचार पर तो किसी ने शाकाहार पर, किसी ने सराकोद्धार पर और किसी ने विश्वशाति पर विचार रखे। गुरुवर ने पूर्ण ध्यान दिया। अत मे उनका दिशाबोधक प्रवचन। गुरुवर ने वहाँ आमत्रित विद्वानो डा कस्तूरचंद कासलीवाल, डा बीना जैन लाड़नू, डा नलिन जैन शास्त्री, डा श्रेयांशकुमार बड़ौत, डा कपूरचद, डा रमेशचद, डा कमलेश कुमार, डा फूलचन्द जैन प्रेमी, डा मूलचन्द जैन, डा अशोक कुमार लाड़नू, डा बच्छराज दूगड लाडनू, डा सुपार्श्व कुमार, डा. जय कुमार, श्री जगदीशप्रसाद और एडवोकेट श्री एच. एल शर्मा से कहा कि विचार–विमर्श के साथ, विद्वानो में चर्या–पक्ष पर भी जागृति आवे। केवल विचारो के प्रस्तुतीकरण से उतना

परिवर्तन, समाज मे, नही हो सकता, जितना चरित्र–दर्शन के साथ हो सकेगा । अत. क्या विद्वान और क्या आम श्रावक– आदर्श विचारो के साथ आदर्श आचार–संहिता भी अपनावे तब 'श्रावकाचार' का प्रभाव दृष्टिगत हो सकेगा।

उस क्षेत्र मे बहुमान प्राप्त, पद्मश्री स्वामी कल्याण देव जी भी मच पर उपस्थित थे , उस महान हिन्दू विद्वान को पू उपाध्यायश्री की विचारधारा इतनी अधिक प्रभावित कर गई कि उन्हे मच पर कहना पडा कि गुरु हो, तो ऐसे हो, जो नाव पर चलने वालो के साथ साथ, नाव के कल्याण की भी कामना करते हैं। ❑

मुजफ्फरनगर मे कार्यक्रमो की झडी लग गयी , जिस तरह अन्य–अन्य नगरों मे लगती रही है। हर आयोजन को समय प्रदान करते हुए गुरुवर ने कार्यक्रमो के माध्यम से वहाँ शाकाहार, पर्यावरण, अहिसा आदि की रक्षार्थ प्रेरक–सूत्र प्रदान किये। क्रम ऐसा बना कि दूसरे दिन विशाल रूप से 'सर्वधर्म सम्मेलन' का आयोजन । तीसरे दिन 'विद्वत–सगोष्ठी '। क्या विद्वान , क्या डाक्टर, क्या अधिकारी और क्या राजनेता , सभी पहुँचे और सानिध्य लाभ लिया। उस शहर का शिव–चौक विशाल है, जिसके समीप श्री शकरजी का मदिर है। उस विशाल मैदान मे समाज ने 13 अप्रैल 95 को भगवान महावीर–जयती का विशाल आयोजन किया जिसमे जैन–जैनेतर श्रोता शामिल हुए। जनमेदिनी ऐसी कि व्यवस्थापक चकित।

गुरुवर ने अपने प्रवचन मे बतलाया कि भगवान महावीर की शिक्षाएँ और सिद्धान्त केवल जैन–समाज के लिये नही थे , वे जन–जन के लिए थे । क्या करुणा और सहानुभूति या सयम और सत्य का सरोकार केवल जैनो से है, अन्य से नही? ❑

14 अप्रैल को "चौधरी चरणसिह विश्वविद्यालय मेरठ" के उपकुलपति प्रो के सी पाडे गुरुवर के दर्शनार्थ आये। तब गुरुवर ने उन्हे विश्वविद्यालय मे 'अहिसा और शाकाहार पीठ' स्थापित करने का परामर्श दिया। उसी दिन 'विराट शिक्षक सम्मेलन' गुरुवर के सानिध्य मे सम्पन्न हुआ।

18 अप्रैल को अतिशय क्षेत्र वहलना मे मानस्तम्भ का वार्षिक–अभिषेक होना था, गुरुवर वहाँ भी गये, समय दिया, प्रवचन दिया। फिर नई मडी स्थित जैन मदिर–परिसर मे जाकर रुके। वहाँ तीन दिनो मे तीन विशाल कार्यक्रम रखे गये। 19 अप्रैल को 'धर्म और समाज' पर सगोष्ठी, 20 को 'धर्म और राजनीति' पर और 21 अप्रैल को शाकाहार पर , विषय प्रेरक था – 'जैसा भोजन वैसा विचार'। आखरी गोष्ठी मे चिकित्सक (डाक्टर्स) आमन्त्रित थे।

फिर श्रीसघ विहार कर देवबद पहुँचा। वहाँ 'धर्म सम्मत राजनीति' पर सभा सबोधित की। दूसरे दिवस 'सर्वधर्म सम्मेलन' मे प्रवचन। पुन विहार।

कहे– गुरुवर जैनो की प्रसिद्ध नगरी सहारनपुर की ओर थे। 28 अप्रैल को प्रात साढ़े सात बजे गुरुवर सहारनपुर पहुँच गये , समाज ने भारी उत्साह और सक्रियता के साथ अगवानी की। माईक से आवाजे आ रही थी– 'युवा मनीषी सहारनपुर पधार रहे हैं। सराकोद्धारक सत का आगमन हो रहा है। आगमवेत्ता उपाध्यायश्री की जय हो आदि आदि।'

नगर के मुख्य मार्ग पर तोरण–द्वार, हॉं स्वागत–द्वार बनाये गये थे। हर सड़क के किनारे भक्तगण आरती लेकर खडे थे। केशरिया ध्वज शिशु की झालर की तरह, उतग भवनो पर लहरा रहे थे। श्रावको ने पहले गुरुवर का चरण–प्रक्षाल किया, फिर आरतियाँ उतारी। कहे– हार्दिक – अभिनंदन और अभिवंदन की श्रेष्ठ झलक वहाँ उपस्थित थीं।

श्री दिगम्बर जैन मदिर जैनबाग, वीरनगर तक नर–मुड भर दीखने मे आ रहे थे। विशाल शोभायात्रा के साथ गुरुवर मदिर–परिसर मे पहुँचे , फिर विशाल धर्मसभा का आयोजन। गुरुवर के मगलकारी प्रवचन। उसके बाद – भक्त और जयघोष । सारा नगर और नगर का आकाश जयकारो से भर गया। वह अजब प्रभावना थी। हॉं, वह गजब सत–समागम था। ❑

सहारनपुर की सस्कृति–सिंचित शामला भूमि पर पू गुरुवर का प्रथम प्रवचन ही परम–प्रेरक सिद्ध हुआ था। जब उन्होने कहा– 'श्री मज्जिनेन्द्र पचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव की आयोजना, आयोजकों के पुण्य की सूचक है। इस देश की पावन–माटी पर कभी तीर्थकरो की जीवनचर्या सम्पन्न हुई थी , पचकल्याणक–समारोह उसकी झलक देने वाला निमित्त मात्र है । उनकी चर्या से हमारी धरती पवित्र हुई थी , अब समारोह के माध्यम से (आपके सदाचरणो से) उसकी पवित्रता क्रमश बढती रहे क्षीण न हो पाये । ये समारोह पत्थर को प्रतिमा बनाते हैं और भक्त को भगवान राम बनने की प्रेरणा देते है।' ❑

सरल बोधगम्य शैली के प्रवचन जनजन के मन से सराहना प्राप्त करने मे सफल हुए। अत आगामी प्रवचनो मे जनसमूह/भीड का घनत्व बढता गया। स्थिति यह कि जैनो के साथ–साथ सहस्रो जैनेतर–बधु भी प्रवचन–सभा के पडाल मे पहुँचने लगे।

ग्रीष्म की बढती तीव्रता अपने आप दब सी गई, जब सहारनपुर मे धार्मिक–कार्यक्रमो की तीव्रता बढी। 2 से 7 मई 95 के मध्य, दो मदिरजी–स्थलो का प्रतिष्ठा–समारोह गुरुवर के पावन सानिध्य मे सम्पन्न हुआ । प्रतिदिन प्रभात बेला मे पूजा–प्रक्षाल के पश्चात पू उपाध्याय श्री ज्ञानसागर जी के हृदयग्राही प्रवचन होते थे, साध्य बेला मे विद्वानो के।

5 मई 95 को 'विशाल–सराक–सम्मेलन' का आयोजन रखा गया, सम्बधित प्रान्तो से सराकभाई पहुँचे ओर सगौरव भाग लिया । उनके भाषण–सम्भाषण से उत्तर भारत के जैनियो मे सराको के प्रति वात्सल्यभाव दोगुना हो गया ।

उसी दिन महासमिति का अधिवेशन । कहे कार्यक्रम गगा–जमुनी बन गया । अत मे दोनो को लक्ष्य कर, गुरुवर के दिशाबोधक उपदेश । सरस्वती–सूनु प रतन लाल मुख्तार का सहारनपुर, डेढ दर्जन प्राचीन–अर्वाचीन जैन–मदिरो का नगर–सहारनपुर और काष्ठ–आसनो (फर्नीचर) के लिए प्रसिद्ध सहारनपुर गुरुवर के वचनामृत से धन्य हो गया । ❑

नगर की हर कालोनी के लोग, अपने क्षेत्र मे गुरुवर के चरण–कमल के पावन चिह्न देखना चाहते थे। अत हर कालोनी–उपनगर के समाजसेवी उनके चरणो मे श्रीफल चढाकर निरतर प्रार्थना कर रहे थे। गुरुवर ने वहाँ भी मेरठ जैसा दृश्य देखा, वे पहले आवास–विकास कालोनी गये। वही धूमधाम, शोभायात्रा, बेनर, ध्वज, वाद्ययत्र, स्वागत–द्वार, पादप्रक्षाल, आरती का क्रम चला। फिर प्रवचन–गगा का क्रम छह दिन तक।

एक सप्ताह के पश्चात जैन डिग्री कालेज में प्रवचन। अजैन बुद्धिजीवियो के सोच में क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ वहाँ। फिर प्रबुद्धवर्ग के साथ वार्तागोष्ठी फिर चिकित्सकों के साथ।

अगला पड़ाव– चद्रनगर। फिर सहारनपुर की नामवर शिक्षण सस्था– आशा मार्डन स्कूल मे, चार दिन तक, लीक से हटकर प्रवचन चले । उसी क्रम में अधिवक्ताओ की गोष्ठी, लायंस क्लब की गोष्ठी को भी गुरुवर ने उपकृत किया। 16 मई से 19 मई तक चद्रनगर, फिर बड़तला यादगार। हर जगह भक्तगण वर्षायोग के लिए प्रार्थना करते थे।

गुरुवर को स्मरण था कि 25 से 27 मई को जैनबाग मे 'राष्ट्रीय–जैन–विद्वान–सगोष्ठी' मे समय देना है। अत समयानुसार वे विहार करते हुए उसी परिसर मे पहुँच गये।

नियत समय पर सगोष्ठी शुरु की गई। सयोजन था– प्राचार्य निहालचद एव डा नीलम जैन सहारनपुर (अब गाजियाबाद) का। कुल बाईस विद्वान , बाईस आलेख । हर सत्र मे गुरुवर ने उपस्थिति दी और सत्र के अत मे प्रवचनो के दौरान, बाँधे गये आलेखो पर समीक्षा–दृष्टि । सत्रो मे आलेख वाचन करने वाले विद्वान थे– प्राचार्य नरेन्द्र प्रकाश, प्राचार्य निहाल चद्र, डा जयकुमार, डा अभय प्रकाश, डा रमेशचद्र जैन, डा अशोककुमार जैन और श्री प निर्मल जैन, सयोग से ये फरवरी में मेरठ गोष्ठी मे भी थे। शेष आमत्रित विद्वान डा नदलाल जैन, डा सुरेन्द्र भारती, डा सुपार्श्व जैन, डा पारसमल अग्रवाल उज्जैन, डा अजित कुमार विदिशा डा नलिन शास्त्री, डा आर. सी जैन, डा नीलम जैन, डा अनुपम जैन इदौर, डा एम एस बजाज इदौर, डा लक्ष्मी चद जबलपुर, डा एस सी अग्रवाल मेरठ आदि थे। सभी के आलेखो के पृथक–पृथक विषय रखे गये थे।

गोष्ठी को यादगार बनाने की दृष्टि से समारोह–समिति सहारनपुर ने डा नीलम जैन, डा. अनुपम जैन एव प्रो निहालचद जैन के सम्पादन मे एक पुस्तक प्रकाशित कराई थी जिसका नाम है– 'जैन विज्ञान राष्ट्रीय सगोष्ठी–95, सहारनपुर'।

(सत की बातो के साथ–साथ , पुस्तक प्रकाशन के कार्यों से , विद्वानो की बाते भी अमर हो जाती हैं , अत सहस्रो व्यय साध्य कार्यों के चलते , उत्तम साहित्य प्रकाशन का कार्य सर्वोपरि रहना चाहिए। मैं ऐसे समस्त प्रयासो की सराहना करता हूँ) ❑

करीब एक माह का समय मिला सहारनपुर को , बच्चो से लेकर बूढ़े तक–प्रसन्न थे , धर्मारूढ़ थे। गुरु की छत्रछाया मे थे। तभी गुरुवर ने विहार की घोषणा कर दी। सारा समाज चकित– 'कल तक तो कुछ खबर नहीं थी इस विषय पर? लोग जैन बाग की ओर दौडे , व्यवस्था–समिति दौडी पर कोई रोक न पाया , गुरुवर 28 मई को विहार कर गये। समस्त नगर सूनापन लिये खड़ा रह गया। भवन शात, उद्यान शात ।

तब तक श्रावको को विदाई की रस्म याद हो आई। अत सभी लोग अपने परमप्रिय आराध्य को नगर सीमा तक भेजने गये। मन मे एक ही भावना – हे परमपूज्य अतिथि , दोबारा शीघ्र कृपा करना। ❑

गुरुवर ने 30 मई 95 को देवबद मे प्रवेश किया। वहाँ वेदी–प्रतिष्ठा–समारोह को सानिध्य देना था। दिया। एक जून 95 को समारोह पूर्ण हो गया। 3 जून को श्रुतपचमी का विराट आयोजन। जिनवाणी माता की विशाल शोभायात्रा नगर मे घूमी, साथ मे पूज्य गुरुवर। महती प्रभावना। मगर वहाँ भी अधिक न रुके और दूसरे दिन प्रस्थान।

चरणों की धूल मिली तब ग्राम कुटेसरा को, चरथावल को और फिर बघरा को। 9 जून को चरण थे शाहपुर मे। वहाँ के भक्त देशभर मे प्रसिद्ध हैं। अत उनका स्वागत का भाव भी देशभर से पृथक और ऊँचा रहा। उनका सौभाग्य–कमल खिल उठा था। उनकी प्रार्थनाएँ फलीभूत हो पड़ी थीं– सम्पूर्ण नगर मे उत्साह का सचार विद्युत से अधिक वेगवाला प्रतीत हो रहा था। कहे – घर घर मे उत्साह, मन मन मे उत्साह।

किन्तु........ दस दिन धर्म की गगा बहाकर गुरुवर ने वहाँ से भी विहार कर दिया। नगरवासी रो पडे। उत्साह ठडा हो गया। अब घर–घर ऑसू, मन–मन उच्छवास। लोग हाय हाय कर सासे ले रहे थे। गुरुवर के चरण बढते गये। उमरपुर, बुढाना, लिसाडग्राम, शामली, कैराना, काधला, परासौली, टीकरी, दोघट, बरनावा, बिनौली, अमीनगर सराय आदि के भाग्य चमक उठे। सतचरण की रज गॉव–गॉव फैल गयी। श्रावको के मनो मे सुख–साता के अम्बार लग गये। जिनवाणी के भक्त, गुरुवर की वाणी सुन, प्रभुवाणी सा सुख अनुभव कर रहे थे। ❑

14

'राष्ट्रीय क्षितिज पर आचरण के चरण'

शाहपुर से प्रस्थान के बाद, श्रावकों को विश्वास बना था कि दिखता है बड़ागाँव को शुभ अवसर मिलेगा, वह पूर्ण हुआ। गुरुवर रुक गये अतिशय क्षेत्र बड़ागाँव में। सम्पूर्ण नगर मे दीपोत्सव जैसी उमंग हो आई। वह 10 जुलाई 95 का मगलकारी दिवस था। ❑

बड़ागॉव, जहाँ प्राचीन मदिर मे चितामणि भगवान पार्श्वप्रभु की अतिशयकारी, दिव्य--प्रतिमा विराजित है , सत--विराम का निमित्त बना। छह वर्ष पूर्व, सन 1989 मे भी, गुरुवर का वर्षायोग यहीं सम्पन्न हुआ था। कहे -- श्रावकगण गुरुवर से अपना विशेष परिचय मान रहे थे। और गुरुवर ....? उन्हे तो हर भक्त, हर स्थान, सदा एक सा रहा है, न किसी से अधिक परिचय, न अधिक लगाव, न कोई भेदभाव ।

निश्चित तिथि पर श्रीसघ ने चातुर्मास--स्थापना सविधि की। फिर शुरु हुआ धार्मिक--आन्दोलनों का सूत्रपात। आन्दोलन माने कार्यक्रम। गुरुवर के कार्यक्रम आन्दोलन जैसा प्रभाव छोडते हैं अत मैं तड़ाई वर्षायोग से, उनके हर कार्यक्रम को आन्दोलन मानकर लिख रहा हूँ। इधर भी समाज मे घर कर गई बुराइयो पर गुरुवर की तीक्ष्ण दृष्टि थी अत हर कार्यक्रम के पार्श्व मे सामाजिक--शिष्टाचार और सामाजिक--एकता का गुरुमत्र गुम्फित रहता था।

जो हर चातुर्मास मे होता है , वह यहाँ भी था। पर जाने क्यो, हर जगह, हर वर्ष, अनेक नवीनताएँ और मौलिकताएँ जन्म पा जाती थी। वे बडागॉव--वर्षायोग मे भी देखी गईं। 3 अगस्त को 'तीर्थंकर पार्श्वप्रभु निर्वाण--दिवस--समारोह' पर गुरुवर का प्रवचन भारी शिक्षाएँ देकर गया था। उन्होने कहा था कि भगवान पार्श्वनाथ पर उपसर्ग करने वाले कमठ से बदला लेने का भाव प्रभु मे नही उत्पन्न हुआ , उसका क्या कारण है? गुरुवर ने बतलाया-- तपस्वीजन क्षमाशील होते हैं, वे तपस्या के चलते कभी किसी विरोधी से बदला लेने का भाव नहीं लाते , जो लाते हैं, वे तपस्वी नही होते। ❑

अगस्त माह मे ही सिद्ध हो गया कि बडागॉव सचमुच मे बडा है, केवल नाम से नहीं, क्योकि वहाँ आयोजको ने 'गुरुआशीष' से गोष्ठियो की आवलि तैयार कर दी थी। 12 अगस्त को डाक्टर्स--गोष्ठी, 13 अगस्त को शिक्षक--गोष्ठी जिसमे स्कूल के 'टीचर' से लेकर कालेज के 'प्रोफेसर्स' तक उपस्थित हुए थे। 15 अगस्त को स्वतत्रता और आत्म--स्वातत्र्य पर उद्‌बोधन, 20 अगस्त 95 को उत्तरांचल--महासमिति की बैठक मे गुरुवर का मगलमय सानिध्य, 26 अगस्त 95 को 'शाकाहार--रैली'। रैली की विशेषता यह कि वह खेकडा (जो बड़ागॉव से 5 कि मी दूर है) से शुरु हुई और लाखो लोगों को शाकाहार का सदेश देती हुई खेकडा मे सभा के रूप मे परिवर्तित हो गई। उसमे क्षेत्र के अनेक स्कूलो के छात्र--छात्राएँ तो शामिल हुए ही थे, उद्योगपति, व्यापारी, अधिकारी, वकील, डाक्टर, कर्मचारी, किसान और मजदूर भी थे। गुरुवर का प्रवचन नव--सबक (नूतन शिक्षा) प्रदान कर रहा था। कहे कि शाकाहार के समर्थन और मासाहार के विरोध मे प्रेरक माहौल बन गया था सम्पूर्ण क्षेत्र मे।

कार्यक्रम चल ही रहा था, तभी 'चेयरमैन--पद' का चुनाव जीतकर श्री सत्यप्रकाश अग्रवाल गुरुवर के चरणो मे पहुँचे और चरणवदन कर श्रीफल चढ़ाया, फिर भारी प्रसन्नता जताते हुए बोले -- हे गुरुवर, आपके आशीर्वाद से ही चुनाव--सग्राम मे विजयी हो सका हूँ। मैंने आज प्रत्यक्ष रूप से अनुभव किया है कि दिगम्बर--सत के आशीष और वचन मायने रखते हैं।

उनका कथन सुन गुरुवर तुरन्त कुछ नही बोले , किन्तु बाद मे स्पष्ट किया -- 'ऐसे कथनो से प्रचार या चमत्कार का भाव न जोडा जावे , सत कुछ नहीं करते , भक्त की अनुभूति ही सब करती--कराती है।' कहे-- गुरुवर ने उनकी जीत का श्रेय नही स्वीकार किया।

दूसरे दिन 27 अगस्त 95 को ऐतिहासिक 'शाकाहार विज्ञान प्रशिक्षण शिविर' का विराट आयोजन, जिसके कुलपति थे देश के मूर्धन्य विद्वान, दार्शनिक, विचारवादी पत्रकार, (स्व) डा नेमीचद जी जैन इदौर , हॉ मासिक तीर्थंकर और शाकाहार क्राति के देशप्रिय–सम्पादक। उस दिन भी मच पर अत्यत विशिष्ट जन थे, कुछ दूरांचलो से तो कुछ स्थानीय। पू उपाध्यायश्री और डा नेमीचद की उस मच पर उस दिन, देश की सर्वश्रेष्ठ 'युति' उपस्थित मानी गई थी। दोनो हस्तियॉ शाकाहार की स्थापना और मासाहार की विस्थापना मे प्राणपण से जुटी थी। भारी प्रभावना हुई। अन्य आदरणीय विद्वान थे– डा के सी पाण्डे, डा वेद प्रकाश वैदिक, डा बृजमोहन शर्मा, पू निर्मल जैन सतना, श्रीमती रजिया अहमद, श्रीमती कमला शास्त्री, डा डी सी जैन, मा इब्राहीम, डा मदनमोहन बजाज, डा नलिन शास्त्री, डा श्रेयाश कुमार, डा अभय प्रकाश, डा महेन्द्र नारायण शर्मा, डा हेतराम सिह आदि।

28 अगस्त 95 को उक्त त्रिदिवसीय कार्यक्रम मे भोपाल से पहुँचे शासन के, वरिष्ठाधिकारी श्री सुरेश जैन (आई ए एस) के मुख्य–आतिथ्य मे समाप्त किया गया। तीन दिन समस्त क्षेत्र मे बसे हुए मासाहारियो के लिए चितन के दिन सिद्ध हुए। फलत अनेक लोगो ने, दो–चार दिन बाद ही , गुरुवर के चरण–सानिध्य मे जीवनपर्यन्त के लिये मास–मदिरा आदि का परित्याग कर दिया।

अगस्त की धूम ठडी न पड पाई कि सितम्बर माह की धूमधाम शुरु हो गई। धूमधामो के पार्श्व मे गुरुवर का आदोलन जीवत उपस्थिति बनाये था।

2 सितम्बर 95 परम पूज्य, समाधिस्थ, आचार्य सुमति सागर जी महाराज का प्रथम समाधि–दिवस। पू उपाध्याय जी के सानिध्य मे विशाल श्रद्धाजलि – सभा। गुरुवर ने अपने गुरुवर के विषय मे बोला, अनेक प्रेरक प्रसग सुनाये।

24 सितम्बर 95 को एक ऐसी सगोष्ठी सम्पन्न की गई जिसमे तीन पृथक स्वभावी व्यवसायियो को एक मच से विचार रखने का अवसर दिया। कृपा गुरुवर की। वे थे क्षेत्र मे फैले हुए– डाक्टर, वकील और व्याख्यातागण। अद्भुत थी वह आयोजना।

फिर 26 सितम्बर से 28 सितम्बर 95 तक 'नेत्र चिकित्सा शिविर'। सैंकडो लोगो ने ऑखो का इलाज कराया और उतने ही लोगो ने आपरेशन।

सप्त दिवसीय उक्त कार्यक्रम से पृथक सर्वाधिक महत्वपूर्ण था 'दस दिवसीय सराक प्रशिक्षण शिविर' जिसमे सराको और श्रावको को आवश्यक शिक्षाऍ प्रदान की गईं थी। शिविर की शिक्षाऍ ही, गुरुवर के आशीष के साथ, सराक–क्षेत्र मे सार्थक सिद्ध होती हैं। 23 अक्टूबर 95 से शिविर का शुभारम्भ हुआ था। बिहार, झारखण्ड, बगाल और उडीसा से सराक बधु आये और सोत्साह भाग लिया।

कार्यक्रम निरतर थे, सम्पूर्ण वर्षायोग मे कार्यक्रमो की वर्षा होती रही थी। 3 नवम्बर 95 को खेकडा मे नवनिर्मित 'ज्ञानसागर सभाभवन' का लोकार्पण–उद्घाटन सम्पन्न हुआ तो 5 नवम्बर 95 को अखिल–भारतीय पत्रकार सम्मेलन आयोजित किया गया जिसमे देश के विभिन्न नगरो से 80 पत्रकार पहुँचे और विचार रखे। फिर सभी ने परमपूज्य गुरुवर से दिशानिर्देश भी प्राप्त किये। उसी दिन, बडागॉव मे निर्मित 'ज्ञानसागर साधना निलय' का शिलान्यास किया गया, गुरुवर ने सानिध्य प्रदान किया। 5 एव 6 नवम्बर के कार्यक्रमो मे गुरुवर की कृपा से भारी प्रभावना हुई थी। अतिम दिवस केन्द्रीय मंत्री श्री पी कुमारमगलम उपस्थित हुए। कार्यक्रम की अध्यक्षता श्री साहू रमशेचदजी जैन ने की थी। ☐

कैसे कट गये चार माह, किसी को पता ही न चला। सिर्फ पता था तो सदा–सचेत–पू गुरुवर को। उन्होने निर्वाणदिवस की प्रात बेला मे – 23 अक्टूबर 95 को विधिपूर्वक निष्ठापना कर ली थी ससघ और 29 अक्टूबर 95 को 'पिच्छिका – परिवर्तन' भी कर लिया था। अब वे कभी भी विहार कर सकते हैं– श्रावक जान गये थे।

श्रावको की भक्ति और सराको के शिविर के कारण गुरुवर 10–12 दिनो का समय और दे सके, उसके बाद, उन्होने विहार कर दिया। बडागॉव का गौरव 'बडा' कर, हॉ, बढाकर, गुरुवर चल दिये। श्रावक सिसकते रह गये। ❑

बडागॉव से बढे हुए चरण रुके अल्प समय के लिए गाजियाबाद मे। यहॉं भी गोष्ठियो का क्रम, गुरु–मन का आदोलन सिद्ध हुआ। अनेक गोष्ठी–सगोष्ठी सम्पन्न हुईं। बुद्धिजीवियो की, डाक्टरों की, वकीलो की और इजीनियरो की। सर्वाधिक उल्लेखनीय सिद्ध हुई – 'शाकाहार सगोष्ठी'।

यही वह स्थान था जहॉ गुरुवर के मगलमयी सानिध्य मे, उत्तरांचल–महासमिति द्वारा प्रवर्तित 'श्री सम्मेद शिखर रथ' का उद्घाटन उत्तरप्रदेश के (तत्कालीन) राज्यपाल श्री मोतीलाल वोरा के मुख्य–आतिथ्य मे सम्पन्न हुआ। रथ प्रवर्तन क्यो आवश्यक हो गया? प्रश्न का समीचीन उत्तर/समाधान परमपूज्य उपाध्याय श्री ज्ञानसागर ने प्रदान किया था सभा के मच से। ❑

कहते है कि गाजियाबाद ऐसे लोगो का नगर है जहॉ उन्हे अपने भौतिक कार्यों से फुर्सत नहीं है, मजदूर से लेकर उद्योगपति तक और कर्मचारी से लेकर अधिकारी तक, पल–पल व्यस्त रहते हैं। उनके मध्य जैन भाई तो और अधिक व्यस्त हैं क्योकि वे ही उद्योगपति या व्यापारी हैं। परन्तु वे सब धर्मात्मा हैं, जब उपाध्याय ज्ञानसागर जैसे सरल–स्वभावी सत पाते हैं अपने नगर मे, तो कामधाम भूल जाते हैं और 'श्री नाम' याद रखते है। कम से कम उपाध्यायश्री के आगमन पर तो ऐसा हुआ कि जिन उद्योगपतियो को कभी 5 मिनट का समय न मिलता था, वे पॉच–पॉच घटो का समय दे रहे थे।

गुरुवर ने ऐसी बस्ती मे सराक – उद्धार की चर्चा छेड दी फलत अनेक जन उस कार्य मे लग गये। 16 से 19 नवम्बर 95 के दिवस गोष्ठियो को समर्पित–दिन कहे जावेगे।

दिसम्बर का माह अमीनगरसराय, बिनौली और सरधना को दिया गुरुवर ने।

सत के जीवन मे विहार और कार्यक्रम सतत् रहते है , स्थान बदल जाते हैं , श्रोता बदल जाते हैं, परन्तु विषय नही बदलते, वे सिद्धान्तो की तरह अटल रहते हैं। गुरुवर के प्रमुख विषय वे ही हैं जो देश के वरिष्ठतम आचार्यों के है, अहिसा, शाकाहार, जीवदया आदि पर प्रवचन करना और आदमी की सोच को जीवत बनाना। हॉं, एक विषय गुरुवर का सर्वाधिक चर्चित और विराट है, वह है– सराकोद्धार, यह अन्य सतो के पास नहीं है अत देश के हर सत की तुलना मे – उक्त विषय पर – उनकी छवि सर्वाधिक विशेष मानी जाती है।

नूतन वर्ष का प्रथम दिवस था, 1 जनवरी 96, गुरुवर सरधना से विहार कर रहे थे। सुबह का सूर्य उन्हे विदाई देने आया था। विशाल जनसमूह के मध्य वे चल पडे। उनके पीछे सरधना के अनेक सूरज (श्रावक) चलते रहे, गुरुवर के चरण थे मुल्हेड़ा ग्राम की ओर।

फिर वही दृश्य – अगवानी का। गुरुवर के मुल्हेड़ा –पहुॅचते ही वहॉं, दिल्ली स्थित बिहारी– कालोनी के, भक्तो ने घेर लिया। सम्पूर्ण तन्मयता से प्रार्थना करते हुए चरणो मे श्रीफल चढाये और पचकल्याणक–समारोह मे सानिध्य प्रदान करने को कहा। गुरुवर ने प्रसाद–स्वरूप उन्हे मुस्काने प्रदान कर दीं।

फिर चले तो अतिशय क्षेत्र बरनावा रुके। भक्तो का विशाल जमावडा बना रहता था। (अब अगवानी की चर्चा करना उचित नही है, पाठक स्वत समझते है कि दिगम्बर देवतुल्य गुरुवर की अगवानियॉं भी सम्पूर्ण देश मे निराली होती है।)

आगे बढे गुरुवर , बिनौली पहुँचे। वह अमीनगर सराय के समीपस्थ है, वहॉं गुरुवर ने दस दिन का समय प्रदान कर भक्तो को गद्गद् कर दिया। भक्तगण गुरुवर से जैनधर्म के प्रख्यात सिद्धान्त 'नय' के विषय मे जानना चाहते थे, कई बार विद्वान भक्तो ने समस्याएँ रखी थी। अत गुरुवर ने उनके और श्रीसघ के निमित से, बिनौली मे एक लघुवाचना विस्तार दी। डा रतनचद जैन भोपाल (सम्पादक जिनभाषित) द्वारा लिखित और प्रवर्तित महत्वपूर्ण पुस्तक 'जैन दर्शन में निश्चय और व्यवहार नय' उस वाचना की प्रमुख पुस्तिका थी।

वाचना के दौरान गुरुवर ने समझाया कि निश्चय और व्यवहार नामक दो नय जैनधर्मरूपी महल के दो स्तम्भ हैं, कहे कि वे माता जिनवाणी के नेत्र हैं। जिनवाणी का मर्म समझने के लिए दो प्रकाश– दीप हैं। दोनो का यथासमय उपयोग आवश्यक है।

गुरुवर के प्रवचनो से पूर्व डा रतनचद अपनी उस पोथी की वाचना, समूह के समक्ष स्वत करते थे और समझाते थे। गुरुवर ने स्वीकार किया कि विद्वान लेखक ने कृति मे नयो का स्याद्वाद–शैली के माध्यम से दिशाबोधक प्रतिपादन किया है। ❑

अमीनगर सराय से 22 कि मी दूर बडागॉंव है। वहॉं परमविदुषी आर्यिकारत्न पू दृढमति माता जी ससघ विराजमान थी। उन्हे जानकारी मिली तो सघस्थ अनेक ब्राह्मी–बहिने गुरुवर की अगवानी, दर्शन और आमत्रण हेतु, पूर्व से ही अमीनगर सराय जा पहुँची। माता जी के सकेतानुसार ब्राह्मी बहिनो और बडागॉंव–समाज ने गुरुवर की अगवानी की, बाद मे बडागॉंव चलने की प्रार्थना की।

उपाध्यायश्री तो उसी तरफ जा रहे थे, भक्तो के आगमन से कुछ पृथक ही माहौल बन गया था– भावभीना, भक्तिपरक। दूसरे दिन विशाल समूह के साथ गुरुवर बडागॉंव चल दिये।

सत से पहले समाचार वहॉं पहुँच गया। अत पू दृढमति माता जी ससघ उनकी अगवानी के लिए मदिरजी से चल पडी। उनके साथ सकल जैन समाज। गाजे–बाजे, झडा –बेनर । नगर के मुख्य मार्ग पर सत–मिलन हो गया । माताजी और उनके पीछे चल रही श्वेत वस्त्रधारी अन्य माताएँ और ब्राह्मी बहिने शस्य–श्यामला धरती पर सफेद रग की लकीर खीचती लग रही थी। सामने के मार्ग से पू उपाध्याय श्री ससघ आ रहे थे, उनके पीछे–पीछे श्रावक समूह । दोनो समूह जयघोष कर रहे थे। वाद्ययत्र बज रहे थे। ध्वज उड रहे थे। तभी सरस्वतीसूनु पू उपाध्याय श्री बिल्कुल समक्ष आ पहुँचे। पूज्य आर्यिका दृढमति जी ने पिच्छिका सम्भाल कर, करबद्ध हो, उपाध्याय श्री को नमोस्तु किया। फिर सघस्थ माताओ बहिनो ने किया। उपाध्यायश्री ने पिच्छिका वाला हाथ उठाकर आशीष दिया। फिर रत्नत्रय सम्बधी समाचार पूछे। कुछ मिनटो को समय ठहर गया। देश के दो महान व्यक्तित्व आमने–सामने थे। एक दूसरे के दर्शन कर रहे थे। उपाध्यायश्री सोच रहे थे – परमपूज्य आचार्य विद्यासागर जी की शिष्या, इस शरीर की गुरुबहिन ही तो है। उन की वदना की अनुगूज आचार्यश्री तक जावेगी। आर्यिकाश्री सोच रही थी– ये महातपस्वी तो साक्षात परमपूज्य गुरुवर विद्यासागर जी की तरह दिख रहे हैं, इन्हे किया हुआ नमोस्तु, इनके चरणो के साथ साथ, दो आचार्यों तक पहुँचेगा – समाधिस्थ सन्त पू सुमतिसागर जी और विद्यमान धर्मदिवाकर पू विद्यासागरजी तक।

तब तक जयघोष के स्वर और तीव्र हो गये। दोनो सघ–एक हो गये। दोनो श्रावक समूह एक हो गये। फिर एक विशाल शोभायात्रा चल पडी नगर के हृदय की ओर।

सभी बहिने ब्र अनीताजी की ओर बार–बार देख रही थी। शोभायात्रा मे चल रहे श्रावक और श्राविकाएँ भी उन्हे देख रहे थे, कारण स्पष्ट था– लोग टोह ले रहे थे दो बहिनो के मिलन की –" पू माता दृढमति जी की पारिवारिक अवस्था मे, आदरणीय ब्र अनीता जी – सगी बहिन जो होती थीं। किन्तु अब...... अब निर्मोह के राज्य मे सबधो की सरिता सूख चुकी थी, अब तो एक शरीर– आर्यिका था, एक श्रेष्ठ श्राविका। एक परम पूज्य एक परम आदरणीय। बस, इससे कम कुछ न था उन दो छवियो मे, मनो मे, प्राणो मे। " शोभायात्रा मे चल रहा हर प्राण आश्वस्त हो चुका था।

शोभायात्रा का समापन मदिर–परिसर मे हुआ। हुई फिर स्वागत सभा। माता जी और उपाध्याय श्री के मगलमयी प्रवचन। दो श्रीमुखो से जैनत्व के पुष्प झरे।

बडागॉव मे दो दिनो तक स्वर्ण वर्षा की अनुभूति हुई श्रावको के मनो को। पर तीसरे दिन दुख की। उपाध्यायश्री 3 जनवरी को आये, 4 को रहे, पॉच को विहार कर गये। इतना कम समय पाने वाले जन तो दुखी होगे ही। हॉ सुख था तो यह कि– 4 जनवरी को उन्हे एक ऐसा दृश्य देखने/निहारने को मिल गया था, जो जीवन मे दोबारा मुश्किल से ही मिलता है। वह दृश्य था – मुनिसघ से आर्यिकासघ का वार्तालाप। माताजी अपनी, सघस्थ 18 आर्यिकाओ और अनेक ब्राह्मी बहिनो के साथ उपाध्यायश्री से वार्तालाप करने पहुँची थी उनके कक्ष के समीप स्थित विशाल सभाकक्ष मे।

वार्ता तो वही हुई जो सतो के मिलन पर होती है– 'रत्नत्रय साधना कैसी चल रही है, आवश्यको के प्रति कितना–कितना समय आवश्यक है, कर्त्तव्यो के प्रति कितना समर्पण, आदि–आदि।' किन्तु श्रावक समूह पृथक रूप से आनद ले रहा था– 'बहिन बडे भाई से मिल रही है, दो महान गुरुओं के दो महान शिष्य – शिष्या मिल रहे है, दो साधक बतिया रहे है।'

जो हो, बडागॉव का थल ही नही, आकाश भी उस रोज विशालता की वास्तविक गरिमा पा सका था। 'श्रमण–सस्कृति का सगम– स्थल' जैसा पावन नाम प्राप्त कर सका था बडागॉव । ❑

तो 5 जनवरी को गुरुवर ने विहार कर दिया समाज और आर्यिका–समाज उन्हे सीमान्त तक पहुँचाने गया। जय हो हमारे धर्म की। जय हो हमारे सतो की। जय हो हमारे देश की। जय हो हमारी सस्कृति की। ❑

गुरुवर को 24 दिसम्बर से ज्वर आ रहा था। दस दिनो तक उसने कितना आतक किया होगा शरीर पर , गुरुवर जाने। जब बडागॉव वालो को ज्ञात हुआ तो वे गुरुवर को विहार करने से रोकने लगे, किन्तु गुरुवर ने शरीर के तापो –सतापो पर ध्यान ही कब दिया है? ❑

चरण बढे तो बढते चले गये। गाजियाबाद होकर दिल्ली की ओर । साथ थे बडागॉव और दिल्ली के श्रावक। सत के साथ–साथ श्रावको का चलना भक्तिवश होता है, कभी कर्त्तव्यवश और कभी लोक व्यवहारवश, परन्तु एक बात समझ मे नही आ रही थी, गुरुवर के साथ, बडागॉव से दिल्ली तक की यात्रा मे तीन श्वान भी चलते रहे। किसी ने भगाया तो भी नही भागे। ऐसा क्यो हुआ ? उत्तर कोई नही दे सका। चकित सभीजन थे। किसी विद्वान से पूछते तो वे इसे कलियुग का अतिशय कह कर दो चार अखबारो तक समाचार भेज देते। पर वह क्या था कि कुत्ते साथ साथ चलते रहे। मेरी समझ मे , वह एक अहिसाव्रतधारी महाश्रमण की छवि का प्रभाव था। व्यक्तित्व का आकर्षण था जिस पर करुणा का रग था , शालीनता थी , प्राणीमात्र के लिए निर्भयता का सदेश था।

फिर आप पूछ सकते हैं कि जब प्राणी मात्र के लिए आमत्रण था तो कुत्ते ही क्यों, गाये–बकरी आदि क्यो न साथ चलीं? उत्तर सहज है, गायो – बकरी के मालिक थे वहाँ, रहने – बाधने के स्थान थे, पर बेचारे श्वान .... उनका कोई धनीधोरी न था। अत उन्होने अहिसा के अवतार का अनुगमन उचित समझा। जो हो, वे श्वान ही जाने। फिर भी विद्वतवर्ग इस विषय पर एक त्रिदिवसीय गोष्ठी, कभी, अवश्य रखे और अपने आलेखों का वाचन करे, नये समाधान हाथ लग सकते हैं। ❑

तो गुरुवर के चरण दिल्ली के निकट एक दिगम्बर जैन मन्दिर के समक्ष रुक गये। वह 6 जनवरी 96 का दिवस था। अब क्या था, दिल्ली मे बसी हुई अनेक कालोनियो के श्रावक–समूह पहुँचने लगे। सभी श्रीफल चढाते चरणो मे और अपनी कालोनी मे पधारने की प्रार्थना करते। ताता लगा रहा। गुरुवर मुस्कानो का प्रसाद वितरित करते रहे। बिहारी–कालोनी के लोग आये, उनके यहाँ प्रतिष्ठा समारोह सिर पर था। अत वे गुरुचरणो मे बैठकर रह गये। मुश्किल से उठे।

गुरुवर ने लघु–विहार किया। मदिर से कुछ ही दूरी पर अवस्थित, बलराम नगर–विद्यालय तक चलना था, मगर तब तक श्रावकगण "छात्र–बेन्ड–दल" लेकर आ गये और अपने प्यारे–सत को वाद्ययत्रो की मधुर धुन के साथ लेकर सरस्वती विद्या–मदिर पहुँचे। वहाँ के शिक्षक और छात्र–छात्राएँ भला क्यो न अवसर का लाभ उठाते, उनकी सख्या 500 से अधिक थी। अत उन्होने गुरुवर से प्रवचन प्रदान करने की प्रार्थना की। गुरुवर टाल न सके, थकावट को भूलकर, कहावत पर आ गये। यहाँ, कहावत, माने–कुछ कहने की स्थिति मे, सुनाने के भाव मे।

नन्हे–नन्हे सुकुमार छात्र–छात्राओ को देखकर गुरुवर ने उन्ही को मुख्य विषय बना दिया। बोले–'शिक्षक और बालक के मध्य कुम्हार और मिट्टी का रिश्ता है। एक कुम्हार (जो अब प्रजापति कहलाते हैं) मूक माटी से देवता की मूर्ति भी घड सकता है और राक्षस की भी। बनाते ही हैं, नौ दुर्गा के समय जिन हाथो से दुर्गाजी बनाई जाती है, उन्ही से राक्षस भी। प्रजापति मात्र घट, ईट, मूर्ति का निर्माता होता है, पर शिक्षक? वह तो राष्ट्र–निर्माता कहलाता है। वह छात्रो मे ऐसे सस्कार डालता है जिनके बल पर एक समुन्नत राष्ट्र का निर्माण होता है। अत शिक्षक अपने कर्त्तव्य पर रहकर किताबी और व्यवहारिक शिक्षा दे तथा छात्रो को योग्य नागरिक बनावे। छात्र भी अपने देवतुल्य शिक्षक से ग्रहीत अच्छाइयाँ अपने आचरण मे उतारे, बुराइयो की ओर ध्यान न दे।

छात्रो, शिक्षको और श्रावको ने गुरुवर का आभार ज्ञापित किया और जयघोष किया। की, भूरि–भूरि सराहना।

विद्यालय से चले तो ज्योति कालोनी दिल्ली की ओर। साथ मे चल रहा जुलूस वृहताकार पाता गया। नगर से महानगर की तरह। दिल्ली के श्रावको ने अपनी तैयारियो से, देखते ही देखते, जुलूस को शोभायात्रा की शक्ल दे दी। वाद्ययत्रो (बैंड बाजों) की अनेक टीम आ गईं। दो सज्जित गजराज। पचासो बसे। सैकडो स्कूटर और आटो। बेनर। ध्वज। मगलकशल। तोरणद्वार।

शोभायात्रा की विशालता देखते हुए, श्रावको ने ज्योतिनगर से लगे हुए, विशाल रामलीला मैदान मे उसका समापन किया, शोभायात्रा विशाल धर्मसभा मे परिणित हो गई। सहस्रो नरमुड। मच पर श्रीसघ। श्रावको की प्रार्थना पर प्रवचन। गुरुवर ने कहा–इस सजावट की आवश्यकता उचित नहीं मानता मैं, हम दिगम्बर हैं, हम पर शोभा का अम्बर क्यो हो?

आभार ज्ञापन के समय समाज सेवियो ने माईक पर बतलाया–'हे गुरुवर! यह आपकी शोभा नहीं है, आपके लिए नहीं है, आप तो रत्नत्रय जैसे अनमोल अलकारों से सज्जित हैं। यह शोभा तो हमारे समाज के लिए है। जैन और जैनेतर लोगों को लगे कि नगर में कोई 'संत' पधारे हैं।

लोग बतला रहे थे कि इससे पहले, किसी दिगम्बर–मुनि की इतनी विराट शोभा यात्रा और अगवानी देखने मे नहीं आई। लोग क्या, वह महानगर ही बोल रहा था कि गुरु आगमन से खुशियो की लहरे जनमानस को दोलायमान कर रही थीं। नगर मे चारो तरफ उत्साह। हर कालोनी मे हर्ष। घर घर चर्चा–महानगर मे महा–सत का शुभागमन हुआ है।

8 जनवरी से 11 जनवरी 96 तक ज्योति कालोनी के समक्ष कुबेर नगरी भी उन्नीस लगती यदि वह इस कलिकाल मे किसी को दिखला जाती, तो! सच, वहाँ का हर श्रावक कुबेर की तरह दौलत लुटा रहा था धार्मिक कार्यों पर। गुरुवर के प्रवचनो की प्रतीक्षा लोग सुबह से ही करने लगते थे, जबकि उन बेचारो को नहीं मालूम था कि गुरुवर तो दो–एक दिन का ही समय देगे।

10 जनवरी की प्रवचन सभा के समय पडाल खचाखच भर चुका था। श्रोता पहुँचते ही जा रहे थे, रिक्त–स्थान न दीखता, तब यहाँ–वहाँ देख–टटोल कर, किसी की कृपा के पात्र बनकर भीड मे समा जाते। उनके इस भाव को आधुनिक हेय भाषा–बोली मे–ठसना–कहा जाता है। कहे–"वे ठँस गये।" अब कोई 'ठँस' गये कहे या 'घुस' गये, भक्तो को बुरा नही लगता था, क्योकि उनके मन मे– पू. उपाध्याय भी 'बस' गये थे। आश्चर्य तो तब हुआ जब, श्रोतामात्र को नही, प्राणीमात्र को प्रिय लगने वाले–उपाध्यायश्री की प्रवचन–सभा मे, वहीं मच के निकट, एक नर नही, वानर (बदर) भी बैठकर प्रवचन–लाभ ले रहा था। सच, जब तक प्रवचन चला, वह हिला नही। प्रवचन पूर्ण होते ही, बदर की चाल से–पडाल के ऊपर–यह जा, वह जा। सयोग से शीत और कोहरा इतने अधिक पड रहे थे कि घर मे लोगो को रजाई छोड़ने की इच्छा नही होती थी, पर जब ध्यान जाता कि दिगम्बर सत पू उपाध्यायश्री को भी तो शीत और कोहरा सताते होगे, तो लोग रजाई – मजाई छोड कर, सीधे पडाल की ओर चल पडते थे। प्रभावना के ये प्रखर चिह्न, सुविधाभोगी–वर्ग के चिन्तन मे श्रेष्ठ प्रवर्तन का उल्लेख कर रहे थे।

11 जनवरी 96 को गुरुवर ने ज्योति कालोनी से, दिल्ली की ही गोद मे बसी अन्य कालोनी– बलवीर नगर – को प्रस्थान कर दिया। फिर विदाई और अगवानी के विराट दृश्य, विशाल शोभा यात्रा! भावभीना स्वागत।

बलबीर नगर वालो को तैयारियो के लिए चार दिन का समय अधिक मिल गया था। अत उन्होने भी मीलो दूरी तक नगर को सजाया था, कुबेर–नगरी से बीस करने का मनभाव।

दो दिन गुरुवर ने वचनामृत का सिचन कर श्रोताओ के तप्त हृदय को शीतलताएँ प्रदान कीं। कर्ण–क्षेत्र को महानगरीय– शोर गुल के प्रदूषण से मुक्त कराया और वहाँ प्रवचन–वाहिनी की सुगधे, स्वर–लहरे पहुँचाईं। जैन और अजैनो मे त्याग के भाव दृढ कर दिए। फलत शताधिक लोगो ने मांस–मदिरा – मधु का आजीवन त्याग कर दिया। जय हो जैन धर्म की।

फिर दिया समय शाहदरा को, फिर छोटा बाजार शाहदरा को। गुरुवर को तो बडागाँव से ही बुखार लग गया था। अत काया ताप के उपसर्ग सह रही थी, गुरुवर अपने पथ पर चल रहे थे । राह मे आने वाले हर मदिरजी की वदना करते हुए बढते थे, किन्तु श्रोताओं की प्रार्थना पर प्रवचन भी कर देते थे, काया को विश्राम ही कहाँ है?

बिहारी कालोनी के भक्त तो माह भर से सम्पर्क मे थे। यहॉ भी वे प्रतिदिन साथ चल रहे थे। अत उनके भाग्योदय का सुअवसर भी आ गया। 16 जनवरी को गुरुवर ने बिहारी–कालोनी मे प्रवेश किया। वहॉ पूर्व से ही पू बालाचार्य श्री नेमिसागर जी महाराज ससघ विराजे हुए थे। विशाल श्रावक समूह ने पू उपाध्यायश्री की अगवानी की।

उपाध्यायश्री का बालाचार्य से मिलन–सम–मिलन हुआ। दूसरे दिन 17 जनवरी 96 को बालाचार्य जी के सघस्थ साधु–साध्वियॉ पू उपाध्याय श्री के दर्शनार्थ आये। समीप बैठे। विमर्श किया। दिशादर्शन चाहा। तब उपाध्यायश्री न उन सभी को चरणानुयोग के ग्रथो के अध्ययन का परामर्श दिया, साथ ही व्याकरण एव न्याय आदि पढने की प्रेरणा।

पू उपाध्यायश्री दस दिन वहॉ ठहरे और पचकल्याणक प्रतिष्ठा समारोह की गरिमा बढाई। प मोतीलाल जी मार्तण्ड प्रतिष्ठा–क्रिया सम्भाले हुए थे।

पूर्व योजनानुसार 20 जनवरी 96 को आठ विभिन्न प्रदेशो से आमत्रित नारीरत्नो का , पू उपाध्यायश्री के सानिध्य मे 'महिला–सम्मेलन' किया गया । फिर घट–यात्रा।

जन्म कल्याणक था 21 जनवरी को। वह भी एक मायने मे जुलूस का दिन था , 'पाडुक–शिला' तक की यात्रा का दिवस । लोग कहते हैं कि समूचे 'जमुनापार–इलाके' मे, जैनधर्मावलम्बियो का इतना विशाल जुलूस कभी नही देखा गया था। श्रावक ही श्रावक । जुलूस के आगे वाद्ययत्रो के समूह, चार हाथी, 32 घोडे, आदि आदि।

समारोह का क्रम तिथियो के अनुसार निरतर रहा। सराकक्षेत्र के सराको मे सूरि–मत्र फूॅक कर आये गुरुवर ने, यहॉ प्रतिष्ठा समारोह मे 23 जनवरी 96 को सद्य प्रतिष्ठित प्रतिमाजी मे सूरिमत्र (आजकल सूर्यमत्र कहा जाने लगा है) फूॅका और पाषाण को भगवान बन जाने की सुस्थिति निर्मित कर दी। फिर वहॉ निर्मित समवशरण स्थल पर प्रवचन किये, भगवान और गणधर के विषय मे जानकारी दी।

हर दिन के कार्यक्रम गुरुवर के सानिध्य से समय पर सम्पन्न होते गये। 25 जनवरी को नूतन प्रतिमाजी मदिर जी पहुॅचाई गईं। वहॉ वेदी पर स्थापना।

प्रतिदिन श्रावको को गुरुवर के प्रवचनो का लाभ मिला, मगर कोई अघावे, तृप्त होवे, उसके पूर्व ही, गुरुवर ने वहॉ से विहार कर दिया। वह 26 जनवरी 96, गणतत्र–दिवस–समारोह का दिन था। उस दिन महानगर दिल्ली के वक्षस्थल पर दो शोभायात्राऍ निकली थी, एक थी – महामहिम राष्ट्रपति जी की, जो गणतत्र–दिवस के निमित्त, राष्ट्रपति भवन से लालकिले की ओर थी। दूसरी थी – परमपूज्य राष्ट्रसत जी की, जो बिहारी कालोनी से भोलानाथनगर की ओर थी। प्रथम मे राष्ट्रीयता बरस रही थी, द्वितीय मे धार्मिकता। ❑

भोलानाथनगर को भी समय अधिक न प्राप्त हो सका। गुरुवर विहार करते रहे। कही दो दिन, कही तीन। कृष्णानगर, यमुनाविहार, गगाविहार, गौकुलचौकनगरी, शातिनगर, गाधीनगर, कैलाशनगर, नवीन–शाहदरा, गौतमपुर, लालमदिर, कूचासेठ, धर्मपुरा। (कम्मो जी की धर्मशाला), राजाबाजार, बालाश्रम–दरियागज, मोरीगेट, गुलाब–वाटिका, आदि छोटी–बडी बस्तियो/कालोनियो मे गये और जिनशासन की ध्वजा को ऊॅचाई प्रदान की।

कहे, लगभग चार माहो तक दिल्ली की गोद मे रहे और हर स्थान पर धर्म, शिक्षा, सस्कारो की चर्चा करते हुए शाकाहार और सराक के लिए, लोगो के हृदय मे भव्य प्रासाद खडे कर दिये। फिर कही आध्यात्मिक गीत–सगोष्ठी, तो कही डाक्टर्स–गोष्ठी, कही विद्वत–गोष्ठी तो कही पत्रकार–वार्ता। कही मदिरजी का शिलान्यास तो कही महिला–सम्मेलन।

अनेको ने धर्म पाया अनेको ने प्रेरणा। अनेको ने प्रवचनानद और अनेको ने मौनानद। स्व प श्री बाबूलाल जैन जमादार के वरिष्ठ पुत्र ने पाया था सकल्प– 'पिता के अधूरे कार्य पूर्ण करने का।' कृपा गुरुदेव की।

गुरुवर के कारण दिल्लीवासियो को दुख भी हुआ, जब गुरुवर किसी कालोनी से विहार कर जाते तो लोग सजल नेत्रो से उन्हे देखते रह जाते थे, उनका दुख वे ही जानते थे। वहॉ–धार्मिक–उदारता भी देखने मिली, जब एक मच पर गुरुवर उपाध्याय ज्ञानसागर जी के समीप ही स्थानकवासी सन्त आदरणीय श्री कमलेश जी मुनि विराजे और दोनो ने सोत्साह प्रवचन गगाऍ प्रवाहित की।

एक कालोनी मे श्वेताम्बर मुनि आदरणीय सारस्वत जी महाराज चल कर पधारे–पू उपाध्यायश्री के दर्शन करने। दिल्ली मे सतसमागम/सतमिलन के अनेक दृश्य बने जब एक स्थान पर पू आचार्य कुमुदनदी जी महाराज ससघ मिलने पहुँचे। उनसे पहले पू बालाचार्य नेमिसागर जी महाराज भी ससघ पू उपाध्यायश्री से मिले थे और चर्चाऍ की थी।

जब गुरुवर लालमदिर मे थे, तब कमेटी के अनुरोध पर वहॉ, परिसर मे ही स्थापित–पक्षियो का चिकित्सा–केन्द्र देखने गये। वहॉ सतो की वाणी के अनुरूप, पक्षियो की सेवा होते देख, गुरुवर को भला लगा। उन्होने समिति–सदस्यो और केन्द्र के कर्मचारियो को आशीष दिया। बोले–धर्म की अनेक राहो मे से, यह (सेवा) भी एक विशेष राह है, यह स्थायित्व पाये, कामना है।

इसी मदिरजी के सभाकक्ष मे पूज्य उपाध्यायश्री के मगलमयी सानिध्य मे सराक विषयक बैठक आहूत की गई थी जिसमे जैन– समाज की समस्त राष्ट्र–स्तरीय सस्थाओ के पदाधिकारी उपस्थित हुए थे, गोष्ठी की अध्यक्षता स्वनामधन्य–विद्वान–श्रेष्ठी, साहू अशोक कुमार जी ने की थी। यह वह अवसर था जब समाजसेवियो ने गुरुवर से दिशा पाई थी और सराकोत्थान की दिशा मे नूतन योजनाऍ बनाई थी। नये एव समसामयिक निर्णय लिये थे जिनके प्रकाश मे सराक–कल्याण और उससे सम्बधित कार्य स्पष्ट किये गये थे।

अनेक कार्यक्रमो, (11 से 13 फरवरी 96) के मध्य गाधीनगर मे आयोजित की गई– 'अखिल–भारतीय–सराक–विद्वत –सगोष्ठी' की चर्चा विशेष मानी गई, क्योकि उसमे देश के छोटे–बडे 16 विद्वान और विदुषियॉ उपस्थित हुई थी, जिन्होने गुरुवर के समक्ष केवल सराक और उनकी प्रगति विषयक 16 आलेखो का सुवाचन किया था। डा नीलम जैन, डा नलिन शास्त्री और डा श्रेयाश कुमार के सयुक्त–सयोजन–सचालन मे सम्पन्न हुई गोष्ठी मे, श्वेताम्बर साधुगण भी पधारे थे। गोष्ठी से सराकोद्धार की दिशा मे प्रभावी–वातावरण बना था दिल्लीवासियो के मध्य। आगत–विद्वान लगभग वे ही थे जिनके नाम पूर्व मे देखे जा चुके है, कुछ नवीन नाम भी थे। कुल विद्वान थे–डा मदनमोहन बजाज, डा नन्दलाल जैन, डा गोकुल प्रसाद, प्रा के के जैन बीना, डा वेदरत्न दिल्ली, डा गोविन्द जी मेरठ, श्री उपश्रेणिक सहारनपुर, डा रमेशचद्र, डा कपूरचंद, डा रूबी जैन सहारनपुर, डा सरोज जैन बीना, डा जयकुमार, श्री पं निर्मल जैन सतना, ब्र राकेश जैन जबलपुर, श्री राजमल जैन दिल्ली, सुश्री माधुरी जैन, श्रीमती कान्ती जैन आदि। इन सबके मध्य विद्वान

श्रेष्ठि साहू रमेशचद्र जैन मुख्य अतिथि, श्री उम्मेदमल पाण्डया अध्यक्ष और श्री ह्रदयराज जैन विशिष्ट वक्ता थे। डा सुशील जैन कुरावली, प्रा टीकमचद जैन और वरिष्ठ पत्रकार श्री पारसदास जैन ने भी अपने विचार रखे थे।

बाद मे गोष्ठी–सार एक उत्तम पुस्तक के रूप मे जनमानस को स्थायी–आकार मे भी उपलब्ध हो सका। ❑

इसी तरह 31 जनवरी 96 को कृष्णानगर (दिल्ली) और 3 फरवरी को यमुना विहार (दिल्ली) मे आयोजित किये गये शाकाहार–सम्मेलन भी विशेष प्रभावना कर सके थे। ❑

1 जनवरी 96 से 28 अप्रैल 96 तक दिल्ली के नगरो–उपनगरो मे समाये रहने वाले महायोगी पू ज्ञानसागर जी ने 29 अप्रैल 96 को भारत की राजधानी से विहार कर दिया। सच है, सस्कारधानियो मे रहने वाले दिगम्बर सत को राजधानी कितने दिन रोक सकती थी? उनके चरण, जो सस्कारो पर राज कराने सक्रिय हैं, देश की विशाल सीमारेखा के मध्य कही भी जाने–आने को स्वतत्र हैं। ❑

अप्रैल–अत मे, 30 से 6 मई तक, पचकल्याणक प्रतिष्ठा समारोह के निमित्त, समय बलरामनगर को दिया और फिर क्रमश दिल्ली से दूर होते गये। चरण थे बडौत की ओर। ❑

बडौत की बडभागी वसुन्धरा पर बडे–बडे वैरागीगण पहले से ही अवस्थित थे–पू मुनि हर्षसम्राट जी, पू मुनि सूर्यसागर जी, एव क्षु श्री विमलभूषण जी आदि। उन्हे जानकारी थी कि उनके वरिष्ठ सत पूज्य उपाध्यायश्री पधार रहे है। अत श्रावको की उमडती जनमेदिनी के साथ वे भी अगवानी हेतु गये और पू उपाध्यायश्री को भक्ति, वात्सल्य और सतोचित शिष्टाचार के मणि समर्पित किए। उनमे उमडी वत्सलता देख उपाध्यायश्री सीधे न खडे रह सके, चरणो की ओर झुके हुए तीनो साधुओ को बारी–बारी से गले लगाया, आशीष दिया।

विशाल शोभायात्रा के साथ उपाध्यायश्री ने नगर प्रवेश किया। वे और उनका सघ एक जनवरी से 29 अप्रैल 96 तक दिल्ली था, किन्तु अब बडौत था। ग्रीष्म के तप्त समय मे से दस दिन मिले बडौत वालो को, 4 मई से 14 मई 96 तक।

दस दिनो मे तीन ऐतिहासिक गोष्ठियो को सानिध्य और दिशा प्रदान कर नगर की गरिमा बढाई और श्रावको का चितन।

वे थी– एडवोकेट विचार–सगोष्ठी, डाक्टर–सगोष्ठी और प्रोफेसर–सगोष्ठी। अब इतना तो आप जानते ही हैं कि वकीलो की गोष्ठी से नागरिक–सुरक्षा अधिकार की जानकारी मिली होगी तो डाक्टरो से स्वास्थ्य सम्बन्धी और प्रोफेसरो से मानसिकता सम्बधी। सच है, तीनो वर्ग के लोगो ने अपने–अपने विषय की जानकारिया दी थी जनता को।

गुरुवर ने अपने प्रवचनो से वह प्रकाश दिया, जो अन्यजन न दे पाये थे। कहे उन्होने तीनो गोष्ठियो के विषयो को धर्म से जोडकर जनोपयोगी और मननोपयोगी बना दिया था। हर गोष्ठी मे अहिसा, शाकाहार और सराकोद्धार के बिन्दु प्रमुख रहे। ❑

14 मई 96 को बडौत से विहार। गुरुवर बिनौली की ओर। रास्ते मे समय पाकर, बादलो ने गुरुवर का पादप्रक्षाल क्या, अभिषेक ही कर दिया। तीव्रतर वर्षा जैसे समस्त बादल 'जलम् निर्पामति' कर रहे हो। 'जलम्' अकेले से मन न भरा सो अपनी सम्पूर्ण द्रव्य का अर्ध्य बनाकर गुरु के चरणो पर चढा दिया।

बादलो के पास सफेद तदुल तो न थे, थे बड़े–बड़े ओले। बादलो की भक्ति देख कर, भला वृक्ष और विद्युत पोल चुप कैसे खड़े रहते, वे भी नमन करना चाहते थे। अत. तूफान से सहयोग लेकर सड़क पर बिछ गये। गुरुवर सबको आशीष देते हुए निकल गये। कोई भक्त न रोक सका उन्हे।

लोग कहते हैं कि उस दिन के ऑधी और पानी ने विनाश की कथा लिखना चाही थी गुरुवर के मार्ग पर, परन्तु उनके चरणो की कृपा से विनाश का स्वरूप विकास मे परिणित हो गया था। कृषि–विकास, कृषक–विकास तो हुआ ही, उस दिन गुरुवर के साथ जो सहस्रो लोगो का समूह चल रहा था उसे आत्म–विकास के दर्शन हो गये थे कि जब श्रावको के साथ साक्षात मगलमूर्ति चल रही हो तो अमगल होगा ही कैसे? क्यो किसी को खरोच आयेगी? ❑

बरनावा मे 18 मई से 23 मई 96 तक पचकल्याणक–प्रतिष्ठा–समारोह। कार्यक्रम के चलते अचानक ऑधी– पानी ने भारी ताडव दिखाया, परन्तु गुरुवर के कृपासानिध्य से सभी कार्य निर्विघ्न सम्पन्न हुए। किसी श्रावक को कोई क्षति न हो पाई। ❑

पुन विहार। श्रीचरण पहुँचे लौनी (बलरामनगर), वहॉ 30 मई से 5 जून तक आयोजित था–पच कल्याणक प्रतिष्ठा समारोह। दिया गुरुवर ने पुनीत सानिध्य। उसी अवधि मे नैतिक–शिक्षा–समिति दिल्ली के सदस्यगण जा पहुँचे। फलत पूज्यश्री ने सराकोद्धार–योजना पर उन्हे प्रकाश प्रदान किया।

(बार–बार पचकल्याणको की सविस्तार रपट प्रस्तुत कर मैं अपने पाठको की रुचि क्षीण न करूँगा, सभी लोग गुरुवर के विराट–आयोजनो से भलीभाति परिचित हो चुके हैं। अस्तु)

विहार का क्रम न थमा था, मडोला, विलोचपुर, बिनौली, दोघट, टीकरी होते हुए, पूज्यश्री ने परासौली को भी समय प्रदान किया था। वहॉ एव समीपी–ग्रामो मे स्थानकवासी भाइयो का बाहुल्य है, वहॉ उनका एक स्थानक भी अवस्थित है। गुरुवर उन भाइयो के साथ स्थानक गये। प्रभाव कुछ ऐसा पडा कि स्थानक और दिगम्बर जैनो का भेद समाप्त हो गया गुरुवर ने उनमे सामाजिक एकता का शखनाद कर दिया। फलत उसी दिन, वहॉ वर्षो से बन्द पडे दिगम्बर जैन मदिर के कपाट खोले गये और उचित व्यवस्थाओ का भार दिगम्बर जैन समाज ने धारण किया।

फिर चले गुरुवर तो जौला ग्राम और फिर बुढाना। चूकि वर्षायोग की तिथियॉ निकट थीं। अत हर गॉव नगर के भक्त चातुर्मास–स्थापना की प्रार्थना करते थे। वहॉ भी लोगो ने श्रीफल चढाकर विनय की। किन्तु । गुरुवर बढ गये आगे की ओर। वे 30 जून को शाहपुर पहुँच गये। भक्तो ने धूमधाम से अगवानी की। फिर शोभायात्रा के साथ नगर प्रवेश।

यहॉ के भक्तो को भारी हर्ष हुआ, उन्हे पूर्ण विश्वास हो गया कि गुरुवर स्थापना यही करेगे, किन्तु वह तो स्वप्न ही सिद्ध हुआ, वे तो विहार कर गये। 12 जुलाई को बुढाना पहुँचे।

फिर बरनावा गये, वहॉ आचार्य पुष्पदत सागर जी के शिष्य मुनि श्री पुण्यसागर जी एव मुनि श्री सौरभ सागर जी अवस्थित थे। वे समाज के साथ चलकर नगरसीमा पर आकर खडे हो गये और उपाध्यायश्री के पहुँचते ही, भावपूर्ण अगवानी की। फिर नगर प्रवेश। एक ही मच से प्रवचन। दूसरे दिन मध्याह्न करीब एक घटे तक मूसलाधार पानी गिरा जिससे उस दिन विहार न हो सका।

शुभ प्रभात मे पुन· शुभ विहार। गुरुवर शिकारपुर गये गॉंव के नाम के अनुसार, न तो वहॉ कोई शिकारी था, न शिकार करता था। सभी जन शाकाहारी थे, अहिसक थे। मध्याह्न तीन बजे पुन विहार। चरण थे शाहपुर की ओर। (यहॉ अवश्य अनेक शाह/साहूकार हैं) ❑

शाहपुर के भक्त भारी उत्साह मे थे। पूरा नगर सजाया गया था। समाज विशाल शोभायात्रा लेकर नगरसीमा पर उपस्थित था, गुरुवर के पहुँचते ही पाद-प्रक्षाल। आदि।

26 जुलाई को गुरुवर ने शाहपुर में प्रवेश किया। वहाँ 12 नगरो के समूह श्रीफल लिये गुरुवर को घेरे रहे कि शायद उनके नगर को धन्य कर दे। आशा-आशा मे भक्तो ने 27 एवं 28 जुलाई को लगातार गुहारे की, पर शाहपुर वालो की गुहार का जुहार स्वीकृत हो गया श्री चरणो को।

29 जुलाई 96 को बुढाना और शामली के भक्त भी विशाल-समूहो के साथ चरणो मे हाजिर हुए और प्रार्थना की, किन्तु गुरुवर ने उसी दिन, मध्याह्न-सभा मे, चातुर्मास-स्थापना की विधि प्रारभ कर दी। सम्पूर्ण शाहपुर आत्मगौरव से भर गया।

यह वही शाहपुर है जहॉ सन 1990 मे भी गुरुवर ने ससघ चातुर्मास कर भक्तो मे धर्म के प्रति दृढता का संचार किया था। यहॉ के भक्त ही गुरुवर को, श्रीसघ सहित तीर्थराज सम्मेदशिखर जी की यात्रा पर ले गये थे। छह वर्ष बाद, 1996 का वर्षायोग वहॉ होते देख भक्तो मे भक्ति और उत्साह बढ गये थे।

गुरुवर धर्म-साधना में लीन हो गये।

चातुर्मास-समिति और शाहपुर-समाज के सयोग से वहॉ प्रभावनाकारी कार्यक्रमो का क्रम बना, बना फिर नव कीर्तिमान। समस्त जिला के नगर-उपनगर और गॉवों के लिए एक 'जिला स्तरीय शाकाहार प्रतियोगिता' का सार्थक आयोजन हुआ। जिले के दूरदराज बसे ग्रामो तक शाकाहार का सदेश गया। अन्य आयोजक होते तो वे कार्यक्रम की सफलता देख कर उसे 'राष्ट्रीय स्तर' का लिखते, पर गुरुवर ने स्पष्ट किया कि कार्यक्रम मे 'राष्ट्रीय' का विशेषण लगाना सरल बात है, पर उसे राष्ट्रीय बनाना कठिन काम है। अत मात्र प्रचार पाने की दृष्टि से जिस कार्यक्रम को राष्ट्रीय लिख दिया जाता है, उसे मैं गलत मानता हूँ।

वहॉ भाषण-प्रतियोगिता मे एक मुस्लिम-बालिका ने प्रथम-पुरस्कार अर्जित करने का सौभाग्य पाया था। जब वह मच पर आयी तो स्व-प्रेरणा से, गुरुदेव के पावन चरणो मे घोषणा की-जीवन भर के लिए मासाहार का त्याग करती हूँ।

उसकी घोषणा से श्रोताओ ने खुश होकर तालियॉ गडगडा दी। दिया फिर आशीष गुरुवर ने। ❑

कुछ युवको ने कहा-गुरुदेव, अब तो अत्याक्षरी जैसा साधारण कार्यक्रम राष्ट्रीय सम्बोधन प्राप्त कर रहा है। फिर यह 'शाकाहार-प्रतियोगिता' तो उससे सौ गुनी अधिक उपयोगी और सार्थक सिद्ध हुई है, इसे तो सभी जन राष्ट्रीय स्तर की कह रहे हैं। गुरुवर, भोले युवको के तर्क पर मुस्कराए, फिर बोले-आप जो उचित समझे, वह अवश्य माने, किन्तु आपके कपडपट्ट (बेनर) पर तो 'जिला-स्तरीय' लिखा गया है।

युवक क्षणभर को शरमा गये, फिर हिम्मत कर बोले-पूज्यवर, हम लिखते समय नहीं जानते थे कि लिखेगे 'जिला' मगर हो जायेगा 'राष्ट्र'। कहने का मतलब यह कि वहॉ राष्ट्रीयस्तर की शाकाहार प्रतियोगिता हुई है, आयोजको को विश्वास हो गया, तब उनकी प्रसन्नता द्विगुणित हो गई।

उसके पश्चात 'सराक प्रशिक्षण शिविर', क्षेत्रीय जैन मिलन का अधिवेशन, भाषण प्रतियोगिता, शाकाहार प्रदर्शनी, शाकाहार रैली, मेधावी छात्रों का सम्मान, आचार्य शातिसागर छाणी-उदासीन आश्रम का उद्घाटन, पत्रकार-वार्ता, सराक महिमा प्रशिक्षण शिविर, भारतवर्षीय महासभा का अधिवेशन, आचार्य सुमति सागर जी महाराज की जयती, फिर उन्ही का पावन स्मरण दिवस। उसी श्रृंखला मे रहा- 'जैन न्याय को आचार्य अकलकदेव जी का अवदान' पर विशाल विद्वत-गोष्ठी का आयोजन। फिर मद्यनिषेध-रैली का आयोजन/सम्मेलन।

पाठकों को स्मरण होगा कि गुरुवर जब क्षुल्लक जी थे, तब सन 1987 मे, जैन न्याय-विद्या पर प्रथम आयोजन ललितपुर में सम्पन्न हुआ था। यहाँ शाहपुर में उसका स्वरूप विशाल हो गया था, जिसमें 27 अक्टूबर से 29 अक्टूबर 96 तक, सात सत्रो में, तीस विद्वानों ने आलेख बाँचे थे। संयोजन डा. अशोक कुमार लाड़नू ने किया था। प्रत्येक सत्र के अंत मे गुरुवर का अनुशीलनात्मक-प्रवचन होता था जो श्रोताओं और विद्वानों को नये वैचारिक-गवाक्ष प्रदान करता था। ❑

2 नवम्बर से 14 नवम्बर 96 तक सराक क्षेत्र से आमन्त्रित माताओं और बहिनो का 'धार्मिक शिक्षण-प्रशिक्षण शिविर' सचालित किया गया, जिसमे 16 ग्रामो की 25 महिलाओ ने लाभार्जित किया।

शिविर के समय शाहपुर की माताएँ बहिने शात नहीं बैठीं। उन्होने 'शातिसागर छाणी बालिका मडल' की ओर से आगत बहिनो को हस्तकला और पाककला का प्रशिक्षण दिया और अपना कर्त्तव्य पूर्ण किया। कहे, ज्योति से ज्योति जलती गई और नवालोक का परिदृश्य निर्मित होता गया।

सराक महिलाये जब लौटीं तो उनके साथ, सराक क्षेत्र की सहायतार्थ काफी सामग्री शाहपुर वालो ने भेजी, जिनमे बच्चो के लिए वस्त्र प्रमुख रहे। अन्य सहयोगो मे-कम्बल, साडियां, सिलाई-मशीने, आदि थे, शिक्षा योग्य पुस्तके और नगद राशि पृथक।

10 नवम्बर 96 को महावीर-निर्वाण दिवस मनाया गया। उसके बाद गुरुवर ने चातुर्मास की विस्थापना की।

35 घर के जैन हैं शाहपुर मे, कहे कुल समाज मे सदस्य 300 से कम हैं, पर उत्साह? तीन लाख के बराबर रहा। उसी के फलस्वरूप अनेक कार्य, सुधार-कार्य और विभिन्न कार्यक्रम हुए थे। 4 सितम्बर 96 को गुरुवर के आशीष से 'ज्ञानगगा शाकाहार प्रचार समिति' की स्थापना इसी वर्षायोग की देन है। कार्यक्रमो के चलते गुरुवर की व्यक्तिगत-साधना-चर्या भी प्रखरतम बनी रही थी। शाहपुर निवासी अरविंद कुमार बतलाते हैं कि महाराज को कई बार 22 घटो तक, एक ही आसन मे रहकर, ध्यान लगाये हुए देखा है नगरवासियो ने।

29 जुलाई 96 से 26 नवम्बर 96 तक का समय शाहपुर के ललाट पर चदन सी सुगधियाँ बिखराता रहा। फिर सत के चरण वहाँ से चल पडे। सारा नगर उदास। ❑

गुरुवर सघ सहित देवबद पहुँचे। करीब एक माह का समय प्रदान किया। कार्यक्रमो की झड़ी लग गई-ज्ञान अहिसा सम्मेलन, पत्रकार सम्मेलन, साक्षरता सम्मेलन, सराक प्रशिक्षण शिविर, नैतिक-शिक्षा प्रश्नोत्तरी, अहिसा और विश्वशांति पर विभिन्न व्यवसायो और विषयो के बुद्धिजीवियो की गोष्ठी, सर्वधर्म-सम्मेलन, राष्ट्र-चिन्तन-सगोष्ठी, डाक्टर-सगोष्ठी, शाकाहार-पखवाड़ा, शाकाहार रैली, शाकाहार-प्रदर्शनी सहित अनेक आयोजन सम्पन्न कर जिनशासन का ध्वजारोहण किया गया।

यह यों मुसलमान-बहुल क्षेत्र है, परन्तु वहाँ समाज को इतर-समाज का अच्छा सहयोग रहा। वाद्य-दल के प्रमुख, बैन्डमास्टर, ने गुरुवर के प्रवचन सुन रात्रि भोजन का त्याग कर दिया। तब उसके सकल्प को मच से घोषित कर सार्वजनिक कर दिया गया, सुनकर जनता बहुत प्रसन्न हुई। ❑

जब गुरुवर के प्रवचन जिला-उपकारागार में हुए तो उनकी करुणा-जन्य पीयूषवाणी सुनकर अनेक कैदी-भाइयों की आँखें भर आईं थीं। गुरुवर की प्रभावना ही ऐसी है। ❑

बारी आई फिर सहारनपुर की, जहाँ दो वर्ष पूर्व सन 95 मे भी समय प्रदान किया गया था। वहाँ के समाज को भी एक माह का समय प्राप्त हो सका। गुरुवर 7 जनवरी 97 को सहारनपुर पहुँचे तो श्रावको ने पाद–प्रक्षाल किये। ससमूह आरती उतारी और भारी उत्साह से शोभायात्रा के साथ दिगम्बर जैन मदिर जैनबाग वीरनगर ले गये। सहारनपुर मे भी कार्यक्रमो का सिलसिला कम न हुआ, वहाँ 12 जनवरी 97 को एक ऐसा आयोजन पूर्ण हुआ, जिसका आरम्भ कुछ माह पूर्व हुआ था। गुरुवर के आशीष से समूचे जनपद के 1200 छात्र, छात्राओ के मध्य 'शाकाहार–निबध प्रतियोगिता' आयोजित की गई थी, उसमे जो प्रत्याशी विजयी हुए थे, उन्हे सहारनपुर के मच से पुरस्कारित किया गया था 12 जनवरी को।

सहारनपुर के अन्य प्रभावनाकारी कार्यक्रम थे– शिक्षक सम्मेलन, कारागृह मे गुरुवर का उद्‌बोधन।

गुरुवर की दृष्टि सदा विद्वानो के हित मे रही है, वे समाज के सरस्वती–पुत्रो पर ममतालु–माता की तरह सदा ध्यान देते मिले हैं। गुरुवर का मन हुआ कि प्रतिवर्ष कोई सस्था/ट्रस्ट, देश के दो–चार विद्वानो का सम्मान कर पुरस्कृत करने का सकल्प ले। सन 1987 मे आया विचार, 15 जनवरी 97 को, सहारनपुर मे आकार पाने मे सफल रहा, जब वहाँ अग्रवाल धर्मशाला के एक कक्ष मे गुरुवर की इच्छा के अनुरूप डा नलिन शास्त्री बोधगया, डा जयकुमार जैन मुजफ्फरनगर, डा नीलम जैन सहारनपुर के विचार–विमर्श के पश्चात **'श्रुत संवर्धन सस्थान'** की स्थापना कर दी गई।

16 और 17 जनवरी 97 का समय, गुरुवर ने सहारनपुर स्थित 'आशा मार्डन स्कूल' चद्रनगर को दिया। वहाँ 'सराक–उत्थान' विषय पर आयोजित सभा मे गुरुवर ने प्रेरणा दी। फलत अनेक श्रावको–श्रीमन्तो आदि के भाव सहायतातुर हो पडे। स्कूल की प्रधानाचार्य श्रीमती आशा जैन ने दस ग्रामो मे शिक्षा–प्रसार का दायित्व लिया।

फिर 18 जनवरी को सभा/गोष्ठी मे आमत्रित 35 डाक्टरो को समय दिया और अपने वचनामृत से उनका सेवाभाव द्विगुणित कर दिया। मजा (आत्मानद) की बात यह कि उस दिन गुरुवर की आहारचर्या एक पुलिस–थाने मे सम्पन्न हुई थी। हैं न गुरुवर निराले।

'थाना–परिसर मे आहार लिये और चल दिये' –इतना भर नही हुआ, विशेष बात यह हुई कि थाने के स्टाफ (कर्मचारियो–अधिकारियों) को समीप बैठाया और उनसे मॉस–मदिरा का त्याग कराया।

फिर जे वी जैन डिग्री कालेज होते हुए, गुरुवर ने 21 जनवरी 97 को तिजारा के लिये प्रस्थान कर दिया। ❑

रास्ते मे मिला मुजफ्फरनगर। वहाँ एक कारागार (जेल) मे गुरुवर के प्रवचन रखे गये। कैदीगण श्रोता थे। साथ मे अधिकारी, कर्मचारी और श्रावक भी। गुरुवर के प्रेरक प्रवचन के बाद जब जेलर साहब आभार ज्ञापित करने खडे हुए तो उन्हे पूरे वजन से कहना पडा कि गुरुवर के वचनो मे ऐसी शक्ति है कि उसे सुन बदीजन स्वत अपने जीवन मे सुधार ला सकते हैं। हम अपने मध्य इन/महान सत को पाकर उपकृत हुए हैं। ❑

सहारनपुर से मुज्फ्फरनगर के मध्य रामपुर मनिहारान, जलालाबाद और चरथावल नगरो के लोगो ने भी दर्शन लाभ लिया था। फिर जब वहाँ से आगे बढे तो खतौली, मेरठ, मोदीनगर होते हुए गाजियाबाद पहुँचे। पर समय अधिक न दे सके। फिर साहिबाबाद, सूर्यनगर और फिर दिल्ली का विवेक–विहार।

विवेक विहार मे गगा–जमना जैसा सगम निर्मित हुआ, जब दिगम्बर सत श्री ज्ञानसागर जी की अगवानी हेतु स्थानकवासी–समाज के सुप्रसिद्ध सत–वाणीभूषण श्री अमर मुनि महाराज साहब ने स्वागत किया। समन्वय के धरातल पर एक विशाल–सभा को सम्बोधित किया था वहाँ दोनो सतों ने। ❑

विशाल शोभायात्रा के साथ गुरुवर विवेक विहार से बाहुबली–एन्क्लेव तक गये तो दिल्ली की अनेक उपबस्तियाँ जाग गईं– "दिगम्बर सत पधारे हैं।" घर–घर चर्चा।

वहाँ से गुडगाँव आदि महत्वपूर्ण नगरो के श्रावकों को दर्शन देते हुए तिजारा जा पहुँचे, जहाँ समिति और समाज के सदस्यो ने नगरसीमा पर गुरुवर की श्रद्धापूर्वक अगवानी की, सामूहिक–आरती और पाद प्रक्षालन के पश्चात ही गुरुवर आगे बढ पाये। विशाल शोभायात्रा के साथ श्री अतिशयक्षेत्र तिजारा मे प्रवेश। ❑

तिजारा की पावन–हवाएँ गा रही थी या श्रावको के पवित्र मन, यह तो पाठकगण ही विचार करेगे, पर यह सही है कि गुरुवर का विरद वहाँ धूप की तरह फैल चुका था। यदि उस विरद को शब्द दिये जा सकते तो शायद वह ऐसा होता–

कल तक ज्ञान की गागर थे, आज ज्ञान के सागर हैं।
जैसे हम अपने घर हैं, वैसे वे अपने दर हैं।।

तप, अध्ययन, सयम के बल पर उनने पाया है वह ज्ञान।
जिससे धन्य हुए हैं श्रावक, धन्य हुआ है सकल जहान।।

उनकी दिन–चर्या से पढकर, सीखा हमने नैतिक ज्ञान।
जो जाता है शरण में उनकी, हो जाता है शीघ्र महान।।

आगम का अवगाहन कर मुनि अमृत छलकाते नित्य नित्य।
जग के प्रमाद को नषती सी, उनकी वाणी रचती सुकृत्य।।

धार्मिक जडता पर, सक्रियता का वे ध्वज फहराते हैं।
और देश मे आध्यात्मिकता को सार्थक कर देते हैं।।

कल जो क्षुल्लक गुणसागर थे, वे ही हुए ज्ञानसागर।
मुनि से हुए उपाध्याय और अब हैं पूर्ण महासागर।।

न्याय, व्याकरण और सिद्धान्त का अध्ययन कर–कर निर्जन में।
आत्म–शोध की ज्योति जलाई, दूर, सराकों के मन में।।

जगत–मैत्री के उद्‌घोषक, करुणा और प्रेम के प्रेरक।
झारखण्ड के विरसामुन्डा–आदिवासियों के उद्धारक।।

हे सराक–बंधु तुम्हें प्रणाम, हे पार्श्व–भक्त, तुमको प्रणाम।
हे साधनापूत ज्ञानसागर, हे तपः पूत गुरुवर प्रणाम।। ❑

वर्तमान भारत के विख्यात तीर्थो मे श्री अतिशय–क्षेत्र–तिजारा का नाम सदा भक्तो की जिव्हा हर रहता है।

वहाँ 13 से 20 फरवरी 97 के मध्य होने वाले पचकल्याणक प्रतिष्ठा समारोह के लिए समिति को आशीर्वाद पूर्व मे ही प्रदान कर चुके थे। अत श्रावको के सौभाग्य से सानिध्य भी मिला।

जैसा कि हर स्थान पर होता है, गुरुवर के तिजारा–प्रवास के समय सर्वाधिक महत्व दिया गया था अहिसा और शाकाहार के प्रचार–प्रसार को। उनके मच पर शाकाहार, जीव–रक्षा, नीलगाय–रक्षा के सार्थक सूत्र जन्म लेते थे और शासन, उद्योगपति तथा जनसामान्य मे कर्त्तव्य बोध का दायित्व–पैदा करते थे।

तिजारा (देहरा) क्षेत्र के तात्कालीन विधायक श्री एमामुदीन अहमद गुरुवर के प्रवचन सुनने मे खूब रस लेते थे, उनकी लगन और भक्ति गुरुवर को स्पर्श करती रहती थी। अत एक दिन गुरुवर ने विधायक महोदय को समीप बैठा लिया और उपदेश दिया कि वे और उनका परिवार, पूर्णरुपेण शाकाहारी रहने का सकल्प लें, फिर मच से अन्य भाइयो को प्रेरणा दे तो मेरे उद्देश्य की सफलता लोग समझ सकेगे। विधायक जी ने उसी दिन मच पर सपरिवार शाकाहारी बनने का सकल्प किया, जनता मे प्रभावना का असर द्विगुणित हो गया। बाद मे अहमद साहब के सम्पर्क मे आने वाले अनेक मुसलमान और अन्य बिरादरी के लोगो ने भी आजीवन शाकाहारी रहने का व्रत लिया।

श्री ओमप्रकाश जैन सूरत गुरुवर के दर्शनार्थ तिजारा पहुँचे। गुरुवर से मत्रणा की तो गुरुवर ने उन्हे दिशा दी कि आप जैसे समाजसेवी जब विद्वानो से जुडकर शाकाहार का प्रचार करेगे तो जनता और शासन को सोचना पड सकता है।

श्री शातिकुमार जैन (डी एस पी दिल्ली) और श्री एस के जैन (केन्द्रीय गृह मत्रालय के वरिष्ठ अधिकारी) भी तिजारा पहुँचे। गुरुवर ने उनसे शासकीय स्तर पर शाकाहार और अहिसा के विषय मे सोचने और सार्थक योजना बनाने की पहल की।

गुरुवर की भावनाओ को समझते हुए तीर्थ–समिति–तिजारा के तत्वावधान मे 7 फरवरी 97 को विशाल शाकाहार सम्मेलन का गौरवशाली आयोजन किया गया जिसमे समाजसेवी, विद्वान और सामान्य श्रावको ने बढ–चढ कर भाग लिया था। यह वह अवसर था– जब हर व्यक्तित्व गुरुवर से शाकाहार पर मार्गदर्शन प्राप्त करना चाह रहा था वह क्षण गुरुवर ने दिया भी, जब प्रवचन किया। विशाल जनमेदिनी के मध्य गुरुवर ने बतलाया– शाकाहार प्रचार का कार्य एक मच या एक शहर मे नही, गॉव–गॉव जाकर करना है। स्कूलो मे भी जाना होगा, छात्रो से मिलना होगा।

शासन गोवश–वध, गोवश की तस्करी, गोमास और गोचर्म के उत्पादनो पर प्रतिबध लगावे। निरर्थक/वृद्ध/बीमार गायो के लिए समाज और शासन मिल कर गोशालाएँ खोले और चलाएँ। ग्रामीणजन गोपालन का कार्य हाथ मे ले। गुरुवर ने गोवश की रक्षार्थ प्राण देने वाले महान समाज सेवी–नीमाहेडा ग्राम के निवासी स्व रेशम सिह के कार्यो का उल्लेख किया। 'मच' ने तुरन्त उन्हे 'मरणोपरान्त–सम्मान' प्रदान करने की घोषणा की।

गुरुवर ने कहा कि जो हिन्दू या मुस्लिम भाई शौक–शौक मे कुछ समय से मासाहारी बन गये हैं, उनके मुहल्ले मे जाकर नुक्कड–सभाये करनी होगी और भूले हुए लोगो को शाकाहार के प्रति कृतसकल्प करना होगा।

शाकाहार के प्रचारको को यह ध्यान भी देना होगा कि शासन नये कत्लखाने न खोल पाये, न किसी को लाईसेन्स दे पाये, तब वर्तमान मे, प्रतिदिन, जो लाखो टन मास निर्यात किया जा रहा है, उस पर स्वमेव अकुश लग जावेगा।

उस दिन गुरुवर ने अनेक ऑकडे प्रस्तुत करते हुए प्रवचन को अत्यत प्रभावशाली और सार्थक रूप प्रदान कर दिया था। सामने तो सामने, मच पर बैठे महत्वपूर्णजन भी चकित हो पडे थे।

गुरुवर से पूर्व बोलने वालो मे श्री शातिलाल चपलोत (अध्यक्ष राजस्थान विधान सभा), डा नलिन शास्त्री बोधगया, डा डी सी जैन दिल्ली, सुश्री रजिया अहमद (अध्यक्ष एनीमल राईट्स मिशन), डा0 महेन्द्र सागर प्रचडिया अलीगढ, डा चिरजीलाल बगडा कलकत्ता, आदि व्यक्तित्वो ने भी शाकाहार पर युगातरकारी विचार रखे, जिनसे श्रोताओ को सोचने–विचारने का नया धरातल मिला। ❑

इसी प्रवास मे शास्त्रीपरिषद का सफल अधिवेशन 14 एव 15 फरवरी 97 को सम्पन्न हुआ था। 'श्रुत संवर्धन पुरस्कार वर्ष 96' के लिए चार विद्वानों को रुपये 31–31 हजार की राशि और अभिनंदन–पत्रों के साथ सम्मानित किया गया। कहे, 15 जनवरी 97 को सहारनपुर में स्थापित गठित सस्थान फलीभूत हुआ। फलत सन 1998 के वर्षायोग मे सम्मान प्राप्त करने वाले विद्वान सामने आये–प जवाहरलाल जैन भिडर, डा चेतनप्रकाश पाटनी जोधपुर, ब्र प रतनलाल जैन इदौर, प्रा नरेन्द्रप्रकाश जैन फिरोजाबाद और श्री डा फूलचद प्रेमी वाराणसी।

कार्यक्रम मे पूजनीय गुरुवर उपस्थित हुए थे। मुख्य अतिथि बिहार प्रदेश के राज्यपाल श्री सुदर सिह भडारी थे, उन्ही से सम्मान/पुरस्कार दिलवाये गये थे। सयोग से उसी दिन, उसी मंच से, 'आचार्य श्री शातिसागर जी (छाणी) स्मृति ग्रन्थ' का लोकार्पण भी राज्यपाल जी से कराया गया। श्री भडारी जी ने लोकार्पण की रस्म पूर्ण कर, प्रथम कृति पूज्य गुरुदेव के करकमलों मे सौंपी थी और आशीर्वाद लिया था। ❑

शाकाहार सम्मेलन के पश्चात, पूर्वनिर्धारित तिथियो मे भव्य–पचकल्याणक समारोह सम्पन्न हुआ। उसमे भी शाकाहार का महत्व रखा गया। 18 फरवरी को उसी समारोह के मच से श्री प भवरलाल शर्मा (मत्री, स्वायत्त शासन राजस्थान) ने पू उपाध्यायश्री की शाकाहार पर कार्य कर रही दृष्टि की सराहना की और गुरुवर की तत्सम्बधी हर योजना मे सक्रियता से हिस्सा लेने और उसे परिणाम देने का सकल्प किया। ❑

कहा जा सकता है कि प विमल कुमार सौंरया के प्रतिष्ठाचार्यत्व मे 15 से 20 फरवरी 97 के मध्य होने वाला पचकल्याणक–प्रतिष्ठा–समारोह, देश के अन्यान्य समारोहो के मध्य, अपना सार्थक आदर्श स्थापित कर सका था, जिसमे पूज्य गुरुवर ने प्रेरणा की थी कि देश के समस्त समाजसेवी, उद्योगपति, विद्वान और अन्य स्थापित किन्तु निर्विवाद–जन धर्म और अध्यात्म को सम्भालते हुए अपनी सम्पूर्ण शक्ति मानवता के विकास मे लगाये।

'सराक सम्मेलन' के लिए भी वही समय चयनित किया गया था, जिसमे बिहार और पश्चिम बगाल से अनेक सराक सोत्साह शामिल हुए थे, उनमे श्री दयाल चद जैन एव श्री गोवर्धन तडाईग्राम, श्री सीताराम, श्री शिवपद माझी, श्री भूतनाथ, श्री डा दिलीप माझी (पुरुलिया से) श्री सुधीर माझी, श्री राजेन्द्र नाथ, श्री रामेश्वर आर्य और श्री मदनमोहन (सिहभूमि से) के नाम उल्लेखनीय हैं।

इस सम्मेलन मे एक बडी समस्या सामने आई कि जिन सराको को हम नव जागृति के विहान मे "जैन" घोषित करते चल रहे हैं, उन्हे उनकी प्रान्तीय सरकारे अनुसूचित जाति से बेदखल कर उनकी नौकरी और धधो को चोट पहुँचा रही है। इस मसले पर पू ज्ञानसागर जी महाराज ने सम्बन्धित ट्रस्ट के ट्रस्टियो और 'सराक डवलपमेन्ट कमेटी' के सदस्यो को सकेत किया कि समस्या पर तुरन्त नियत्रण किया जावे, सबन्धित सरकारो से सम्पर्क किया जावे। अवसर विशेष पर वहाँ श्री साहू अशोक कुमार जैन उपस्थित थे, उन्होने गुत्थियो को सुलझा लेने का वचन देकर, समाज और सराको को निर्भय कर दिया।

उक्त तिथियो मे ही 'गौरक्षा' और शाकाहार सम्मेलन के औचित्य पर गुरुवर ने प्रकाश डाला था कि गोरक्षा ही देश–रक्षा है। यहॉ ही गुरुवर ने एक सभा मे स्पष्ट किया था कि तीर्थों की पावन–भूमि को पर्यटन–केन्द्रो मे अनुवादित न किया जावे। यहॉ ही पूज्यश्री ने समझाया था कि व्यसनो को बढाना अपने जीवन और परिवार को षडयत्रो मे डालने जैसा है। एक दिन उन्होने बतलाया था कि उदारता धारण करने से कलह अपने आप ठडी हो जाती है। तिजारा के विशाल सभा मडप मे ही गुरुवर ने सिद्ध किया था कि अहिसा और शाकाहार से सृष्टि के पर्यावरण की भी रक्षा होती है।

मुस्लिम बहुल क्षेत्र तिजारा की भूमि पर गुरुवर ने जाहिर किया था कि हिन्दू धर्म या मुस्लिम धर्म से पूर्व, जैनधर्म के औदार्य को समझे जो सम्पूर्ण समाजो, सम्प्रदायो, वर्णों, और वर्गों को, साथ–साथ रहकर निर्दोष–जीवन जीने का पाठ सिखाता है। इसी धरती पर गुरुवर ने कहा कि सम्पूर्ण मानवता की सार्थकता प्रेम (वात्सल्य) और परोपकार मे है।

विद्वत–गोष्ठी मे आये विद्वानो का मार्गदर्शन करते हुए गुरुवर ने यहाँ ही बतलाया था कि वर्तमान विद्वानो की पीढी अपने अर्जित शास्त्रीय ज्ञान को विज्ञान–सम्मत–शैली मे प्रस्तुत करे। तिजारा के विख्यात मदिर–परिसर मे ही, भरी सभा मे गुरुवर ने स्पष्ट किया था कि तप और सयम केवल सतो के लिये नही हैं, ये गृहस्थो के लिये भी पल–पल आवश्यक है।

तिजारा में ही पूज्य श्री ने प्रकाश प्रतिपादित किया था कि कुपात्र को दिया गया दान, दानदाता और समाज को कष्टो का कारण बन जाता है, अत सुपात्र को खोज कर ही दान देना चाहिए। ❑

तिजारा मे 'सराक–सम्मेलन' के अतिम क्षणो मे चौकाहातु के गुणी सराको द्वारा एक पत्र जारी किया गया था, जिसका शीर्षक था– 'चौकाहातु के सराको की पाती परमपूज्य उपाध्यायश्री ज्ञानसागर जी के नाम।'

शीर्षक से पढने वालो की धडकन बढ जाती थी, पर, पढने के बाद स्पष्ट होता था कि प्रिय भक्तो ने अपने आराध्य के चरणो मे भक्तिपूर्ण–शब्दो का गुलदस्ता चढा कर, प्रकारान्तर से उनका आभार ज्ञापित किया है। वह पत्र पठनीय है मननीय है। ❑

एक बात पर आप चौंक पड़ेगे–तिजारा जैसे तीर्थ क्षेत्र पर भी, बस्ती मे, मास विक्रय की दूकाने हैं, परम्परा से हैं, काफी समय से हैं। जब गुरुवर को ज्ञात हुआ तो आश्चर्य मे पड गये। उनके प्रवचन और दिनचर्या ने प्रथम दिन से ही क्राति लादी। फलत जैन समाज के अनुरोध पर समस्त मास विक्रेताओ ने पचकल्याणक की अवधि के दौरान अपनी दुकाने और कसाई–कर्म बद रखे। जय हो गुरुवर की। ❑

कसाई–कर्म केवल मास विक्रेता करते हो, ऐसा नही है। जैन लोग भी करते हैं, यह पृथक बात है कि वे पर्दे मे होते हैं। परन्तु गुरुवर की कृपाकोर से, पर्दे के भीतर होने वाले कसाईत्त्व पर भी, वहाँ तिजारा मे अकुश लग सका जब एक डाक्टर दम्पत्ति ने गुरुवर के समक्ष 'गर्भपात' के कार्य न करने का सकल्प लिया। मार्च का वह माह धन्य हो गया, लगा तिजारा मे गुरुवर 'महावीर की मानवता' का सचार कर रहे हैं।' वह एक मार्च 97 का पावन दिन था। ❑

4 मार्च का दिन भी विशिष्ट बना, जब तिजारा के पतितपावन वातास मे श्वेताम्बर समाज के वरिष्ठ सत श्री अमरेन्द्र मुनि जी पू उपाध्यायश्री के दर्शनार्थ पधारे। वे सुप्रसिद्ध सत श्री सुशील मुनि जी महाराज के प्रधान शिष्य हैं।

सत से सत मिले तो क्या होता है? धार्मिक वसत का वातावरण बनता है। अहिसा और करुणा की सुधि ली जाती है। ❑

गुरुवर की कृपा से, सार्वजनिक स्थानो पर शाकाहार के नीति वाक्य लिखने का निर्णय हो सका और कार्य गति प्राप्त कर सका। वहाँ ही अलवर जिला के अधिकाश ग्रामो–नगरो के सरपचो का सम्मेलन कराया गया जिसमे अहिसा, जीवदया, शाकाहार जैसे विषयो पर मार्ग–दर्शन किया गया गुरुवर द्वारा।

तिजारा मे ही पुस्तक **'मुक्ति पथ की ओर'** का बगला–भाषा मे अनुवाद करने का क्षण आया था और निर्णय लिया जा सका था। ❑

धर्मशाला–परिसर में चौका लगते हैं तिजारा मे, यह सभी यात्री जानते हैं, पर यह बात कोई–कोई ही जानता होगा कि गुरुवर धर्मशाला परिसर से बाहर, तिजारा की प्राचीन बस्ती मे भी आहार चर्या के लिए जाते थे और श्रावको को आहार–दान का गौरव मिलता था। ❑

इटली नगर के निवासियो को हम इटैलियन कहते हैं। कुछ इटैलियन दिल्ली आये हुए थे, जाहिर है कि वे श्रीमती सोनिया गाधी से भी मिले होगे। दिल्ली के पश्चात जब उन प्रवासियों ने तिजारा देखने का मन बनाया तो फर्र से तिजारा जा पहुँचे। मदिरजी के दर्शन किये। धर्मशाला भवनो को देखा, फिर समिति के लोगो से अनुरोध कर, पू. उपाध्यायश्री के दर्शनार्थ उनके कक्ष मे गये। गुरुवर ने उन्हे समय दिया बराबर। प्रवासियों ने गुरु चरणो के समक्ष श्रद्धा सहित नमन किया। आशीष पाया। फिर चर्चा। चर्चा के उपरान्त जब वापिस हुए तो उनकी सूची मे–मुनिदर्शन–का कार्य सर्वाधिक महत्वपूर्ण माना गया। भारत मे वे कई दिनों से थे, कई स्थान देखने गये थे, कई विशेष लोगो से मिले थे, किन्तु पू. ज्ञानसागर जी के दर्शनो से उन्हे जो सतोष हुआ था, उसका वर्णन वे धर्मशाला से लेकर पूरे रास्ते तक करते रहे। 'ऐसे सत तो कभी देखे नहीं?' थे वे–चकित, थे प्रभावित। गुरुदेव का चित्र शायद इसीलिए उन्होने सजो लिया था अपने पास। ❑

तिजारा का वार्षिक–मेला उस अचल मे तो प्रसिद्ध है ही, सम्पूर्ण देश मे भी प्रसिद्धि प्राप्त कर चुका है, प्रतिवर्ष नियत समय पर भरता है। इस वर्ष वह 15 मार्च 97 को आयोजित था और मुख्य आकर्षण था–गुरुचरणो की उपस्थिति। दूर–दराज बसे नगरो से लोग इसलिए पहुँच रहे थे कि 'गुरुवर के दर्शन भी' मिल जावेगे। क्या दूराचल के, क्या निकटाचल के, सहस्रो लोगो की विशाल जनमेदिनी सम्भाले नहीं सम्भल रही थी। सभी को दर्शन तो चाहिए ही थे, प्रवचन भी चाहिए थे। जय हो गुरुवर की। समिति के अनुरोध पर विशाल–मच पर गुरुवर के प्रभावनाकारी प्रवचन जब शुरु हो गये, तब शांत हुई जनता।

प्रवचनोपरात लोगो को चैन आया। कहे–हो गया मेला। आनद का मेला। ❑

मार्च मे ही, पचायतीराज प्रतिनिधि सम्मेलन का आयोजन रखा गया था, वह जिलास्तर पर था। जिले के अनेक अधिकारी आये और जिले की तहसीलो–कस्बो–गॉवो से ढाई हजार प्रतिनिधि। समिति की प्रार्थना पर और अधिकारियो के अनुरोध पर गुरुवर ने वहाँ प्रवचन प्रदान किये। वह अजैन–सज्जनो का विशाल आयोजन था जिसमे अनेको ने प्रथम बार दिगम्बर–सत के दर्शन किये थे और पहली ही बार प्रवचन सुने थे। गुरुवर की कृपा–कि–अनेक लोगो ने प्रवचन–श्रवण के पश्चात मास–मदिरा का त्याग किया और गुरुवर का जयघोष कर, घर की राह ली। घर पहुँचे तो उन्हे जीवन मे पहली बार आभास हुआ कि वे अपने हृदय को दूध से धोकर लौटे हैं। ❑

माह के अतिम दिवस, 31 मार्च 97 को गुरुवर ने केशलौंच किया। देखने वाले जैन–अजैन सज्जन प्रभावित हुए। दो माह हो चले थे गुरुवर को तिजारा मे, फलत अनेक अजैन व्यक्तित्व भी उनके श्री चरणो का आदर करने लगे थे। आदर का वह उदाहरण एक रोज स्पष्ट देखने मिल गया, जब वहाँ के अध्यक्ष श्री तुलाराम जी ने उच्चशिक्षा लेने वाले छात्रो के निमित्त 'शाकाहार प्रवर्तक ज्ञानसागर छात्रवृत्ति न्यास' की स्थापना की एव उपाध्यायश्री से आशीर्वाद लिया। ❑

दोपहर के डेढ बज गये थे। 2 अप्रैल 97 का दिनाक था। गुरुवर ने तिजारा तीर्थ के मूलनायक तीर्थंकर स्वामी चद्रप्रभु भगवान के दर्शन किये। किया लघु स्वाध्याय। फिर मंदिरजी से बाहर निकले तो उनके चरण रुके नही वे बढते चले गये। समिति, समाज, श्रावक उदास रह गये, गुरुवर ने ससघ विहार कर दिया। भक्तगण और व्यवस्था मे लगे लोग पीछे–पीछे चल पड़े, अपने आराध्य को विदाई देने।

मगर यह कैसी विदाई थी जिसका अत न आ रहा था, दो से चार फिर आठ कि. मी. रास्ता पार हो गया, कोई लौटने को तैयार नही। क्या जैन, क्या मुसलमान और क्या हिन्दू– सभी भक्त–गुरुवर के साथ, पथानुगामी बन चले जा रहे थे। वे कई हजार थे, और हाजिर ही रहना चाहते थे गुरुचरणो के समीप।

चलते चलते शाम हो गई, गुरुवर को विदाई देता हुआ सूर्य स्वत विदा लेकर अस्ताचल की ओर चला गया। तब गुरुवर ने रात्रि–विश्राम के लिए सकेत किया। साथ चल रहे श्रेष्ठ श्रावको ने बतलाया– 'गुरुवर, पहाडी–गली मे यहाँ एक शिवमदिरझिर नामक हिन्दू समाज का पावन स्थल है, अन्यत्र कुछ ठीक–ठाक नहीं प्रतीत होता।'

'–अन्यत्र क्यो? शिवमदिरझिर से अच्छी स्थली क्या हो सकती है? यहाँ उचित रहेगा।'

श्रावकों ने आनन फानन में वहाँ उत्तम व्यवस्था करली। एक विद्वान सोच रहा था– 'गुरुवर तो वैसे भी 'शिवनगरी' की राह चलते हैं। अत उन्हे यह शिवमदिरझिर क्यो न अच्छा लगेगा?'

रुक गये गुरुवर रात्रि विश्राम हेतु। फिर उन्होने आदेश दिया–साथ आये भक्तो को– 'लौटिये आप लोग, अपने निवासो को। गृहस्थ–धर्म के कर्त्तव्य पूर्ण कीजिए। नैतिक–पुरुषार्थ के साथ प्रभुनाम सदा याद रखिये।'

–हम लोग सुबह चले जावेगे।

–नही, सुबह तक तो बहुत कुछ हो जायेगा। लौटने वालो की सार्थकता तभी सफलीभूत मानी जाती है, जब वे 'शाम तक निज–घर पहुँच जावे।'

भक्तगण गुरुवर की द्विअर्थ–प्रधान शब्दावली ध्यान से सुन रहे थे, पर उत्तर देने का साहस न कर सके। आज्ञा मान कर लौट गये। मगर रास्ते भर सोचते रहे– 'हे गुरुवर ! आपकी तरह प्रहरी हमे मिलते रहे, समय पर जगाते रहे, तो हम इस भौतिक–घर की चिन्ता एक दिन अवश्य समाप्त कर सकेगे और 'निज–घर' की खोज मे आपके पथ का अनुसरण करेगे। प्रभु आप धन्य है, जो प्राण–प्राण को जगाते–चलाते रहते हैं।'

लौटने वाला समूह जब अर्धनिशा मे घर पहुँचा तो ज्ञात हुआ कि वे आना–जाना 30 कि मी कर चुकने के बाद भी थके नही हैं। कृपा गुरुवर की। ❑

सुबह पुन प्रस्थान। सामने था एक नगर फिरोजपुर झिरका। महासमिति के वरिष्ठ पदाधिकारी और देश के सर्वमान्य समाजसेवी श्री ताराचद जी प्रेमी यही निवास करते हैं। कोई उन्हे महान गीतकार कहता है तो कोई सगीतकार, पर उस दिन वे मात्र एक भक्त थे और अपने गुरुवर की अगवानी हेतु आकुल–व्याकुल होकर पथ निहार रहे थे।

हृदय–प्रधान अगवानी, पाद प्रक्षालन, आरती के पश्चात श्रीसघ ने नगर–प्रवेश किया। नगर वासियो को हार्दिक खुशी थी कि गुरुदेव नगर को समय दे रहे हैं, पर ।

बढ गये पहाडी ग्राम की ओर। जिला भरतपुर की गोद मे अवस्थित इस ग्राम की गोद मे मात्र पाँच सात घर हैं जैन–समाज के। पर उत्साह पाच हजार जैसा। गुरुवर को अपने ग्राम मे पाकर श्रावको मे 'कुछ' करने का भाव हो आया। सभी ने गुरुवर से मार्गदर्शन चाहा, तब उनके आशीष से वहाँ थोडे से समय में ही, जिनमंदिर और मानस्तभ का निर्माण पूर्ण किया गया और पूज्यश्री के पुनीत–सानिध्य मे विशाल पचकल्याणक–प्रतिष्ठा–समारोह आयोजित किया गया। सभी कार्य शांति से, निर्विघ्न सम्पन्न हुए, समाज की छवि उज्ज्वल बन गई।

वहाँ से विहार कर गुरुवर ने चरण–रज खिरायी– सीकरी, गोविन्दगढ़, बड़ौदामेव, अलाबड़ा, नौगाबू और रामगढ़ मे।

रामगढ से अलवर। वहाँ भी वही दृश्य। स्वागत। अगवानी। वह 15 अप्रैल 97 का दिन था, 16 को रामनवमी थी। समाज के अनुरोध पर गुरुवर ने मर्यादापुरुषोत्तम भगवान श्री रामचद्र पर प्रभावनाकारी प्रवचन प्रदान किये।

इसी नगर मे महावीर–जयती–समारोह का संयोग बना, 20 अप्रैल को। भारी उत्साह से समाज ने मनाया, गुरुवर ने सानिध्य दिया। सुबह और दोपहर प्रवचन का सौभाग्य पाया श्रावको ने।

एक माह से अधिक का समय प्रदान किया गुरुवर ने अलवर को। अनेक शहरो के लोग/भक्त वर्षायोग की प्रार्थना करने उनके समक्ष आये। सभी को मुस्कानों का अमृत मिला। अनेक कार्यक्रम सम्पन्न हुए।

27 मई 97 को गुरुवर ने अलवर से प्रस्थान कर दिया। अहिसा, जीव दया और शाकाहार की वाणी जन–जन के मन मे गूजती रही। ❑

चरण चले तो बगडा तिराहा, मीनूपुर, बड़ौदामेव, गोविदगढ़, सीकरी को स्पर्श अवश्य दिया, पर रुके–अतिशय क्षेत्र बोलखेडा पहाड पर। उसे अतिम केवली भगवान श्री जम्बूस्वामी की तपस्थली कहा जाता है। मई का अतिम दिन भी स्वगति को प्राप्त हो गया।

राजस्थान जहाँ अप्रैल मे ही मई जैसी गर्मी पडना शुरु हो जाती है, मई मे तो आग बरसती है, आग तपती प्रतीत होती है। दिन मे तपन और रात मे झुलसन, स्थायी वेदना के लिए प्रसिद्ध हैं वहाँ। फिर जब जून आता है तो ताप का सताप और अधिक बढ जाता है, घर भट्टियो की तरह तपने लगते हैं। ऐसी तीव्र तपन मे गुरुवर ने 1 जून को कामा नगर मे प्रवेश किया। भक्त जन हर्ष से नाच उठे। 'गुरुवर आये हैं, अब तो हम वर्षायोग के लिए मना लेवेगे।'[लम्बे वाक्य मे लगाये जाने वाले 'कामा' की तरह, हम पूज्य श्री की लम्बी–यात्रा मे कामा लगायेगे।]

गुरुवर ने वेदी–प्रतिष्ठा समारोह को सानिध्य प्रदान किया। शाकाहार–सम्मेलन मे प्रभावना की। श्रुत पचमी–पर्व भी धूमधाम से मनाया। 'धर्म और विज्ञान' सगोष्ठी को सानिध्य। मगर मगर गुरुवर ने मात्र ग्यारह दिन बाद, 12 जून 97 को वहाँ से भी प्रस्थान कर दिया। "धर्म–सरिता कब रुकी है? किस घाट रुकी है?" –लोग सोचते ही रह गये। कामा न लग पाया।

पुन बोलखेडा होकर, नगर पहाडी गये। वहाँ आगरा निवासी सुप्रसिद्ध समाजसेवी एव महासभा के वरिष्ठ पदाधिकारी श्री मदनलाल बैनाडा ने गुरुवर के दर्शन तो किए ही, साथ ही श्रीफल चरणो मे चढ़ाकर प्रार्थना की, कि उनके नगर आगरा मे वर्षायोग की स्थापना करने की दया करे।

अन्य भक्तो की तरह, बैनाडा जी को भी, गुरुवर से मुस्कान का अमृत मिला। मध्याह्न तत्व–चर्चा का सुयोग भी उन्होने पाया। गुरुवर ने वहाँ के अनेक जैनाजैन भक्तो से मासाहार, अडे, शराब, मधु और पान मसाला का त्याग कराया।

जय हो जैनधर्म की। जय हो गुरु के मर्म की।

गुरुवर का सानिध्य मिला सो कामा के मुख्य बाजार–मैदान मे सार्वजनिक–प्रवचन–सभा रखी गई। अन्य अनेक कार्यक्रम भी हुए, यथा–नवीन मदिर जी का शिलान्यास, महिलामडल का गठन, शाकाहार सम्मेलन, शिक्षा–अन्त्याक्षरी– प्रतियोगिता, प्रश्नमच आदि। शाकाहार–सम्मेलन मे आमत्रित राजस्थान के उद्योगमत्री श्री नसरुल खाँ साहब से उपाध्यायश्री ने मास–अडे–मदिरादि का त्याग कराया और विशाल सभा में उपस्थित सहस्रों श्रोताओ के समक्ष आदर्श–उदाहरण प्रस्तुत किया।

जून का तपता माह चल रहा था। गुरुवर कामा नगरी की तपती सडकों पर थे। उन्हे क्या डर तपन का, और क्या भय शीत का? वे तो उपसर्गजित हैं। परिषहजित।

मदिरजी के समीप स्थापित वसतिका में बैठे गुरुवर एक ग्रन्थ को देख रहे थे, तभी भरतपुर निवासी श्री उदयभान जैन उनके दर्शनार्थ पहुँचे। दर्शनोपरान्त गुरुवर से वार्ता का शुभवसर भी प्राप्त कर सके।

लौटे तो उनका सर्वांग गुरुमय हो गया, उनके मानस मे गहराई तक पूज्य ज्ञानसागर जी उतर गये थे। वे प्रथम–दर्शन में ही इतने प्रभावित हुए कि बार–बार दर्शनो का भाव मन मे रखने लगे। गुरुवर के प्रति उनके ठोस विचार इस तरह हैं– 'पूज्य गुरुवर रत्नत्रय से सज्जित हैं। युवापीढी के लिए आदर्श हैं। भौतिकता से आपूर्ण वर्तमान युग को धर्मविभाव होने से बचा रहे हैं। शाकाहार के प्रचार–प्रसार मे वे देशभर मे अग्रणी–सत हैं। सराकोद्धार की दिशा मे तो सर्वश्रेष्ठ हैं ही, वे साक्षात वात्सल्य–रत्नाकर हैं।' ❑

(ऐसे ही एक भक्त हैं श्री इन्द्र सेन जैन जो गुरुवर से प्रभावित होने के बाद, अपने विचार इस तरह ज्ञापित करते हैं–उनकी चर्या को देखकर मै उनका चरणचचरीक बन गया। वे आचरण के उतगशिखर हैं, ज्ञान के सागर हैं और वात्सल्य के निर्झर। उनके व्यक्तित्व मे दर्शन ज्ञान चरित्र की समवेत त्रिवेणी बहती है। कठोर साधना–निरत, सच्चे मूलाचार के धारक परमपूज्य उपाध्याय श्री 108 ज्ञानसागर जी महाराज के चरणो मे नमोस्तु) ❑

कामा से विहार कर गुरुवर सीकरी होते हुए, 17 अप्रैल को गोविदगढ जा पहुँचे। यहाँ अल्प समय मे विराट प्रभावना का कीर्तिमान गुरुवर ने बनाया था, किन्तु ग्रीष्म के तीव्र ताप ने गुरुवर के देहतत्व को ज्वर–ग्रस्त कर दिया था, काया श्लथ, लम्बा पथ, फिर भी विहार न होते स्थगत, वे थे सतत्। मात्र तीन दिन का समय दिया था वहाँ, पर तीन क्षण भी विश्राम न कर सके। वेदी–प्रतिष्ठा, शाकाहार–सम्मेलन, व्यसनमुक्ति–सभा, कलशारोहण, रथयात्रा जैसे व्यस्त कार्यक्रमो को सानिध्य प्रदान किया। समाज मे जो मतभेद चल रहे थे, उनका शमन किया। प्रेम, वात्सल्य और आदर से युक्त दिनचर्या का सबक दिया श्रावको को। धर्म निरपेक्षता और सर्व–धर्म–सम–भाव का चिन्तन दिया। फलत जैन–जन भर नही, आर्य–समाजी, मुस्लिम बिरादरी और गूजर–सम्प्रदाय के लोगो ने गुरुवर से वहाँ ही चातुर्मास करने की प्रार्थना की और चरणो मे श्रीफल चढाये। सभी समाज गुरुरग मे रग गये थे–श्वेदसिक्त–ग्रीष्म के उन कठोर दिनो मे। ❑

विहार हो गया श्रीसघ का। बडोदामेव, जालकी, भरतपुर की गर्मी ने गुरुवर से शीतलता पाई, अनेक कार्यक्रम सम्पन्न होते चले जा रहे थे हर नगर मे। फिर भरतपुर। वहाँ केन्द्रीय कारागार में प्रवचन दूसरे दिन श्वेताम्बर समाज के प्रसिद्ध तीर्थस्थल दादावाडी मे। उसके बाद धौरमुरी, अदावली और तालबद।

कहे, 20 जून 97 की तपन, शीश पर धारण किये हुए गुरुवर चलते रहे, धीरे–धीरे 4 जुलाई का तप्त प्रभाव आ गया, पर कही वर्षायोग स्थापना नही की। हर स्थान पर जैन और जैनतर समाजो ने मन–वचन– तन से प्रार्थना की थी, श्रीफलो के हिमालय रोज गुरुवर के चरणो मे तैयार हो जाते थे, किन्तु वे उसमे से ज्ञानगगा की तरह बहकर निकल जाते थे। सच है, हिमाच्छादित हिमालय–पर्वत भी तो गगाजी को बाध कर नही रख सका था ! ❑

15

‘एक संत : अपने ‘आप’ सा’

चरणों से उठी धूलि की गध मथुरा तक पहुँच गई। वहाँ के कार्यकर्ता श्री सुभाष पंकज को, कामा से श्री जयतिप्रसाद जी ने समाचार दिया था। गुरुवर को मथुरा के समीप पा पकज जी, पकज की तरह खिल उठे। फिर उन्होने अन्य सामाजिक कार्यकर्ताओ को फोन किये। पुत्र चि बाहुबली को और उसकी गाडी को पकज जी ने पकड लिया। देखते ही देखते–दो से चार हो गये, पकज जी, बाहुबली, भागचंद जी और अशोककुमार जी। वाहन कामा की ओर दौड गया। जय–गुरुदेव– आश्रम से कुछ और आगे चले कि सतप्रवर उपाध्यायश्री मिल गये, वे रास्ते के गॉव में एक वैष्णव–मदिर मे अवस्थित थे। चारो भक्तों ने दर्शन किये, श्रीफल चढाये। पर वे (भक्त) चकित थे क्योकि वहाँ पूर्व से ही अन्य भक्तगण गुरुवर के समक्ष हाजिर थे। वे सब अपने–अपने नगर के लिए प्रार्थना कर रहे थे। प्रार्थना के स्वरो मे मथुरा के भक्तो का स्वर भी मिल गया– हे महाराज, मथुरा को कृतार्थ करे।

गुरुवर ने सहज ही पूछ लिया–कितने घर है समाज के, वहाँ?

– जी महाराज दो सौ हैं।

– बस?

– पूज्यवर, घरो की सख्या न देखिये, मनो के भाव देखिये।

– क्या क्या भाव है मन मे?

– यही कि मथुरा मे वर्षायोग सम्पन्न करे आप ससघ।

– वर्षायोग?

– जी।

– वर्षायोग का तो नही किन्तु अतिशय क्षेत्र चौरासी (मथुरा) की वन्दना के भाव हमारे मन मे भी हैं।

मन और भाव सुनकर सभी भक्त खिलखिला पडे। ❑

मथुरा का उत्साही समाज गुरुवर को शोभायात्रा के साथ मथुरा मे प्रवेश कराता है। सारा नगर हृदय की भक्ति जयघोषो से प्रकट करता है। गुरुवर को मथुरा आये कुछ ही समय हुआ था कि लोगो ने एक वर्षायोग–समिति का गठन कर डाला। सेठ विजयकुमार जी अध्यक्ष, डा जयप्रकाश मत्री प सुभाषचद जैन 'पकज' स्वागताध्यक्ष।

गतिविधियॉ सघन हो पडी, हर कार्यकर्ता सावधानी से तैयारियो मे लग गया। जिसे जो कार्य बताया जाता है, आनन फानन मे पूरा कर लेता। तभी एक दिन पूज्य मुनिवर, वैराग्यसागर जी को ज्वर हो आया। देखते ही देखते तबियत काफी बिगड गई। वैद्यराज सेवा मे उपस्थित हुए, चिकित्सा चली, शीघ्र लाभ भी हो गया। मगर दूसरे दिन गुरुवर ने ससघ विहार कर दिया। सारा नगर उदास। चातुर्मास–समिति अपने गठन पर रो पडी।

गुरुवर चल दिये। अश्रुपूरित विदाई का दृश्य बन गया वहाँ की सडको पर। चलते–चलते शाम हो गई, गुरुवर ने रास्ते मे एक शिशुमदिर (स्कूल) मे रात्रि–विश्राम किया।

समिति के लोगो को विश्राम कहाँ, वे सारी रात फोन करते रहे– 'हाथ मे आया हीरा खोया जा रहा है' उनके स्वरो से यही जाहिर हो रहा था। भरतपुर, तिजारा, गोवर्धन, डीग, कोसी और कामा के श्रावको से दूरभाष पर वार्ताएँ की गई। दिल का दु"ख बतलाया गया।

सुबह उक्त नगरो के भक्त उपस्थित हो गये। सभी का दिल धडक रहा था– 'पूज्यश्री मथुरा मे वर्षायोग करे, अन्यथा फिर हमारे नगर मे।'

शिशु मदिर का पावन–परिसर उस दिन निमित्त बना, जब गुरुवर वहॉ से प्रस्थान कर चौरासी की ओर चल दिये। भक्तो का हृदय–कमल खिल उठा। हृदय के रुदन थम गये। ऑंखो के अश्रु मुस्कानो मे अनुवादित हो गये।

श्रीसघ चौरासी पहुँच गया, तब तक अलवर, मेरठ, पलवल, फरीदाबाद, दिल्ली, आगरा, फिरोजाबाद के श्रावक भी पहुँच गये। मध्याह्न विशाल सभा मे गुरुवर ने वर्षायोग स्थापना कि सुखद घोषणा कर दी। मथुरा समाज के भाग्य जाग गये। रोते चेहरे मुस्कराने लगे। चौरासी स्वत सिद्ध तीर्थ–क्षेत्र है, पर गुरुवर की घोषणा से उसका महत्व और अधिक हो गया उस क्षण। तीर्थराज पर तीर्थ–पुरुष का आसन लग गया। ❑

19 जुलाई 97 का दिन मथुरा नगर के लिए ऐतिहासिकता प्रदान कर रहा था। जिस मथुरा मे भगवान श्रीकृष्ण ने जन्म लेकर उसे धन्य किया था, जिस मथुरा मे अतिम केवली भगवान श्री जम्बूस्वामी ने तप चरण पूर्ण कर मानवाचरण को ऊँचाइयॉ प्रदान की थी, उस पावन स्थली पर परमपूज्य उपाध्यायश्री चातुर्मास की स्थापना कर रहे थे। श्री दिगम्बर सिद्धक्षेत्र चौरासी के विशाल मदिर–परिसर मे गुरुवर उपस्थित थे ससघ। सभा शुरु की गई, पहले जिनशासन के ध्वज का वदन फिर मगलाचरण और फिर समूचा कार्यक्रम। सभा मे मथुरावासी तो थे ही विशाल–सख्या मे, देश के इतर नगरो के श्रीमत भी उपस्थित हुए थे, दिल्ली, सहारनपुर, शाहदरा, आगरा, पहाडी, बडोदामेव, भरतपुर, कामा, मुजफ्फरनगर, अलवर आदि प्रमुख थे। विधि–विधान के साथ सराकोद्धारक सत, उपाध्याय शिरोमणि श्री ज्ञानसागर जी महाराज ने मुनिपुगव श्री वैराग्यसागर जी महाराज सहित वर्षायोग की स्थापना की। श्री सिद्धक्षेत्र चौरासी (मथुरा) के अध्यक्ष श्री विजयकुमार जैन ने मगलकलश स्थापित किया।

वर्षायोग की दिनचर्या मे गुरुवर पल–पल आत्मकल्याण के सूत्र और चिह्न जनमानस पर छोड रहे थे, लोग उनका तप और तपश्चर्या का भाव देख कर चकित हो जाते थे। आत्मतप के चलते कभी–कभी तन–सताप (ज्वरादि) भी भक्तो ने देखा–महसूसा, पर उनकी चर्या मे अतर नही आ पाया। प्रथम दिन से वर्षायोग के अतिम दिन तक, श्रावको ने उन्हे तप और ध्यान मे ही पाया। बीच बीच मे बडे कार्यक्रमो के निमित्त मार्गदर्शन प्रदान कर देते थे, मच पर सानिध्य भी प्रदान कर देते थे पर वे हर पल अतर्मुखी ही दीखते थे। अपने आत्मा और अपने आचरण पर ही सोचते–विचारते रहते थे। करते रहते थे आत्मचिन्तन।

जगकल्याण के निमित्त भी समय निकालते थे। फलत क्षेत्र पर चार माह तक धार्मिक कार्यक्रमो की श्रृखला बन गई थी, उनमे प्रमुख थे– शाकाहार निबध प्रतियोगिता, शाकाहार–दर्शन–सम्मेलन, महासभा अधिवेशन, जैन मिलन अधिवेशन, महासमिति अधिवेशन, सराक प्रशिक्षण–शिविर, विद्वत–सगोष्ठी, चौबीस–मूर्ति शिलान्यास समारोह। उसी क्रम मे हुआ था वहॉ– "प महेन्द्रकुमार न्यायाचार्य स्मृति ग्रथ" का विमोचन समारोह।

आत्म–चितन और जगकल्याण के सूत्रों के मध्य, मथुरा मे, गुरुवर का 'विचारक का स्वरूप' भी जनमानस के समक्ष पुष्ट छवि मे, सामने आया, फलत वहॉ के क्षेत्रीय और राष्ट्रस्तरीय समाचार–पत्र नित्य गुरुवर के विचारो से सजे–सजे मिलते थे। कुछ अखबार तो अपने महत्वपूर्ण–सम्पादकीय का शुभारम्भ गुरुवर की चर्चा से ही करते थे। मथुरा–अचल मे अधिक पढे जाने वाले अखबारो मे दैनिक अमर उजाला, दैनिक आज, दैनिक जागरण, युवा–वागमय, मारुति वदन, जगत टाइम्स, नवभारत टाइम्स आदि प्रमुख हैं। जैन पत्रो मे भी

जैन गजट, जैन सदेश और तीर्थंकर सहित अनेक नाम हैं, जो देश के विभिन्न शहरो से प्रकाशित होकर मथुरा पहुँचते हैं।

सच तो यह है कि मथुरा के अखबारो मे गुरुवर के विचार छापने की होड़ सी लग गई थी। फलत नित्य ही किसी न किसी अखबार मे गुरुवर के सचित्र–समाचार सगौरव पढने को मिल रहे थे जैनाजैन लोगो को। स्थिति यह हो गई कि लोगो/विद्वानो को गुरुवर मे स्थापित एक 'महानदार्शनिक,' उनके प्रवचन सुनने आमत्रित करने लगा। क्या जैन, क्या अजैन, सभी जन कुछ पहले से आ जाते और श्रोता–समूह मे, अग्रिम–पक्ति मे, स्थान लेने का मन बनाये रहते। जो पहले आ जाता, उसे अवसर भी मिल जाता था बराबर।

प्रवचन भी सामान्य से परे, अतिविशिष्ट होते थे जिन्हे सम्पादकगण श्रेष्ठ शीर्षको के साथ प्रकाशित कर अपने सुधी–पाठको को सुबह–सुबह, गद्‌गद् कर देते थे। 'दैनिक अमर उजाला' ने गुरुवर का समाचार, 22 जुलाई को, इस शीर्षक से छापा– 'तनाव से बचने के लिए बारह भावनाओ का चिन्तन जरूरी' तो 'दैनिक आज' ने दूसरे दिन शीर्षक दिया– 'मानव सकल्प–विकल्पो की उलझन से बेचैन'। कुछ समाचार–पत्रो के पत्रकार/सवाददाता गुरुवर से वार्ता, आयोजित कर प्रकाशित कर, रहे थे तो कुछ सस्मरण। कहे चार माह तक क्रम बना रहा। हर अखबार गुरुवर के शब्दो से जैन–दर्शन की वाणी झंकृत करता रहा।

अक्टूबर माह मे, 30–10–97 को, ठीक महावीर निर्वाणोत्सव की पूजा के पश्चात, गुरुवर ने ससघ चातुर्मास–विस्थापना विधिसहित की और आचरण को चरण देने की घोषणा कर दी।

2 नवम्बर 97 को पिच्छिका–परिवर्तन समारोह सम्पन्न हुआ। गुरुवर को नूतन पीछी भेट की गई पुरानी पीछी एक भाग्यशाली व्रती श्रावक को प्राप्त हुई। ❑

3 नवम्बर 97 को गुरुवर ने विहार कर दिया मथुरा से। श्रावक तो श्रावक, वहाँ के स्थानीय सतजन तक गुरुवियोग की बेला मे सिसकिया न सम्भाल सके। चार माह तक सब को हँसाने वाले गुरुवर, उस दिन सब को रुलाकर प्रस्थान कर रहे थे। भारी जनसमूह गुरुवर, के साथ चल रहा था। हर आख गीली थी। मथुरा से चलकर जुलूस डींगग्राम जा पहुँचा, कोई लौटने को तैयार नही, तब गुरुवर ने समझाया–निर्मोही गुरु के भक्तो मे यह मोह क्या सूचना दे रहा है? मोह क्यो? क्या मेरे जाने के बाद मथुरा की सडके बन्द हो जावेगी? क्या यह सघ दोबारा नहीं आयेगा?

अतिम वाक्य सुनते ही रोते चेहरे फिर विहँस गये। लोगो के अधर कॉपने लगे, आवाज निकली– "कब लौटोगे गुरुवर?" किसी कठ ने पूछा– "महाराजश्री पुन कब पधारोगे?"

भक्त अश्रु का घूँट पीकर रह गये। गुरुवर चले गये। ❑

मथुरा–चातुर्मास के समय जैनो के साथ साथ अजैनभक्तो की सख्या भी काफी बढती दीख रही थी। क्या पढ, क्या अनपढ़, सभी गुरुवर को सराहते रहते थे। उन्ही अजैन विद्वानो मे से अनेक ने, बाद में, गुरुवर को लेकर काफी लेख, सस्मरण, भजन आदि लिखे थे। वहाँ के प्रसिद्ध हिन्दू विद्वान श्री मूलचद गुप्ता 'रामायणी जी' ने तो लेखनी के माध्यम से अपना हृदय उतार कर धर दिया था। वे लिखते हैं– जब से महाराजश्री का सानिध्य मिला है मुझमे नव–चितन आ गया है। जाने क्या होता है कि कल तक ध्यान मे मुझे भगवान शकर जी दिखते थे, पर अब ये साक्षात तीर्थंकर, गुरुवर ज्ञानसागर जी पद्मासन मे दिखाई देते हैं। मैं उन्हे अपनी हृदय–पीठ पर बैठा पाता हूँ और मेरी जिव्हा उनके समक्ष उच्चार करती है–

गुरुर्ब्रह्मा, गुरुर्विष्णु गुरुर्देवो महेश्वरा।
गुरु साक्षात् परमब्रह्म, तस्मै श्री गुरवे नम।।

सच, मुझे अपने जीवन मे ऐसे अकिंचन–सन्तो का ससर्ग नही मिला। वे सच्चे त्यागी और तपस्वी हैं, उन्हे कोई राग–द्वेष नही है। महाराजश्री के प्रवचनो और दिनचर्या के कारण मेरे निजी जीवन मे बहुत सुधार–सशोधन हुआ है। मैंने गुरुवर से प्रभावित होकर जो व्रतादि अगीकार किये है, उनका जीवनपर्यन्त पालन करूँगा। आज; इस समय, वे मुझसे दूर है, पर जब मैं ध्यान लगाता हू तो वे मुझे मेरे समीप ही पद्मासन लगाए हुए दीख जाते है, कृष्ण के जमाने मे भी तो यही होता था इस मथुरा मे , भक्त / गोपी / गोपिया जब भी याद करते थे, भगवान कृष्ण इसी तरह झलक दिखा देते थे। जब यशोदा माता वृन्दावन मे कृष्ण का स्मरण करती थी तब कृष्ण वहॉ, उनके ध्यान मे, इसी तरह पहुँचते रहे होगे। मुझे गुरुवर की कल्याणी–वाणी हर पल कानो मे सुनाई देती है। मै गोपियो की तरह उनकी प्रतीक्षा करता हूँ, वे कृष्ण की तरह अवश्य मेरे अतर्मन मे, मेरे मथुरा मे, आते रहेगे। मै बार बार उनकी बलिहारी करता हूँ, क्योकि वर्षायोग के माहो मे, उन्होने मुझे गोविन्द से मिलाने–मिलने–मिलजाने का पथ दर्शाया था। वे आज मुझे गोविन्द जैसे महत्वपूर्ण ही प्रतीत हो रहे है–

गुरुगोविन्द दोनो खडे, काके लागूँ पाय।
बलिहारी गुरु आप की, गोविन्द दियो मिलाय।।

सच हम तो मथुरा मे रहते हुए भी गोविन्द के वास्तविक स्वरूप को भूलते जा रहे थे, गुरुवर ने कृपा कर हम सभी को पुन उनका नव–भक्त बना दिया। ❑

जैसा कि मैंने पूर्व मे निवेदन किया है कि पूज्य गुरुवर तो जन्मजात दार्शनिक है, किन्तु उनकी दार्शनिकता का परिपक्व–बिम्ब मथुरा–चातुर्मास मे ही श्रावको को समझने / देखने मिला था। हुआ यह कि अनेक बुद्धिजीवी वहॉ उनसे प्रभावित हो रहे थे–नित्य नित्य। कोई जैन तो कोई अजैन। यह सत्य है कि साधु का स्वर जब अध्यात्म के धरातल पर मुखरित होता है तो वह किसी जाति विशेष के हिताहित का कारण नही बनता, बल्कि समग्र मानवता के कल्याण के सूत्र प्रकट करता है। उपाध्यायश्री की वाणी कुछ ऐसा ही अतिशय कर रही थी वहॉ। फलत एक विद्वान–डा मुरारी लाल अग्रवाल, सम्पादक दैनिक जगत टाइम्स, मथुरा ने सौ प्रश्नो की माला उनके चरणो मे रखदी और उनके समुचित–समीचीन उत्तरो की प्रतीक्षा करने लगे। वे कलम–कागज और मित्रो को लेकर चाहे जब आ जाते और अपने प्रश्नो के उत्तर प्राप्त करने लगते। गुरुवर उनकी समन्वयवादी मेधा को पहिचान चुके थे। अत उनके वैविध्यपूर्ण एक शतक प्रश्नो के आदर्श और प्राजल समाधान उन्होने प्रदान कर दिये। समाधान प्राप्त कर डा मुरारी लाल बहुत प्रसन्न हुए। बाद मे उन्होने श्री महीपाल जैन मुजफ्फरनगर के आर्थिक सहयोग से, उनका एक सकलन प्रकाशित कराया 'जीवन रस' नाम से। मात्र 40 पृष्ठो की इस पुस्तिका मे पू ज्ञानसागर जी ने ऐसे ऐसे विचार प्रदान कर दिये है जो बडे–बडे ग्रन्थो के अवगाहन के बाद प्राप्त होते है। यह पुस्तक हर वर्ष–वर्षायोग के समय–सहस्रो की सख्या मे अनेक वर्षो तक प्रकाशित कराई जावे और देश के हर अचल तक पहुँचाई जावे, तब इसका लाभ जनमानस को मिलेगा और वह जैन सत के समन्वयकारी–सर्वहितकारी–सर्वकल्याणकारी स्वरूप के दर्शन कर सकेगा। कहे, इस पुस्तक के बहाने, गुरुवर अदृश्य रूप से, जन–जन के समीप बने रहेगे, उनसे चर्चा करेगे और उनकी शकाओ के समाधान देते रहेगे।

पुस्तक के प्रथम पृष्ठ पर लिखा है– पू उपाध्यायश्री की ज्ञानगंगा कभी भी पथो, जातियों या सम्प्रदायो की परिधि मे सिमट कर नहीं बहती, वह बिना किसी भेदभाव के, पृथक जाति, पृथक धर्म और पृथक आस्था वालो के मध्य करुणाधारा के रूप मे प्रवाहित होती है और अहिसा तथा विश्वशाति के अकुरो पर अजाने ही सुधा सिचन करती रहती है।

गुरूवर के शब्द–पुस्तक के विषय मे जानकारी देते है– 'डा मुरारीलाल अग्रवाल वर्षायोग–मथुरा के समय, कुछ जिज्ञासाएँ लेकर आये जिनमे धर्म एव अध्यात्म के स्वरूप को समझने, सामाजिक सद्भाव को विकसित करने और ईश्वर–भक्ति हृदयस्थ करने के भाव दृष्टव्य थे। उनकी जिज्ञासाएँ मानवीय कमजोरियो के मध्य ईश्वरीय–सत्ता की कृपा पाने की दिशा मे थी। उनका जिज्ञासा शतक, 'जीवन रस' बनकर अन्यान्य लोगो की जिज्ञासाएँ शात करेगा, विश्वास है। उनका कल्याण हो। शुभाशीष।'

(बाद के वर्षो मे यह पुस्तक "ज्वलत प्रश्न शीतल समाधान" नाम से भी प्रकाशित हुई है) ❑

कथा चल रही थी, गुरुवर मथुरा से चलकर डीग पहुँच गये थे। रास्ते मे जगविख्यात गोवर्धन में समय दिया था। डीग मे गुरुवर पॉच दिन रुके और जैन–आदोलनो, हा विविध–कार्यक्रमो को सानिध्य प्रदान किया था। कार्यक्रम वही थे जो गत दो दशको से वे कर रहे थे, केवल स्थान और श्रोता अन्य होते थे। यही होती थी श्रेष्ठ उपलब्धि श्रोताओ–श्रावको को।

तनावमुक्त–जीवन और शाकाहार पर सगोष्ठी उनका प्रेरक विषय है, वह यहाँ भी साकार हो सका। विद्यालय मे जाना हुआ, छात्रो और शिक्षको के बीच, अत वहॉ उनके उपयोग के विषय पर प्रवचन किया– 'शिक्षा एव शिक्षको का दायित्व।' फिर विहार।

डीग के आगे, पास ही, एक बस्ती है, उसका नाम है 'नगर'। आप आश्चर्य करेगे कि जिसका नाम 'नगर' है वह बस्ती अभी 90% गॉव ही दिखाई देती है। पर क्या करे, नाम तो 'नगर' है। तो कहना होगा कि 'नगर' मे, गुरुवर के पहुँचते ही, गॉव से ऊपर, नगर जैसा वातावरण बन गया था। वहॉ पूरी बस्ती मे जैनो के 4 घर है और एक मदिर। मदिर काफी प्राचीन और जीर्णशीर्ण था। पूज्यश्री के मगलमय–आगमन से श्रावको को नई–दिशा मिली, फलत उस मदिर का जीर्णोद्धार कराया गया और एक के स्थान पर उसे दो मजिल का स्वरूप प्रदान किया गया। बलिहारी गुरुदेव की। ❑

चरण पुन चचल हो पडे। चले। बडोदामेव रुके। वहॉ के सरपच मुसलमान बधु हैं। गुरुवर की अगवानी के लिए समाज के साथ, वे पूरी पचायत लेकर पहुँच गये। भावभीनी आरती की दिगम्बर–देव की। फिर नगर प्रवेश। वहॉ 19 नवम्बर 97 से प्रतिष्ठा–समारोह किया जाना था, भक्तगण अभिलाषित सानिध्य पा गये। कहने को बडोदामेव गॉव ही है, पर गुरुवर के कार्यक्रमो से वह विशाल नगर बन गया था। वहॉ ही गुरुवर ने केशलौच किया था। वहॉ ही बगाल और बिहार से आये 25 सराक बधुओ को गुरुवर ने समय दिया था और देश के लोगो के समक्ष उनका परिचय ताजा कर दिया था। अखिल भारतीय जैन सघ मथुरा का अधिवेशन, महासमिति का अधिवेशन, युवा परिषद राजस्थान का परिचय–सम्मेलन, सर्वधर्म सम्मेलन, प्रादेशिक स्तर पर मेधावी छात्रो का सम्मान। ये तो हुए दिन के कार्यक्रम, रात मे भजन, सगीत, कविसम्मेलन आदि सम्पन्न हुए थे। आप ही विचार कर ले, उस लघु नगर के आयोजन पर अतिम दिवस हेलीकाफ्टर से पुष्पवृष्टि भी। हो गया न एक गॉव–पूरा शहर? ❑

वहॉ से चले तो कुछ और अधिक बडा गॉव मिला–लक्ष्मणगढ। वह तहसील मुख्यालय जो था। वहॉ भी मेधावी छात्रो का सम्मान समारोह।

विहार पर ठड की सघनता रोज बढ़ती जा रही थी। ठड को ठिठी बताकर गुरुवर टिटीपुर पहुँचे, वहाँ से गये–कठूमर। वहाँ कतिपय सजातीय भाईयो मे जातीय–विवाद घर कर गया था। गुरुवर ने उनमें मैत्री और एकता का सचार किया। फलत समाज का आपसी– खानपान शुरु हो गया। विरोधी बन गये मित्र। कठूमर बन गया सुलह का चित्र।

पहले लक्ष्मणगढ गये ही थे, फलत रामगढ क्यो छोडते! सो फिर विहार। चरण खेड़ली, गोविंदगढ, रामगढ, बहादुरगढ, कोटकाशम होते हुए रेवाडी पहुँचे। वहाँ पूज्यश्री के सानिध्य मे 25 जैन संस्थानो की दिशाबोधक–बैठक हुई, जिससे अनेक कार्यो को राह प्राप्त हुई। हुआ वहाँ औषधालय का शुभारम्भ।

अब यह न पूछिये कि रास्ते के ग्रामो मे क्या किया? अरे भाई, वही किया जो हर नगर–गॉव–शहर मे करते हैं। आन्दोलन। हा, सिद्धान्त–प्रधान–कार्यक्रम। ❑

17 दिसम्बर को रेवाडी पहुँच, गुरुवर ने सन 1997 की विदाई इसी नगर मे की थी और 1998 की अगवानी भी की, मगर जनवरी माह के प्रारभिक दिनो मे तेज शीत मे ही, वहाँ से विहार कर दिया था। एक मायने मे करीब एक पखवारे का समय दिया था रेवाडी को, उतने मे हर वर्ग के लिए, हर उम्र के लिए और हर व्यक्ति के लिए प्रेरक कार्यक्रमो को सानिध्य प्रदान कर धार्मिक सस्कारो की अलख जगाई थी। लोगो मे एकता और भाईचारा के शिथिल होते सूत्र सुदृढ किये थे। कार्यक्रम वे ही थे जो हर जगह होते रहे हैं, पर प्रभावना नूतन थी, जीवत थी। ❑

कडकती सर्दी मे गुरुवर रेवाडी से धारुहेडा गये, रुके नहीं, सिहोर पहुँचे, वहाँ भी न रुके। श्रावक चिंतित कि तीव्र ठड मे कुछ हो न जावे ! फिर चले तो श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र कासनजी के दर्शन किये, मगर रुके नहीं, चल दिये। 7 जनवरी 98 को गुडगॉव की सीमा मे चरण पहुँच गये।

कार्यक्रमो की झडी लग गई। 'तनाव मुक्त जीवन' पर प्रभावनाकारी प्रवचन। फिर सैकडो वकीलो के मध्य प्रवचन। फिर कैदियो के बीच प्रवचन। मगर गुरुवर यहाँ भी अधिक समय न दे सके। कदम बढ गये, अब वे दिल्ली की ओर थे। महानगर दिल्ली। देश की राजधानी दिल्ली। समृद्ध लोगो की बडी नगरी दिल्ली। देश के दिल का दर्द दलने वाली दिल्ली।

अनेक कालौनियो के लोग गुरुवर की अगवानी के लिए निकल पडे। दिल्ली से 15 कि मी दूर घिटोली उपनगर मे बीस हजार श्रावक एकत्र हो गये। सभी ने मिल कर (सदा की तरह) भावभीनी अगवानी की। चरण–प्रक्षाल। आरती। फिर विशाल शोभायात्रा के साथ गुरुवर वहाँ से चले तो अहिसा स्थल महरौली गये। वहाँ श्रावको की प्रार्थना पर एक विशाल प्रवचन सभा मे प्रवचन भी किये, जिसमे हिंसा की भर्त्सना करते हुए अहिसा धर्म का गौरव विवेचित किया। पशु–हत्या पर अकुश लगाने का स्वर बुलन्द किया।

महरौली के बाद, गुरुवर ने ग्रीनपार्क, आर के पुरम्, भोगल, दरियागज, चादनी चौक, भोलानाथनगर, विवेक विहार, सूर्य विहार, आदि कालोनियो के श्री मदिरजी के दर्शन किये, श्रावको की सुधि ली और उत्तर प्रदेश की ओर बढ गये। साहिबाबाद, गाजियाबाद, कविनगर की धूल को स्पर्श प्रदान कर, नवतीर्थ श्री ऋषभाचलजी गये। वहाँ ममता की मूर्ति ब्र मॉ कौशल जी अवस्थित थी, वे गुरुवर की अगवानी हेतु श्रावको के समूह सहित उपस्थित हुईं।

सन् 1998 को शुरु हुए 24 दिन बीत गये थे, गुरुवर गाजियाबाद की गोद मे स्थापित ऋषभाचल वर्धमानपुरम् सुनाम स्थल पर थे। जहाँ 'श्री ऋषभदेव फाउन्डेशन' द्वारा गुरुवर का सानिध्य लाभ उठाते हुए 'भगवान ऋषभदेव सगोष्ठी' की आयोजना सुविचारित थी। तिथिया थी–25 से 27 जनवरी 98, देश

के अनेक विद्वान और उद्योगपति उपस्थित हुए और तीन दिनो तक प्राच्य जैन विद्या से सम्बधित–पक्षो पर विचार देते रहे। गुरुवर ने एक श्रेष्ठ–श्रोता की तरह सभी के विचार हर सत्र मे, स्वत उपस्थित होकर सुने। हरेक सत्र के अत मे उन्होने अपने विमर्श रख कर परिणामकारी सूत्र भी दिये। ❑

कुछ ही समय बाद दिल्ली की धर्मप्राण जनता के कारण पुन राजधानी की ओर लौटना पड़ा। वापसी मे फिर वे ही उपनगर मिले–पहले साहिबाबाद। वहाँ एक प्रौढ–दम्पत्ति ने गुरुवर से प्रार्थना कर यावज्जीवन ब्रह्मचर्यव्रत लिया और श्रावको के मध्य प्रेरणा का सचार किया। फिर गुरुवर पहुँचे गांधीनगर के शाति–मुहल्ला स्थित मदिर मे। वहाँ अखिल भारतीय शास्त्री परिषद के अधिवेशन को सानिध्य दिया, दी दिशाये। पचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव सम्पन्न कराया जो 1 फरवरी से 6 फरवरी 98 तक हुआ था। सयोग कुछ ऐसा बना कि उसी अवधि मे पूज्य आर्यिका ज्ञानमती माता जी (गुजराज) अपने दस सदस्यीय सघ सहित पधारी और गुरुवर के दर्शन किये। चर्चा कीं, वात्सल्य–मिलन हुआ।

शीतकाल का समय था। दिल्ली शहर की तुलना, लोग, हिमालय की ठड से कर रहे थे। हर आदमी एक या दो नही, तीन तीन, चार चार ऊनी वस्त्र पहिन कर निकलते थे। जब घरो को लौटते तो हीटर/सिगडी/अंगीठी से चिपका रहना चाहते थे। ऐसे ही ठड से जम रहे दिन मे श्री मदनमोहन बजाज (वैज्ञानिक) सुबह–सुबह गुरुवर के दर्शनार्थ जा पहुँचे, वे गाधीनगर स्थित बसतिका मे थे। श्री बजाज और उनके मित्र बनियाने, स्वेटरे और कोट आदि से लदे थे, हाथो–पैरो मे ऊनी मोजे पहिने हुए थे।

वसतिका के समीप पहुँचते ही, उन्होने जूते उतारे तो हाथ के दस्ताने भी उतार दिये। कानो पर ऊनी टोपा थे, वे यथावत रहने दिये। नाक मे अनावश्यक द्रव सिर्र–सिर्र हो रहा था ठड के कारण, उसे वही छिनका, हाथ धोये और सी–सी करते बसतिका मे प्रवेश कर गये। वहाँ दिगम्बर–देव– पू उपाध्यायश्री को एक काष्ठ–पाटे पर बैठा देखा। न चटाइयाँ बिछी थी, न बगल से लगाई गई थी।

ठड की भीषणता पर गुरुवर की तपश्चर्या की कट्टरता देखकर श्री बजाज चकित हो गये। क्षण भर को अपने वैज्ञानिक होने पर लजा गये। विज्ञान से प्राप्त साधनो से परे, सत–साधना को देखते रह गये। सोचने लगे–ये कैसे सत हैं? जहाँ शीतलता से सम्पूर्ण दिल्ली जमा जा रहा है, जहाँ हीटर और ऊनी वस्त्रो के बगैर घटे भर भी नही रहा जा सकता, वहाँ ये दिगम्बरत्व धारण कर त्याग, अहिसा, अपरिग्रह, ब्रह्मचर्य और आकिन्चन्य का सम्मिलित–पाठ पढ़ा रहे हैं। विश्वशाति की भावना भर रहे हैं। कैसे सह लेते हैं देह पर उपसर्ग? हमे रास्ते मे कोहरा हरा रहा था, ये तो ठड और कोहरा को भी हरा रहे हैं।

श्री बजाज और उनके मित्र गुरुवर के साहस से आत्मा की गहराई तक प्रभावित हुए। उन्होंने गुरुवर के चरणो मे बार बार नमोस्तु किया, धरती पर बैठ कर कुछ देर चर्चा करने का सौभाग्य भी पाया।

जब लौटे तो तपपूत पू उपाध्यायश्री की छवि उनके हृदय–मन मे समा गई–भीषण ठड मे भी महायोगी अपने योग–ध्यान मे रत हैं, न ठड से कुछ लेना, न गर्मी को कुछ देना।

उन्हे लौटते समय, कुछ समय पहले का, एक दृश्य याद हो आया, वह गाधीनगर का ही है। जब वहाँ एक कार्यक्रम के चलते गुरुवर के मंच पर श्रद्धेय शकराचार्य जी को, समिति ने आमत्रित किया था। वहाँ पू ज्ञानसागर जी का काष्ठासन सबसे ऊँचा रखा गया था, उनसे कुछ नीचा था मुनिवर वैराग्यसागर जी का, और उनसे नीचे था श्री शकराचार्य जी का। व्यवस्था बहुत अच्छी थी। फिर भी उपाध्यायश्री ने शकराचार्य जी को अपने समीप बैठ जाने का विनयपूर्वक अनुरोध किया। मगर जब शकराचार्य जी ने उपाध्यायश्री के दर्शन किये तो वे उनकी दिगम्बर–छवि मे जाने क्या क्या तपस्यायें–ऋद्धियाँ–सिद्धियाँ बाँच

बैठे कि समीप बैठने का आत्मीय–साहस न जुटा सके और विनीतभाव से नीचे सिहासन पर ही बैठ जाना उपयुक्त समझा। सारे दर्शक/श्रोता देखते रह गये।

श्री बजाज को विश्वास हुआ कि जिस तरह उपाध्यायश्री की तपस्याओ ने मुझे प्रभावित किया है, उसी तरह शकराचार्य जी को भी किया।

'राष्ट्र की अखण्डता मे भारतीय सस्कृति का योगदान' विषय पर गुरुवर ने दिल्ली के सुविख्यात रामलीला मैदान मे सार्वजनिक प्रवचन कर महती प्रभावना की। उसी दिन भोलानाथ नगर स्थित जैन मदिर मे 'अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन सराक–ट्रस्ट' की बैठक को भी गुरुवर ने समय दिया, दिया मार्गदर्शन।

फरवरी के दिन कब व्यतीत हो गये, दिल्लीवासियो को पता ही न चला। मार्च लग गया। धर्म प्रधान कार्यक्रमो की सघनता मे अतर न आया। 'कुतुबमीनार और महरौली क्षेत्र मे 'जैन पुरातत्व' विषयक सगोष्ठी की गई थी, अनेक पुरातत्वविद पहुँचे, गुरुवर ने परिणामकारी सानिध्य प्रदान किया।

कार्यक्रम खत्म न हुए, मार्च खत्म हो गया। अप्रैल शुरु। दिल्ली के शकरपुर स्थित श्री जैसवाल दिगम्बर जैन मदिर के परिसर मे 9 अप्रैल 98 को भगवान महावीर स्वामी की जयती मनाई गई। उसी दिवस श्रावको ने पू उपाध्यायश्री का दसवा मुनिदीक्षा दिवस समारोह भी धूमधाम से मनाया।

कहे, चार माह मे गुरुवर ने दिल्ली महानगर की हर छोटी–बडी कालोनी को समय प्रदान किया और अहिसा तथा शाकाहार–सयम की दिशा मे श्रावको को प्रशस्त–पथ प्रदान किया। ❑

फिर हुआ दिल्ली से मेरठ विहार। रास्ते मे सजयनगर, मुरादनगर, परतापुर आदि को भी समय दिया। 5 मई 98 को गुरुवर मेरठ। पूर्व की तरह पुन वहाँ श्रावको मे उत्साह का समुद्र उमड पडा। अगवानी, पादप्रक्षाल, आरती और शोभायात्रा।

दूसरे ही दिन से गुरुवर की आत्मप्रधानी क्रियाये और आत्मतप मेरठवासियो को देखने के क्षण मिल गये। फिर मिले अनेक कार्यक्रम। तपते हुए मेरठ मे कल्पद्रुम महामडल विधान शुरु हुआ, गुरुवर के सानिध्य की शीतलता ने मौसम के ताप की न चलने दी, विधान की क्रियाएँ सोत्साह चली। बडे नगरो की रथयात्राएँ भी बडी होती हैं, किन्तु जहाँ स्वत पूज्यवर सानिध्य प्रदान करते हैं वहाँ विशालताएँ और गरिमाएँ नूतन इतिहास बनाती हैं। 11 मई 98 को वह मेरठ मे भी हुआ।

गुरुवर जिस श्रेष्ठ आत्मिक धुन (लय) से धार्मिक कार्य सम्पन्न कराते हैं, उसी से बौद्धिक और अन्य भी। फलत मेरठ की पत्रकार वार्ता, बुद्धिजीवियो की सगोष्ठी, महिला सम्मेलन, कभी भुलाए नही जा सकते। फिर पजाबीपुरा कालोनी मे त्रिदिवसीय विद्वतगोष्ठी आदि।

गुरुवर का आभामडल कुछ ऐसा है कि जिस विद्वान, कलाकार, पडित सगीतकार को बुलाया जाता है, खिचे चले आते हैं। जिन्हे नही बुलाया जाता वे भी सविनय, उनके चरण सानिध्य का लाभ लेने उपस्थित होते रहते है।

उधर मेरठ मे 28 मई से 2 जून 98 तक 'विद्वत शिक्षण–प्रशिक्षण–शिविर' की प्रेरक आयोजना रखी गई जिसमे गुरुवर के सानिध्य मे देश के अनेक विद्वानो, श्रेष्ठियो और सामान्य–श्रावको ने बढ़–चढ कर भाग लिया। शिविर से भारी धर्म प्रभावना हुई। लोगो को समझ मे आया कि भावपूर्ण धर्म में जब ज्ञान भी जुड़ जाता है तो उसका आत्मानद कई गुणा बढ जाता है।

हर गाँव–शहर की तरह मेरठवासियो को भी चरण–वियोग का सताप सहना पड़ा, गुरुवर ससघ प्रस्थान कर गये। ❑

फिर वही क्रम–रास्ते के हर शहर और गाँव को उपकृत करते हुए श्रीसघ के चरण आचरण की स्थापना करते बढते रहे। वे थे अब भगवान चद्रप्रभु के अतिशयकारी तीर्थक्षेत्र तिजारा की ओर। गुरु–आगमन का समाचार, उनसे पहले वहाँ पहुँच गया। फलत जैन–अजैन भक्त समितियो के कार्यकर्ता और अनेक प्रभुत्वशाली–जन नगर–सीमा पर उनकी अगवानी के लिए उपस्थित हो गये। तिजारा तो ठीक, दिल्ली, मेरठ, अलवर, जयपुर, आगरा, रेवाडी, शाहपुर, बुढाना, बिनौली आदि के भक्तगण भी ससमूह वहाँ पहुँच चुके थे, सभी ने सोत्साह अगवानी की। नाचे। पाद–प्रक्षाल। आरती। उसके बाद विशाल शोभा यात्रा के साथ, हाँ बाजेगाजे धूमधाम के साथ, गुरुवर को मदिरजी लाये। 6 जुलाई 98 का वह दिन, पावन दिवस बन गया, जब गुरुवर पचीसो नगरो को छोडकर, तिजारा मे प्रवेश कर रहे थे।

"कभी भक्तो को ऐसा सुयोग मिलेगा" वे भक्त स्वत नही जानते थे। गुरुवर ने विशाल समारोह मे विधिपूर्वक चातुर्मास की स्थापना की ससघ। वह 9 जुलाई 98 का ऐतिहासिक–दिवस था। ❑

16

‘न्यारे -श्रमण
प्यारे -श्रमण’

सूर्य की किरणें घोषित करती हैं कि पथ पर प्रकाश फैल चुका है। सतो के चलने–विचरने से जीव हिंसा नहीं होगी, तब सघ निकलता है शौच–क्रिया के लिए। साथ होते हैं सभी उम्र के भक्तगण। भक्तों की भक्ति जोर मारती रहती है अत कभी दस बीस तो कभी सौ–पचास तक का समूह 'मैदान' कराने के निमित्त से पथानुगामी बन हर्षित होता है। लौटकर श्रीजी की वदना। फिर कभी कथाएँ, कभी कार्यक्रम। उसके पश्चात शुद्धि, देववदन और आहार–चर्या।

आहार–चर्या के समय श्रावक–श्राविकाएँ जो भक्ति–प्रधान दृश्य रचते हैं, वे, उन जैसे, सारे ससार मे अन्यत्र नही देखने को मिलते। दिगम्बर–सत का यह सबसे बड़ा प्रभाव है जो आज तक क्षीण नहीं हुआ है। आहार के पश्चात, श्रावको की टोलियाँ श्रद्धापूर्वक सतो को वसतिका तक पहुँचाने जाती हैं। रास्ते भर जयघोष करते हैं, कुछ टोलियाँ तो वाद्ययत्रो (जैन–बैन्ड ग्रूप) की झकार के साथ लौटती हैं, उत्साह देखते ही बनता है।

आहारो के बाद श्रावकगण एक दूसरे के भाग्य को सराहते हैं, जिसे आहार देने मिल गये–वह भाग्यशाली। दूसरा कहता है–जिसे देखने मिल गये–वह भी भाग्यशाली। तीसरा अपनी प्यास इस तरह बुझाता है– 'जो न दे पाया, न देख पाया, वह भी भाग्यशाली।' कोई पूछ बैठता है–कैसे?

–अरे भाई, जिसे दोनो कार्यो का सयोग नही मिला, वह दिन भर पश्चाताप करता है, अपने भाग्य को, तो कभी कर्म को, कोसता है। सो जो साफ दिल से पछताता है, उसके भाग्य भी जागने लगते हैं और आगामी दिनो मे वह महाभाग्यशाली बनता है।

सत आहार के पश्चात वसतिका मे पहुँचते हैं, तब कुछ मिनट बाद शुरु हो जाता है–प्रतिक्रमण। उसके बाद मध्याह्न तक सामायिक। फिर तत्व–चर्चा, शका–समाधान। समाधन की परम्परा विचित्र है, कभी–कभी सामान्य सा दीखने वाला श्रावक कठिन शकाएँ उडेल देता है गुरुवर के समक्ष, तो कभी स्थापित विद्वान छोटी–मोटी शका प्रकट कर समाधान चाहते हैं। गुरुवर दोनो स्थितियो मे गम्भीर रहते है और तत्त्व–सापेक्ष–सत्य प्रस्तुत कर, सामने वालो का हर्ष/ज्ञान बढा देते हैं। चर्चा या प्रश्नोत्तरी चलते चलते मध्य दिवस के पश्चात वाला–आपरान्हिक प्रतिक्रमण–करते हैं, फिर साध्यकालीन देव–वन्दना।

साध्यकालीन देव वदना के पश्चात सामूहिक–स्वाध्याय फिर पुन सामायिक। और उसके पश्चात रात्रि विश्राम। रात्रि विश्राम के पूर्व कभी कोई भक्त, वैयावृत्ति के लिए पहुँचते हैं तो वे पुण्यार्जित कर लौटते हैं, कभी–कभी गुरुवर मना कर देते हैं। निशा के विहार के तुरन्त बाद, बडे–भोर उठते हैं ओर पुन नित्य की तरह मगलप्रभात का शुभारम्भ प्रत्याख्यान से करते हैं।

आजकल उक्त सभी क्रियाएँ घड़ी के कॉटो के साथ चलती हैं, मगर जहॉ नहीं होती, वहॉ उसकी प्रतीक्षा नहीं की जाती, तब्र , तब मेरे कथन पर पाठको को आश्चर्य होगा कि क्रियाएँ घडी की मोहताज नहीं रहतीं, वे घडी की तरह स्वविवेक से समय से चलती हैं, चलती रहती हैं।

वर्षायोग शहर में हो चाहे गॉव मे या तीर्थक्षेत्र पर, दैनदिन–क्रियाएँ कभी नही बदलतीं। सन 1988 मे किए गये प्रथम वर्षायोग से आज तक वे नित्य हैं, निरतर हैं, शाश्वत हैं। उन्हे सबसे पहले सागर नगर के प्रबुद्ध समाज ने देखा–समझा था, फिर देखा बड़ागॉव–समाज ने। फिर शाहपुर, गया, राची, तडाई, पेटरवार और पुन बडागॉव के लोगो को देखने का सौभाग्य मिला था, उसके बाद द्वितीय सयोग शाहपुर को ही मिला था, मिला फिर चौरासी–मथुरा को और फिर सन 1998 मे मिल रहा था तिजारा को।

कहते हैं क्षेत्र के उद्‌भव–काल से अब तक देखा जावे तो तिजारा मे वह प्रथम वर्षयोग था किसी दिगम्बर सत का। जाहिर है कि वहॉ का समाज धर्म तो जानता था पर सतो के समय–बद्ध कार्य और क्रियाएँ नहीं। मगर धर्मोत्साही जनो को सीखने समझने मे विलम्ब न लगा, मार्गदर्शन प्राप्त कर लिया था–ब्र बहिनो से। हा, विदुषी दीदी अनिता जी और मजुला जी से।

गुरुवर के प्रवचन पृथक ही प्रभावना करने लगे। फलत शिथिल या अनभिज्ञ या अलाल–सभी किस्म के श्रावको और श्राविकाओ मे, युवक–युवतियो और बच्चो मे–श्री जिनेन्द्र अभिषेक और पूजन के भाव दृढ हुए, जिनके पूर्व से थे, वे शेष लोगो के पथ–प्रेरक बने। कहे कुछ ही दिनो मे तिजारावासी धर्मसमर्पित–श्रावक का श्रेष्ठ रूप और स्वभाव प्राप्त कर लेने मे सफल हो गये।

उनकी, उस–नियम–उपनियम–सयम और यम के प्रति, आई जागृति का लाभ उन्हे पर्युषण–पर्व से ही मिलने लगा, जब 27 अगस्त 98 को 'उत्तम क्षमा धर्म' के दिन वहॉ के श्रावक, श्रावक कम, तपस्वी अधिक दीख रहे थे। न किसी को घर की चिन्ता थी, न दुकान की, न आफिस की, न खेत–खलियान की, सभी धर्म का उत्सव प्राप्त करने मदिरजी और सत वसतिकाओ के समीप, धर्म–कर्म मे मस्त (व्यस्त) रहते थे।

क्षेत्र पर पर्व/पर्युषणपर्व के समय बाहर से आने वालो की सख्या बढ जाती है प्रतिवर्ष, किन्तु उस वर्ष ? उस वर्ष तो भगवान चद्रप्रभु के लाडले–भक्त उपाध्यायश्री भी वहॉ अवस्थित थे। अत यात्रियो की सख्या कई गुणा अधिक रहती थी रोज। प्रभावना ही कुछ ऐसी है उस पावन दरबार की और पतित पावन सत की।

मुख्य मदिरजी मे, भगवान चद्रप्रभु की वेदी के समक्ष निर्मित विशाल कक्ष (हाल) मे पूजा करने वालो का समूह इतना विराट हो जाता था कि जगह कम पडती लगने लगती थी।

जब गुरुवर के प्रवचन होते थे तब जनमेदिनी का जमाव देखते ही बनता था। पैर धरने जगह न रह जाती, लोग तो शीश धरना चाहते थे।

सुबह गुरुवर, मध्यान्ह गुरुवर और रात के आमत्रित विद्वान प्रवचन करते थे। धर्मधारा का प्रवाह पलपल बना रहता था वहॉ। उस वर्ष 'दश दिन' का पर्व विस्तार सा पा गया था जो 'चार माह का पर्व' बन गया था। सच हर दिन वहॉ पर्व था।

फिर आया श्रावण शुक्ल दशमी का चमत्कारी–दिवस, जो उस वर्ष 30 अगस्त 98 को था। इतिहास गवाह है कि सन् 1956 मे, भगवान चद्रप्रभु की अतिशयकारी मूर्ति यहॉ तिजारा मे जब निकली थी, तभी से प्रतिवर्ष उक्त दिवस पर विशेष कार्यक्रम आयोजित किए जाते है। इस वर्ष तो गुरुवर वहॉ विराजित थे। अत हर कार्यक्रम की प्रभावना स्वय ही बढ गई थी। सर्वाधिक आनदवर्धक, धर्मवर्धक रही–चद्रप्रभु भगवान की सामूहिक पूजा। सानिध्य गुरुवर का। भक्त झूम–झूम गये। नाच–नाच उठे। आनद का सागर बन गया था नगर तिजारा। फिर अन्य अनेक धार्मिक कार्यक्रम दिन भर चले।

चाह कर भी हर कार्यक्रम का विवरण कथा–पुस्तक मे नही दिया जा सकता। अत उनके नाम तो गिनाये जा सकते हैं कि वर्षायोग के प्रमुख कार्यक्रम क्या थे, कौन थे?

एक था–समाधिस्थ आचार्य सुमतिसागर जी की पुण्यतिथि का आयोजन। गुरुवर ज्ञानसागर जिस वर्ष जहॉ भी यह कार्यक्रम करते हैं, वे श्रावको के समक्ष गुरुऋण से मुक्त होने के कुछ सूत्र देते हैं कि गुरु की कृपा का मूल्य तो नही किया जा सकता है, पर उन्हे नमन निवेदित कर, उनका स्मरण कर, उनकी शिक्षाओ को ताजा किया जा सकता है।

फिर दिगम्बर जैन महासमिति के अधिवेशन को सानिध्य प्रदान कर महान उद्योगपतियों–समाजसेवियो मे–समाज सेवा करते रहने के सूत्र पुष्ट किये। अखिल भारतीय दिगम्बर जैन सराक ट्रस्ट की बैठक को सानिध्य प्रदान कर वहॉ–समाजसेवियों को सराको की सेवा में जुटे रहने के भाव प्रगाढ किये, योजनाएँ प्रदान कीं। रक्षाबधन पर्व पर साधु सस्था के उपसर्ग की बाते दोहराईं और इतिहास खोल कर रखा कि सत समाज प्रारम्भ काल से उपसर्ग विजेता रहा है, रहेगा। फिर मुकुट–सप्तमी पर विराट कार्यक्रम। समाधिस्थ आचार्य शातिसागर जी (छाणी) का दीक्षा दिवस समरोह–गुरुणागुरु को श्रध्दाजलि। क्षमावाणी–पर्व पर 'क्षमा का अविरल प्रवाह मनो मे होता रहे' की प्रेरणा जगाई।

अब यह तो सम्पूर्ण भारतवर्ष जानने लगा है कि गुरुवर शाकाहार–दर्शन के श्रेष्ठ प्रेरक क्या, प्रवर्तक हैं। उनकी कृपा से तिजारा मे भी जिला स्तरीय–शाकाहार–निबन्ध एव भाषण–प्रतियोगिता सम्पन्न हुई जिसमे विभिन्न नगरो से आये एक हजार छह सौ छात्रो ने भाग लिया था। उन्हे प्राप्तांको के आधार पर पुरस्कार भी दिये गये थे।

25 अक्टूबर से 5 नवम्बर 98 तक सर्वतोभद्र महामडल विधान एव विश्वशाति महायज्ञ की धार्मिक आयोजना। रथयात्रा। सब कुछ अद्‌भुत। हर विषय पर गुरुवर के प्रवचन। प्रभावना। इसी अवधि मे– 'प जुगल किशोर मुख्तार व्यक्तित्व एव कृतित्व' पर विद्वानो की विचार गोष्ठी। कहते हैं कि सात सत्र चले थे, 48 आगत विद्वानो ने अपने नये–पुराने लेखो का वाचन किया था, यो कुल 60 पधारे थे। हर सत्र मे गुरुवर ने सुलझाव पूर्ण विचार रख कर वर्तमान विद्वानो मे से पुन कोई 'जुगलकिशोर' बने–आशीषवर्षण किया था।

कहे कि सन 1998 के प्रथम माह मे एक विद्वतगोष्ठी गाजियाबाद मे सम्पन्न हुई थी तो वर्ष के अतिम माहो मे, यह गोष्ठी श्री अतिशय क्षेत्र तिजारा मे सम्पन्न हुई। उसकी तिथिया थी–30 अक्टूबर से 1 नवम्बर 98 तक, थी वह भी त्रिदिवसीय।

जैन समाज की अमर रचना 'मेरी भावना' के रचयिता प मुख्तार साहब श्री रवीन्द्र नाथ टैगोर के समकालीन थे। टैगौर जी को अग्रेजो के प्रयास से 'विश्व कवि' का श्रेष्ठ विशेषण/उपाधि हासिल हुए थे। उनका गीत 'जन–गण–मन' बाद मे, राष्ट्रगीत बन कर देशवासियो के समक्ष आया था। प जुगल किशोर जी मुख्तार का सौभाग्य कम न था, यो उन्हे किसी अग्रेज–आफीसर का समर्थन प्राप्त न था, न ही उनने अपने पावन बैठकखाने मे किसी अग्रेज के पैर आने दिये थे, किन्तु उनकी रचना 'मेरी भावना' राष्ट्रगीत से ऊपर 'आत्मगीत' बन कर उभरी थी। टैगौर जी का गीत सार्वजनिक स्थलो, सभाओ, स्कूल–कालेजो, विधान सभाओं और ससद तक गया और उनकी दीवारो के मध्य गूजता रहा, किन्तु मुख्तार साहब का तत्कालीन गीत 'मेरी भावना' ऊँचाइयो का कीर्तिमान स्थापित करते हुए मदिरो के गर्भगृह तक चला गया और आदमी के हृदयकक्ष की दीवारो में गूजता रहा। गूज रहा है। जैन समाज के लाडले पूत प जुगलकिशोर जी श्री टैगौर के समकालीन भर नहीं थे, वे उनके 'सम' भी थे। उसी महान जैन कवि की सराहना मे थी यह तिजारा की गोष्ठी।

इसमे भी गुरुवर की कृपा से जो साहित्यकार और विद्वान उपस्थित हुए थे, वे प मुख्तार साहब पर, समय–सापेक्ष–चर्चा कर, जैन साहित्यकार को विश्व स्तर का साहित्यकार घोषित कर सके थे। मुख्तार साहब ऐसे कवि–साहित्यकार थे जिन्हें श्री टैगोर से पहले 'नोबल पुरस्कार' भी प्रदान किया जा सकता था, किन्तु जैसा कि मैंनें कहा–उनका परिचय गौराग–महाप्रभुओ से नहीं था। अस्तु, मेरा तर्क यह नहीं है कि श्री टैगोर

जी को नोबल पुरस्कार क्यो मिला, तर्क तो यह है कि प मुख्तार को भी क्यो नहीं मिला? न्याय करने वाले हाथ यदि न्याय करते, नेत्र यदि न्याय देखते तो दोनों कवियो के मध्य 'नोबल पुरस्कार' बराबरी से बाँटा जा सकता था किन्तु ।

पू मुख्तार साहब (युगवीर) की स्मृति मे तिजारा की गोष्ठी ने श्रेष्ठ प्रभाव छोड़ा था जनमानस पर, कृपा थी परमपूज्य गुरुदेव महाराज की। जैन समाज का एक छोटा सा बालक भी गौरव से कह सकता है कि हमारे समाज मे भी एक 'जगत कवि' ने जन्म लिया था। वह यह भी कह सकता है कि हमारे समाज मे भी "जगत गुरु" हैं। दर्शन करना है तो आये पूज्य उपाध्यायश्री के समक्ष।

उसी क्रम मे तत्कालीन वरिष्ठ इतिहास और पुरातत्व–वेत्ता श्री कस्तूरचद जी कासलीवाल का राष्ट्रस्तर पर सम्मान किया गया और उनके यश मे प्रकाशित अभिनदन ग्रन्थ का लोकार्पण किया गया। कृपा गुरुवर की। सानिध्य गुरुवर का।

देखते–देखते ही चातुर्मास–निष्ठापना की तिथि आ चुकी थी। अत 3 नवम्बर 98 को उसे विधि–विधान से सम्पन्न किया गया।

'गुरुवर तिजारा से प्रस्थान करेगे' सब के मन मे शका घर कर गई। मगर व्यस्थापको ने कार्य–विस्तारना बद न किया, 8 एव 9 नवम्बर 98 को भारतीय जैन डाक्टर्स फोरम ने दो दिवसीय सगोष्ठी रखी, गुरुवर को सानिध्य प्रदान करने के लिये, विनय पूर्वक प्रार्थना की। कार्यक्रम छोटा–मोटा नही था, देश भर से 466 डाक्टर एकत्र हुए थे। डाक्टरो ने अपने आलेख सुनाये फिर गुरुवर की दृष्टि जाननी चाही, चाहा मार्गदर्शन। विषय था 'जैन धर्म का वैज्ञानिक आधार'। सयोजक थे डा डी सी जैन। आर्थिक सहयोग किया था श्री सेठ गजराज गगवाल दिल्ली ने।

9 नवम्बर 98 को, श्रुत सवर्द्धन पुरस्कार प्राप्त पॉच विद्वानो को उक्त मच से ही सम्मानित किया गया था।

उक्त तिथि को ही 'प्रशममूर्ति आचार्य शातिसागर जी (छाणी) स्मृति ग्रन्थ' का लोकार्पण किया गया, मुख्य अतिथि थे–बिहार प्रान्त के राज्यपाल श्री सुदरसिह जी भडारी। गुरुवर ने गुरुणागुरु के विषय मे श्रेष्ठ प्रसग प्रस्तुत किये अपने प्रवचन मे। राज्यपाल महोदय सुनकर चकित, जब लौटने लगे तो गुरुवर से पुन आशीष लिया और याद दिलाया कि बिहार के श्रावक आपकी रास्ता देखते हैं। अध्यक्ष थे श्रीमान साहू रमेशचद जैन।

क्रम थमा न, कार्यक्रमो का। 12 और 13 नवम्बर 98 को 'शल्य चिकित्सा शिविर' का महत्वपूर्ण आयोजन रखा गया जो सम्पूर्ण देश मे अपने ढग का प्रथम था। सैकडो लोग शल्य क्रिया कराने आये तो हजारो देखने। कहते हैं उस दिन 20 हजार लोग एकत्र हुए थे समीपी अचल से। डाक्टरो ने हर प्रकार के आपरेशन किये और रोगियो को लाभ दिया। कुछ डाक्टर तो हृदय और मस्तिष्क रोग से पीडित भाइयो का आपरेशन करने का हौसला बनाने लगे, सभी साधन वहॉं स्थल पर मौजूद भी थे, किन्तु गुरुवर ने आज्ञा नही दी।

फिर 29 नवम्बर 98 को श्रीसघ का पिच्छिका–परिवर्तन–समारोह हुआ। वर्षायोग में सर्वाधिक त्यागो की ओर उन्मुख श्रावक श्री शिखरचद जैन ने पुरानी पिच्छी प्राप्त करने का सौभाग्य पाया, नूतन पिच्छिका गुरुवर को भेट करने का सुयोग मिला श्री बनारसीदास जी को।

उसी दिन तीन विशेष पुस्तकों–'धर्मफल सिद्धान्त', 'डुबकी लगाओ मोती पाओ', एव 'जग जा मेरे लाल' नामक पुस्तको का लोकार्पण किया गया। वे, गुरुवर के आशीष से स्थापित 'प्राच्य श्रमण भारती मुजफ्फरनगर' द्वारा प्रकाशित कर वहाँ लाई गई थीं।

9 दिसम्बर 98 को गुरुवर के चरण–सानिध्य मे, समाज द्वारा, 'उपाध्याय श्री ज्ञानसागर–जैन साहित्य सदन' का शुभारम्भ किया गया।

सच, तिजारा स्थान ही ऐसा है कि वहाँ रोज बडे–बडे धार्मिक–कार्यक्रम किये जावें और गुरुवर का सानिध्य ले लिया जावे, परन्तु गुरुवर के समक्ष देश के अन्य स्थानों के भी श्रावक थे, जहाँ उनकी भरपूर जरूरत थी। अत 10 दिसम्बर 98 को पुन तिजारावासियो को उदास छोडकर गुरुवर ने विहार कर दिया। पुन शब्द इस लिए लिखा कि अप्रैल 97 मे भी गुरुवर के विहार के समय श्रावको के मन दुखी हुए थे, नेत्र बहे थे और एक भारी सूनापन पूरी बस्ती को निगल गया था।

सन 1998 में भी वही दृश्य बना जो अप्रैल 97 मे बना था, सैकडो भक्त गुरुवर को पहुँचाने उनके पीछे–पीछे चल पडे। मगर कुछ ही मील चलने के पश्चात गुरुवर ने सभी को लौट जाने की आज्ञा दे दी। सब एक–दूसरे का मुँह देखने लगे, किन्तु गुरुवर का सकेत देख सभी को लौटना पडा। लौटने वालो को एक तसल्ली अवश्य थी कि गुरुवर अकेले नहीं हैं। आगामी नगरो के श्रावक उनके साथ यात्रा पर हैं। कुछ को छोड, सभी को तिजारा वापिस होना पड़ा। 'पडा' इसलिए लिख रहा हू कि उस क्षण स्वेच्छा से कोई नही लौटना चाहता था।

नगर आते गये, गुरुवर बढते गये। एक नगर के मुहाने पर शोभायात्रा बनती तो दूसरे के बाद विदाई हो जाती, गुरुवर केवल रात्रि विश्राम के लिए रुकते और पुन यात्रा पर हो लेते। साथ मे पूरा सघ–पू मुनि वैराग्यसागर जी, ब्र दीदी अनीता जी, ब्र मजुला जी और ब्र भैया।

देखते ही देखते, श्रीसघ फिरोजपुर झिरका, बसवा, राजगढ को पार कर विराटनगर जा पहुँचा। दिनाक 18 दिसम्बर 98।

हमारे देश की परम्परा हर गाँव–शहर मे जीवित है, वह यहाँ भी देखने मिली। विराटनगर का समाज भारी उत्साह के साथ नगर–सीमा से भी आगे, कहे नगर से दस कि मी दूर तक जा पहुँचा था अपने 'परमपूज्य' की अगवानी करने।

श्रीसघ को पाकर समूह ने उन्हे आँखो मे पुतलियो की तरह कर मध्य मे कर लिया और शोभायात्रा के साथ नगर प्रवेश कराया। समूचे नगर को सुनाया गया था सदेश अपने 'प्रिय–अतिथि' के आगमन के उपलक्ष्य मे। स्वागत–द्वार मुस्कराकर स्वागत कर रहे थे। झडिया फर फर कर नमोस्तु कर रही थीं। देखते ही देखते श्री दिगम्बर जैन पचायती मदिर विराटनगर का परिसर सुहागन की गोद की तरह भर गया।

भक्तो की विनय पर गुरुवर ने प्रवचन का सौभाग्य प्रदान किया। सारा नगर मत्रमुग्ध सा सुनता रहा। जो परिसर मे बैठे थे वे तो सुन ही रहे थे, जिन्हे परिसर मे स्थान न मिल पाया थ, वे बाहर खड़े–खड़े सुन रहे थे। जैन सुन रहे थे, अजैन सुन रहे थे। जो दुकानो पर थे वे दुकान से सुन रहे थे, जो सड़क पर था, वह वहीं खडा होकर सुन रहा था।

जितनी देर तक गुरुवर बोले, उतनी देर को जैसे विराटनगर की अन्य क्रियाएँ रुक गई हों, केवल सुनने और देखने की क्रियाएँ रह गई थीं। कोई शब्द सुनना चाहता था अपने गुरु का, तो कोई एक झलक निहारना चाह रहा था गुरु को।

गुरुवर ने वही–वही शब्द कहे, जो वे दशको से कहते आ रहे हैं। उनका हर शब्द एक शास्त्र बनकर श्रोताओ के मानस मे गहराई तक जा रहा था। धर्म, भक्ति, आचरण, चर्या, शाकाहार, अहिसा, जीवदया आदि पर मार्गदर्शन किया गुरुवर ने समाज का। (उनका प्रवचन यहाँ कथा–सगत नहीं माना जा सकेगा, अत वह नही दिया जा रहा है। प्रवचन तो पृथक से ही पढने होगे, उनसे अनेक पुस्तके सज्जित कर, प्रकाशित भी की जा चुकी हैं।)

गुरुवर ने ससघ विराटनगर स्थित प्राचीन नसियाजी के दर्शन किये। वह धर्मस्थल 400 वर्ष पुराना कहा जाता है। जो अब जीर्णशीर्ण हो पड़ा है, गुरुवर चितित हो पडे उसकी जीर्णता देख कर।

[उपाध्यायश्री के आशीष से अब वह प्राचीन नसिया भव्य रूप प्राप्त कर चुकी है।]

विराटनगर मे गुरुवर का विराट–दर्शन जन–जन अपने नेत्रो से हृदयस्थ कर रहा था। वैसे परिदृश्य मे जब फतेपुर–शेखावटी की विदुषी बहिन डा सरोज जैन वहाँ दर्शनार्थ पहुँची तो गुरु–छवि निहारती रह गई। दर्शन–पान के पश्चात कुछ तत्व चर्चार्थ गुरुवर से समय प्राप्त कर सकी। वह भद्र महिला उस दिन/उस क्षण गुरुवर से ऐसी प्रभावित हुई कि उनकी अनुभूति पाठको तक न जावे तो पाठको के साथ न्याय न हो सकेगा। वे अपने अनुभव को इस तरह शब्द देती हैं–"दिसम्बर माह (98) मे प्रथम बार प्रात स्मरणीय परमपूज्य सत उपाध्याय श्री 108 ज्ञानसागर जी महाराज के दर्शनो का सुसयोग प्राप्त हुआ। मेरा जीवन धन्य हो गया। ऐसे वात्सल्यमूर्ति क्रातिकारी साधक की अनवरत साधना देख कर। उस एक दिवसीय यात्रा मे मुझे पूज्यश्री से विभिन विषयो पर चर्चा करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। मेरे हृदय–पटल पर उनकी दिव्य प्रयोजना ने अमिट छाप छोडी। श्रमण–सस्कृति के उस महान सत के सयम, त्याग, तपस्या देख कर चकित हुई थी तो सौम्य स्मितमुद्रा, ललाट पर साधना की जगमगाहट, मुखमण्डल पर प्रशाति का अजस्र प्रवाह और हृदय तक शाति सम्प्रेषण करने वाली मुस्कराहट मेरे मन मे भक्ति और श्रद्धा की नवधारा प्रवाहित कर गई, जिससे मेरे सोच को नये आयाम मिले।"

अधिक समय वहाँ भी न दिया गुरुवर ने और विहार कर दिया। फलत सिन्धुफार्म, ठाणीगुजरात, मनोहरपुरा, चन्दोसीग्राम, जाटवाड़ी, चौमू, इटावा, घोबालई, गोविन्दगढ, कालाडेरा, बड़ीडूँगरी, रेनवाल, फुलेरा आदि नगरो के प्रागण भी धन्य हो सके। चलते चलते ही सन 1998 विदा ले गया। वर्ष 1999 का मगलप्रभात आकर गुरुवर के चरण चूम चला गया। गुरुवर का श्रीसघ फिर अतिशय क्षेत्र नरैनाजी मे रुका। यह जयपुर महानगर के समीप ही है। उस समय तक नूतन वर्ष के सात दिन गुरुवर के पाद–प्रक्षाल कर जा चुके थे। नरैना मे–8 जनवरी 99 का सुनहरा–दिवस उनकी आगवानी करने का सौभाग्य प्राप्त कर सका था।

गुरुवर का विहार निरतर था। सच भी है, जब पावन सलिला गगाजी आज तक क्षण भर को नहीं रुक सकीं कही, तो ज्ञानगगा भी क्यो रुकती, उसकी नियति पृथक तो नहीं है?

नरैना के बाद नावाँ नगर, मारौठ (नागौर) आदि नगर गये। वहाँ भी लोगो से मास–मदिरा–मधु का त्याग कराया। श्रावक लोगो को अतिरिक्त सयम प्रदान किये। अहिंसा का प्रचार किया और सदा की तरह धर्म–सस्कार–साहित्य की ज्योति प्रखर कर आगे बढ़ गये।

अगला पड़ाव था सीकर। वहाँ के सुश्रावक श्री भजनलाल सेठी ने अपने (निजी) स्थान पर श्रीजी का विशाल मदिर–निर्माण कराया था। पचकल्याणक–प्रतिष्ठा–समारोह को सानिध्य प्रदान करने कई दिनों से गुरुवर से प्रार्थना कर रहे थे। तब लगा–उनकी प्रार्थना स्वीकृत हो गई है। समय शीतकाल का था। पूज्यश्री

ने 25 जनवरी 99 को सीकर–नगर मे प्रवेश किया ससघ। उस रोज नगर की सजावट देखने योग्य थी। नागरिको का उत्साह श्लाघनीय था। दिनाक 31 जनवरी से 5 फरवरी 99 तक, गुरुवर की छत्रछाया मे प्रतिष्ठा–महोत्सव धूमधाम से सम्पन्न हुआ।

सीकर के श्रावको की भक्ति जगजाहिर है। नगर और समीपी नगरो–गॉवो के भक्त समूहों मे दर्शनार्थ पहुँचने लगे। जितने कार्यक्रम तिजारा मे सम्पन्न किये गये थे, उतने और उसी विशाल आकार के कार्यक्रम यहॉ भी स्थान पा सके। नित्य प्रभावना। भारी प्रभावना। पावन प्रभावना।

अनेक शहरो के श्रावक बसे, कारे लेकर पहुँच रहे थे, अन्यान्य ट्रेनो से। अतिथि–श्रावको का मेला पृथक ही भरा रहता था। कभी फुलेरा, तिजारा, फिरोजपुर झिरका, जयपुर के समूह, तो कभी दिल्ली मेरठ, बडौत के समूह, कभी शाहपुर, बिनौली और कभी सुजानगढ के श्रावक गुरुचरणो के समीप चचरीक से मडराते रहते थे। आप कहेगे– 'उनका व्यक्तित्व ही है ऐसा।' मैं आपके कथन से सौ प्रतिशत सहमत हूँ।

समय की गति ने भी शिथिलता नहीं बतलाई। देखते ही देखते क्षण आ गया महावीर–जयती का और गुरुवर के दीक्षा दिवस–समारोह का। सोनागिरिजी मे, उन्हे दस वर्ष पूर्व महावीर–जयती के दिन ही पू आचार्य सुमतिसागर जी ने दिगम्बर–बाना प्रदान किया था। सीकरवासियो ने दोनो समारोह धूमधाम से मनाये। यही वह समय था, जब गुरुवर से सबधित स्मारिका 'अभिवदना–पुष्प' का लोकार्पण–समारोह कर पुण्यार्जित किया गया था। देश भर से साहित्यकार, विद्वान, श्रेष्ठि, उद्योगपति और समाजसेवी एकत्र हुए थे दीक्षा–दिवस–समारोह के निमित्त से, जब वे लौटे तो उनके साथ 'अभिवदना–पुष्प' की एक एक प्रति थी। करीब 320 पृष्ठो के ग्रन्थराज का सम्पादन एक–दो ने नहीं, आठ विद्वानो ने किया है–श्री निर्मल जैन सतना, डा शीतलचद जैन जयपुर, डा कमलेश कुमार वाराणसी, डा भागचद भागेन्दु श्रवणबेलगोला, डा नलिन क शास्त्री बोधगया, डा सुरेश चद जैन दिल्ली, डा जयकुमार मुजफ्फरनगर एव डा कपूरचद खतौली और प्रकाशक सस्था है–प्राच्य श्रमण भारती मुजफ्फरनगर (उ प्र)। ग्रथ गुरुवर की छवियो और गुणो का प्रतिनिधि ग्रन्थ है। उसमे 150 से अधिक विद्वानो के विचार गुम्फित हैं।

सीकर के समारोह मे ग्रन्थ की प्रथम प्रति विद्वत–समूह द्वारा गुरुवर के करकमलो तक पहुँचाई गई और स्वत को कृतकृत्य किया। सम्पूर्ण कार्यक्रम पच दिवसीय था।

यही वह अवसर था जब सीकर की व्यवस्था–समिति और समाज ने गुरुवर से आशीष लेकर, देश के विख्यात सगीतकार श्री रवीन्द्र जैन को कार्यक्रम हेतु बुलाया था। उनके स्वर और सगीत ने गुरुवर के चरणो मे भक्तिसागर उडेल दिया।

सीकर देश की उच्चताओ का शिखर बन गया था, जो कार्यक्रम हो रहा था, वह ऐतिहासिक उच्चता प्राप्त कर रहा था, जो कलाकार और विद्वान आमन्त्रित थे, उनकी अपनी उच्चता सीकर को शिखर के मानिद उच्च स्वरूप प्रदान कर रही थी।

अगला कार्यक्रम था–श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन शास्त्री परिषद का अधिवेशन और उसके 'हीरक जयति वर्ष–समारोह' का शुभारम्भ। कार्यक्रम की अध्यक्षता कर रहे थे राष्ट्रीय जैन–मनीषा के वरिष्ठ विद्वान प्रा श्री नरेन्द्रप्रकाश जैन फिरोजाबाद। उनकी नगरी फिरोजाबाद चूडियों के निर्माण के कारण सुहाग–नगरी कही जाती है। मगर सीकर में सिद्ध हुआ कि श्री नरेन्द्रप्रकाश जी अपने आप मे एक 'सुहाग–पुष्प' बन चुके हैं, वे जिस सभा मे होते हैं वह सुहागिन की तरह खिल उठती है। सीकर की सभा में वे और उनके अनुगामी–शताधिक विद्वान गुरुवर के चरणो मे उपस्थित थे। गुरुकृपा से सभी का सम्मान हुआ, सभी के वचनालेख सुने गये। अत मे गुरुवर के प्रेरक उदगार श्रवण करने का सौभाग्य मिला सभी को।

शीतकाल के एक–एक क्षण का लाभ मिला सीकर–समाज को। ब्र दीदी प अनीता जी ने युवक–युवतियो के लिए धार्मिक–कक्षा का सामूहिक सचालन किया। ब्र दीदी मजुला जी सहयोगार्थ छाया की तरह साथ रहती। विद्वान ब्र अतुल जी की व्यस्तता भी श्रावको के शुभ में ही रहती थी। मौनी बाबा कहे जाने वाले–पूज्य मुनिरत्न वैराग्यसागर जी भी सीकर के श्रावको मे व्यस्त रहे–कभी तत्वचर्चा तो कभी समाधान–प्रस्तुति। बन गया था अद्भुत माहौल सीकर मे। हर जिह्वा पर धर्म की चर्चा, सघ की चर्चा और गुरुवचनो की चर्चा रहती थी। ❑

लोगो का मोह प्रबल हो पडे कि उसके पूर्व गुरुवर ने वहॉ से विहार कर दिया। सीकरनिवासी श्रावक जो कल तक श्रमसीकर बहा रहे थे, विदा के समय नेत्रसीकर बहाते हुए सघ के साथ चल रहे थे।

गुरुवर के चरण थे–नगर रेवासा की ओर।

ग्रीष्मकाल के कुछ दिवस ही मिले रेवासा को फिर गुरुवर के चरण उठे, तो राणोली, कोछोर और दाता के श्रावको को धन्य किया। पूर्व मे एक महान आचार्य हुए है–पू आचार्य ज्ञानसागर जी महाराज जिनके मेधावी शिष्य हैं पू आचार्य विद्यासागर जी महाराज, राणोली उन्हीं समाधिस्थ आचार्यप्रवर ज्ञानसागर जी की जन्मभूमि है, जहॉ गुरुवर पू उपाध्याय ज्ञानसागर जी महाराज 11 मई 99 को पधारे थे और उनसे सबधित घर, भवन, शाला, मदिर आदि देखने गये थे।

दॉता (रामगढ) पहुॅचने पर गुरुणागुरु, आचार्यप्रवर समाधिस्थ सत, पू शातिसागर जी महाराज (छाणी) का 55 वॉ समाधिदिवस–समारोह मनाया। तिथि वही थी जो प्रतिवर्ष होती है–ज्येष्ठ कृष्ण–दशमी। दिनाक था–21 मई 99 का। गुरुवर पू उपाध्यायश्री के चरण–सानिध्य का लाभ लेते हुए दॉता के समाज ने वहॉ के नवनिर्मित मदिरजी मे कलशारोहण–समारोह भी सम्पन्न कराया और गुरुचरणो का आभार माना।

गुरुवर के मार्गदर्शन मे समीपस्थ 30 ग्रामो के सरपचो / पचो / प्रतिनिधियो को बुला कर एक सगठन बनाया गया और उसे मदिरो की देख–रेख तथा जीर्णोद्धार का कार्य सौंपा। तब से वह निरतर सक्रिय है।

फिर प्रवास। दॉता से कुचामन शहर की ओर। रास्ते मे प्रचारग्राम, खाचरियावास, कुली, कुकनवाली, पाचवॉ आदि उपनगरो को समय दिया।

कुचामन–समाज के उत्साही श्रावको ने गुरुवर के आशीष से कतिपय कार्यक्रम आयोजित किये थे, जिनमे 'नागौर–उपजिला–समाज का क्षेत्रीय सम्मेलन' एकता और सगठन को मजबूत बनाने मे निमित्त बना।

गुरुवर कुचामन थे, किन्तु व्यावर के श्रावक भी वहॉं ही रुके हुए थे, वे गुरुवर से व्यावर चलने की प्रार्थना कर रहे थे। उन भक्तो के मनोभाव के अनुसार गुरुवर सयोग से व्यावर की ओर चल पडे।

व्यावर शहर निकटस्थ न था, एक लम्बी यात्रा चाहता था। फलत रास्ते के उपनगर भी धन्य हुए। गुरुवर जिलिया, मीठडी, पलाडा, गॉंगवा, रूपनगढ़, अजयमेरु होकर अजमेर स्थित सोनीजी की नसिया की ओर थे। अजमेर के श्रावक श्रमण–भक्ति के लिए प्रसिद्ध हैं। सम्पूर्ण समाज अगवान्यार्थ दौड गया। नगर–सीमा से विशाल शोभायात्रा अपने राष्ट्रसत को लेकर नसियाजी की ओर चल पड़ी। वहॉं श्रावको की प्रार्थना पर गुरुवर का मगलोद्बोधन हुआ। श्रोता तृप्त हो गये।

जुलाई का माह चल रहा था। अत आसन्न वर्षायोगावधि देखते हुए वरिष्ठ श्रावको ने गुरुवर से चातुर्मास की स्थापनार्थ प्रार्थना की; किन्तु गुरुवर के मन मे कोई अन्य क्षेत्र था। अत मुस्कान और आशीष

देकर, चुप रहे आये। कुछ दिनो का समय भी न दिया और 4 जुलाई 99 को केशरगज स्थित जैन मदिर जी को प्रस्थान कर गये। भारी जुलूस साथ।

केशरगंज–समाज को पूर्ण विश्वास हो चला कि गुरुवर अब उनकी प्रार्थना मानकर वहाँ वर्षायोग की स्वीकृति प्रदान करेगे, पर वह पावन–सोच भी, सोच तक ही रहा। गुरुवर 12 जुलाई को समीपस्थ नवतीर्थ–ज्ञानोदय–नारेली पहुँच गये।

श्री दि जैन ज्ञानोदय तीर्थ नारेली के कण कण मे मुनिपुगव पू श्री सुधासागर जी महाराज का अनुगुजन समाया है, उन्हीं के आशीर्वाद से यह स्थापित और विकसित किया गया है, लगभगग पचास करोड़ रुपये के निर्माणकार्य यहाँ प्रस्तावित हैं। विशाल भूक्षेत्र है।

पू गुरुवर उपाध्यायश्री ज्ञानसागर जी ने नारेली की वदना की, किया अपने गुरूअनुज श्री सुधासागर का मधुर–स्मरण और चल दिये अपने पथ पर। सीधे पहुँचे व्यावर। वहाँ के समाज ने भारी हर्ष मनाया। सभी को शत प्रतिशत विश्वास था कि गुरुवर उनकी प्रार्थना सुनकर व्यावर पधारे हैं। अब तो धूमधाम से वर्षायोग की स्थापना हो सकेगी।

अनेक कार्यक्रम सम्पन्न होने लगे। समितियाँ बनने लगी। डाक्टरो और बुद्धिजीवियो की सगोष्ठी मे गुरुवर का उद्‌बोधन सदा की तरह दिशादर्शक सिद्ध हुआ।

सारा नगर खुशियो मे मग्न था कि गुरुवर ने विहार कर दिया। सुख बदल गया दुख मे। लोग हतप्रभ। 'क्या करे, कैसे रोके गुरुवर को?'

मनाने वालो ने मनाया। कुछ लोग तो रास्ता बद कर लेट गये थे श्रीचरणो मे, तब गुरुवर ने समझाया– 'निश्चित रहे, सत आवेगे, आते रहेगे। किन्तु अभी न रोके। रास्ते मे नसीराबाद मिला जहाँ महाकवि आचार्य ज्ञानसागर जी ने समाधिपूर्वक देह का परित्याग किया था। वह 1 जून 1973 की श्रेष्ठ–घटना थी। गुरुवर उनके समाधिस्थल तक गये जिसे कुछ वर्ष पूर्व ही, मुनिपुगव पू सुधासागर जी के आशीष से, नवाकार दिया गया है।

गुरुवर ने प्रस्थान कर दिया अजमेर की ओर।

महानगर अजमेर की हर कालोनी कसमसायी– 'काश गुरुवर मेरे वक्ष पर चरण चिह्न अकित कर दे।' कसमसाहट ने जनमानस को भक्ति की उच्च सीमा तक पहुँचाया, जब हर कालोनी के श्रावक–समूह गुरुवर की अगवानी के लिए उतावले हो पडे। उधर अजमेर की ऑखो के मानिन्द दो जिनालय–केशरगज और सोनीजी की नसिया–के व्यवस्थापक और श्रावक समूह अपने सौभाग्य की प्रतीक्षा मे हर्षित थे। जिनवाणी माता का वह दिगम्बर–दुलारा 25 जुलाई 99 को अजमेर पधार रहा है ससघ, घर–घर चर्चा थी।

25 जुलाई की सुबह से ही माताएँ अपने घरो के समक्ष फैले प्रागणो मे अल्पनाएँ बनाने जुट गईं। युवको ने रात मे ही समस्त चौराहो को सज्जित कर दिया था। गली–गली तोरणद्वार बनाये गये। कपडपट्ट सडक की एक पटली से दूसरी तक बाहे फैला कर अगवानी का उद्‌घोष कर रहे थे। केशरिया ध्वज हवा मे लहरा रहे थे, जैसे भक्तगण झूम रहे हो। 'नगर की सजावट सिद्ध कर चुकी थी कि कोई अत्यत पूज्य व्यक्तित्व चरण धरने आ रहा है।' अजैन बधु ऐसा ही सोच रहे थे, किन्तु जब उन्हे ज्ञात कराया गया कि राष्ट्रीयसत परमपूज्य उपाध्यायश्री 108 ज्ञानसागर जी महाराज पधार रहे हैं, तो वे भी चुप न बैठ सके, उनकी टोलियाँ भी गुरु–दर्शनार्थ मुख्यमार्गों के किनारे यहाँ–वहाँ जम गईं।

विशाल जनमेदिनी नगर सीमा पर जाकर ठहर गई थी, महासत की प्रतीक्षा कर रही थी। अनेक दलो मे, अनेक वाद्ययत्र स्वागत–गान के स्वर वातावरण मे घोल रहे थे– 'बहारो फूल बरसाओ, महा मुनिराज आये हैं।' सुहागने शीष पर मगल कलश धर कर राह देख रही थी। माताएँ बहिने युगल करो से आरती के थाल साधे हुए खडी थी। श्रावकगण रजत थालियॉ और शुद्ध–जल लिये खडे थे पाद–प्रक्षालन के लिए।

उदयाचल से उदित होते सूर्य की तरह वे महायोगी सडक पर धर्मदिवाकर सम दूर से ही नजर आने लगे थे। उनके पीछे श्रावकगण दौडते–कूदते से चल रहे थे। कुछ ही मिनटो मे चरण सीमा पर पहुँच गये। हुई भक्तिभीनी अगवानी। फिर एक महा–जुलूस के साथ, हॉ, विशाल शोभायात्रा के साथ गुरुवर चल पड़े। नगर प्रवेश किया और सीधे केशरगज स्थित जिनालय जा पहुँचे।

विशाल भीड 'धर्म की जय', 'सत की जय' निनादित करती रही। ❑

17

'आचार्यत्व के समुद्र : पद से परे'

27 जुलाई 99 को अजमेर का भाग्यचक्र मुस्करा उठा, क्योंकि गुरुवर ने उस दिन विधि–विधान–पूर्वक श्री 1008 भगवान पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन मंदिरजी, केसरगज मे चातुर्मास–स्थापना की थी। यह वही धर्मस्थल था जहॉ सन 1974 मे, परमपूज्य आचार्यवर्य सुमतिसागर जी महाराज ने वर्षायोग किया था। तब गुरुवर ज्ञानसागर जी मात्र एक साधक थे, ब्रह्मचारी थे। आचार्यश्री की कृपाकोर और ब्र प उमेश जी जैन (पू ज्ञानसागर जी) की तपश्चर्या का साक्षात्कार यहाँ ही हुआ था। फलत 5 नवम्बर 1976 को यहॉ ही ब्र श्री उमेश जी को क्षुल्लक दीक्षा प्राप्त हुई थी।

27 जुलाई। स्थापना दिवस समारोह पर, उस महान आचार्य की याद अजमेर के समस्त प्रौढ और वरिष्ठ श्रावको को हो आई–कि उन महान तपस्वी आचार्यश्री के सुयोग्य शिष्यवर पुन अजमेर की धरती पर विराजित है। परमपूज्य आचार्य सुमतिसागर महाराज ने अपने तप पूर्ण जीवन मे 117 श्रावको को अपना शिष्य बनाया था और उन्हे दीक्षित कर ब्रह्मचारी, क्षुल्लक–क्षुल्लिका, ऐलक–ऐलिका आर्यिका मुनि और उपाध्यायश्री का पावन बाना प्रदान किया था। श्रावको के आत्म–विकास के लिए श्रावको को दीक्षाऍ देना एक कार्य था, दूसरा कार्य था–नगरो को दीक्षा योग्य वातावरण देना, प्रेरणा देना। इस दूसरे क्रम के कार्य के समक्ष वे नगर आते है जहॉ उनके आशीष से धार्मिक–निर्माण किये गये थे–सिद्ध क्षेत्र श्री सोनागिरि जी मे त्यागी–व्रती आश्रम, अजमेर मे आयुर्वेदिक औषधालय, मुरैना मे मानस्तम्भ, भिन्ड मे चौबीसी–स्थापना और ईडर (गुजरात) मे मानस्तम्भ की रचना निर्माण आदि।

तीर्थराज सम्मेद शिखरजी की पावन–भूमि पर 'त्यागी–व्रती–आश्रम,' का कार्य पूर्ण हो चुका है, तो सिद्धक्षेत्र सोनागिरि जी के उतग–पर्वत पर श्री नन्दीश्वर दीप मदिर की रचना प्रस्तावित हो चुकी है। शीघ्र ही मनभावन आकार राष्ट्र के समक्ष आने वाला है।

अजमेर का वर्षायोग। गुरुवर ज्ञानसागर जी का सघ–सानिध्य। कार्यक्रमो की श्रृखला। जन–उत्साह। प्रभावना। प्रेरणा। प्रवचन।

अजमेर के परीक्षा–प्रेमी लोग कुछ ही सप्ताहो मे पू. गुरुवर उपाध्याय श्री ज्ञानसागर जी की चर्या, ज्ञान और वाणी से ऐसे प्रभावित हो गये कि वे आपस मे बतियाते रहते– 'ये तो साक्षात महावीर प्रतीत होते हैं।' कोई बोलता– 'हॉ, भाई साहब, आप ठीक कह रहे हैं, वे चलते–फिरते तीर्थंकर ही हैं।'

चातुर्मासो मे प्रतिवर्ष गुरुवर की जो चर्या रहती है, वह आत्मशोधक चर्या यहॉ भी निर्विघ्न चली। इस बीच कार्यक्रम भी चले, वे प्रेरणा–सचार के स्रोत जो होते है। उन्ही के कारण धर्म और जिनवाणी की चर्चा जन–जन मे होती है। महाजन मे तो होती ही है, दुर्जन मे भी होती है और दुर्जन प्रेरणा पाकर सुजन बनने का अभ्यास करने लगते हैं।

कार्यक्रमो की भी दो श्रेणियॉ हैं गुरुवर के दरबार मे–एक मे चर्या की प्रधानता होती है, एक मे विचार की। दोनो की युति से श्रावको का रत्नत्रय कुशल बनता है। चर्या प्रधान कार्यक्रमो मे प्रमुख थे–वात्सल्य स्थापना का पर्व रक्षाबधन, मुकुट सप्तमी, चारित्र–चक्रवर्ती आचार्य शातिसागर जी महाराज (दक्षिण) का चवालीसवॉ समाधि–दिवस–समारोह, चारित्र शिरोमणि आचार्य प्रवर शांतिसागर जी महाराज (छाणी) का सत्तरवॉ दीक्षा दिवस समारोह, दशलक्षण–पर्व, विश्वमैत्री दिवस (खमाखमी/क्षमावाणी) पचपरमेष्ठी विधान आदि।

विचार प्रधान कार्यक्रमो मे प्रमुख रहे–भारतवर्षीय दिगम्बर जैन तीर्थ क्षेत्र समिति जिला–शाखा–अजमेर का सामयिक सम्मेलन, जिला–स्तरीय धार्मिक पचायतो, ट्रस्टो, मंदिरों के माननीय प्रमुखो (अध्यक्षों) का

सम्मेलन, क्षेत्रीय महिला सम्मेलन, त्रिदिवसीय सगीतोत्सव, विशाल शाकाहार रैली एव अहिंसा–संगोष्ठी, 'मथुरा स्थित जैन स्तूप एव कंकाली–टीला का सास्कृतिक वैभव' विषय पर विद्वत गोष्ठी, जिला स्तरीय शाकाहार भाषण प्रतियोगिता, निबध प्रतियोगिता, पत्रकार–वार्ता, बिहार–बगाल प्रान्त की सराक–बालिकाओ का शिक्षण–प्रशिक्षण शिविर, प्रतिभा–सम्मान–समारोह आदि।

कार्यक्रम तो सभी विशेष थे, लोक–कल्याण के धरातल पर थे किन्तु 'महर्षि दयानंद सरस्वती विश्वविद्यालय' के विशाल सभा कक्ष मे आयोजित 145 प्राचार्यों का सम्मेलन नव–इतिहास लिख गया था दिगम्बर–साधुओ के कार्यक्षेत्र पर। उसी दिशा मे था–150 कालेजों के प्रोफेसरो की निबन्ध प्रतियोगिता का आयोजन। कहे–प्रकाश उतर आया था कागजो पर।

वैसा ही था वह आयोजन जिसमे मेरिट लिस्ट (विशेष–योग्यता) मे आनेवाले छात्रो का सम्मान किया गया था। इन सब के चलते, गुरुवर की कृपा से वहाँ, विश्वविद्यालय–प्रागण मे स्थित जलाशय का नाम 'महावीर जलाशय' किया गया जिसका उद्घाटन राजस्थान के राज्यपाल ने किया था।

चातुर्मास के अत मे–वर्षायोग निष्ठापना–यतियो का कार्यक्रम– और उसके बाद–पिच्छिका परिवर्तन समारोह। अब यह तो स्वय समझने की बात है पाठको को, कि निष्ठापना से पूर्व, गुरुवर के सानिध्य मे महावीर–निर्वाण दिवस मनाया गया था।

समाज को समय का ध्यान न रहा, और चार माह सरक गये हाथो से। धर्म और उत्साह की बेला मे ऐसा ही होता है।

एक बात विशेष है। गुरुवर के प्रवचन मदिर–परिसर मे हुए हो चाहे कभी सार्वजनिक स्थलो पर, राजनेताओ, अधिकारियो, बुद्धिजीवियो की भारी सख्या मे उपस्थिति रहती थी।

इसी महानगर मे आयोजित बहुश्रुत विद्वान स्व हीरालाल जैन (जबलपुर) के व्यक्तित्व और कृतित्व पर सम्पन्न विद्वतगोष्ठी को भी गुरुवर ने सानिध्य दिया। 19 से 29 नवम्बर 99 तक, गोष्ठी मे पचास जैन–जैनेतर, किन्तु अधिकृत, विद्वानो ने भाग लिया और अजमेर स्थित अजयमेरु के विशाल सभाकक्ष मे–प्राच्य विद्याओ के मूर्धन्य मनीषी डा हीरालाल जी पर विचार व्यक्त किये गये। वर्तमान भारत मे उन्हे–महान जैन–ग्रन्थ–षटखण्डागम का प्रथम टीकाकार और सम्पादक निरूपित किया गया है। सयोजक थे–श्री डा भागचद जैन भागेन्दु।

उक्त दोनो प्रसगो पर विद्वानो ने जो बोला वह 'समाचार' बन गया, किन्तु गुरुवर ने जो बोला वह 'इतिहास' बन गया।

अजमेर मे ही उन पॉच विद्वानो को सम्मानित किया गया, जिन्हे श्रुत सवर्द्धन संस्थान मेरठ द्वारा पुरस्कार घोषित हुए थे। उनके नाम हैं–एडवोकेट श्री रामजीत जैन, प शिवचरणलाल शास्त्री, डा अजितकुमार जैन, डा रतनचद जैन एव श्री कस्तूरचद जी सुमन। सराक–पुरस्कार प्राप्तकर्ता थे गाजियाबाद के श्रावक गण, हाँ, सराकोत्थान समिति गाजियाबाद।

अजमेर मे छह माह तक गुरु–प्रभावना की सुकोमल–धूप जन जन के मन को प्रासुक करती रही। वे देवालय, जिनमे सुबह 9 या 10 बजे के बाद अभिषेक–पूजन होते थे, प्रात.काल से ही भक्तो से भरे–भरे रहते थे। कहे–गुरुवर की पावन प्रभावना अजमेरवासियो की चर्या मे से झाँकती प्रतीत होती थी।

दिसम्बर माह शुरु हो गया था, लोगो के मन मे अनुगूँज होने लगी कि गुरुवर शीतकाल का समय भी इसी नगर को दे, पर गुरुवर तो विहार कर गये। सम्पूर्ण अजमेर नयनाद्र देखते रह गया, राष्ट्रसंत ससघ चले गये। भक्त दौड़े, पीछे–पीछे चले, अनेक मील चले, पर सभी को सतप्रवर ने समझा–बुझा कर वापिस कर दिया।

27 दिसम्बर 99 का शीतकालीन दिवस, नगर किशनगढ मे धार्मिक ऊष्मा प्रदान कर रहा था। सम्पूर्ण श्रावक नगर–सीमा पर आरती लिए खड़े थे। परमपूज्य गुरुवर जो पधार रहे थे।

भावभीनी–भक्तिभीनी अगवानी के पश्चात–श्रावक समूह ने राष्ट्र की शोभा कहे जाने वाले उपाध्यायश्री को विशाल शोभायात्रा के साथ नगर प्रवेश कराया।

क्रियाशीलता और कार्यक्रमो की लय यहाँ भी बनी। चर्याप्रधान–श्रावकगण और चर्याप्रेमी सत। नगर मे उतर आया धार्मिक वसत। यो वास्तविक वसत ऋतु का शुभारम्भ भी यहाँ ही हुआ था, पर धर्म के वसत ने प्रकृति के वसत को पीछे छोड दिया था। छेवले के वृक्ष की नोक पर फूले और खिले हुए टेसुओ का रग रोज फीका पड जाता जब श्रावक–श्राविकाएँ केशरिया वस्त्र पहिन कर श्रीजी के मदिर में पूजा–प्रक्षाल मे लीन हो जाते थे। सच, सत का मन, वसत के प्रभाव को धूसरित कर देता था। क्या यह सत की वसंत पर विजय नही थी?

क्या जनवरी , क्या फरवरी, मार्च माह भी आकर सत–चरणो मे रमता, उसके पूर्व गुरुवर ने किशनगढ से विहार करने का निर्णय ले लिया। इस बीच वहाँ अपूर्व धर्म प्रभावना का लाभ जनमानस ले चुका था। समाज ने वहाँ मदिरजी के अलावा सार्वजनिक स्थलो पर भी गुरुवर को सुनने का सौभाग्य पाया था। 15 जनवरी 2000 का दिन किशनगढ स्थित श्री धर्मसागर दिगम्बर जैन विद्यालय के इतिहास में दर्ज हुआ तो बाद का एक दिनाक पुलिस–प्रशिक्षण–केन्द्र के इतिहास मे। दोनो स्थानो पर गुरुवर ने पृथक विषयो पर सदेश देकर, एक ओर छात्रो और शिक्षको को राह दिखलाई थी तो दूसरे पर अधिकारियो को।

विद्यालय और महाविद्यालय स्तर की शाकाहार सगोष्ठियाँ भी सम्पन्न हुई थीं। 30 जनवरी 2000 को समाज ने गुरुवर का **"12वां उपाध्याय–पद–दिवस–समारोह"** मनाया। गुरुवर चकित, बोले–इसकी क्या जरूरत थी?

फिर आदिनाथ निर्वाण–दिवस–महोत्सव मनाया गया था–गुरुवर के सानिध्य मे।

एक मायने मे अमर कृति 'भक्तामर स्तोत्र' के पद्यो की सख्या बराबर दिन, गुरुवर ने, किशनगढ़ मे पूर्ण किये और 11 फरवरी 2000 को वहाँ से विहार कर गये। कुछ माह पूर्व जिस तरह अजमेर सूना हो गया था, उस दिन किशनगढ सूना हो गया।

यहाँ पूर्व मे भी गुरुवर के चरण पड़ चुके थे। अत भक्तो मे पहले से अधिक पा लेने की आशा मन मे बन गई थी। अधिक चर्चा, अधिक सेवा अधिक सानिध्य। 13 फरवरी को 'नगर' मे सत–प्रवेश हो गया।

भक्तो की मन्शा के अनुरूप गुरुवर अधिक समय न प्रदान कर सके, दो दिनो मे अपना 'खजाना' लुटा दिया और 16 फरवरी को पॅचेवर पहुँच गये। फिर फागी।

फागी गाँव स्पर्श करते हुए गुरुवर 4 मार्च 2000 को लावा ग्राम गये। लावा मे श्रावको को बीस दिन तक धार्मिक–मावा मिला, कृपा गुरुवर की। सयोग जुटाकर सागानेर के श्रावक लावा पहुँचे और गुरुवर से सागानेर पधारने की प्रार्थना की। चरणों मे श्रीफल चढा कर धन्य हो गये।

समाज मे बिखराव रोकने के उद्देश्य से, लावा मे, गुरुवर के चरण सानिध्य मे 'वृहत जिला स्तरीय दिगम्बर जैन सम्मेलन' सम्पन्न कराया गया जिसमे गुरुवर के वचन एकता की जमीन पर प्रकाश–स्तम्भ बन गये। फिर एक दिन पत्रकार–सम्मेलन। फिर अष्टान्हिकापर्व मे श्रीसिद्ध चक्र महामडल विधान, शाति महायज्ञ और रथयात्रा। बीस दिन तक 'लावा' जमा सा रह गया।

सब को जमा कर, सब कुछ जमा कर, हॉ धर्म के प्रति मनो को स्थिर कर, गुरुवर ने वहॉ से प्रस्थान कर दिया। रास्ते मे झिराना (ग्राम) को समय देते हुए श्रीसघ कठमाना पहुँचा।

जैन समाज के दस परिवारो से सयुक्त ग्राम कठमाना। गुरुवर ने 3 दिवस का समय दिया। ग्रामसरपच श्री राजाराम गुर्जर स्थानीय जैन समाज के साथ गुरुवर की सेवा मे लगातार उपस्थित रहे। उनके भाग्य से 31 मार्च का दिवस सामने था, भक्तो ने स्मरण करा दिया था कि उस दिन गुरुवर का 12वा मुनि–दीक्षा–दिवस–समारोह है। फिर क्या था समस्त ग्रामवासी तैयारियो मे लग गये– नियत समय पर विशाल समारोह मनाया गया। ग्रांमीणो की विनयाजलि–सभा देखने लायक थी। शाम को 'भक्ति सध्या'।

लावा से विहार कर गुरुवर 4 अप्रैल 2000 को मालपुरा पधारे, रास्ते मे अजमेरी ग्राम, सोडा, चॉदसेन ग्रामो को स्पर्श किया। मालपुरा के मदिर जी मे मूलनायक भगवान आदिनाथ की अतिशयकारी मूर्ति के दर्शन।

मालपुरा अब गॉव नही, नगर है। अनेक कालोनियॉ उसकी गोद मे खेलती हैं। समाज बडा है, सगठित है, कुछ करने का निर्दोष–उत्साह है उसमे। है वहॉ 'माल' धर्म का।

श्रावको का भक्तिभाव गुरुवर के वात्सल्यभाव का पात्र बना, शायद इसी लिए वे दस–पॉच दिन नही, 66 दिन रुके थे वहॉ। रुकते ही कार्यक्रम–बनाम–आन्दोलन शुरु कर दिया गया। गुरुवर धार्मिक–आदोलनो के लिए युग–प्रसिद्ध–सत माने जाते हैं। वे 'परीक्षा' से लेकर 'परिणाम' तक सतत् ध्यान देने वाले सत हैं।

गुरुवर का आशीर्वाद प्राप्त करने के बाद मालपुरा का हर श्रावक 'सयोजक' प्रतीत हो रहा था, हर हाथ मे आयोजनो के कार्य थे, हर मस्तिष्क मे उज्ज्वल परिणामो का चिन्तन। फलत 66 दिनो मे, 4 अप्रैल से 10 जून 2000 तक, इतने अधिक कार्यक्रम सम्पन्न हुए कि उनपर एक बडी–पुस्तक लिखी जा सकती है, किन्तु यहॉ अभिप्रेत है गुरुवर का 'जीवन–दर्शन'। अस्तु।

अब यदि तारीखो का क्रम छोड कर, कार्यक्रमो भर का उल्लेख किया जावे तो भी वे कम तो नहीं माने जावेगे–सबसे पहले विशाल कार्यक्रम सामने आया था–श्री महावीर जयती। उस दिन गुरुवर जन जन को साक्षात् मुनि महावीर प्रतीत हो रहे थे। शहर मे महावीर–जयती तो प्रतिवर्ष मनाई जाती है, सैकडो वर्ष प्राचीन परम्परा है, पर उस वर्ष की महावीर जयती गुरुवर के सानिध्य से निराली हो गई थी। महावीर की जयती तो मना ही रहे थे, मदिर–परिसर मे उपस्थित, साक्षात मुनि महावीर सम, पूज्य ज्ञानसागर जी का 'तेरहवॉं मुनि दीक्षा दिवस समारोह' भी मना सके। इस दिन हर श्रावक एक सयोजक था।

कार्यक्रमो को बतलाना उचित होगा कि 66 दिनो मे क्या–क्या किया मालपुरा वालो ने–महिला सम्मेलन। मेधावी छात्र–छात्राओ का सम्मान। कोर्ट–परिसर मे गुरुवर का प्रवचन। यहॉ तक तो ठीक है पर जब अनाजमडी के मैदान मे प्रवचन–सभा रखी गई तो लोग चकित हो गये क्योकि 'भरे बाजार मे शाति

की बात' की थी गुरुवर ने। जहाँ बाजार लगा रहता था, वहाँ शांति उग आई थी। कृपा थी गुरुवर की, उनकी पीयूष–वाणी की।

2 मई 2000 का आयोजन था–शाकाहार दिवस। गुरुवर ने शाकाहार दिवस के लिए ही आशीष दिया था, पर मालपुरा के कार्यकर्ताओ ने गजब कर दिया, उन्होने शाकाहार–दिवस के साथ साथ, शाकाहार दर्शन के महान सरक्षक और प्रणेता–गुरुवर पू उपाध्यायश्री का 44वॉ जन्म दिवस समारोह मना डाला। पाठक याद करे, 1 मई 1957 को गुरुवर का जन्म श्रेष्ठ श्रावक श्री–शातिलाल जी मुरैना के गृह में हुआ था।

'मालपुरा' के लोगो को जन्म–दिवस मनाते हुए धर्म और उत्साहरुपी 'माल' हाथ लगा था। फिर सिद्धचक्र महामडल विधान। फिर आचार्यप्रवर श्री 108 शातिसागर जी महाराज (छाणी) का 56वॉं समाधि–दिवस–समारोह। आदि। अनेक कार्यक्रम।

गुरुवर की दृष्टि सभी पर थी, जो रोजगार से लगे हैं उन भक्तो पर और जो रोजगार की तलाश मे है, उन पर भी। समाज की चिन्ता को चिन्तन मे बदलते हुए, उनके आशीष से–वहाँ– "श्री ज्ञानसागर–जैन–नियोजन–केन्द्र" की स्थापना की गई। केन्द्र ने कार्य भी शुरु कर दिया। बेरोजगार जैन युवको का उनकी योग्यतानुसार, सूचीकरण और रोजगार परामर्श–उसी दिन से प्रारम्भ हो गया था। जैन युवक और युवतियो के हित मे गठित यह देश की प्रथम सस्था है, ऐसा कहने मे गौरव हो आता है।

दो कार्यक्रम विद्वानो के लिए थे–पहला–श्री दिगम्बर जैन अखिल भारतीय शास्त्रि परिषद का वार्षिक अधिवेशन तथा हीरक जयती समारोह। दूसरा–भारतवर्षीय दिगम्बर जैन विद्वत परिषद की कार्यकारिणी की बैठक। दोनो मे कुल 125 विद्वान आमत्रित थे, सो आये भी।

गुरुवर ने मालपुरा के श्रावको को विद्वानो से काफी लाभ प्रदान कराया था–बालबोध (चारो भाग), छह–ढाला, रत्नकरण्ड श्रावकाचार की कक्षाएँ लगवाकर शिक्षण दिलाया था। किसी से सुबह, किसी से दोपहर और किसी से रात्रि मे प्रवचन कराये थे। ऐसा लगता था जैसे बहुत से 'धर्म–शिक्षक' भिन्न–भिन्न विषयो पर पढा रहे हो और समूचा मालपुरा 'नगर' ही, 'विद्यालय' बन गया हो तथा वहाँ के सम्पूर्ण नागरिक (बालक–वृद्ध, युवक–युवती) छात्र हो गये हो।

एक क्रातिकारी लहर भी देखने मिली–जब सभी विद्वानगण वहाँ के श्रावको को पढा रहे थे, धर्म ग्रन्थ भर नही, नैतिक शिक्षा भी। उन्होने खुले मच पर सहस्राधिक आगत श्रोताओ और विद्वानो के मध्य नियम स्थापित किये कि अब से कोई भी विद्वान–एक रात्रि मे जल या दूध के अतिरिक्त कुछ भी न ग्रहण करे। दो सगोष्ठियो–अधिवेशनो के अवसर पर हर विद्वान राष्ट्रप्रिय पोशाक, कुर्ता और धोती धारण करे, पेन्ट कमीज टाई आदि नहीं। तीन हर विद्वान शास्त्रवाचन करे, केवल भाषण न दे। चार विद्वानगण समुद्र की तरह धीर–गभीर होते हैं। अत विदाई के समय, कभी भी, सम्मान–राशि आदि के लिए स्वत पहल न करे, आयोजकगण विनयपूर्वक वह व्यवस्था समय पर करे।

उक्त शिक्षा विद्वानो को अच्छी लगी ही, श्रावको को भी पसद आई। फलत जयघोषो की झडी लग गई।

मालपुरा मे गुरुवर के आशीष से वकीलो–एडवोकेटो की भी एक वृहत्–गोष्ठी कराई गई। अनेक वकील पहुँचे। सभी सोच कर आये थे कि एक एक भाषण देना पडेगा, बस। किन्तु गुरुवर ने सभी को चकित कर दिया, उन्होने प्रेरणा की कि प्रात काल हर अभिभाषक (एडवोकेट) श्रीजी का अभिषेक–पूजन करे फिर

अन्य कार्यक्रम। स्थिति यह बनी कि सभी वकीलो ने पूजन क्रिया की। फलत मालपुरा मे 'सस्कार–स्थापना' का नव–इतिहास बना, कृपा गुरुवर की।

श्रुत पचमी–दिवस आया। गुरुवर ने उसे भी नये आयाम प्रदान किये और प्रति वर्ष पडने वाली 'ज्येष्ठ शुक्ल–पचमी' को इस वर्ष सस्कारो से सजा दिया। सुबह सम्पूर्ण समाज से प्रभातफेरी की तर्ज पर शोभा–यात्रा रखी गई, 108 माताओ–बहिनो को केशरिया वस्त्र मे आने को कहा गया था, वे आईं, गौरव से तने उनके मस्तिष्क/शीश पर माता जिनवाणी को धारण किया गया, उनके पीछे श्रावक एव उपस्थित वाणीपुत्र भी शीश पर ग्रन्थ रख चल रहे थे। उनके पीछे श्रीसघ और उनके पीछे सकल–समाज। वाद्ययत्र अपना महत्व पृथक से प्रतिपादित कर रहे थे। भक्तो के हाथो मे केशरिया ध्वज। युवको के हाथो मे कपडपट्ट (बेनर)। सजे हुए गजराज, उनके पीछे ऊट और उनके पीछे अश्व। भजन मडलियाँ भजन गा रही थी, नृत्यमडली नृत्य करते चल रही थी। शोभायात्रा जब किसी तोरणद्वार मे से गुजरती तो पुष्पवर्षा होने लगती।

अपूर्व था वह दृश्य। मनोरम। सुव्यवस्थित। मालपुरा–समाज का, कौशल्यपूर्ण–मार्गदर्शन, उस दिन खुल कर सामने आ गया था। आध्यात्मयोगी सतप्रवर पू ज्ञानसागर जी की प्रभावना का वही तो श्रेष्ठ स्वरूप था। अमीर और गरीब एक जैसे लग रहे थे जैसे स्वर्णकलश के साथ मृषाघट को भी सौभाग्य लुटाने का अवसर दिया गया हो। उन सभी के मध्य अनेक साहित्यकार और विद्वान अपनी सरलता लुटाते चल रहे थे। लोग देखते हैं कि गुरुवर जहॉ चरण धरते है, वहॉ पूरा पूरा पदतल उछर आता है, अकित हो जाता है। भक्त वहॉ की रज उठाकर माथे पर लगा लेते हैं। थी वह विचित्र अनुभूति।

शोभायात्रा जब मालपुरा के प्रसिद्ध स्थल–सुभाष सर्कल–पर पहुँची तो उसने पूर्व योजनानुसार सभा का रूप ले लिया, विशाल पडाल मे सब जन समा जाना चाहते थे, पर उस दिन 'जन' अधिक थे। अत पडाल बेचारा क्या करता। वह तो अपनी विशालता से बडी गुरुवर के भक्त–समुदाय की विशालता देख रहा था।

उस दिन प्रा नरेन्द्र प्रकाश जैन ने श्रुत पचमी का महत्व प्रतिपादित किया तो पूज्य मुनिवर वैराग्यसागर जी ने सिद्ध भक्ति और श्रुतभक्ति का। जाहिर है कि ब्र बहिनो–दीदी अनीता और दीदी मजुला–ने भी समयोचित कर्त्तव्य पूर्ण किये होगे। उन सब के बाद परमपूज्य गुरुवर उपाध्यायश्री ने अपने अमृतवचनो से लोगो की प्यास शात की।

समारोह मे राजस्थान के न्यायाधिपति श्री मिलाप चद्र जैन मुख्य अतिथि थे तो दिगम्बर जैन महासमिति के प्रधान श्री प्रदीपकुमार सिह कासलीवाल अध्यक्ष।

तो, मैं मालपुरा मे कार्यक्रमो की सूची बतला रहा था। वहॉ और भी कुछ हुआ था गुरुवर के पावन सानिध्य मे– विद्वत–सम्मान–समारोह, दिगम्बर जैन महासमिति का अधिवेशन, भाषण प्रतियोगिता आदि आदि। वहॉ ही पुस्तको का लोकार्पण समारोह भी हुआ था, जिनमे एक पुस्तक थी गुरुवर के प्रवचनो वाली– 'अभय की साधना' और दूसरी थी श्री मूलचद जी की–कथा पुस्तक।

मालपुरा की ही सभा मे डा अनुपम जैन गुरुवर के चरणो मे उपस्थित हुए थे और प्रतिवर्ष दिये जाने वाले छह विभिन्न पुरस्कारो के विषय मे प्रकाश डाला था। वहॉ ही श्री मूलचद लुहाडिया किशनगढ द्वारा निमित्त–उपादान, निश्चय–व्यवहार नयादि, क्रमबद्ध–अक्रमबद्ध पर्याय आदि गभीर–सिद्धान्तो पर प्रवचन एव शका–समाधान किये गये थे।

विदुषी ब्र बहिन अनीता जी के विभिन्न कार्यक्रम, गुरुवर की आशीष–छाया मे, मालपुरा मे भी सार्थक सिद्ध हुए थे–वे सिद्धांत शिक्षण द्वारा बालिकाओ और महिलाओ में श्रेष्ठ शिक्षा और सस्कारो का प्रसार कर रही थी। उनके साथ थी ब्र दीदी मजुला जी। दोनों बहिनो की प्रेरणा से नन्हे–नन्हे बालक–बालिकाओ ने चौका लगाने और मुनिजी को पडगाहने की कला सीखी थी तथा नवधा भक्ति धारण की थी। बहिनो की कक्षाएँ ऐसी लगती थी कि उनसे हर उम्र के लोग कुछ न कुछ शिक्षाएँ प्राप्त कर ही लौटते थे।

धर्म और शिक्षा का मननक्रम, जीवन भर के लिए, श्रावको को प्रदान कर , गुरुवर ने मालपुरा से प्रस्थान कर दिया। श्रावक देखते रह गये। आप ही बतलाएँ–बेचारे भक्त क्या कर सकते हैं? गुरुवर को जितना रुकना हो रुके, जब जाना हो जाये, किसके रोके रुके हैं? श्रावको को गुरुवर की शिक्षा याद रह गई, और याद रह गई वह तिथि, जिसमे उन्होने विहार किया था–10 जून 2000।

विदाई के समय भी विशाल जूलूस साथ था। कोई लौटना नहीं चाहता था। किन्तु गुरुवर के व्यक्तित्व के समक्ष सभी बौने सिद्ध हो जाते हैं। कुछ ही कि मी बाद जब उन्होने लौट जाने का आदेश सुनाया तो बेचारे भक्तो को गुरु–आदेश के पालन मे–लौटना पडा। गुरुवर बढ गये केकडी की ओर। केकड़ी है अजमेर जिलातर्गत।

मालपुरा का जुलूस लौटने को लौट गया, पर पूरा–पूरा नही लौटा, कुछ भक्त अन्य शहरो के लोगो के समूह मे छुपे रह गये, उन्हे व्यवस्थाओ की चिन्ता जो थी। कहे–केकडी, अजमेर आदि नगरो के श्रावको के साथ जो नया जुलूस बना था, उसमे मालपुरा के श्रावक भी थे।

सघ बढ रहा था। जुलूस अनुगमन कर रहा था। जयघोष आकाश को छू रहे थे।

22 जून 2000 को सूर्य के रथ के साथ सघ ने केकड़ी नगर की सीमा का स्पर्श किया। वहाँ पहले से ही उपस्थित सहस्रो भक्तो ने गुरुवर की अगवानी की और विशाल–शोभायात्रा के साथ नगर प्रवेश कराया। जन–समुदाय की प्रार्थना पर गुरुवर के वचनामृत का लाभ भी मिला नगर को। समाज मे उत्साह की ऐसी लहर उठी कि हर श्रावक एक ही प्रार्थना करता कि चाहे जो कुछ त्याग–दान–सयम करना पडे, करेगे, किन्तु गुरुवर यहाँ ही चातुर्मास की स्थापना करे। पृथक रूप से कभी सयुक्त रूप से, दिन मे तीन–तीन बार भक्तगण गुरुवर के चरणो मे पहुँचते, श्रीफल चढाते और वर्षायोग की विनय करते। गुरुवर बदले मे केवल मुस्काने छिडकते, कोई सकेत न देते। धीरे–धीरे चौथा दिन लग गया, श्रावको के स्वर तनिक भी क्षीण न हुए, किन्तु गुरुवर उन्हे निराश छोड कर आगे बढ गये। 26 जून को विहार के समय केकडी के श्रावक उदास हुए तो 27 और 28 को धून्धरी, बाजटा, कालेडा और बोरडा के। वहाँ भी वे न रुके। हर जगह एकसा दृश्य बनता रहा। ❑

18

'धर्मावतार'

भले ही जून–माह चल रहा था, पर गुरुवर के पीछे कतिपय शहरों के भक्तगण अप्रैल से ही लग गये थे। कारण था वर्षायोग हेतु प्रार्थना और सकेत। गुरुवर की यात्रा चलती रहती थी और भक्तो की प्रार्थना– "हे गुरुवर, सन 2000 का चतुर्मास हमारे नगर में विस्तारने की स्वीकृति प्रदान करे।"

कभी दिल्ली का समाज, कभी सहारनपुर का, कभी मेरठ और मुजफ्फरनगर का घेरे रहता था। राजस्थान के अजमेर, अलवर, मथुरा, तिजारा, टोक, निवाई आदि शहरो के श्रावक भी गुरुवर से लगातार सम्पर्क कर रहे थे। सभी की प्रार्थना मे समर्पण था, भक्ति थी, आमत्रणबोध था। शहर अनेक, गुरुवर एक अत. कहीं किसी को कुछ स्पष्ट सकेत नहीं दे सके।

मालपुरा के लोगो को लगा था बुरा, क्योकि गुरुवर वहाँ से विहार कर गये थे। मगर वे जानते थे कि इस 'बुरा' मे कल 'बूरा' अवश्य स्वाद देगा, कभी तो पधारेगे गुरुवर ! उनकी मन की मलीनता गुरुवर ने, आगे आने वाले नगर केकडी मे यह कह कर धो दी थी कि अब चातुर्मास की बात क्यो करते हैं, दो मास तो बिता दिये, दो और कभी बीत जावेगे।

(जो हो, केकडी के श्रावक पहले प्रसन्न थे कि गुरुवर यदि माह भर भी रुक जावेगे तो हमे उनके वर्षायोग का सौभाग्य प्राप्त हो जावेगा। मगर सयोग नही बन सका था।)

न केकडी के भक्त जानते थे, न निवाई के, परन्तु प्रयास मन के ओर–कोर से कर रहे थे। वे तो इतना भर जान सके थे, कि गुरुवर न प्रार्थना से आते हैं, न आमत्रण से, वे तो यात्रा करते हैं अतर्मन से। मगर वे भक्त यह भी जानते थे कि प्रार्थना मे शक्ति होती है और मन मे भक्ति होती है। अत अपनी–अपनी जानकारियो के आधार पर सब जन विनयानुरोध करते रहते थे।

गुरुवर ने केकडी मे 34 दिन का समय दिया। फलत भक्तगण वर्षायोग की तैयारियो मे लग गये थे। तभी एक दिन उन्होने वहाँ से प्रस्थान कर दिया। सारा नगर उदास। श्रावक हताश। अब क्या करे?

गुरुवर के पीछे पीछे पूरा समाज दौड चला– 'पहुँचाने' के लिए।

29 जून 2000 को देवली की ओर थे। नगरवासियो ने नगर से 5 कि मी चलकर गुरुवर की अगवानी की, चरणाभिषेक किया, आरती की और विशाल शोभायात्रा के साथ नगर मे लाये। वाद्ययत्र–दल ने संगीत की धुने छेडीं, भक्तो के कठो ने जयघोष किये, जुलूस श्री पार्श्वनाथ धर्मशाला–प्रागण मे जा पहुँचा, व्यवस्था के सूत्र सचालित हुए, जुलूस सभा मे बदल गया। मच पर श्रीसघ विराजा, सामने जनसमूह। श्री प्रेमचद जी ने मगलाचरण किया, किया फिर समाज ने अनुरोध–प्रवचनार्थ। गुरुवर ने प्रवचन की स्वीकृति दे दी। पहले पू वैराग्यसागर जी महाराज ने भक्तिगीत प्रस्तुत किया गुरुवर के समक्ष। जनता गदगद। फिर हुए गुरुवर के प्रवचन। प्रवचन जिनमे समग्र मानवता के लिए बोध होता है, सम्बोधन होता है, आत्मधन होता है। सामाजिक एकता और शाकाहार का आह्वान होता है, अहिंसा और जैन सिद्धान्तो का ज्ञान होता है।

चार दिन ज्ञानगगा बहती रही। लोग नितप्रति चातुर्मास–स्थापना की प्रार्थना करते रहे। किन्तु ।

एक जुलाई 2000 को विहार। भक्त हाथ मलते रह गये। मुक्ताफल हाथ से निकल गया। गुरुवर थे नगर टोक की ओर। रास्ते में सिरोही, निवासिया, संथली, सिरौली, छान, मेहन्दवास के भक्तों ने नेत्र पवित्र किये।

छह जुलाई को टोक। वहाँ भी वही दृश्य बना जो पूर्व के नगरों मे बना था। वही उत्साह, वही श्रद्धा, वही भक्ति। गुरुवर मंदिरो के दर्शन करते हुए नसियाजी पहुँचे ससघ। पुन जुलूस बन गया–सभा। फिर मगलाचरण, भजन, प्रवचन। कहने का तात्पर्य यह कि रोज एक सा व्यवहार, एक सा उपचार और एक सा

आचार होता श्रावको की ओर से, परन्तु रोज वे अतृप्त रह जाते। सभी को लगता–गुरुवर और अधिक रुकें, और अधिक प्रवचन सुनने मिले। मिले रोज–रोज दर्शन।

भक्तो ने भावना के फल श्रीफलो सहित चढा दिये–चरणों मे, पर गुरुवर वहाँ भी न रुके, बढ गये निवाई की ओर। तो क्या अन्य–अन्य नगरो मे धर्म नहीं था? धर्म के चिह्न–शाति, अहिसा, तप, दान, शील, योग, वैराग्य आदि के भाव नही थे?

थे, बधु थे। हर गॉव–शहर मे वे थे। न होते तो गुरुवर क्यो पहुँचते। रही वर्षायोग की बात सो वह श्रावको के भाग्य से जुडी है, सत के पुण्य से जुडी है। वर्षायोग का 'स्थल सयोग' सामान्य बात नहीं है। वह साधु, भक्त और भावना के त्रियोग से जुडी है। श्रावक नहीं, स्वत श्रमण नही जानते कि उनका वर्षायोग कहाँ होना है। है न आश्चर्य की बात? विचार का विषय?

जिनके नगर मे वर्षायोग नही हो सके हैं, किन्तु साधर्मी बधु आशा लगाये रहते हैं। उन महानुभावो के सम्मान मे जैन धर्म के जैनाचार्य पहले ही लिख गये हैं–

"धर्मसहित–मनुष्य का एक मुहूर्त का जीवन अच्छा है–और धर्मरहित–मनुष्य का कोटिवर्ष का जीवन व्यर्थ है।" सो क्या चार माह का सयोग और क्या चार पल का? आदमी तो इतना सक्षम है कि अपने मन मे ही वर्षायोग कराता रहता है सतो का। हर वर्ष। हर पल। कभी आप भी कराइए। भीतर झॉकिए, वहाँ परमपूज्य गुरुवर उपाध्यायश्री ज्ञानसागर जी महाराज सामायिक–स्वाध्याय करते मिल जावेगे। वे श्रावको और सराको के मन मे बसते हैं, नगर–गॉव मे नही।

अपनी गति से चलने वाले गुरुवर की गति कोई न मोड सका, न धीमी कर सका। गुरुवर ने शोभायात्रा के साथ निवाई नगर मे प्रवेश किया।

दूसरे दिन से ही कार्यक्रमो की कतार लग गई, कहे–छिड गया धार्मिक–आन्दोलन।

15 जुलाई 2000 को निवाई वालो की आत्मा जुडाई, जब गुरुवर चातुर्मास–स्थापनार्थ नसियाजी के विशाल सभाकक्ष मे ससघ उपस्थित हो गये। धर्म–सभा शुरु हो गई।

विभिन्न शहरो के जो भक्त गुरुवर को वर्षायोग हेतु अपने नगर मे न पा सके थे, वे गुरुवर के नगर, हा गुरूवर के समीप आ गये थे। सच, चार माह के लिए निवाई 'गुरूवर का नगर' हो गया था। सहारनपुर, मेरठ, मुजफ्फरनगर, दिल्ली, जयपुर, मालपुरा, टोक, केकडी के भक्त वहाँ धर्मसभा मे उपस्थित थे। सभी ने गुरुवर के चरणो मे श्रीफल चढा कर, सतप्त–आत्मा मे शाति की अनुभूति की। मन मे एक ही शिकायत–'हे नाथ, तुम (आप) न आ पाये हमारे नगर मे वर्षायोग के निमित्त, यह हमारे ही पुण्यो की क्षीणता/न्यूनता का द्योतक है, मगर हमारे भक्तिप्रधान हृदय मे तो आप पल–पल विराजते हैं। आप तो हमारे मन मे ही आज वर्षायोग की स्थापना कर रहे हैं, सो आपके चरणो मे यह श्रीफल चढाकर हम अपने 'स्व' का समर्पण कर रहे हैं, गुरुवर आशीर्वाद दे। इस वर्ष हृदय ही मे सही, अगले वर्ष हमारे नगर मे अवश्य चातुर्मास–स्थापना करना।' अनेक भक्त मन मे सोचते रहे और मौन अधर हिलाते रहे।

प्राचार्य श्री डा शीतलचद ने धर्मसभा मे विचार रखे और सन्तसमागम के महत्व पर प्रकाश डाला। श्री प्रेमचद सावलिया ने धर्म–ध्वज/जैन ध्वज फहराया, दर्शको ने तालियो से आदर बरसाया। श्री डा डी के जैन, निवाई जैनसमाज के महामत्री श्री बजरगलाल आदि ने श्रद्धापूर्ण भाषण देकर अपने 'अहोभाग्य' की प्रतीति प्रदान की।

पूज्य मुनिरत्न श्री वैराग्यसागर जी महाराज की सुधा–सिंचित वाणी से भजन के रूप में 'गुरुभक्ति' का श्रेष्ठ आत्मानंद प्राप्त हुआ जनमानस को।

विधि–विधानपूर्वक स्थापना करने के पश्चात परमपूज्य उपाध्यायश्री के मंगल–प्रवचन सुनने का सौभाग्य मिला। 28 मूलगुणों के धारक, महान तपस्वी गुरुवर ज्ञानसागर जी ने वर्षायोग स्थापना की अनिवार्यता पर प्रकाश डाला। अहिसा–महाव्रत के पालन मे सहायक 'चातुर्मास की स्थापना' से श्रोता परिचित हो सके।

स्थापना के शुभ मुहूर्त पर गुरुवर की प्रेरणा से हर श्रावक ने मन ही मन, एक एक सकल्प धारण किया या त्याग–व्रत लिया, यथा–मैं चार माह झूँठ न बोलूँगा। मैं चार माह क्रोध न करूँगा। मैं चार माह ग्राहको से आधा मुनाफा ही लूगा। मैं चार माह दोनो वक्त मदिर जाऊँगा। मैं चार माह हरी सब्जी न स्वीकारूंगा। मैं चार माह ब्रह्मचर्य धारण करुगा। मैं आदि आदि।

कहने का मतलब यह कि जितने श्रावक, उतने सकल्प। जय हो गुरुदेव की।

धीरे–धीरे कार्यक्रम पूर्णता की ओर। सभाकक्ष और नसिया परिसर तिल तिल भरा हुआ था, माने तिल रखने भी जगह न बची थी वहॉ, क्योकि लोगो ने हर कहीं दिल बिछा रखे थे। श्री सतीशकुमार दिल्ली ने उपाध्यायश्री को शास्त्र भेट किये, किये फिर मुनिराज जी को भी। श्री प्रदीपकुमार मेरठ ने दोनो दिगम्बर–देवो की आरती उतारी। समाज के अध्यक्ष श्री मदनलाल जैन ने चातुर्मास–कलश की स्थापना का गौरव पाया। ❑

कार्यक्रमो का क्रम गति पकड चुका था निवाई मे। अत चातुर्मास का हर नया पल श्रृगार पा रहा था। पूज्यश्री के मगल–आशीष की छॉव मे 28 सितम्बर से 8 अक्टूबर 2000 तक 'सर्वतोभद्र महामडल विधान' भारी उत्साह से, विशाल आयोजन के साथ, नगर मे सम्पन्न किया गया। दोनो जिनमदिर विद्युत–प्रभा से जगमगा उठे। नसियाजी की साजसजावट देखते ही बनती थी। विशाल मच, विशाल कक्ष, विशाल पडाल, सब कुछ विशालताएँ स्पर्श कर रहा था उस रोज। प्रतिष्ठाचार्य प मोतीमाल जी मार्तण्ड, प सुधीरकुमार केशरिया, प सुनीलकुमार आदि दिन–रात श्रावको और श्रमणो को धर्म अथवा धर्मचर्चा मे व्यस्त रखते थे और जब दोपहर मे पूज्यश्री के अमृत वचन सुनने को मिल जाते थे जनसमूह को, तब पूर्ण सतोष महसूस होता था।

विधान के समय सतोष एन्ड पार्टी की सगीतलहरी पूजा की पक्तियो मे घुल जाती थीं जिससे सुनने वालो का आत्मसुख बढ जाता था। इद्र तो इद्र, सामान्य श्रोता भी बीच बीच में आरती का थाल उठाकर नृत्य करने लग जाते थे।

नगर मे धर्म के रूप मे अमृत बरसता रहा उस अवधि मे।

शाकाहार (निरामिष आहार) के प्रचार–प्रसार मे सम्पूर्ण देश का श्रावक–समाज और साधु–सस्थाये काम कर रहे हैं। मगर इधर निवाई–वर्षायोग के दौरान सन 2000 में, परमपूज्य उपाध्यायश्री की प्रेरणा ने कुछ पृथक–प्रभाव बनाया था। वह अक्टूबर का ही प्रसग है युवको ने विराट मोटर–साईकल रैली निकाली जिससे उत्तम प्रचार हुआ शाकाहार का। पूरे शहर ने सराहना की। गुरुवर की प्रेरणा से नगर के समस्त उत्साही नागरिको ने फिर एक विशाल–शाकाहार–रैली का आयोजन किया। वृद्ध युवक, बच्चे और माताएँ

बहिने बड़े बड़े बैनर लेकर जुलूस मे शामिल हुए। छात्रो के दल, बैन्ड बाजो की ध्वनि और लाउडस्पीकर से निकलते उद्घोष/नारे जिला प्रशासन को हिला देने मे सक्षम सिद्ध हुए उस रोज। प्रशासन के वरिष्ठ अधिकारियो ने सूचना–सचार के दौरान स्वीकार किया कि रैली मे बारह हजार से अधिक जनसमूह था। अहिसा और सत्य की स्थापना में थे वे बारह हजार लोगो के कदम। वे एक स्वर मे दृढ़ता से नारे लगाते थे–

"तन मन करता कौन खराब
अण्डा मछली और शराब।"
तथा
"रामराज्य फिर लाना है
शाकाहार अपनाना है।"

एक मायने मे नगर का वायु–क्षेत्र नारो से भर गया था। आवाज बुतखाना को छूती हुई, कत्लखाना तक जा रही थी। हर हाथ मे लिखित पट्टी थी– 'बूचडखाने बद करो।'

निवाई की वह ऐतिहासिक रैली सत–निवास से शुरु होकर पुलिस थाना, नसिया जी, चौहट्टी बाजार, सब्जीमण्डी, बडाबाजार, पाटनी भवन, नयामदिर, भट्टो का मुहल्ला, खारीकुई, बसस्टैन्ड, पुरानी चुगी नाका, कहे नगर की डगर–डगर मे गई। हर आम व खास इलाके को गुजित किया, जगाया और पुन वापिस सत–निवास पहुँची, वहाँ विशाल–परिसर खचाखच भर गया। देखते ही देखते, रैली, सभा मे बदल गयी। विधिवत सभा प्रारम्भ हुई, अध्यक्षता की निवाई के डिस्ट्रिक्ट कलेक्टर (जिलाधीश) श्री एच डी डामेर ने, वे लोगो का उत्साह देख चकित थे, चकित थे पूज्यश्री की प्रभावना से। वही हाल मुख्य अतिथि न्यायाधीश श्री एन पी जैन का था। उक्त तीन के अलावा अन्य वरिष्ठ समाज सेवी, पत्रकार, साहित्यकार आदि भी थे वहाँ। सभी ने अपने उद्बोधन दिये और फिर पूज्यश्री के प्रवचन सुने।

प्रवचनो का स्पष्ट परिणाम सामने आया जब अनेक अधिकारियो ने स्वेच्छा से कहा कि शासन इस विषय पर कदम लेगा, सो लेगा, हम लोग आज ही ले रहे हैं और गुरुवर के समक्ष यावज्जीवन मास–मदिरा–मद्य का त्याग कर रहे हैं।

नगर के स्याने–नागरिक पुकार उठे– 'यह तो रैली की सबसे बडी सफलता है।'

रैली सयोजक श्री हुकमचद जैन फूले नहीं समा रहे थे। ब्र दीदी अनीता जी ने प्रारम्भ मे मगलाचरण का पाठ किया, फिर सयोजक के अनुरोध पर प्रवचन भी किया, राम, रहीम और महावीर के भारत का स्मरण कराया। मदिरो के देश मे बूचडखानो का निर्माण न सहने की भावना बलवती की।

रैली और सभा समाप्त हो गई। लोग अपने घरो को लौट गये। नव–सदेश स्वरूप गुरुवर की देशना सभी के कानो मे गूजती रही–पशुधन की रक्षा करनी होगी, शाकाहार का ध्वज अग–जग में फहराना होगा।

रैली को नगर के हर नागरिक ने देखा था। मगर विशेष बात यह थी कि उसे 'समय–सम्राट' भी देख रहा था।, जो सर्वाधिक बलवान होता है और जो लोक का पहरुआ भी होता है। वह देखता है– परमपूज्य उपाध्याय श्री ज्ञानसागर जी शोभायात्रा के साथ जब बसस्टैंड के समीप से निकले थे तो लगा था कि कोई महान राजाधिराज की 'सवारी' निकल रही है, सच वे अब राजाधिराज से बड़े और महत्वपूर्ण 'महाराज' हैं। मगर कुछ वर्ष पूर्व, सन 1975 मे, जब वे एक छात्र मात्र थे, सवारी–बस चूक जाने से अपने

पिता के साथ इसी बसस्टेड पर रात भर पडे रहे थे, अस्वस्थ थे, पिताजी आकुल व्याकुल थे। उस रात की पीड़ादायी–कालिमा और इस दिवस की प्रेरणादायी–किरणो में कितना अंतर है ! वह ब्र. उमेश का भाग्य था, यह उपाध्यायश्री का। उस रात सारा नगर सो रहा था, आज/रैली के दिन, सम्पूर्ण नगर जाग गया था। कहे–समय–समय की बात है। किसी ने ठीक ही कहा है– 'पुरुष बली न होत है, समय होत बलवान।।' समय का बल आज, जो देखने मिला था वह अद्‌भुत था। मगर मैं ऐसा न मानूँ तो? तो ऐसा मानना होगा– 'समय के साथ–साथ सत का सयम प्रभाव डालता है।' कहें–आशीर्वाद था गुरुवर का। कृपा थी गुरुनाथ की। हॉं, उपाध्यायश्री की।

उसी क्रम मे 3 अक्टूबर को परमपूज्य आचार्यशिरोमणि श्री 108 सुमतिसागर जी महाराज का छठवॉं समाधि–दिवस–समारोह मनाया गया। उस दिन सैकडो युवक–युवतियॉं आचार्यश्री का वास्तविक परिचय जान सके, कतिपय वृद्ध लोग तो उन्हे जानते थे किन्तु नई पीढी? नई पीढी नहीं जानती थी। अत सभी ने उपाध्यायश्री, मुनिश्री और ब्र दीदी अनीता के उद्‌बोधनो पर मन ही मन, साधुवाद ज्ञापित किया कि न ये प्रवचन देते, न हम गुरुणागुरु को जान पाते।

उपाध्यायश्री ने अपने प्रवचनो से स्पष्ट कर दिया था कि भारतीय परम्परा मे –श्रमण संस्कृति का महत्व निराला है, जहॉं अनेक साधु–सत, ऋषि–महर्षि के नामो का उल्लेख पाया जाता है। उन विशिष्ट सतो की श्रृखला मे– समाधिस्थ आचार्य सुमतिसागर जी ने वसुन्धरा को गौरवान्वित किया है।

भगवान महावीर के मोक्ष जाने के पश्चात भी अनेक शताब्दियो तक दिगम्बर मुनियो के यत्र–तत्र विहार का इतिहास सुरक्षित है। लेकिन उन्नीसवी सदी के अत से 20 वीं सदी के प्रारम्भ तक, अनेक वर्षों के लिए दिगम्बर सन्त लुप्तप्राय हो गये थे, तब देश मे लगभग एक ही समय, दो महान सतो का जन्म हुआ। दक्षिण मे–चारित्रचक्रवर्ती आचार्य श्री 108 शातिसागर जी महाराज और उत्तर (छाणी) मे प्रशातमूर्ति आचार्य श्री 108 शातिसागर जी महाराज। सयोग से दोनो के नाम एव वय समान थे। अत प्रथम को 'दक्षिण' से और द्वितीय को "छाणी" से जाना जाता था। समान समयकाल होने से आज भी लोग भ्रान्त हो जाते है। दोनो सतो ने जैन धर्म की ध्वजा को ऊॅंचा करने मे, उस काल मे, भारी योगदान प्रदान किया था। अत छाणी के स्थान पर 'उत्तर' लिखा जाना, देश की दो दिशाओ और दो आचार्यों का बोध कराता रहेगा।

फिर दोनो की शिष्यपरम्परा चली, फिर शिष्यो के शिष्यो की। इस तरह सम्पूर्ण देश मे आज उन्हीं की परम्परा के साधु–सत हैं।

पू सुमतिसागर जी महाराज, पू आचार्य शातिसागर जी 'छाणी' (उत्तर) की शिष्य परम्परा के चतुर्थ मनका (मोती) थे। उनके चतुर्थ पट्टाचार्य–पद पर पू सुमतिसागर जी को आरूढ होने का परम सौभाग्य प्राप्त हुआ था। उनके जीवन मे वे कम, उनकी चर्या अधिक बोलती थी। अत श्रावक उनके पास जाकर अपने आपको धन्य मानता था।

आचार्य श्री सन् 1917 (आसोज शुक्ल चतुर्थी, वि. स. 1974) को मध्यप्रदेश के मुरैना जिला स्थित ग्राम श्यामपुरा मे जन्मे थे। (पू. उपाध्यायश्री भी उसी पावन मुरैना से हैं) क्षण भर को उपाध्यायश्री चुप हो गये। मुस्कान होठो पर खेल कर चली गई। फिर आगे बोले–आचार्यश्री का शिशुनाम नत्थीलाल था, अनके पिता आदरणीय श्री छिद्‌दूलाल जी थे और माता श्रीमती चिरौंजा देवी जी।

बालक नत्थीलाल को बचपन से ही धार्मिक–सस्कारो के मध्य रहने का शुभ–अवसर मिला था। माता–पिता से धार्मिक–शिक्षा मिली थी। बालक घर के वरिष्ठजनो की हर बात मानता था। उनसे प्राप्त मार्गदर्शन के अनुसार अपनी दिनचर्या ढालता गया। फलत वह पूर्णरूपेण धर्मपरायण, कर्मठ और स्वाश्रित बनता चला गया।

घर में रहते हुए गृहकार्यों को लगन से कर अपनी कर्मठता का परिचय देता था। पर उसका मन जितना गृहकार्य पर था, उससे अधिक पठन–पाठन पर और उससे अधिक मदिर तथा सामजिक सेवा पर। कहे घर मे रहकर काफी उम्र तक अच्छे सस्कारो की प्राप्ति पर ध्यान दिया ही, अपने समीपी परिवेश के लोगो मे भी अच्छे संस्कारो की प्रेरणाये जगायी।

जब 50 वर्ष के हो गये, तब परमपूज्य आचार्यश्री 108 विमलसागर जी (भिन्ड) का सामीप्य लाभ पाया, उनसे प्रभावित हुए। कुछ ही समय बाद सन 1968 (चैत्र शुक्ला त्रयोदशी सम्वत् 2025) मे महावीर जयती के दिन पू आचार्य विमलसागर जी (भिन्ड) से ऐलकदीक्षा प्राप्त कर ली। आचार्यश्री ने उनका नवीन नामकरण किया–ऐलक वीरसागर जी महाराज।

ऐलक बनते ही मुनिचर्या का अभ्यास शुरु कर दिया, पठन–पाठन–अध्ययन भी। उनके समर्पण से प्रभावित होकर आचार्यश्री ने छह माह बाद ही सन 1968 (अगहन कृष्ण द्वादशी सम्वत् 2025) मे मुनिदीक्षा प्रदान कर दी, शुभ स्थान था वह–गाजियाबाद नगर। नामकरण किया– 108 श्री सुमतिसागर जी मुनि।

मुनि हो जाने के बाद वे देशाटन और तीर्थयात्रा करते रहे तथा सन 1973 (ज्येष्ठ सुदी पचमी स 2030) मे नगर मुरैना मे आचार्यपद प्राप्त करने का गौरव भी प्राप्त कर सके थे। उनकी समाधि 3 अक्टूबर 1994 को सिद्ध क्षेत्र सोनागिरि मे हुई थी। क्वॉर कृष्णा द्वादशी सम्वत् 2051।

वे सच्चे, गुरुभक्त थे और सच्चे शिष्य–वत्सल। आज उनके समाधिदिवस पर उनका स्मरण कर हम भावना भाते हैं कि हमे भी गुरुवर की तरह पडितमरण का भाग्यशाली क्षण प्राप्त हो। हम उस महायात्रा के समय चेतना मे रहे। शारीरिक शिथिलताएँ ध्यानच्युत न कर पाये।

पू उपाध्याय जी के अत्यत प्रेरणाप्रद प्रवचन जन–जन के मनो मे उतर गये।

उस दिन मच पर उनकी वाणी प्रभावना के नव–कीर्तिमान रच रही थी। उपाध्यायश्री के पूर्व ही, ब्र बहिन अनिता दीदी का प्रवचन भी वैदुष्यपूर्ण सिद्ध हुआ था। उन्होने बतलाया था– 'आदमी का जीवन वह सरिता है जो जन्म और मृत्यु नाम के दो किनारो के मध्य से बहती रहती है। फलत साधु–सत सदा सजग रह कर चलते हैं और मृत्यु के समय अपना आनद कम नहीं होने देते। उसका वरण हँसते–हँसते करते हैं। वे मृत्यु को आत्म–महोत्सव के मच पर ले आते हैं, उससे भयभीत नहीं होते। कहे–विषम स्थिति मे भी वे मौत को 'भुलाते' नहीं, बुलाते हैं, आमत्रित करते है। गुरुणागुरु पू सुमतिसागर जी ऐसे ही अनगार थे। वे जीवन भर सहजता, सरलता और वत्सलता के आगार बने रहे। दया–करुणा की मूर्ति। त्याग–तपस्या में अति कठोर। उन्होने अपने जीवनकाल मे अनेक साधको की सफलतापूर्वक समाधि कराई थी और निर्यापकाचार्य के पद से मुक्ति का मार्ग दिखाया था। अपने अत समय में वे भी समाधिमरण का महाफल प्राप्त कर सके। यह उनके जीवन का सबसे बडा वरदान निरूपित किया गया है–विद्वानो द्वारा।

पू सुमतिसागर जी महाराज ने परमपूज्य गुरुवर विमलसागर जी की आज्ञा पर आचार्यपद स्वीकार किया था, और इस तरह वे प्रात स्मरणीय महान विभूति परमपूज्य आचार्यप्रवर श्री 108 शान्तिसागर जी महाराज (छाणी) की शिष्य परम्परा के सुन्दर पुष्प बन सके थे।'

(आज उन्हीं की परम्परा के, उनके सुयोग्य शिष्य पू. उपाध्याय शिरोमणि हमारे बीच उनके गुरुकुल का ध्वज फहरा रहे हैं और धर्मचेतना जगा रहे हैं। हमने तो पूर्ववर्ती गुरुओं को नहीं देखा है; पर उन समस्त श्रेष्ठ गुरुओ की झलक परमपूज्य उपाध्यायश्री में प्राप्त कर रहे है।)

उस समारोह में प्रतिष्ठाचार्य प मोतीलाल जी मार्तण्ड, श्री भागचद टोग्या, श्री विनयकुमार गाजियाबाद सहित श्री कमलेश हाथीशाह (चदेरीवाले) ने भी अपने सस्मरण सुनाकर जनमानस को गुरुप्रकाश से नहला दिया था।

समारोह का शुभारम्भ स्थानीय धार्मिक श्रावक श्री पदमचद मित्तल ने गुरुणागुरु का चित्रानावरण कर किया था। श्रावकवर श्री राजेन्द्र पाटनी ने मच पर दीप प्रज्वलित करने का गौरव पाया था और मगलाचरण का गौरव प्रतिष्ठाचार्य प सुधीर कुमार ने।

कार्यक्रम श्रेष्ठ छाप छोड गया था जनमानस पर। ❑

एक नवम्बर सन 2000 को निवाई स्थित नसियाजी का परिसर खचाखच भरा हुआ था। दूर दूर से श्रावक पहुँचे थे पिच्छिका–परिवर्तन समारोह जो हो रहा था। परमपूज्य योगीश्वर प्रज्ञाश्रमण महोपाध्याय ज्ञानसागर जी महाराज नवनिर्मित सभा भवन के स्थायी मच पर मचासीन थे। उन्हीं के बाजू मे परमपूज्य सत वैराग्यसागर जी मुनि महाराज।

सचालनकर्ता के अनुरोध पर विदुषी ब्रह्मचारिणी द्वय श्रद्धेय बहिन अनीता जी और ब्र मजुला जी ने मगलाचरण–गीत का सस्वर पाठ किया, सभाभवन मे मौन स्थापित हो गया, श्रावको के हाथ जुड गये वदनार्थ।

उसके ठीक बाद उन श्रावको को समय दिया गया जो दूरदराज के क्षेत्र बगाल, बिहार और झारखण्ड प्रदेश से आये थे, जिन्हे देश सराकबधु कहता है, जिनके उद्धारक स्वय गुरुवर ज्ञानसागर जी हैं। अनीता दीदी ने अनेक प्रश्न किये उस समूह के लोगो से, सभी प्रश्न बगाली और बिहारी बोली मे थे। निवाई के लोग दीदी के भाषाज्ञान पर चकित हो रहे थे। जिस सराक भाई से जो धार्मिक प्रश्न किया गया, उसका सही और सतुलित उत्तर उनसे प्राप्त हुआ। श्रोता चकित कि इतना ज्ञान तो हमारे साधन–सम्पन्न पुत्रो को नहीं है, जितना इन अभावो मे पले–बढे नागरिको को है। हर श्रोता ने उत्तरदाताओ की भूरि–भूरि प्रशसा की, दीदी को साधुवाद प्रदान किया और गुरुवर को नमन्, जिनकी कृपाकोर से ज्ञान का सचार आगत सराको मे हो सका था।

फिर कार्यक्रम आगे बढा। वर्षायोग–समिति ने देवबद से आये श्री विनयकुमार जी से दीप प्रज्वलित कराकर उनको बहुमान प्रदान किया। चातुर्मास समिति के मत्रीजी श्री बजरगलालजी ने वर्षायोग की उपलब्धियों पर प्रकाश डाला और सशक्त स्वर मे कहा कि परमपूज्य ज्ञानसागर जी महाराज ने हमारे नगर मे ज्ञान की वह ज्योति जला दी है जो पूर्व मे अन्यान्य नगरो मे भी प्रदीप्त कर चुके हैं।

पू मुनिरत्न वैराग्यसागर जी से सचालक ने अनुरोध किया, तब उन्होने गुरुभक्ति से पगा एक प्रेरक भजन सुनाया। बारी थी–अब श्रमणशिरोमणि पू ज्ञानसागर जी की, उन्होने पिच्छिका और कमडलु का महत्व प्रतिपादित करते हए बतलाया कि ये दिगम्बर सत के बाह्यचिह्न कहे जाते हैं, इनके बगैर दिगम्बरत्व अधूरा माना जाता है।

जिन धार्मिक श्रावकों ने नूतन पिच्छिकाएँ प्रदान की थीं, और जिन सयमी श्रावकों ने पुरानी पिच्छियाँ प्राप्त करने का सौभाग्य अर्जित किया था, गुरुवर ने उन्हे आवश्यक निर्देश प्रदान किये और उनके पुण्योदय के भाव व्यक्त किये।

चातुर्मास के चलते अनेक कार्यक्रम निवाई–समाज ने आयोजित किये थे। मच पर उनका मधुर स्मरण किया गया। पर्युषण के पावन दिनों की याद ऑखो मे उतर आई। फिर शाकाहार सम्मेलन, विशाल विकलाग सहायता शिविर, सराक प्रशिक्षण शिविर आदि की यादे।

अत मे गुरुवर ने हिदायत दी– 'जिनने पिच्छिकाये प्राप्त की हैं, उन्हे तो सयम मे बॉध ही दिया, किन्तु जो जन यह "सयमोपकरण समारोह" अपने चक्षुओ से देख रहे हैं, वे भी जीवन–विकास हेतु आज कोई न कोई नियम अवश्य ले।' कहे–देखते ही देखते सहस्रो लोगो ने एक–एक नियम धारण कर लिया। निवाई मे 'नियमाई' की बाढ आ गई। उपस्थित हर श्रावक धार्मिक जो था।

फिर दिल्ली से पहुँचे श्री विनयकुमार जैन ने सपरिवार उपाध्यायश्री की आरती की। ❑

रात्रि बीती। प्रभात ने चरण धरे। पुन निवाई मे हलचल मच गई। घर मे हलचल, प्राण–प्राण मे हलचल–आज शायद गुरुवर प्रस्थान करेगे? विहार। दो नवम्बर 2000 को पुन उसी सभाभवन मे सम्पूर्ण नगर समाया जा रहा था। समय प्रात काल का। गुरुवर ने सदा की तरह प्रेरक प्रवचन प्रदान किया किन्तु आखरी मे कह उठे–वर्षायोग के बधन से मैं मुक्त हो चुका हूँ, अब जीवन के निर्झर का बहते रहने का समय आ गया है, 'रमता योगी बहता पानी' की उक्ति तो आपलोग जानते ही हैं।

जनता के मन मे जो भय था, वह पुष्ट हो गया। अत तभी वरिष्ठजन उठे। गुरुवर के चरणो मे श्रीफल चढ़ाया और प्रार्थना की कि शीतकाल भी यहाँ ही पूर्ण करे।

पर दिगम्बर सतो को आज तक किसी का नेह नही बॉध सका था। अत निवाई के श्रावक भी न बॉध पाये। गुरुवर ने स्पष्ट कर दिया कि विहार आज ही नही, "अभी" होगा।

बेचारे श्रावक दुखी हो पडे, उन्हे लगा कि जो हीरा उनके पास था, वह उनसे विलग हो रहा है। ऑखो मे अश्रु उतर आये। माताएँ सिसकने लगी।

गुरुवर ने गम्भीरता समाप्त करते हुए कहा–चार माह से धर्म का अभ्यास कर रहे हैं आप लोग, फिर यह मोह कैसा? गुरुवर की वाणी सुन श्रावक विकल हो उठे, एक सुधी श्रावक अश्रु पोछ कर बुदबुदाया– 'हे नाथ, यह मोह नही है, यह हमारी भक्ति है। हम इसी तरह भक्ति करते है।' काश कोई वह आवाज सुन पाता, वह तो अधरो पर ही रह गई। सत्य तो यह है कि वह अधर तक आ ही न पाई थी, वह तो मन से निश्रित भर हुई थी। वे अधर और वह मन किसी साधारण श्रावक के नही थे, वे थे मुनिभक्त श्री–राधेश्याम मित्तल के, जो कई माहो से नसियाजी मे रुक रहे थे रात्रि मे।

वे शब्द उनकी वृद्धा माता के थे जो अस्सी वर्ष की आयु मे भी नित्य गुरुवर के दर्शन लाभ ले कर ही अन्य कार्य करती थी। वे शब्द उनकी धर्मपत्नी श्रीमती भूरीबाई के थे जो गुरुवर की सेवा के साथ साथ, उनके आगत–भक्तो को अपने वात्सल्य, सेवा और आदर से सिंचित करती रही थीं महीनो से। सच, वे शब्द पूरे निवाई के श्रावको के थे। जन–जन के थे।

प्रवचन सभा, विदाई–सभा मे बदल गई। विदा की बेला मे लोगों ने अपने–अपने उद्‌बोधन दिये–दुखी मन से। लोगो के दुख पर आध्यात्म का मलहम लगाया बहिन–द्वय ने अपनी वाणी से।

सम्पूर्ण समाज और निवाईनगर की भावनाओ का खुलासा किया श्री विनयकुमार देवबन्द के उद्‌बोधन ने। हर चेहरे पर विषाद था, हर ऑख मे पानी, गुरुवर समझ रहे थे कहानी। श्री बजरगलाल और श्री महावीरप्रसाद के वाक्य भी कम न थे, उनमे वियोग का मौन दर्द समाहित था।

मगर तब तक मुनिवर वैराग्यसागर जी की वाणी ने भक्तो का दुख कम कर दिया। जब वे बोले– 'गुरुवर ने अपनी पीयूष–तुल्य वाणी से, गत माहों में, आपके भीतर जो श्रद्धा और भक्ति का दीप प्रज्वलित किया है, वह बुझने न पाये, उसकी ज्योति चमकती रहे। कहीं ऐसा न हो कि कालान्तर मे आप पुन. खाली हो जावे।'

मुनिवर का संकेत भक्तगण समझ रहे थे, पर वे कुछ बोल न सके। यदि उनसे कोई पूछता तो वे (भक्त) यही कहते कि गुरुवर की वाणी तो वाणी, सम्पूर्ण छवि इस हृदय मे उतर आयी है, जब भी आओगे, यहाँ (भीतर) वे ही मिलेगे।

भक्तो की वेदना को पू उपाध्यायश्री महसूस कर चुके थे। अत उस दिन, विदा की बेला मे, अधिक कुछ नहीं कहा, थोडा सा बोले और चुप हो गये। चुप होने के पूर्व एक वाक्य भारी करुणा से बोले– 'हम साधुसतो से कोई त्रुटि हो गई हो तो क्षमा कर दीजिएगा।'

उनका वाक्य सुन सम्पूर्ण जनमानस सिसक–सिसक कर–रोने लगा। भीड कहना चाहती थी कि नाथ, त्रुटियाँ आपसे नही, हम से हुई है, पर आवाज हृदय मे ही रह गई। तब तक गुरुवर ने विहार कर दिया। सारा नगर सडक पर उमड पडा। आगे–आगे मुनिसघ, पीछे–पीछे श्रावकगण। लोग आगामी पड़ाव तक साथ न छोड सके। चलते रहे।

गली–गली आरती। चौराहो पर पाद–प्रक्षाल का क्रम न थमा। गुरुवर सभी को उपकृत करते हुए चले गये। ❑

सम्पूर्ण समाज उस–दिन गुम–सुम रहा, रहा उदास। गुरुवर का विहार पुरुषो और महिलाओं को बराबरी से त्रास दे रहा था। तभी एक माँ को वह घटना याद हो आई जिसके कारण पूरे मुहल्ले मे सनसनी फैल गई थी, है वह स्मरणीय। हुआ यह था कि जब चातुर्मास चल रहा था, तब श्री कमलशाहहाथी (चदेरी), वहाँ निवाई के सभाकक्ष मे अन्त्याक्षरी–कार्यक्रम सम्पन्न करा रहे थे। रात्रि साढ़े–आठ बजे का समय था। सभा–कक्ष के बाजू मे एक कमरे मे पू उपाध्यायश्री सामायिक कर रहे थे। उस कमरे के बगलवाले कमरे मे, आयोजकगण, प्रतियोगार्थी बच्चो के लिये चाय बना रहे थे। वहाँ जो गैस का सिलेन्डर उपयोग मे लाया जा रहा था, अचानक उसकी नली मे आग लग गई। सिलेन्डर से बडी–बडी लपटे निकलने लगीं। उस कमरे के लोग ऐसे घबडाये कि तीव्रगति से भाग कर सभाकक्ष मे आ गये। वहाँ बैठे लोगो ने कमरे की ओर देखा तो एक पल मे समझ गये कि गैस–सिलेन्डर जल रहा है। फलत वे भी भगदड़ में शामिल हो गये। सभाकक्ष में करीब पाच सौ लोग थे, जिसे जो दरवाजा पास दीखा, उसमे से फुर्र हो गया।

पूज्यश्री जहाँ बैठे थे, सो बैठे थे। युवको को उनका ध्यान आया सो घबडा कर उनके कमरे मे घुस गये, पर करें क्या, गुरुवर तो सामायिक कर रहे थे। युवको ने स्वविवेक से निर्णय लिया, मिलकर फुर्ती से पूज्यश्री को तख्त सहित उठाया और कमरे से बाहर ले गये, वे सामायिक–लीन बैठे रहे।

इस बीच एक बहादुर–युवक स्वेच्छा से सिलेन्डर वाले कमरे मे गया और प्राणो की चिन्ता न कर, अपने हाथ से रेगुलेटर बद कर दिया। कुछ लोगो ने बोरियो मे भर कर आग पर रेत डाली। आग शांत हो गई। गुरुवर सामायिक में जैसे बैठे थे, वैसे ही बैठे रहे। एक भारी दुर्घटना टल गई। जनसमूह ने जोर से पूज्यश्री का जयघोष किया।

बात धीरे–धीरे आई–गई हो गई, पर निवाई के श्रावक घटना को कभी भूल नही पायेंगे। ❑

गुरुवर का विहार जारी था। वे निवाई से प्रस्थान कर अतिशय क्षेत्र पद्मपुरा, सागानेर, खनियाजी (जयपुर) होते हुए दोसा चले गये।

फिर गुरुवर का विहार अलवर की ओर हुआ। मगर रास्ते के हर गॉव–शहर के भक्त आशा लगाए बैठे थे कि गुरुवर 'हमारे यहॉ से' अवश्य निकलेगे। अनेक नगरो की तरह अजबगढ अतिशय–क्षेत्र के श्रावको का भी भाग्योदय हुआ जब गुरुवर 15 एव 16 नवम्बर 2000 को आयोजित किये जा रहे प्रतिष्ठा–समारोह के निमित्त वहॉ पहुँचे।

गुरुवर के लिए हर गॉव–शहर सम्पूर्ण भक्ति भाव से अगवानी और अर्चना के लिए हाजिर होता है। क्रम दसियो–वर्ष से बना हुआ है। वे रोके चाहे टोके, पर श्रावकगण अपने भक्तिभाव मे कमी नही आने देते। उपलब्ध साधनों और सामर्थ्य का भरपूर उपयोग करते हैं।

यहॉ भी वह क्षण आया। गुरुवर नगर–सीमा पर। नगर उन्हे लेने एकत्र। गाजेबाजे, कपडपट्ट, ध्वज। मगल कलश, मंगलदीप। विशाल शोभायात्रा। गुरुवर का नगर–प्रवेश।

श्री प्रेमचद जैन, श्री पदमचद जैन आदि का श्रम साकार हो सका, जब नियत समय पर भगवान अजितनाथ स्वामी का भव्य वेदी प्रतिष्ठा समारोह पूज्यश्री के सानिध्य मे हो गया। दो दिन गुरुवर बहुत व्यस्त रहे। प्रवचनो मे उन्होने क्षेत्र का गौरववर्धन करते हुए कहा कि मदिरजी मे 'अतिशय' घटना मात्र से नही, भक्तो से भी होता है। अजबगढ मे यह प्राचीन मूर्ति अतिशयकारी है। मदिर और मूर्ति के प्रति की गई– श्रद्धा ही श्रावक को श्रेष्ठ बनाती है।

ब्र अनीता दीदी यहॉ भी प्रवचनो के पश्चात प्रश्नमच का आकर्षक आयोजन करती थी, जिसमे सुधी–श्रोता तुरन्त पुरस्कृत होते थे। नगर और नगरेतर श्रावको की भारी भीड़ अजबगढ मे बनी रही। प्रमुख समाजसेवी श्री खिल्लीमल जैन, श्री प्रेमचद शाह, श्री बाबूलाल जैन छाबडा, श्री राजेन्द्र जैन, श्री पदमचदगोधा, श्री किरण जैन, श्री महेन्द्र कुमार जैन पत्रकार आदि की उपस्थिति उल्लेखनीय रही।

अजबगढ राजस्थान मे थानागाजी के पास है। गुरुवर के आगमन से वहॉ का प्राचीन मदिर सुदर स्वरूप पा गया। समूचे कार्यों और कार्यक्रमो मे थानागाजी के युवको का सहयोग सभी ने सराहा।

गुरुवर को जितना समय देना था, दिया। फिर अन्य स्थानो की तरह, यहॉ भी, भक्तो को प्यासा छोडकर, विहार कर गये। उनकी यात्रा अलवर की ओर थी। भारी जुलूस साथ चल रहा था।

15 नवम्बर 2000 को गुरुवर जब अजबगढ–नगर मे धर्म–समारोह मे व्यस्त थे, तब इधर बिहार प्रान्त मे एक नये राज्य का उदय हुआ–झारखण्ड प्रान्त। सराक क्षेत्र की जो बस्तियॉ बिहार की सीमा मे आती थी, उनमे से अधिकाश झारखण्ड मे आ गईं। सम्पूर्ण झारखण्ड में खुशियॉ मनाई जा रही थीं। उन खुशियो मे सराक–भाइयो की खुशियॉ भी समाहित थीं।

अलवर राजस्थान प्रान्त के उन गिने–चुने जिलो मे से है जहॉ प्रारम्भ से ही साधु–सत समय देते रहे हैं। जहाँ की भूमि उर्वरा है। जहॉ धरती का पानी अभी कृषि और कृषक को सहयोग दे रहा है। जहॉ बडे से बड़े अकाल के समय भी धरती ने कुछ न कुछ फसल अपने बेटो को दी है।

सभी को धन्य करने वाला, नगर, उस दिन स्वत धन्य हो उठा जब वहाँ नवम्बर 2000 मे परमपूज्य उपाध्यायश्री 108 ज्ञानसागर जी महाराज का ससघ आगमन हुआ।

नगर के सर्व वरिष्ठजन–समाजसेवी, अधिकारी, श्रावक, साहित्यकार, पत्रकार, कलाकार और कर्मचारी–गुरुवर की अगवानी के लिए नगरसीमा पर प्रतीक्षारत थे। विशाल जनसमूह। गुरुवर जयपुर की ओर से अलवर की तरफ बढते हुए, पहुँच गये। श्रावको ने पाद–प्रक्षालन किया, आरती की। विशाल शोभायात्रा के साथ गुरुवर को 'नगर–प्रवेश' कराया।

अवसर था–पचकल्याण्क प्रतिष्ठा महोत्सव का। वहाँ के धर्मसेवी श्री बच्चूसिंह और उनके परिवार ने अपनी स्वर्गीय मातेश्वरी श्रीमती विलासमतीजी जैन एव पिता श्री मगतूराम जैन की पुण्य स्मृति मे 'अहिसा–स्थल' का रमणीय निर्माण कार्य कराया था। उसी सरोकार मे था वह प्रतिष्ठा–समारोह, दिनाक 27 नवम्बर से 1 दिसम्बर 2000 तक। महोत्सव–समिति के कार्यकारी अध्यक्ष श्री खिल्लीमल जैन एडवोकेट, सरक्षक एव प्रसिद्ध समाजसेवी श्री ताराचद जैन प्रेमी तथा वरिष्ठ– सदस्य श्री बच्चूसिह ने नगर और विनगर से अनेक महत्वपूर्ण लोगो को आमत्रित किया था, लगा, उन्ही की प्रार्थना पर पूज्यश्री पधारे थे।

कार्यक्रम तो प्रतिदिन हुए, श्रेष्ठ ढग से हुए। किन्तु 28 नवम्बर 2000 को कुछ विशेष माने गये। उस दिन भारी व्यस्तता निर्मित हो गई थी–पूज्यश्री के समक्ष, समिति के समक्ष, श्रावको के समक्ष। जन्म–कल्याणक की क्रियाएँ पूर्ण करते हुए, अहिसा–स्थल पर निर्मित कैलाशपर्वत पर सौधर्म इद्र आदि देवो और इद्राणियो के द्वारा भगवान आदिनाथ का महा–मस्तकाभिषेक भक्तिपूर्वक किया गया। गुरुवर के सारगर्भित वचनामृत से लोगो की थकावट चली गई, चेहरो पर तेज आ गया।

फिर श्रुत सवर्द्धन पुरस्कार–समारोह श्रेष्ठश्रावक श्री उम्मेदमल पाण्डया की अध्यक्षता में आयोजित किया गया। जिसमे पू उपाध्यायश्री की उपस्थिति मे देश के पाँच विद्वानो को सम्मानित किया गया–पू नाथूलाल शास्त्री इदौर, डा शेखर चद्र जैन अहमदाबाद, डा वी के खरबड़ी, डा जयकुमार जैन एव श्रीमती डा रश्मि जैन।

अवसर विशेष पर सस्थान के अध्यक्ष डा नलिन शास्त्री, महामत्री श्री हस कुमार जैन, डा अनुपम जैन ने विचार रखे। बाद मे गुरुवर के प्रवचन सुनने का शुभावसर भी प्राप्त हुआ। उन्होने बहुत प्यारा सकेत किया था– 'आप यहाँ विद्वानो का सम्मान होता देख रहे हैं, मगर मैं मानता हूँ यह जिनवाणी ही का स्वागत–सम्मान है।'

उक्त कार्यक्रमो से पहले, अहिसा–स्थल के समीप बनाये गये–महोत्सव–पडाल (अयोध्यानगर) मे 'श्री भारतवर्षीय दिगम्बर जैन सघ, चौरासी, मथुरा' का अधिवेशन किया गया जिसके, मुख्य अतिथि थे–श्रावक–रत्न श्रीमान साहू रमेशचद्र जैन। अधिवेशन मे बहुमान प्राप्त वयोवृद्ध श्रावक श्री ताराचद 'प्रेमी', श्री नरेशकुमार सेठी, पू नाथूलाल शास्त्री एव श्री राजेन्द्र जैन ने महत्वपूर्ण विचार रखे। मधुर सचालन श्री प्रेमी जी ने किया था और अध्यक्षता श्री स्वरूप चद जैन (मारसस) ने की थी।

गुरुवर के सानिध्य के कारण सुबह से शाम तक कार्यक्रम श्रेष्ठ–धरातल पर रहा, गरिमायुक्त। इसी तरह अन्य दिनों मे भी भारी धूमधाम से विभिन्न कार्यक्रम होते रहे।

उसी पण्डाल मे, उसी मच से 'भारतवर्षीय दिगम्बर जैन सराक ट्रस्ट, की बैठक भी हुई, ट्रस्ट के राष्ट्रीय–अध्यक्ष साहू रमेशचद्र जैन ने तब स्पष्ट रूप से बतलाया कि पश्चिम–बगाल के साथ साथ, उसकी सीमा से लगे बिहार और उडीसा–अचल के समस्त सराक बधुओ के लिए लगातार स्कूल, औषधालय, वाचनालय और रोजगार केन्द्र खोलने की महती–आवश्यकता है। पूज्य गुरुवर की प्रेरणा से ट्रस्ट इस दिशा

में कुछ कार्य कर चुका है, पर यह कार्य मात्र ट्रस्ट भर का नहीं है, इसके लिए हर नगर–प्रान्त के समाज को सहयोग देने सामने आना होगा। बैठक मे श्री उम्मेदमल पाण्ड्या ने सराको के लिए बाग्ला–भाषा मे साहित्य प्रकाशित कराने और वितरित कराने का आश्वासन दिया। अन्य वक्ताओ मे श्री बाबूलाल पाटोदी, श्री सुमेरमल जैन चूडीवाल, श्री किशोर जैन, श्री मदनलाल जैन आदि ने महत्वपूर्ण विचार रखे और यथायोग्य सेवा करने के भाव प्रकट किये।

बारी आयी गुरुवर की। सम्पूर्ण सदस्यो ने गुरुवर से प्रकाश डालने की प्रार्थना की। तब उन्होने बतलाया कि वे गत एक दशक से देश के हर नगर मे एक बात ही कह रहे हैं, वह यहॉ भी कहना है– 'सराक बधु मूलरूप से जैन है, वे सब आपकी तरह ही श्रावक हैं, श्रावकरत्न हैं, श्रावक शिरोमणि है, किन्तु किसी मजबूरी के कारण वे अभिशप्त हैं और 'सराक' बनकर रह गये हैं। अब समय आ गया है कि देश का समाज और सभी राष्ट्रीय सघ, समितियॉ, सस्थाएँ, सभाएँ उनके लिए निरन्तर कार्य करे, उनके ग्रामो मे जावे, उन्हे सुविधा–सहयोग का प्रशस्त–पथ दिखलाएँ और अपने भाइयो को अपनत्व दे, अपना ले। जो साधन केन्द्र और प्रदेशो की सरकारे न दे पाये, वे समाज के श्रीमन्त उन्हे मुहैय्या कराएँ। सौभाग्य से सम्पूर्ण सराक बधु की मानसिकता मुख्य धारा से जुड जाने की बन चुकी है, वे धर्म–कर्म मे बहुत प्रगति कर चुके हैं, अब उन्हे आर्थिक–दिशा मे भी सहयोग देकर स्वाश्रित बनाया जावे। उनका उत्थान समाज के लिए धर्म का कार्य कहा जावेगा। वे अब अधिक जागृत हैं, पर उन्हे उचित धधो/व्यवसायो की जरूरत है जो समाज के लोग ही पूर्ण कर सकते हैं।

गुरुवर की वाणी पर लोगो ने गम्भीरता से विचार किया। खासतौर से सराक क्षेत्र से आये प्रतिनिधियो ने सन्त के इस महान परोपकारी–भाव की मुक्तकठ से सराहना की और उनके चरणो मे विनत हो अपने आपको कृतकृत्य किया।

सारे दिन कार्यक्रमो की गति तेज रही बाहर से आनेवाले अन्य महानुभावो मे श्री पूनमचद गगवाल, श्री सलेखचद कागजी, श्री प्रेमचद जैन कागजी,, श्री कैलाशचद जैन (जैना), श्री पारसदास जैन, श्री सुभाषचद जैन (शकुन), श्री स्वदेशभूषण जैन, श्री रमेशचद जैन, एडवोकेट, श्री धनपाल जैन दिल्ली श्री भागचद जैन आगरा, श्री जितेन्द्रकुमार जैन, डा राजीव जैन, श्री महावीरप्रसाद एडवोकेट मथुरा, श्री रजनीशकुमार, श्री बाहुबलीकुमार, श्री सुरेन्द्रकुमार जैन, श्री ओमप्रकाश जैन कोसी, श्री महावीर प्रसाद डीग, श्री मनवीर जैन, श्री सत्येन्द्रकुमार कामा श्री स्वरूपचद जैन, श्री जवाहरलाल जैन, श्री पदमचद जैन, श्री जयतिप्रसाद जैन, कस्तूरचद जैन आदि सक्रिय रहे।

एक दिसम्बर के कार्यक्रम मे गुरुवर ने राजस्थान दिगम्बर जैन महासमिति का आह्वान करते हुए कहा कि राजस्थान की पावन–भूमि पर वन्यप्राणी 'नील गाय' की हत्याओ को रोका जावे, सरकारी कानूनो को दिशा दी जावे और भविष्य मे सरकार किसी को लाईसेन्स जारी न कर पावे। उन्होने महासमिति के राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री प्रदीपकुमार कासलीवाल, राष्ट्रीय महामत्री माणकचद पाटनी, प्रदेशाध्यक्ष श्री महेन्द्रकुमार जैन, कार्यकारी अध्यक्ष श्री पदमचद सेठी एव श्रीमती शीला जैन सहित राजस्थान के लोकायुक्त श्री मिलापचद जैन को व्यक्तिगत तौर पर निर्देश दिए और मत्रणा की।

उनके रुख मे क्रातिकारी परिवर्तन देखा जा रहा था। क्योकि इसके पूर्व, अहिसा एव पर्यावरण सम्मेलन मे तो उन्होने मुख्य अतिथि की आसदी पर बैठे राजस्थान के कृषि मत्री चौधरी तैयब हुसैन से प्रश्न जड़ दिया था– 'एक तरफ तो आप अहिसा सम्मेलनो मे भाग लेने आते हैं और दूसरी तरफ आपकी सरकार नील गायो की हत्या के कानून शिथिल कर रही है, क्या यह आप उचित मानते हैं?

पत्थर की तरह उछाले गये प्रश्न से मत्री जी यकायक घबडा गये। फलत उत्तर देने का साहस नही कर सके, नीचे देखने लगे। बाद मे उन्होंने अपने भाषण मे स्पष्ट करते हुए कहा "गुरुवर का प्रश्न पल–पल मेरी चेतना में रहेगा। अत मैं जब तक अनुकूल कार्यवाही करने के लिए शासन को प्रेरित नहीं करुँगा, तब तक मैं अपने आप को कर्त्तव्यनिष्ठ कैसे कहूँगा?" ❑

भारी सफलताओ और प्रेरणाओ के साथ, पू मोतीलाल जी मार्तण्ड के प्रतिष्ठाचार्यत्व मे समारोह सम्पन्न हो गया। अब गुरुवर के चरण थे–पहाडी नगर की ओर, वह भरतपुर जिला मे अवस्थित है। सभी श्रावक जानते थे कि वहाँ भी 6 से 11 दिसम्बर 2000 तक भगवान चद्रप्रभु पचकल्याणक–प्रतिष्ठा समारोह है। अत चाहते हुए भी, कोई उन्हे रोक नहीं पाया। वैसे भी गुरुवर कब, किसके कहे पर रुके हैं?

समारोहो के वर्णन मे यह लेखनी अधिक शब्द नहीं देना चाहती है। पर जहाँ गुरुवर विराजे हो, जहाँ अतिशयकारी प्रभावना हो रही हो, जहाँ कार्यक्रम आदोलन बन गया हो, वहाँ के विषय मे लिखा जाना श्रेष्ठ शिष्टाचार माना जावेगा।

पहाडी मे भावभीनी/श्रद्धाभीनी अगवानी के पश्चात अन्य कार्यों या कार्यक्रमो के लिए समय ही न बचा था। अत गुरुवर ने सीधा–सीधा सानिध्य प्रदान कर दिया समारोह को। यहाँ भी वे ही समाज सेवी व्यवस्था सम्भाले थे जो अलवर मे थे। कार्यक्रम के अध्यक्ष थे सुविख्यात समाजसेवी एव गीतकार श्री ताराचद जी प्रेमी। कार्याध्यक्ष श्री खिल्लीमल एडवोकेट एव श्री महावीरप्रसाद जैन थे, महामत्री श्री बच्चूसिह।

6 दिसम्बर को गुरुवर से आशीष लेकर अलवर के जयतिपरिवार के प्रमुख श्री मगतूराम जैन ने ध्वजारोहण किया। प्रसिद्ध विद्वान पू मोतीलाल मार्तण्ड और पू सुधीरकुमार ने प्रतिष्ठा–कार्य को गति दी।

देखिये, कार्यक्रम किस तरह आदोलन बन जाता है? उसी दिन झडारोहण से पूर्व जिनेन्द्र–रथ–यात्रा का मनोहर दृश्य सामने आ चुका था, किन्तु मध्याह्न मे जब 'विशाल सर्वधर्म सम्मेलन' का आयोजन किया गया तो वह देखते ही देखते आन्दोलन बन गया, जब, गुरुवर ने प्रवचन के दौरान कहा– "भगवान रामचद, श्री कृष्ण, महावीर स्वामी, पैगम्बर मोहम्मद, गुरुनानक आदि ने सदा वात्सल्य, करुणा और मैत्री पूर्ण जीवन की प्रेरणा दी है। किन्तु उनके उपासक सत्ता प्राप्त कर लेने के बाद भी उक्त तीनो तत्वो की जननी 'अहिसा' की रक्षा नही कर पा रहे हैं। गाय तो गाय, राजस्थान का सुप्रसिद्ध वन्यपशु 'नीलगाय' का वध कराने के लिए लाईसेन्स दिये जा रहे है। इस कार्य मे उक्त सभी भगवानो द्वारा वर्णित/प्रवर्तित अहिसा की ही हत्या हो रही है। उन्हे रोकने का दायित्व कौन लेगा?"

वचन सुनकर सभा तो सभा, मच पर भी सन्नाटा फैल गया। कोई कर्मवीर उठ कर न बोल सका– 'इस कार्य को मैं करूँगा।'

तब गुरुवर ने ही रास्ता बतलाया–आप क्या करेगे? कुछ नही करेगे, मैं जानता हूँ। किन्तु यदि आपने मेरे स्वर से स्वर मिला दिया तो हिसा रोकी जा सकेगी।

सुनते ही तालियाँ गडगडा गईं। समस्त जन सम्मत हो गये–'हम गुरुवर के साथ हैं।'

उस दिन भी मच पर सामान्यजन नही थे, अतिविशिष्ट जन थे–प्रख्यात गाँधीवादी विचारक दीदी निर्मला देशपाण्डे, डा शकील अहमद, डा वीरेश उपाध्याय हरिद्वार, ब्रह्मकुमारी कविता बहिन आबू, डा ए के. मर्चेन्ट। अध्यक्ष थे कृषिमत्री श्री हुसैन। सभी ने भाषण दिये थे, पर गुरुवर के प्रवचन से सबके कान खडे हो गये थे फलत नीलगाय की सुरक्षा के उपाय तुरन्त–प्रभाव से विचारित किये जाने लगे।

कार्यक्रम नित्य चल रहे थे। 9 दिसम्बर 2000 को तपकल्याणक था। 10 को ज्ञान कल्याणक, उसी दिन अखिल भारतीय दिगम्बर जैन युवा परिषद द्वारा प्रतिभा सम्मान समारोह रखा गया। उसी दिन न्यायाधीश श्री सी के चतुर्वेदी दिल्ली के मुख्यातिथ्य मे 'अहिसा एव पर्यावरण सम्मेलन'। गुरुवर ने प्रेरक उद्‌गार प्रदान कर वहॉ उपस्थित मुख्य वक्ता–पर्यावरणविद डा सरदार सिह ढावरिया, सहित डा डी सी जैन, सुश्री इकबाल मलिक, डा योगेश अरोडा और श्रीमती कुसुम जैन के साथ–साथ मुख्य अतिथि के मनप्राण को आदोलित कर दिया।

कार्यक्रम तो 11 दिसम्बर तक चलते ही रहे, पर गुरुवर का वह क्रॉतिद्रष्टा का 'बाना' कोई न भूल सका। सभी ने अनूभूत किया कि यह सत सरल शब्दो मे गम्भीर समस्याओ पर इगित करते हैं और समाधान जुटाने के सूत्र देते है।

पहाडी के उस विशाल–समारोह मे सीकरी, फिरोजपुर झिरका, जुरहरा, कामा आदि का समाज तो आया ही था, वहॉ से अनेक युवा मडल भी आये थे जो उत्साह से कार्य कर रहे थे। पहाडी–समाज तो चौबीस घटे लगातार व्यस्त रहा था 15 दिनो तक। फलत कार्यक्रम ऐतिहासिक हो गया था। ❑

19

'विश्ववंद्यनीय'

जैसे रोज–रोज जाप देने मे मन लग जाता है, लगा रहता है, वैसे ही पू उपाध्यायश्री की दिनचर्या पढ़ने में भी वह लगा रहेगा; यह जानते हुए भी इस कथा को यहाँ विराम देना चाहता हूँ। वे, हमारे परमपूज्य योगीश्वर कभी विराम नहीं लेगे, वह तो हम/ससारियों को लेना पडता है। उनकी कथा तो निरतर है, वह उनकी ही गति से चलती रहेगी।

पूज्यश्री के 43 वर्षीय जीवन–दृश्य पढने/देखने के पश्चात उनके व्यक्तित्व के नौ बिन्दु हमारे मानस मे सदा कौंधते रहेगे। प्रथम है उनका **दर्शन पक्ष,** जिस पर मैं सम्पूर्ण विश्वास के साथ कह सकता हूं कि वे आत्मकल्याण मे रत एकमात्र यति है–जो समाज–कल्याण के कार्य विशेष स्तर पर सम्पादित करते हैं। वे देश मे एकमात्र अध्यात्मयोगी–सन्त कहलाते हैं। उनका दर्शन ही उनका व्यक्तित्व है जिसके कारण व्यक्तियो के चरित्र सुधरे हैं और समाज को चारित्रिक क्राति की दिशा मे बल प्राप्त हो सका है।

हर पुण्यात्मा का एक आभामडल होता है और हर विचारक का अपना 'दर्शन' होता है। गुरुवर के आभामडल मे जैन वागमय और जैन–मदिरो के रक्षण–सुरक्षण के सूत्र दमकते हैं तो दर्शन मे–उद्यमियो, राजनेताओ, डाक्टर, वकील, पत्रकार, साहित्यकार, पडितवर्ग का जनसामान्य से तादात्म्य बनाना और दोनो के हित मे नये सेतु निर्माण के भाव हैं। धर्म, साहित्य, सस्कृति और धनी–निर्धन के लिए वे नित्य ऐसे आन्दोलनो को जन्म देते है, जिन्हे पहले हम कार्यक्रम/गोष्ठियॉ आदि मानते है, पर बाद मे पता चलता है कि कोई आन्दोलन छेड कर गये है। आन्दोलन–आत्मा और शरीर के बीच, अहिसा और हिसा के बीच, शाकाहार और मासाहार के बीच, पर्यावरण और प्रदूषण के बीच, निरोग और रोग के बीच, सराक और उपेक्षा के बीच, ज्ञान और अज्ञान के बीच, सदाचार और कदाचार के बीच, आत्मानुशासन और दु शासन के बीच।

गुरुवर की तुलना करते समय दो 'प्रापर–नाउन' ही याद रहते हैं–हिमालय और हिन्द महासागर। सच वे हिमालय से अधिक ऊँचे दीखते है, तो रत्नाकर से अधिक गम्भीर। वे वीतरागियो के पथ पर चलने वाले सत्यान्वेषी सत हैं। आत्मोत्थान के सर्वोच्च सोपान तक चढने वाले पौषध–पथी। रत्नकरण्ड–श्रावकाचार मे वर्णित और निरूपित दिगम्बर मुनि और उपाध्याय के समस्त गुण उनमे स्थापित हैं, सचित हैं, सो वे आदर्श–सत हैं।

द्वितीय है उनका **ज्ञान–पक्ष।** वे ज्ञानवान तो हैं ही, ज्ञानवानो की तरफ सदा दृष्टि भी रखते हैं। यही कारण है कि उन्होने न्यायाचार्य पडित महेन्द्रकुमार जैन, श्री पू जुगलकिशोर मुख्तार, प नन्हेलाल जैन पर विचार–गोष्ठियॉ आयोजित कराईं और स्मृति–ग्रथ प्रकाशित कराये। डा नेमीचद्र शास्त्री के ग्रन्थ 'तीर्थंकर महावीर और उनकी आचार्य परम्परा' के चार भागो का पुन प्रकाशन कराया।

विद्वानो का सम्मान कराना, विद्वतगोष्ठियॉ कराना, विद्वानो के प्रति सदा वात्सल्य छलकाना उन्हे–दिगम्बर साधु परम्परा का आदर्श–श्रमण घोषित करते हैं।

वाचना–शिविरो की ज्ञानवर्धक परम्परा मे कीर्तिमान बनाने वाले वे पहले सत हैं, जिन्होने 'न्ययाविद्या वाचना–शिविर' भी लगवाया था ललितपुर मे।

अप्रकाशित एव अनुपलब्ध साहित्य की खोज कराने, शोध कराने और प्रकाशित कराने मे उनका योगदान सर्वोपरि है। प्राचीन दुर्लभ ग्रन्थ 'तिलोय पण्णत्ती' को समाज उनके आशीष से ही प्रकाश मे ला सका है। पहले बिहार प्रान्त मे और बाद मे उत्तर प्रदेश मे 'प्राच्य श्रमण भारती' एव 'आचार्य शान्तीसागर 'छाणी' स्मृति ग्रन्थमाला की स्थापना उसके आधारस्तभ हैं।

उपाध्यायश्री प्रज्ञा–शिखर–पुरूषो के मुकुट हैं और 'ज्ञानदान' तथा 'अभयदान' देने वाले एकमात्र दानी–साधु हैं। पाठको को यह सुधि होगी कि आगम का तलस्पर्शी अध्ययन कर ज्ञानार्जन करने वाला व्यक्तित्व ही ज्ञानदान कर पाता है।

ज्ञान का सरोकार ध्यान से है और ध्यान का योग से, पूज्य गुरुवर योग–साधना मे भी प्रवीण हैं। वे जब क्षुल्लक अवस्था मे थे, तब, सन 1978 मे, योग सीख चुके थे। कठिन आसन, प्राणायाम और ध्यान की विधियॉ–उनके 'अतिरिक्त–ज्ञान' के प्रतीक हैं।

आज तो समाज और समाज के विद्वान उन्हे एक स्वर मे 'युगचितक' कह कर आत्मगौरव का अनुभव करते हैं। सच, वे विचार क्राति के अग्रदूत हैं। उनकी अनन्त–ज्ञान–शलाका श्रावको मे उत्तम श्रावकत्व जागृत करती है।

तृतीय पक्ष है **चारित्र**–

'वीतराग–साधना' के प्रतीक, महाव्रती पू उपाध्यायश्री की तप चर्या और तप शैली उनके अनेक जन्मो से साधु होने का बोध कराती है। वे आगमोक्त चर्या–सम्पादन मे मग्न हैं, तन के तापादि उन्हे कभी नही रोक सके। वे सयम के सजग प्रहरी सिद्ध हुए हैं, उनमे नि कषायवृत्ति पल–पल बनी रहती है। उनकी सादगी और साधना श्लाघनीय है। उनकी सरलता और सह्रदयता उनका परिचय है।

ब्रह्मचर्य–धर्म तीनो लोक मे वदनीय कहा गया है। उसका महत्व अनोखा है। गुरुवर तो बालब्रह्मचारी–यति है। अत उनका और उनके चरित्र का महातम्य हर वर्ग मे श्रेष्ठ है और हर जाति मे उत्तम है। उनकी वाणी से ही नही, उनकी दैनिकचर्या से भी जैन धर्म और सस्कृति का व्यापक प्रचार हो रहा है। उनके वचन स्याद्वाद और अनेकान्त के सिद्धान्तो का प्रतिपादन करते हैं तो चर्या/चरित्र–क्षमा, मार्दव, आर्जव, सत्य, शौच, सयम, तप, त्याग, आकिन्चन्य और ब्रह्मचर्य के पाठ पढाते हैं। श्री विजय शास्त्री ने एक जगह गुरुवर के विषय मे लिखा है–

ओ ! मानवता के केन्द्रबिन्दु, जीवन–निधियो के धनागार।
भविजन विभासि है ! पूर्ण–इदु, तुम करुणा के सागर अपार।।

चतुर्थ बिन्दु पर मैं उन्हे **उपसर्गजित** कह कर स्तुति करता हूँ–

उपसर्गो से विचलित न होने वाले गुरुवर के चरणो मे श्री अनूपचद की ये पक्तियॉ, वेदी पर चढाई गई द्रव्य– राशि की तरह मिलती हैं–

परिषहजयी अडिगविश्वासी, शीत होय या घाम है।
उपाध्यायश्री ज्ञानसिधु को बारम्बार प्रणाम है।

उपसर्गो पर विजय पाने मे नवजात शिशु की तरह निर्विकार एव निर्लिप्त दिगम्बर स्वरुप ही उनका कवच बनता है।

'सयम के धारक' के रूप में उनके परिचय का पाचवॉ बिन्दु भी अत्यत प्रकाशवान पाता हूँ –

उनका सयम ही उनकी आध्यात्मिक शक्ति का परिचय है। यही कारण है कि देश के बडे उद्योगपति और राजनेता उनसे आशीष लेने उनके चरणों में चले आते हैं। वे साधना में निरत उत्तम योगीराज हैं। उनका सयम उन्हें यतिपुगव घोषित करता है। उनकी साधना 'ज्ञान–ध्यान–तप' युक्त है।

वे मुन्योचित 28 मूलगुण के धारक–साधु तो हैं ही; पूर्णरूपेण आत्मान्वेषी हैं और हैं परम–पद के अन्वेषक भी।

उनकी सभा मे, उच्च अधिकारी, वरिष्ठ समाजसेवी, साहित्यकार, विद्वान–पडित आदि उन्हें सुनने तो पहुँचते ही हैं, उनसे मिलने घटो उनकी वसतिका के बाहर प्रतीक्षा करते भी मिलते है। किन्तु संयमधारी गुरुवर अपने वाणी–सयम और समय–सयम के धरातल पर उन्हे तो उन्हे, सामान्य श्रावक को भी, समतापूर्वक समय देते हैं।

'प्रवचन–शैली' उनके परिचय का छठवॉं अलकार है –

प्रवचन–कला मे उन्हे अलौकिक प्रतिभा सम्पन्न 'सिद्ध' कहा जावे तो कम होगा, क्योंकि वे जिनवाणी के प्रचार मे ही निजवाणी का उपयोग करते हैं, निजवाणी के लिए जिनवाणी का नहीं। इसीलिए उन्हे अभीक्ष्ण ज्ञानयोगी कहा जाता है। वे ज्ञानप्रकाशपुन्ज भी कहलाते हैं तो विद्वतप्रिय भी, क्योकि वे पल पल ज्ञानगगा का अवगाहन करते रहते हैं। और प्रवचन–काल के अनन्तर केवल आत्मकल्याण या जगतोद्धार के विषय प्रतिपादित करते हैं। वह वाणी का ही जादू है कि जिसे सुन–समझकर देश के अनेक प्रान्तो के श्रावकाश्रावको ने यावज्जीवन मास, मदिरा, मधु से लेकर मोह, ममता, मान तक का त्याग कर दिया।

जैनधर्म मे व्याप्त वैज्ञानिकता का सरल–विवेचन केवल उनके प्रवचनो मे ही प्राप्त होता है। उनकी वाणी मे घुला चुम्बकत्व चाहे जिसे आकर्षित कर लेने मे सक्षम है। वे दर्शनपक्ष के अनुशीलन के समय माईक पर सितार बजाते से लगते हैं तो सिद्धान्त पक्ष का वर्णन करते समय बिगुल बजाते चलते हैं। वे ऐसे प्रखर–प्रवक्ता हैं, जिनकी वर्णनशैली ही उन्हे तत्वदृष्टा और भेदविज्ञानी सिद्ध कर देती है। वे दिव्यवाणी के स्वामी हैं, तभी तो उनकी वाणी आदमी के हृदय–गवाक्ष के बद पट खोल देती है और अतरग मे विचारगत–निर्मलीकरण की क्रिया शुरु कर देती है। परिणामस्वरूप आतरिक तो आतरिक सामाजिक–द्वन्द्व भी समाप्त हो जाते हैं।

परिचय के सातवे सोपान पर हैं उनके **तप और त्याग**–

जिनका तपश्चरण उन्हे तपसी सिद्ध करता है, उन्हे मुन्योचित विभिन्न विशेषण देने की क्षमता लेखनियो में नहीं रह गई है। महाव्रतो के प्रति उनकी श्लाघनीय–निष्ठा उन्हें देश के दिगम्बर–आचार्यों–उपाध्यायों–मुनियो के मध्य श्रेष्ठ आसन प्रदान करती है, तब भी वे सरल रहे आते हैं, बिल्कुल निस्पृह और पल–पल प्रसन्नचित्त। वे तपोनिष्ठ–साधक हैं, सामान्य नहीं।

माटी से घट बनाने वाले कुम्हार चाहे जिस इलाके/क्षेत्र मे मिल जाते हैं, पर माटी मे सुवास उत्पन्न करने वाले सत दुर्लभ हैं, यदि हैं तो वे पू उपाध्यायश्री ही हैं।

उनकी तपश्चर्या ज्ञान और आचार के सम्यक्–समन्वय पर चलती है, मात्र भूख–साधकर या मौन रखकर नहीं। वे परिषहजित हैं। उनका जीवन तप का प्रच्छन्न उदाहरण है कि वे ज्ञान–ध्यान, तप–स्वाध्याय, अध्ययन–अध्यापन और विभिन्न व्रतो–उपवासो पर अमल करते हुए भी, विशाल सामाजिक कार्यक्रमो/समारोहो को सानिध्य प्रदान करते रहते हैं।

अहिंसा पर स्थापित गुरुवर का शाकाहार–दर्शन उनके परिचय का अष्ठम्–श्रेष्ठ अलकार है–

हर प्रसग मे शाकाहार के प्रचार का ध्यान रखने वाले और अहिसा धर्म का शखनाद करने वाले एकमात्र सराहनीय सत हैं। वे धर्म, साहित्य, सस्कृति, समाज तथा देश का सात्विक विकास चाहते हैं, उसी दिशा मे कार्य करते हैं।

शाकाहार सम्मेलन, शाकाहार रैलियॉ, शाकाहार विमर्श–गोष्ठियॉ, शाकाहार–प्रदर्शनी की आयोजना देश के हर अचल मे कराने वाले सत कौन हैं? परमपूज्य उपाध्याय ज्ञानसागर जी महाराज'।

वे गुरुवर, बतलाते है कि सतो के सानिध्य मे होने वाले आयोजनो का स्वरूप 'त्यौहारो' जैसा न हो पावे, वह 'पर्व' जैसा रहे। त्यौहार मे वस्त्रो–आभूषणो–पकवानो से जुडा राग कष्टदायक है, पर्व में ये तीनो अनुपस्थित रहते हैं, त्याग और आकिचन्य का साम्राज्य रहता है वहॉ। अत त्यौहार का व्यवहार न साधे, पर्व पर गर्व करे।

वे आहार–विहार–निहार के दैनिक पाठ पढाकर, श्रावको भर को नही, आत्मा को भी संस्कारित करते हैं। उनकी प्रेरणा से देश के अनेक नगरो मे करुणा सगठन, शाकाहार–प्रकोष्ठ, वेजेटेरियन–सोसायटी, युवामण्डल, महिला–समिति आदि सस्थाओ की स्थापना हुई है जो अपने–अपने क्षेत्र मे निरतर सक्रिय हैं।

सुनो, पाठकवृद्य सुनो ! उनका परिचय ही ऐसा है कि वह उनका गुणगान बन जाता है। अनेक क्षितिज है परिचय के और हर परिचय क्षितिज पर हैं। उनका सर्वश्रेष्ठ प्रचलित परिचय है सराकोद्धारक का। मुझे उस पर भी दो–शब्द कहना है–

सराक–उद्धार का कार्य जब हाथ मे लिया तो दूर से ही भाषण–प्रवचन नही करते रहे। सैकडो उपसर्ग झेलकर, सराको के क्षेत्रो मे गये। उनके बीच दो वर्ष तक रहे और देश मे 'सराकोद्धारक–क्राति' को जन्म दिया तथा उसे परिणाम तक पहुँचाया। जनजातियो मे समाहित हो चुके सराको को जैन धर्म की मुख्यधारा से जोड कर श्रावक बनाया। जैन समाज से जो कल तक 'उपेक्षित' थे, वे आज समाज की प्रथम 'अपेक्षा' के प्रतीक बन सके।

यही कारण है कि सराको के उद्धार के बाद, विद्वानो ने उन्हे एक स्वर मे 'चेतन तीर्थों का उद्धारक' कह कर बहुमान दिया है। वे युगचेतना के शक्तिपुन्ज है।

साम्प्रदायिक–सद्भाव की स्थापना की दिशा मे चल रहे महान 'लोक–यात्री' मे सराकोद्धार भर की कामना नहीं है, वे तो विश्व–मैत्री और विश्वकल्याण के प्रबल–पक्षधर सिद्ध हो रहे हैं हर डगर पर, हर–कदम पर।

गुरुवर के नाम के साथ 'कोई भी' उत्तम विशेषण जोडा जाता है तब वह तुरन्त सार्थ और सार्थक हो पडता है,, उन्हे वात्सल्यमूर्ति कहे या सराकोद्धारक, शाति का मसीहा कहे या अहिसा का पुजारी, वे वह–वह है। सरल–शात–सौम्य छवि वाले इस महान सत को चारित्र–चूडामणि कहे कि चारित्र चक्रवर्ती, सभी विशेषण बौने प्रतीत होते हैं, वे/गुरुवर इनसे अधिक 'कुछ' है, जिन्हे कवि की लेखनी से अधिक भक्तो की अतर्चक्षुऍं जानती हैं। भक्त जो बिहार–बगाल–उडीसा–झारखण्ड मे रहते हैं, देश के हर प्रदेश मे रहते हैं।

व्यक्तित्व ही ऐसा है गुरुवर का कि हर परिचय की एक विशाल गगा उनके मानसी–कलेवर की मनीषा लिए बहती हुई चली आती है हमारे नेत्रो तक। अत परिचय का क्रम भी यहॉ विराम चाहता है, यो परिचय नित प्रति विराट से विराटतम् हो रहा है। सम्पूर्ण भारतवर्ष ही उनका परिचय है, उसका वर्णन लेखनी के वश मे नहीं है। उनके बडे–बडे परिचय भले ही गिनवाने का प्रयास किया जाता रहा हो, पर वह (प्रयास) अभी तक पूर्ण नही हो पाया है।

सुनिए, उनके छोटे–छोटे परिचय भी हैं, पर वे भी अनगिनत हैं, नहीं बॉधे जा सकते हैं यहॉ। किन्तु कुछों की 'कुछ' चर्चा तो की ही जा सकती है।

वे एक अच्छे खिलाडी रहे हैं। खिलाड़ी–भावना से उनका हृदय–सागर सदा लहराता रहता है। कबड्डी उनका प्रिय खेल रहा है।

वे सितार बजाने मे प्रवीण हैं। यही कारण है कि वे जब समाजरूपी सितार पर ध्यान देते हैं तो तुरन्त निर्णय ले लेते हैं कि किस 'तार' को स्पर्श देने से कौनसा 'स्वर' उत्पन्न किया जा सकता है।

आदर्श–स्थापना और समाज–सुधार की दिशा में परमपूज्य अपाध्यायश्री स्वत एक महासितार हैं, जिसमे चार तार हैं, उन तारो से समाज को साधन, प्रज्ञा, सहजता और निर्मलता का लास्य प्राप्त होता है। यही कारण है कि हर प्रान्त का युवावर्ग उनके समीप मडराता रहता है और शीघ्र ही धर्म–मार्ग को स्थाई रूप से पकड लेता है, कभी पथच्युत नही होता। सितार की अनुगूज उसे हर कदम पर सुनाई देती रहती है।

श्रावको को वार्तादि के लिए सहजता से उपलब्ध हो जाने वाले साधु हैं, उनकी वसतिका के समीप स्वयसेवक, पुलिस या अन्य फोर्स किसी श्रावक के लिए रोड़ा नहीं बनते। तब विश्वास होता है कि गुरुवर 'दिखावे' पर विश्वास नही करते, न आडम्बर के बल पर अपना व्यक्तित्व–वर्धन करते हैं।

नारी–उत्थान की दिशा मे भी पू उपाध्यायश्री के कार्य अग्रणी हैं सम्पूर्ण देश मे, वे महिलाओं की महिमा का बोध कराकर देश की विदुषी–महिलाओ को समय पर महिमामडित करते चल रहे हैं।

वे पूर्ववर्ती स्वातत्र्य–सैनानियो की कडी मे, वर्तमान के एकमात्र राष्ट्रीय चेतना के अग्रदूत बनकर देश के मानस मे स्थान बना चुके हैं। वे ऐसे कर–पात्री हैं जिनके कर/हाथ समाज हैं। वे ऐसे पद–यात्री हैं जिनके हर कदम पर नये तीर्थ की गरिमा प्राप्त होती है। वे ऐसे दिगम्बर वेषधारी हैं जिनके साज–श्रृगार का कार्य दश दिशाये एक साथ करती हैं। वे ऐसे हित–मित–प्रिय वाणी के उद्घोषक हैं जिसे सुनकर श्रावक, बदी, धधी योग्य–आचार विचार धारण करते हैं। नवजात शिशु की तरह मधुर–मुस्कानो के जनक गुरुवर पू उपाध्याय ज्ञानसागर जी लोकेषणाओ से परे रहते हैं और आडम्बरो पर शब्द प्रहार करने से नहीं चूकते। राष्ट्रीय–विकास के उन्नायक हैं।

उनके व्यक्तित्व का बहिरग और कृतित्व का अतरग लोकमानस को आदर्श–चर्या का पाठ प्रदान करता है। श्री अनुपचद के शब्दो मे–

सतो की शुचि परम्परा मे जिनका ऊँचा नाम है।

उपाध्यायश्री ज्ञानसिधु को बारम्बार प्रणाम है। ❑

समाधिमति माता जी : गुरुवर की प्रथम शिष्या

जीवन को पल–पल जीते हुए भी, जीवन के रहस्य अनेक जन नहीं समझ पाते। गुरुवर की गाथा का प्रथम–सोपान सितम्बर 2001 मे पूर्ण हो चुका था। फलत पाडुलिपि, ब्र बहिन अनीता जी एव मजुला जी की ओर, अवलोकनार्थ भेज दी थी।

करीब साढे चार माह बाद, जब गुरुवर मेरठ–वर्षायोग पूर्ण कर मथुरा पधारे, तो मैं दर्शनार्थ वहाँ गया। बहिन–द्वय से भी वार्ता हुई। उन्होने बतलाया कि पाडुलिपि पढ ली/देखली है, परन्तु मेरठ–चातुर्मास मे एक महान क्षपिका (क्षपक) जी की देखभाल मे सितम्बर माह से ही ध्यान देना जरुरी हो गया था। अत जो एकाग्रता पाडुलिपि पर देनी थी, वह उनकी ओर चली गई। उनकी वार्ता से मैं चकित हुआ। सोचने लगा–कौन वह भाग्यशाली–महान–आत्मा होगी जो बहिन–द्वय को करीब साढे तीन माह तक अपनी ओर आकर्षित किये रही।

मैने पूछ लिया–कौन थी वह महान नारी? कुछ बतलाइये। मेरा प्रश्न सुन कर दोनो विदुषी बहिनो की आँखो मे चमक आ गई। था उनमे बहुत कुछ बतलाने का भाव। दोनो अपनी स्मृतियाँ उकेरने का मन बना रही थी। दोनो बहिने अपनी गरिमामयी–छवि के कारण हमे (मुझे और पुष्पा जी सरल को) आदरणीय ही नही, पूजनीय की झलक प्रदान कर रही थी।

तब तक ब्र अनीता जी ने पूछा–आपने सुना होगा कि पूज्य आर्यिका समाधिमति जी की, कुछ दिन पूर्व समाधि हो गई है?

– कब?

– अभी एक माह भी नही हुआ। आज 28 जनवरी है। बस 28 दिन पूर्व ही, 31 दिसम्बर 2001 को। उनकी कथा आप सुनोगे तो लिखने को उद्यत हो जाओगे। वे 87 वर्ष वय की महान–साधिका थी। गुरुवर की प्रथम शिष्या। उत्तम क्षपक।

– पूर्व नाम क्या था उनका।

– ब्र सुशीला जी।

क्षपक के प्रति बहिनो की श्रद्धा मैं समझ रहा था। अत मन ही मन तुरन्त निर्णय लेता हूँ कि उस महान नारी–रत्न की सक्षिप्त चर्चा, पाडुलिपि मे जोडूँगा।

हम दोनो, उन दो बहिनो से पू आर्यिका समाधिमति जी की जानकारी प्राप्त करने लगे। आदरणीय बहिन अनीता जी ब्र मजुला जी की ओर सकेत कर कहती हैं– 'ये सुनायेगी, मुझसे अधिक समय इन्होने दिया है उनके पास, उनकी सुश्रूषा मे, उनकी चर्या मे।' वाक्य सुनकर मजुला जी मुस्करा उठती हैं, फिर अपनी दीदीजी का पक्ष रखते हुए कहती हैं– मैंने भर नही दिया, इन्होने भी लगातार समय दिया था।

सच तो यह है कि आर्यिकाश्री की समाधि की सफलता का श्रेय कोई बहिन अकेले नहीं लेना चाहती थी। मैं उनका औदार्य समझ रहा था। उनके नि स्वार्थ और निस्पृह होने का परिचय उनकी वार्ता अपने आप प्रदान कर रही थी। दोनो विदुषियो ने बारी–बारी से याद कर, बतलाना शुरु कर दिया। प्रारम्भ ब्र बहिन मजुला जी ने किया। जहाँ वे भूलने लगतीं तो विषय को तुरन्त ब्र अनीता जी सम्भाल लेतीं-और आगे की वार्ता बतलाने लगतीं। कुछ ही मिनट बाद मजुला जी ने समाधि–वर्णन का भार अनीता जी पर छोड दिया। वे याद कर–कर, क्रमश बतलाने लगीं।

(28 और 29 जनवरी 2002 की सध्या बेला पू समाधिमति माता जी की चर्चा में ही बीती। दोनो बहिनो ने आत्मा की गहराई से अपने वक्तव्य सुनाये थे जिनका साराश है यहाँ।) ❑

परमपूज्य उपाध्यायरत्न 108 श्री ज्ञानसागर जी महाराज की प्रथम शिष्या–पूज्य आर्यिका 105 श्री समाधिमति माता जी की कथा उ प्र के नगर बिजनौर से शुरु होती है। अनेक श्रावको के मध्य, वहाँ, एक जैन–दम्पत्ति, श्री बुद्धसेन जी जैन एव श्रीमती कलावतीजी की गृह–बगिया मे, वैशाख–शुक्ल नवमी, वि स 1971 (सन 1914) को एक पुष्प खिला था जिसका नाम उन्होने 'सुशीला' रखा था। तब, उस समय–काल में, वे भोले गृहस्थ नहीं जानते थे कि उनके उद्यान के उस महान पुष्प की सुगन्ध परमपूज्य आचार्य सुमतिसागरजी, परमपूज्य उपाध्याय ज्ञानसागर जी और परमपूज्य आर्यिका दृढमति माताजी तक पहुँच सकेगी। वे नहीं जानते थे कि तत्कालीन यशस्वी क्षुल्लक श्री मनोहरलाल जी वर्णी भी इस पुष्प से प्रभावित होगे। वे तो इतना जानते थे कि उनके परिवार मे 'कन्या' का जन्म हुआ है। अपने निराभिमानी स्वभाव के कारण वे उसे 'कन्या–रत्न' तक न कह पाये थे। वे नहीं कह पाये तो क्या हुआ, आज सारा देश स्वीकार करता है कि उनके घर कन्यारूपी रत्न ही आया था जो रत्नत्रय की द्युति से परिपूर्ण था।

दम्पत्ति ने कन्या की उचित देखभाल की, श्रेष्ठ लालन–पालन किया। उम्र के अनुकूल सस्कारो मे ढाला, लौकिक और धार्मिक शिक्षाऍं दी। देखते ही देखते शिशु–अवस्था से बढ किशोरी और फिर युवती का रूप–लावण्य वह बेटी प्राप्त कर चुकी। जितनी धार्मिक, उतनी ही सुदर। जितनी वाकपटु उतनी ही स्वस्थ–तदुरस्त। विचारो से दृढ तो चर्या मे परिपक्व।

जैसी ससार की नियति है, माता–पिता ने वही किया। बेटी सोलह वर्ष की हुई। योग्य वर की तलाश। उनका पुरुषार्थ फलीभूत हुआ। रुडकी में एक डाक्टर वर मिला, उसके पालको से सम्पर्क किया। उन्हे बेटी सुशीला इतनी अच्छी लगी कि वार्त्ता, तुरन्त कार्य मे परिणित कर दी गई।

सुशीला का विवाह डाक्टर से हो गया। श्रेष्ठ वर। अति श्रेष्ठ वधु।

चली गई सुशीला ससुराल। माता–पिता अश्रु बहाते देहरी पर खडे रह गये। रोता रहा सारा–परिवार। सिसकते रहे घर–ऑगन। बेटी की विदा हो गई। सुशीला जी के तीन भाई थे, एक बहिन थी। सभी घर मे थे, पर घर मे मौन समाया हुआ था। कोई किसी से बात नहीं कर पा रहा था।

रुडकी की एक विशाल कोठी मे सुशीला के पति अपने माता–पिता के साथ रहते थे। सुशीला ने गृह–प्रवेश किया। कोठी मे आनद और उत्साह का सागर लहराने लगा। हर दिवस–सुख से पगा हुआ आता, रस बरसाता और चला जाता।

एक वर्ष पूर्ण हो रहा था, इस बीच सुशीला दो बार मायके भी गईं, और आईं।

एक दिन एक घटना मे डाक्टर साहब का स्वर्गवास हो गया। कोठी मे मातम छा गया। कल तक जहाँ हास्य के फव्वारे चल रहे थे, आज वहा रुदन का सागर उमडता प्रतीत हो रहा था। बुझ गया दीपक कोठी का। रो पडी आत्मा रुडकी की। सारा परिवार विलाप कर रहा था। डाक्टर साहब की वृद्धा–माता शोक से बेहोश हो गिर पडी। सताप का ताप एक पूरे परिवार को दाग रहा था समय की सलाखो से।

परन्तु धर्मज्ञ सुशीला जी मौन थी। न रो रहीं थी, न विलाप कर रही थी। मन ही मन जगनियन्ता के दर्शन पर विचार कर रही थीं।

जो अभी कुछ पल पूर्व रानी सी सजी धजी थी। वह अब वैधव्य की चपेट मे आकर, वीरान–नगरी, दिख रही थी।

परिजन और पुरजन मिले, अतिम क्रिया की। अब रुड़की थी, पर रुडकी मे वह बाँका डाक्टर नहीं था।

सुशीला जी ने स्वेच्छा से अपने काले–काले–चमकीले–बाल काट डाले। शीश मूँड़ लिया। नहाया–धोया और जाप देने बैठ गईं। लोग देखकर चकित रह गये। ❑

कुछ दिवस बीते, कहे– बीत गये। सुशीला के माता–पिता उसे बिजनौर लाने की कोशिश मे थे, पर सुशीला जी ने दोनो–पक्ष के लोगो से जो अनुरोध किया, वह विशेष था। बोली थीं–मुझे अब रुड़की या बिजनौर के घर वाछित नही हैं। मुझे वह स्थान चाहिए जिसकी दीवारो के मध्य श्रीजी विराजित हो और उनके समीप मैं।

परिवारिक जन पूछ बैठे–कहाँ जाना चाहती हो बेटी?

– हस्तिनापुर। वहाँ नदीश्वरद्वीप–मदिर है, वहीं धर्मशाला है। मैं शेष जीवन वहाँ ही व्यतीत करना चाहती हूँ।

विदुषी नारीरत्न सुशीला जी के निर्णय को सभी ने सराहा। 'मगर घर से दूर, अकेली बेटी कहाँ रहेगी, कैसे रहेगी,' की चिन्ता सभी के मन मे व्याप्त गई।

सुशीला जी पर चिन्ता का कोई प्रभाव नही पडा, वे तो चितन कर रही थी।

जन्म काल से सोलह वर्ष तक माता–पिता का साथ, और उसके बाद एक साल पति का साथ पाने वाली सुशीला जी अब धर्म के साथ रहने हस्तिनापुर चली गईं। हॉ, वहीं, जहॉ नदीश्वर द्वीप–मदिर और समीपस्थ धर्मशाला है।

'धर्म' का श्रृगार करने वाली सुशीला के पहुँचने से 'धर्मशाला' का नाम सार्थक हो गया। वहॉ अभी तक यात्री ठहरते थे, मगर अब, अब सुशीला जी के रूप मे 'धर्म' ठहर चुका था।

स्वनियत्रित सुशीला जी सामायिक, पूजा–पाठ, प्रतिक्रमण आदि मे ध्यान देकर अपनी उम्र के हर पल/क्षण मे धर्मप्रकाश भरने लगी। शेष समय मे धार्मिक–ग्रन्थो का अध्ययन। वह सन 1932 का समय था, समाधिमरण का पावन–भाव तभी आ चुका था मन मे।

सन 1914 मे जन्मी बेटी ने सन 1934 मे, मदिरजी मे जाकर, श्रीजी के समक्ष यावज्जीवन–ब्रह्मचर्य व्रत पालन करने का सकल्प लिया, ब्रह्मचारिणी की सात्विक–चर्या पालन का व्रत–एक समय भोजन, सीमित वस्त्र, शैया–सीमा आदि आदि।

तभी आगरा मे पू क्षुल्लक श्री मनोहरलाल जी वर्णी पधारे। उनके प्रवचन सुनने लोग आ–जा रहे थे। ब्र सुशीला जी के भी भाव हुए, वे आगरा गईं। वर्णीजी के प्रवचन सुने और उनसे सप्तम–प्रतिमा के व्रत प्राप्त किये। दिया प्रथम आशीष क्षुल्लक जी ने। आशीषो का दिया (दीपक) यही प्रज्ज्वलित हुआ जो अत तक अनेक त्यागियो से स्नेह प्राप्त करता रहा।

आगरा से वापिस हस्तिनापुर। ब्र सुशीला बाई का जीवन और एकासन–साधना का क्रम समानान्तर हो गया। आतरिक–तप तपने लगी वह तरुणी। उम्र का पाखी 20 वर्ष का था, वह उड़ता रहा धर्म–क्षेत्र पर, धर्म के आकाश मे।

वर्ष बीते। दशक बीते। युवावस्था प्रौढता के सोपान चढ रही थी। धीरे–धीरे वे भी पूरे हो गये। आई फिर वृद्धावस्था की पगडडी। मगर वे घबड़ाई नहीं, धर्म–यात्रा पर निरंतर बढती रहीं। धरती की पगडडियॉ

उडकर चेहरे पर विराजमान होने लगीं। लोग उन्हे झुर्रियॉं कहते हैं। झुर्रियॉं मानव–जीवन के सकेत हैं, जिनसे ज्ञात होता है कि समय का रथ कितना चल चुका है अनुभव के चेहरे पर।

सयोग ओर वियोग भाग्याधीन कहे गये हैं। ब्र. सुशीला जी के जीवन मे एक दुर्लभ सयोग तब आया जब गणिनीतुल्य आर्यिका परमपूज्य 105 श्री दृढमति माता जी ससघ हस्तिनापुर पहॅंचीं। (पू पू. आचार्य विद्यासागरजी की सुशिष्या)

ब्र सुशीला तब तक जीवन के चौथे चरण पर पहुँच चुकी थीं। उन्होने माताजी के सामीप्य का लाभ उठाया। माताजी ने उनकी करुण–कथा के अनुरूप उन्हे प्रशस्त–पथ पर चलते रहने की प्रेरणा की।

सुशीला जी ने विनयपूर्वक, उनसे, अष्टम–प्रतिमा के व्रत मॉंगे। पू. माता जी उनकी साधना से परिचित हो चुकी थीं। अत उन्होने ब्र सुशीला जी को आरम्भ–त्याग सज्ञा से जाने जानेवाले, अष्टम प्रतिमा के व्रत प्रदान कर दिये। धन्य हो गईं सुशीला जी प्रसन्न हुई आर्यिकाश्री।

माता जी विहार कर गईं। सुशीला जी वहीं तप–त्याग–सयम की मूर्ति बन रह गईं। करती रहीं आध्यात्मिक ग्रथो का अवगाहन। न्याय और सिद्धान्त का अध्ययन। सयम और त्याग की साधना।

सन 1989 का शुभ प्रसग। ब्र सुशीला जी की उम्र 75 वर्ष, मगर स्वास्थ्य पूर्णरूपेण सही, निरोग। कहे, मन से तो स्वस्थ (स्व–स्थ) थी हीं, तन से भी स्वस्थ। देखा न था राई भर रोग। जीवन था निरोग।

वह विदुषी महिला फिर भी सोच मे पड गई, कि तन का क्या भरोसा? आज स्वस्थ है, कल न रहे? अत इसके मोह का विसर्जन भी जरूरी है। नही है अब जीने का चाव, नहीं है मरण का भाव। सतो की कृपा से जिस तरह जीवन सजा रहा है, वैसा मरण भी सजाना होगा। समाधिपूर्वक–मरण का अतिम–महोत्सव मनाने की शक्ति प्राप्त करनी होगी।

तभी समाधि–सम्राट परमपूज्य आचार्यप्रवर सुमतिसागर जी के दर्शन करने का सौभाग्य मिला।

वृद्धा ब्राह्मी सुशीला जी ने उनसे जाकर प्रार्थना की– 'हे महाराज ! अभी तक तो मैं इस तन को ठीक–ठीक चलाती रही हूँ। पर भविष्य मे इसे ढोने/उठाने के क्षण न आ पावें, इसके लिए शक्ति चाहती हूँ। कभी औषधियो की आवश्यकता नही पड़ी। आज नहीं तो कल, कभी न कभी, यह काया श्लथ पडेगी। इसे मरण स्वीकारना होगा। चाहे प्रसन्नता से, चाहे विषाद से, मरण तो सुनिश्चित है। हे गुरुनाथ, मुझे ऐसा सुमिरन दीजिए कि इस काया का सु–मरण हो जावे।

गुरुदेव वृद्धा का मन्तव्य समझ गये कि यह समाधिमरण की भूमिका मे आ चुकी है फिर भी उन्होने पूछा–अभी तुम्हारा शरीर कार्य कर रहा है। इसे क्यो त्यागना चाहती हो?

– गुरुवर, कल यह मुझे त्याग सकता है, अत सचेत रहकर, मैं इसका त्याग करना चाहती हूँ।

– ठीक है, आपकी भावना समझ रहा हूँ, स्वास्थ्य और धर्म को ध्यान मे रखते हुए आप बारह वर्ष का सल्लेखना व्रत ले।

24 दिसम्बर सन 1989 को गुरुवर ने विधिपूर्वक व्रत प्रदान कर दिया। (वृद्धा सुशीला जी बनी उस दिन उनकी क्षपक। वे हुए उनके निर्यापकाचार्य। यह एक मनगत विचार था, जो वहॉं स्वस्थ आकार पा सका था)

गुरुवर ने उपदेश दिये और न केवल ब्र सुशीला जी को, बल्कि सर्वसाधारण को बतलाया कि समाधि, साधक की साधना का, समतामय पहलू है। वह आत्मविकास या आत्मोत्थान करने की दिशा मे,

सयम–तप–त्याग को धारण किये हुए मृत्यु की ओर एक प्रस्थान है। जो न आत्मोत्सर्ग है, न आत्महत्या, वह है देह–विसर्जन की धार्मिक–कला। जिसमे वस्तु, परिवार सम्पत्ति से निर्मोह होकर, साधक धीरे–धीरे अपनी काया तक से मोह हटा लेता है। साधक, तब कहलाता है क्षपक। वह क्षपकराज अपनी दिनचर्या, और निस्पृहता के कारण बडे–बडे आचार्यो से वैयावृत्ति पा जाने योग्य पात्रता प्राप्त कर लेते हैं। विद्वान आचार्यगण सच्चे क्षपक के त्याग, संयम और चेतना देखकर अपने आपको लघु अनुभूत करने लगते हैं। यह पृथक बात है कि उनकी 'लघुता' अपने आप 'प्रभुता' सिद्ध हो जाती है, जब क्षपक की समाधि ठीक–ठीक सम्पन्न हो जाती है।

गुरुवर ने उपदेशों के बाद, पुन ब्र सुशीला जी को नियम–सयमों के प्रति मार्गदर्शन प्रदान किया।

आचार्यश्री विहार कर गये। सुशीला जी क्षेत्र पर ही अपनी साधना मे लीन रही आईं।

चार वर्ष और बीत गये। वे अस्सीवे वर्ष की ओर चल रहीं थीं। तभी, सन 1993 की एक भोर, जब मदिर मे बैठी पूजा कर रही थीं, अन्नाहार त्यागने का भाव हो आया।

पूजोपरान्त श्री नदीश्वरद्वीप मदिर की मुख्यवेदी के समक्ष, श्रीजी की प्रतिमा के सामने, जीवन भर के लिए अन्न का त्याग कर दिया। जो जन वहाँ, उस समय, मदिरजी मे थे, वे आश्चर्य में पड़ गये। क्या श्रावक, क्या पडित, सभी हर्ष–विभोर भी हुए, त्याग का समाचार सुनकर।

उस दिन से आहार बदल गया। कभी अल्पमात्रा मे फल, तो कभी मात्र रस। कभी वह भी नहीं, निराहार। क्रम चला, तो चलता गया, एक दो वर्ष नहीं, आठ वर्ष चला। उन्होने श्रेष्ठ मर्यादा से संकल्प जीवन्त भी रखा।

वे नित्य समाधि मरण का पाठ करतीं और भगवान के आगे एक ही भावना व्यक्त करतीं–

जाप जपै, तिहुँयोग धरै, दृढ तनकी ममता टारै।
अत समय वैराग्य सम्हारै, ध्यान समाधि विचारै।

एक दिन उन्हें सूचना मिली कि राष्ट्रसत, सराकोद्धारक–महात्मा, परमपूज्य उपाध्यायरत्न श्री ज्ञानसागरजी मुनिमहाराज ने बड़ागाँव मे चातुर्मास स्थापना करली है। वह सन 1995 का समय था।

ब्र सुशीला जी तब 81वाँ वर्ष पार कर रही थी। उन्होने बहिन सरोज और उनके पुत्र सुधेश से वहाँ चलने का मन बतलाया दर्शन करने का तीव्र भाव।

सयोग कुछ ऐसा बना कि सुशीला जी जब बडागाँव पहुँची और उपाध्यायश्री के दर्शन किए तो लौटने का मन न कर सकीं, पूरे वर्षायोग की अवधि वहाँ ही, अपने गुरुनाथ के चरणों के आसपास बनी रहीं।

गुरुवर की वर्षाकालीन–क्रियाएँ और दिनचर्या देखकर वह वृद्धा श्राविका हृदय की गहराई तक प्रभावित हुईं। उन्हे लगा कि ऐसा सत तो कभी देखा ही नहीं, जिसमे एक साथ कई सागर लहराते दीखते हैं। शिष्य में उनके गुरु की छवि देखकर उन्हे पू. सुमतिसागर जी उनके भीतर से बोलते दीखे। मगर एक से क्या होता है, उन्हें तो और और सागर भी पू उपाध्यायश्री के व्यक्तित्व में दिखे। वे देखती हैं कि वहाँ, उनके भीतर, वात्सल्य का सागर भी लहरा रहा है। एक सागर भरा हुआ है करुणा का। एक सागर है ज्ञान का। एक सागर है साध्वोचित कठिन–चर्या का।

कहने का अभिप्राय यह कि वृद्धा को रोज एक नया सागर देखने मिलता था पूज्यश्री के व्यक्तित्व मे, मानस में।

एक दिन उन्होने पूज्यश्री से अपने समाधिमरण के लिए किंचित् चर्चा भी की।

वृद्धा चार माह तक वहाँ रुकीं। गुरुवर के उपदेश सुनती रहीं, अपनी चर्या सम्भालती रहीं और मानस मे भक्ति की ज्योति जलाए रही। वर्षायोग के बाद गुरुवर अन्य दिशा को विहार कर गये। वृद्धा ने हस्तिनापुर के मदिर की ओर प्रस्थान कर दिया।

हस्तिनापुर के (उस) सुप्रसिद्ध मदिर और धर्मशाला के परिसर मे एक महान–आत्मा, जिनका नाम सुशीला है, समाधितप तपती रही। समय बीतता गया। श्रावक आते रहे, उनके दर्शन करने। धीरे–धीरे उनका क्षपकत्व इतना विराट हो गया कि त्यागीगण भी उनके दर्शनार्थ पहुँचने लगे।

ग्रीष्म मे प्यास से सघर्ष साध और शीतकाल मे ठड से लोहा लिया, किन्तु अपने त्यागो पर ऑच नही आने दी। ब्र सुशीला जी की प्रसिद्धि अनेक सतो के समतुल्य हो गई, उनके न चाहते हुए भी। वे तो मगन (मग्न) थी अपने पथ पर, अपने परिवेश मे। उनकी कुछ चाह ही न रह गई थी। फिर भी एक चाह थी, वे बेदी के आगे गुनगुनाती थी–

मेरे न चाह कुछ और ईश। रत्नत्रय–निधि दीजै मुनीश।
मुझ कारज के कारन सुआप। शिव करहु, हरहु मम मोह–ताप।

दिन बीत रहे थे। राते कट रहीं थी। वृद्धा की काललब्धि कहाँ रुकी है, वे नही जानती थी, मगर रत्नत्रय–निधि के लिए पल–पल अपने 'मुनीश' का स्मरण करती रहती थी।

उनके मन और वचन एका कर चुके थे, वे भले ही न समझ पाई हो, पर उनकी आवाज– 'मन मे होय सो वचन उचरिये, वचन होय सो तन सो करिये।।' राष्ट्रसत पूज्य उपाध्यायश्री तक पहुँच रही थी। शायद उनके भाग्यपुष्प ने ही अपने कल्याणकर्ता महापुरुष को पुकारा था। तभी तो परमपूज्य उपाध्याय श्री ज्ञानसागरजी महाराज सन् 2001 मे, उनके बहुत समीप आकर, उपस्थित हो गये मेरठ मे।

ब्र सुशीला जी को समाचार प्राप्त हुआ तो गद्‌गद् हो गईं। उन्हे मन ही मन लगा– "कभी पत्थर की शिला का उद्धार करने नौ–नारायण की अर्हता से सज्जित श्रीरामचद्र जी भी इसी तरह एक शिला के पास पहुँचे थे।"

वे तब तक अतिवृद्ध–महिलारत्न हो चुकी थी। उम्र का 87वॉ वर्ष चल रहा था। उन्हे स्मरण था कि इन्ही उपाध्यायश्री के परमपूज्य गुरुदेव आचार्य सुमतिसागर जी ने लगभग 12 वर्ष पूर्व सलेखनाव्रत प्रदान किया था, आज वे नही हैं, पर उनके श्रेष्ठ गुरुकुल–परम्परा के महानसत, उनके श्रेष्ठतम शिष्य हमारे समीप तक पहुँच चुके हैं। उनका यहाँ पहुँचना ही मेरे उद्‌देश्यपूर्ति का वह समय है जिसे शास्त्रो मे काललब्धि कहा गया है।

सुशीला जी इस बीच हस्तिनापुर सहित समीपी क्षेत्रो मे 'अम्माजी' के आदरसूचक शब्द से पुकारी जाने लगी थी। हर वय का व्यक्ति उन्हे अम्माजी सम्बोधन देकर ही अपनी वार्ता शुरु करता था। कहे, 65 वर्ष पूर्व सन् 1934 मे वे सुशीला बाई थी, फिर समय ने उन्हे कुछ वर्ष तक 'दीदी' सम्बोधन भी प्रदान कराया श्रावक–समाज से, किन्तु दीदी अपने वात्सल्य और प्रौढ़–स्वर से कब 'अम्माजी' कही जाने लगी, किसी को स्मरण नही है। हस्तिनापुर का परिवेश उनकी उपस्थिति से सदा गरिमामय बना रहा।

उन्हे देखने, उनसे मिलने, जब तब उनके सगे–सबधियो के नाम पर, उनके भ्रातागण और बहिन सरोज, उनका पुत्र सुधेश आदि आते रहते थे। घडी भर बैठते थे चैन से बातें करते थे, फिर लौटते थे।

4 जुलाई 2001 को, पू उपाध्यायश्री ने ससघ मेरठ मे वर्षायोग की स्थापना की।

अम्माजी स्थापना के समाचार से बहुत खुश थीं। उन्हे अपने महान उद्‌देश्य की सफलता के लिए, गुरुवर के चरणो मे पहुँचने की आतुरता बढ गई। सरोज जी एव सुधेश जी को बुलाया, दोनों से वार्ता की।

वे दोनो मेरठ गये। गुरुवर के दर्शन किए। पर अपने मन की बात कहने, विदुषी ब्रह्मचारिणी–द्वय, अनीता जी और मजुला जी को ही उपयुक्त समझा।

वार्ता हुई। स्वीकृति/सकेत प्राप्त करने मे सफल हो गये। लौटकर अम्मा जी को बतलाया। तब तक चातुर्मास के काफी दिन निकल गये।

पूर्ण तैयारियो के बाद, दोनो ने अम्माजी को साथ लिया और निकल पडे धर्मशाला से।

अम्माजी ने अतिम बार हस्तिनापुर के नदीश्वरद्वीप–मदिर के दर्शन किये। फिर 'मदिर–देव' से मन ही मन विदा मॉगी। धर्मशाला जो अब तक उनकी शरणस्थली थी, को नमन किया और चलदी–अपने प्राण–प्यारे–सत के श्रीचरणो की ओर।

समय अधिक नही लगा।

18 सितम्बर 2001 का वह दिवस, अम्माजी के लिये अति–विशष्टि–दिवस सिद्ध हुआ, जब उन्होने मेरठ मे परमपूज्य उपाध्यायश्री के समक्ष पहुँच कर प्रार्थना की– "हे गुरुवर ! मेरी बारह वर्षीय सल्लेखना–अवधि का यह अतिम वर्ष चल रहा है, मेरी अभिलाषा है कि जो व्रत आपके गुरुदेव ने मुझे प्रदान किया था, उसकी पूर्णता और सफलता मे आप हेतु बने। मुझे अपने चरणो मे स्थान दीजिए ताकि इन्ही श्री चरणो के समीप मेरी समाधि हो। आपका आशीष और दिशाबोध मेरी अतर्यात्रा के पाथेय बने। मैं सम्पूर्ण चेतना के साथ अपने देहतत्व का त्याग कर सकूँ।

पू उपाध्यायश्री अम्माजी की वार्ता से प्रभावित हुए। उनके अतस् से अनुकम्पा की सरिताये निकल पडी और क्षपकराज पर अमृत सिचन करने लगी। उनके आशीर्वाद से अम्माजी कृतज्ञ हुईं। उनके शब्दो से अम्मा जी के कर्णपट तक ही नहीं, ह्रदय–पटल तक शीतलता का सचार हो पडा। गुरुवर ने मधुरवाणी मे एक वाक्य ही कहा था– 'आपके भाव अच्छे हैं, साधना ठीक–ठीक है। अत आपकी भावना अवश्य सफलीभूत होगी।'

उस पावन–दिवस का एक–एक क्षण अम्माजी सजा–सजा कर अपने ह्रदय–करडक मे धर रहीं थीं। वे अपनी उस वाणी को भी नियत्रित कर रहीं थीं, जो जीवन भर एक प्रहरी की आवाज की तरह कडक बनी रही थी। फिर हाथ जोड कर बोलीं–हे महाराज, अब आगे की साधना के लिए दिशादर्शन दीजिये। खुलासा कीजिए कि साधना–पथ पर किस तरह आगे बढना है।

अम्माजी के प्रश्न ने उपाध्यायश्री को विचार करने को विवश कर दिया। उन्होने क्षण भर को मौन धारण कर लिया, भीतर कोई विचार किया, मनन किया, फिर पूछ बैठे–आपके साथ कौन आया है?

समीप बैठी सरोज जी ने हाथ जोड कर उत्तर दिया–मैं और मेरा बेटा।

गुरुवर ने एक दृष्टि उन लोगों पर डाली, फिर वे देखने लगे सघस्थ ब्रह्मचारिणी बहिनों की ओर, जैसे पूछ रहे हों–दे दूँ समाधि? तुम लोग क्षपक की समाधि–यात्रा मे सहायक बनोगी? उसकी 'गति को 'सद्‌गति' का मुकुट पहनाने का पुरुषार्थ करोगी?

गुरुवर की जिज्ञासापूर्ण दृष्टि का अर्थ विदुषी–बहिनो को समझते देर नहीं लगीं। दोनों ने कर–बद्ध हो स्वेच्छा से शीश झुका दिये गुरुवर के चरणो की ओर। जैसे उत्तर दे रही हो–हे गुरुनाथ, छपक की निष्कपट वैयावृत्ति कर हम अपना ही पथ प्रशस्त करेगे। साधना मे सहायक बन कर हम क्षपक की कृतज्ञ होगी।

गुरुवर बहिनो से आश्वस्त हो गये। अब उनकी नजर थी क्षुल्लक सम्यक्त्वसागर जी की ओर। वय की प्रौढावस्था पार कर, वृद्धावस्था मे कदम धर चुके हैं। यह बात गुरुवर अच्छी तरह जानते थे। फिर भी उन्हे यह विश्वास बना कि क्षुल्लक जी धार्मिक–पाठ आदि का पठन–पाठन तो करा ही सकते हैं।

फिर नजर डाली ब्र विनोद जी के शालीन चेहरे पर। वे भी भीतर से तैयार मिले।

इतना सब घटित हो गया कुछ ही क्षणो मे। गुरुवर ने क्षपक के प्रश्न पर ध्यान दिया, फिर समझाते हुए अम्माजी को उत्तर दिया–गत अनेक वर्षो से आप अन्नाहार त्यागे हुए हैं, अत साधना पथ तो आप स्वय ही सरल बना चुकी हैं। सो चिन्ता न कीजिए, धीरे–धीरे अन्य त्यागों को अपनाइये।

– महाराज, आज की बात, आज ही सुना दीजिए।

– आप अब फलो का त्याग कर दीजिए। छाछ, मुनक्का की चटनी और जल लेती रहिए।

18 सितम्बर 2001 से साधना–पथ पर, अम्माजी की गति, प्रेरक बन पडी। धीरे–धीरे सितम्बर माह पूर्ण हो गया। अक्टूबर आगमन की स्वीकृति माँग रहा था।

अम्माजी रोज समय पर गुरुवर के दर्शन करतीं, कभी वार्ता भी। गुरुवर भी वात्सल्य से उनके हालचाल पूछते रहते। अपनी प्रथम–शिष्या को क्षपकराज के रूप मे पाकर, वे भी प्रसग को अति शुभो का प्रतीक मान रहे थे।

मानसिक श्रम मे ब्र अनीता जी अग्रिम थीं तो शारीरिक मे ब्र मजुला जी सबसे आगे थी। उन्होने अम्माजी की समाधि–यात्रा को एक महान सकल्प के रूप मे स्वीकार कर लिया था। फलत उसके निर्वाह और निष्पादन मे अपने चितन और श्रम का उत्तम उपयोग करने लगीं।

उन्हे सेवा–सुश्रूषा और साधना मे सचेत/सावधान कराते हुए देख, श्रीमती कुसुम मोदी बहिन–द्वय की अनुगामी बन गई और बहिनो के संकेत पर दैनिक–चर्या का सुदर निर्वाह कर क्षपक की सेवा की हेतु बनीं।

सघस्थ समस्त त्यागी–व्रती क्षपक का ध्यान रखने लगे और हर प्रहर की घटनाओ–सूचनाओं को पू उपाध्यायश्री तक, समय पर पहुँचाने लगे। गुरुवर की प्रेरणा से सभी के कार्यो का विभाजन कर, उन्हे उत्तरदायित्व की पतवार थमा दी गई थी, समाधिरूपी तरणी (नैया) मझधार मे थी।

अक्टूबर माह के लगते ही गुरुवर, निर्यापकाचार्य, पू उपाध्यायश्री ने क्षपकराज की साधना बढा दी–एक दिन उपवास, एक दिन छाछ, पानी। क्षपक ने गुरुवर का आदेश सुन अपना अहोभाग्य माना और चर्या को तदनुकूल कर लिया।

कुछ ही दिनो में शारीरिक शिथिलता ने आक्रमण कर दिया–क्षपकराज पर। किन्तु वे कम ज्ञानी नहीं थीं, साथ ही महान ज्ञानियो के सुरक्षा घेरे मे अवस्थित थीं। अत शारीरिक कमजोरी भले ही उन्हें चिढा रही थी, पर आत्म–क्षेत्र की सजगता दृढ बनी हुई थी।

करीब माह भर तक, साधक की सजगता परख लेने के बाद, गुरुवर ने ब्र सुशीला जी को नवमी–प्रतिमा के व्रत प्रदान कर दिये। स्थान था मेरठ का सुप्रसिद्ध महावीर–जयती भवन।

गुरुवर के इस करुणा–दान से क्षपक मे आत्मविश्वास बढ़ गया। उन्हे अपनी साधना में प्रगति परिलक्षित हुई। वे नित्य की तरह उपाध्यायश्री का प्रात दर्शन प्राप्त करती एव आशीर्वचन सुनतीं हुई धर्म–भावो की दृढता मे क्रमश वृद्धि करती गईं।

जर्जर तन मे स्थापित उच्च पुरुषार्थ का परिचय वे प्राप्त कर चुकी थीं। अत एक दिन पुन. प्रार्थना की–हे महाराजश्री, पूरी चेतना के साथ मैं अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकूँ, ऐसी साधना बतलाइए। मेरे देहतत्व को भले ही कमजोर समझिए, किन्तु मुझे नही, मैं अभी और–और साधनाओ मे प्रवृत होने का भाव मन मे रखे हूँ।

क्षपक की वार्ता से पू उपाध्यायश्री हर्षविभोर हो गये। उन्हे अपनी प्रथम–शिष्या से यही उम्मीद थी। उन्होने 9 दिसम्बर 2001 को निर्देश दिये–अहो क्षपक सुशीला जी, अब आप छाछ का भी त्याग कर दें, मगर मुनक्के का पानी और जल की स्वीकृति रखे।

सुशीला जी ने हाथ जोडकर नमोस्तु किया अपने प्यारे मुनीश को।

नूतन व्रत की धारणा से क्षपक को कोई कमजोरी नही आई। हर क्रिया में वे सजग मिलीं। उठते–बैठते समय दीवाल आदि का सहारा नही लिया, सो न ही लिया।

ब्र बहिने कभी ब्र भैया उन्हे विभिन्न पाठ सुनाते रहते। जिनवाणी की पक्ति–पक्ति उनकी जिह्वा का स्पर्श पाती रही। वे गुनगुनाती रही।

क्षपकराज समयसार की गाथाओ का निरतर जाप कर रहीं थी। ब्र मजुला जी छाया की तरह उनके समीप बनी रहती थी, तो ब्र अनीता जी दिन मे दो–तीन बार उनके मन कक्ष मे जल रहे दीपक की ज्योति बढा जाती थी। ब्रह्मचारिणी बहिनो के पावन सामीप्य मे सजीवनी घुली हुई प्रतीत होती थी क्योकि वे जब तक पास मे रहती थीं, क्षपक को आत्मबल बना रहता था, किन्तु जब वे ब्रह्मचारिणी अपनी दैनिक क्रियाओ और चर्याओ के लिए कुछ देर के लिये दूर होतीं तो क्षपकराज सुशीला जी उदास हो पड़तीं, उन्हे लगता– "वे अधेरे कक्ष मे बैठीं हैं और उनकी मणियाँ किसी ने अन्य कक्ष मे कर दी हैं।" जब वे लौटतीं तो सुशीला जी के सतप्त–चेहरे पर मुस्कानो का राज फैल जाता था। रोगी को जैसे सजीवनी–रस मिल गया हो।

धीरे–धीरे सुशीला जी ने अपने इस स्वभाव से भी मुक्ति पा ली और ऐसी उदासीन हो गईं कि बहिनो की उपस्थिति का हर्ष और अनुपस्थिति का विषाद उन्हे स्पर्श ही न कर पाता। "वे प्रति क्षण अपने मनोभावों को अध्यात्म की सरिता मे प्रवाहमान बनाये रहती।" यह प्रसग उदघाटित किया था परमविदुषी बहिन ब्र अनीता जी ने। इतना ही नहीं, वे बतलाती हैं कि अम्माजी जिस वस्तु का त्याग कर देती थीं, फिर उस तरफ देखती तक नही थी।

गुरुवर अपने क्षपक की पल–पल की जानकारी लेने लगे थे। उसी के आधार पर उन्होने 17 दिसम्बर को नूतन निर्देश प्रदान किया– "मुनक्का का पानी भी त्याग कीजिए।"

क्षपक ने शिरोधार्य किया गुरुवर का आदेश। फिर स्वर में मिश्री घोल कर बोलीं– "हे महाराज, आप क्या मानते हैं कि पानी आदि वस्तुओ से मुझे बल मिलता है? मिलता होगा ! मगर सत्य तो यह है उपाध्यायश्री, मुझे तो आपके अमृतवचनों से ही शक्ति मिलती है। दृढता मिलती है।"

गुरुवर ने प्रशसा के शब्द अनसुने कर दिये। क्षण भर को वातास मे मौन छा गया।

एक सप्ताह पूरा होने वाला था, मगर क्षपक की सजगता ज्यो की त्यो थी, दृढता भी पूर्ववत्। अत 23 दिसम्बर को गुरुवर ने क्षपक को पुन निर्देश दिये–आपके बारह वर्ष पूर्ण हो रहे हैं, कल 24 दिसम्बर 2001 को। आपकी सजगता मे प्रज्ञा का पानी घुला हुआ पा रहा हूँ, सो हे क्षपकराज अम्मा जी, आज से आप जल का भी त्याग कर दे। केवल उस तत्व पर दृष्टि रखे जिससे आपको शक्ति मिल रही है, वह अ–रस है, अ–रूपी है, अ–स्पर्शी है, शुद्ध है, बुद्ध है, अविरुद्ध है और पल पल आपके साथ है।

सुशीला जी उनका सकेत समझ गईं, वे सूखे–काले ओठो पर मुस्कान लाने की चेष्टा करती हुई बोली–आप आत्मा मे रमे रहने का सकेत कर रहे हैं। सच गुरुवर, मैं अब तक तो आप मे रमी थी, पर अब उस मोह और वात्सल्य को भी यहीं समाप्त करती हूँ और स्वत्व मे रमने का वचन देती हूँ।

सुशीला जी की प्रभावपूर्ण वाणी सुनकर सभी के मनो मे पडितप्रवर दौलतराम जी की पक्तियॉं तैर गईं–

आतम के अहित विषय कषाय
इनमे मेरी परिणति न जाये।
मैं रहूँ आप में, आप लीन,
सो करो, होऊँ ज्यों, निजाधीन।।

एक अनोखा मौन बन गया था वातावरण मे। तब सुशीला जी ने ही उसे मुखरित किया, वे अपने निर्यापकाचार्य गुरुवर से मद स्वर मे बोली–मैं अहिर्निश सजग रहूँ, मुझे इतनी शक्ति मिले !

गुरुवर ने आशीष दे दिया।

सुशीला जी ने समस्त प्रकार के आहार त्याग दिये थे, केवल आत्मचितन ही था उनका आहार, विहार, विचार और शैया। धीरे धीरे दस दिन निकल गये, उनकी सजगता रचमात्र क्षीण न हुई, तब गुरुवर ने क्षपक, उसकी साधना व गति पर विचार–विमर्श किया मन ही मन और नये–निर्णय पर पहुँच गये। उनके मानस मे ऐसी दीक्षार्थी खडी थी जो 70 वर्ष से एकासन करती हुई, साधनारत थी।

27 दिसम्बर 2001 को, श्री दिगम्बर जैन मदिर सूर्यनगर, गाजियाबाद (उ प्र) मे श्रावक–समाज को महत्वपूर्ण दृश्य देखने मिला, विशाल सभा के मध्य गुरुवर ने ब्र सुशीला जी के गरिमापूर्ण जीवन–परिचय पर उद्‌बोधन प्रदान किया और क्षपकराज को विधिपूर्वक आर्यिका–दीक्षा प्रदान की। गौरव के साथ दिया उन्हे नूतन नाम–आर्यिका 105 श्री समाधिमति माताजी।

दर्शको के रोम–रोम नाच उठे, हो उठा पुलकित–हृदय–हृदय। सभी ने गुरुवर का मन ही मन साधुवाद ज्ञापित किया। गुरुवर के निर्णय की भूरि–भूरि सराहना की, फिर एक स्वर में गुरुवर और आर्यिका का जयघोष किया–परमपूज्य उपाध्यायश्री की जय। पूज्य आर्यिका समाधिमति माता जी की जय।

दीक्षा और नाम तो दिये गुरुवर ने, फिर दिये सयम के तीन महान उपकरण–पिच्छिका, कमडलु और शास्त्र। प्रबुद्धजनो ने स्वीकारा कि गुरुवर ने भारत देश में अनेक त्यागी–व्रतियो की आवली (पक्ति) मे एक दीप

और प्रज्ज्वलित कर दिया और दीपावली (दीप–पक्ति) को नया विस्तार प्रदान कर दिया। सन 2001 के चातुर्मास स्थापना के समय तक देश में लगभग 869 सतगण थे, हॉ आचार्यो–आर्यिकाओ से लेकर क्षुल्लक–क्षुल्लिका तक। अब उस पक्ति के दीपो की सख्या उपाध्यायश्री ने 870 कर दी थी। (सतों की सख्या के ऑकडे 'मासिक सस्कार–सागर', अगस्त 2001, अक के आधार पर हैं, देखे उसका पृ0 51)

पूज्य माता श्री तो 23 दिसम्बर से ही सर्व प्रकार के आहारो का त्याग कर चुकी थी, अतः उनकी दीक्षा के बाद किसी श्रावक को आहार–दान का सौभाग्य न मिल सका।

दिगम्बर जैन मदिर सूर्यनगर के परिसर मे माताजी की साधना चलती रही। ब्र अनीता जी, ब्र मजुला जी, श्रीमती कुसुम मोदी माता जी के समीप बनी रही। क्षुल्लक सम्यक्त्वसागर और ब्र विनोद जी का सहयोग था ही। प्रारम्भ मे सभी का उद्देश्य सुशीला जी की समाधि–यात्रा तक था। पर अब, जब क्षपक ने आर्यिका–बाना धारण कर लिया, लक्ष्य 'शिखर– यात्रा' का हो गया तब निर्यापकाचार्य सहित पूरा सघ और सघानुगामी श्रावक–श्राविका, माता जी की सफल शिखर–यात्रा की कामना करने लगे कि उनकी आत्मा शरीर को त्याग कर उर्ध्वगामी हो पडे और धर्म के शिखरो का स्पर्श करती हुई मोक्ष–पथ की ओर बढती जावे।

भक्त–समुदाय माताजी की सेवा मे सदा उपस्थित रहता था। वे अब विधिवत पू उपाध्यायश्री की प्रथम शिष्या होने का सौभाग्य पा चुकी थी। उसके पूर्व तो लोग वात्सल्य–वश कहते थे, पर अब साधिकार कह रहे थे "माता जी"।

ब्र मजुला जी माताजी के समीप बैठ कर उनकी चेतना की खबर रख रही थी तो ब्र अनीता जी समयसार की गाथाओ की जाप मे प्रेरक बन रही थीं। ❑

जिनवाणी की गोद मे विराजी प्रतीत होती थी पूज्य आर्यिका समाधिमति जी। अब स्थिति यह थी कि हर पल नही, हर श्वास मे, दीदियो के सानिध्य के फलस्वरूप, माताजी जाप देती रहती थी। उनके उच्चारण साफ थे, आवाज स्पष्ट थी, वे सहजता से कहती रहती थी–शुद्धोहम्, बुद्धोहम्, निरजनोहम्, शुद्धचिद्रयोहम्।

जाप देते हुए, सामायिक करते हुए, प्रतिक्रमण करते हुए माताजी चार दिनो तक अपनी जीवनज्योति रोके रहीं। दीदियॉ समीप बैठी सहयोग करती रही। गुरुवर दिन मे दो, कभी तीन बार उनके समीप आकर वार्ता करते, हालचाल पूछते रहे। माताजी भी पू मुनीश के साक्षात् दर्शन की प्रतीति का आनद पाती रही। समाधि–यात्रा शाति से चल रही थी, चलती रही।

31 दिसम्बर 2001, ईस्वी–सन् के अतिम दिवस, सोमवार, समाधि–यात्रा का अतिम दिन बनकर आया। मध्याह्न–बेला चल रही थी, तभी दो बजकर पैतालीस मिनट पर माताजी की धडकन बद हो गई। 'शुद्धोहम' का उच्चारण शात हो गया। ब्र मजुला जी समीप बैठी थी, वह सुकोमल–हृदया–ब्रह्मचारिणी मृत्यु का आभास प्रथम बार इतने करीब से देख रही थी, सो भावुक हो उठी। माताजी के हाथो को अपने हाथो से सहलाना बन्द कर, कक्ष से बाहर दौड पडी और पू. उपाध्यायश्री की वसतिका के समीप जाकर जोर से पुकारा– 'महाराज जी शीघ्र आइये, माताजी को कुछ हो गया।' दीदी के स्वर मे क्षणभर को घबडाहट आ गई थी, परन्तु उन्होने अपने आपको सम्भाल लिया, उनका ज्ञान उस समय उनका रक्षा–कवच बन कर, आत्मप्रदेश पर आच्छादित हो गया, वे मोह से बच गईं।

गुरुवर तीव्र डगो से माताजी की वसतिका मे पहुँचे। अन्य सभी सहयोगी भी पहुँच गये। माताजी का पार्थिव शरीर ही वहाँ था, आत्मा शिखर–यात्रा पर विहार कर चुकी थी। वातास मे अनुगूँज फैल रही थी– "निरजनोहम् . ।"

गुरुवर ने माताजी की समाधि–यात्रा सफल मानी। उन्होने बतलाया कि वह महान वीरागना थीं, जीवित रहते हुए उन्होने कर्मों से सघर्ष किया और विजय पायी। समाधिमरण सफल बनाकर, उन्होने मृत्यु पर भी विजय पायी। वे मृत्यु–आधीन नहीं हुईं, वे तो सदा निजाधीन थीं, स्वनिर्भर थीं। ऐसी पावन–बेला सभी के जीवन को प्राप्त हो तो धर्म और आत्मा की गरिमा बढती रहेगी।

उचित समय पर समाज ने मृत्यु–महोत्सव मनाया। माताजी की अतिम यात्रा निकाली और एक महत्वपूर्ण स्थान पर उनकी चदन–चिता बनाकर, देह को अग्नि के सुपुर्द कर दिया।

समाज का विचार है कि गुरुवर के आशीष से वहाँ, जहाँ अग्निसस्कार किया गया था, माताजी की स्मृति मे एक 'समाधि स्थल' का निर्माण कराया जावे।

यह आलेख प्रकाशित होने तक समाधिस्थल की योजना आकार पा जावेगी, गुरुवर का आशीर्वाद ही कुछ ऐसा है। हम उनके चरणो मे नमोस्तु करे, उनकी जय बोले, और अपनी श्रद्धा को बलवती बनाये। ❑

20

'संख्यात्मक-परिचय'

	गुरुवर की गुरु–परम्परा	चर्या–काल
1	परमपूज्य आचार्य 108 श्री शान्तिसागरजी महाराज (छाणी)	1923 से 1944 तक
2	परमपूज्य आचार्य 108 श्री सूर्यसागरजी महाराज	1924 से 1952 तक
3	परमपूज्य आचार्य 108 श्री विजयसागरजी महाराज	1952 से 1962 तक
4	परमपूज्य आचार्य 108 श्री विमलसागरजी महाराज (भिण्ड)	1943 से 1973 तक
5	परमपूज्य आचार्य 108 श्री सुमतिसागरजी महाराज	1968 से 1994 तक
6	परमपूज्य उपाध्याय 108 श्री ज्ञानसागरजी महाराज	1988 से निरतर

वे पावन स्थल जहाँ गुरुवर के वर्षायोग सम्पन्न हुए

क्र०	स्थान का नाम	जिला	प्रान्त	वर्ष
1	श्री दि० जैन मन्दिर, सागर	सागर	म० प्र०	1988
2	श्री अतिशय क्षेत्रा, बडागॉव	बागपत	उ०प्र०	1989
3	श्री दि० जैन मन्दिर, शाहपुर	मु० नगर	उ०प्र०	1990
4	श्री दि० जैन मन्दिर, गया	गया	विहार	1991
5	श्री दि० जैन मन्दिर, रॉची	रॉची	झारखण्ड	1992
6	श्री दि० जैन मन्दिर, तडाई	रॉची	झारखण्ड	1993
7	श्री दि० जैन मन्दिर, पेटरवार	रॉची	झारखण्ड	1994
8	श्री दि० जैन मन्दिर, बडागॉव	बागपत	उ०प्र०	1995
9	श्री दि० जैन मन्दिर, शाहपुर	मु० नगर	उ०प्र०	1996
10	श्री दि० जैन मन्दिर, चौरासी, मथुरा	मथुरा	उ०प्र०	1997
11	श्री अतिशय क्षेत्र, तिजारा जी	अलवर	राजस्थान	1998
12	श्री दि० जैन मन्दिर, अजमेर	अजमेर	राजस्थान	1999
13	श्री दि० जैन मन्दिर नसिया जी, निवाई	टोक	राजस्थान	2000
14	श्री दि० जैन मन्दिर, मेरठ	मेरठ	उ०प्र०	2001
15	श्री दि० जैन मन्दिर, हरी पर्वत, आगरा	आगरा	उ०प्र०	2002
16	श्री सिद्धक्षेत्र सोनागिरिजी	दतिया	म०प्र०	2003

परमपूज्य उपाध्यायश्री का बिन्दु–बिन्दु परिचयः–

परिवारिक नाम	:	श्री उमेशकुमार जैन
दुलारा नाम	:	मुन्ना
जन्म तिथि	:	वैशाख शुक्ला द्वितीय, वि स 2014 तदनुसार 1 मई, सन 1957
जन्म स्थल	:	मुरैना (म प्र)
शिक्षा स्थान	:	मुरैना, जयपुर, सागर, ललितपुर।
पूजनीय माता	:	श्रीमती अशर्फीदेवी जैन।
पूजनीय पिता	:	श्रीमान शातिलालजी जैन (जैसवाल)
भ्रातृ		श्री राकेशकुमारजी, मुरैना। श्री प्रदीपकुमारजी, मुरैना।
भगिनी	:	श्रीमती मीनाजी श्रीमती अनीताजी आगरा
बब्बा जी (दादा जी)		श्रीमन्त शकरलालजी (बाद मे पूज्य मुनिरत्न श्री वर्द्धमानसागरजी)
ब्रह्मचर्य–व्रत	.	सन 1974, वीरग्राम (अजमेर) मे।
ब्रह्मचर्य व्रत प्रदाता	:	परमपूज्य आचार्य श्री विद्यासागरजी मुनिमहाराज।
क्षुल्लक–दीक्षा		5 नवम्बर 1976, तीर्थक्षेत्र सोनागिरिजी (म प्र) मे
दीक्षा–नाम	.	पूज्य 105 श्री गुणसागरजी महाराज
दीक्षा–गुरु	.	परमपूज्य आचार्यवर्य श्री सुमतिसागरजी महाराज
मुनि–दीक्षा		31 मार्च, सन 1988, महावीर–जयती सिद्ध क्षेत्र श्री सोनागिरिजी (म प्र)
दीक्षागुरु	.	सारल्यपुज आचार्य श्री सुमतिसागरजी मुनिमहाराज।
मुनिदीक्षा–नाम	:	परमपूज्य 108 मुनि श्री ज्ञानसागरजी महाराज
भ्रमण स्थान		लगभग सम्पूर्ण भारत, मुख्यत–बिहार, झारखण्ड उडीसा और पश्चिम बगाल के सराक क्षेत्र। उत्तर प्रदेश, हरियाणा, राजस्थान, दिल्ली मध्यप्रदेश एवं छत्तीसगढ आदि।
उपाध्याय–पद	.	30 जनवरी, सन 1989, सरधना (उ प्र)
प्रवचन–पारिजात		आशा का सुर–जीवन का सगीत, उगता सूरज, अभय की साधना, प्रवचन पढो तनाव भगाओ, खबरो के बीच, ज्वलत प्रश्न शीतल समाधान, भव्य कल्याणक–स्मारिका।

परम पूज्य उपाध्याय श्री ज्ञानसागरजी महाराज
की प्रेरणा से स्थापित

प्राच्य श्रमण भारती–मुजफ्फरनगर एवं आचार्य शांतिसागरजी 'छाणी' स्मृति ग्रन्थमाला–बुढ़ाना तथा अन्य प्रकाशकों द्वारा प्रकाशित साहित्य

प्राच्य श्रमण भारती

क्र.	पुस्तक का नाम	लेखक/सम्पादक का नाम	मूल्य
1	आराधना कथा प्रबन्ध	डॉ रमेशचन्द्र जैन, बिजनौर	30 00
2	महावीर रास	महाकवि पदम	80 00
3	मेरी जीवन गाथा (द्वितीय भाग)	क्षु गणेशप्रसादजी वर्णी	100 00
4	मध्यकालीन जैन सट्टक नाटक	डॉ राजाराम जैन, एव डॉ विद्यावती जैन, आरा	24 00
5	षट्खण्डागम लेखन कथा	डॉ राजाराम जैन, आरा	10 00
6	जैन धर्म	प कैलाशचन्द्र जैन शास्त्री, वाराणसी	80 00
7	जैन शासन	प सुमेरूचन्द्र दिवाकर, सिवनी	80 00
8	प्रमेय कमल मार्तण्ड परिशीलन	प्रो उदयचन्द जैन, वाराणसी	50 00
9	धर्मफल सिद्धान्त	प माणिकचन्दजी 'कौन्देय', फिरोजाबाद	30 00
10	मानवता की धुरी	श्री नीरज जैन, सतना	30 00
11	भारतीय वागमय मे पार्श्वनाथ विषयक साहित्य	डॉ जयकुमार जैन, मुजफ्फरनगर	10 00
12	जैन न्याय को आचार्य अकलकदेव का अवदान (राष्ट्रीय सगोष्ठी)	डॉ कमलेश कुमार जैन, वाराणसी	100 00
13	तीर्थंकर पार्श्वनाथ (ऐतिहासिक एव सास्कृतिक परिप्रेक्ष्य मे)	डॉ अशोक कुमार जैन, रूडकी एव अन्य	125 00
14	भव्य कल्याणक	श्री सुशील उपाध्याय, रूडकी	15 00
15	खबरो के बीच	सकलन	25 00
16	आशा के सुर–जीवन का सगीत	सकलन	20 00
17	उगता सूरज	सकलन	15 00
18	जिन खोजा तिन पाइयॉ	डॉ राजाराम जैन, आरा	15 00
19	ज्वलत प्रश्न–शीतल समाधान	डॉ मुरारीलाल अग्रवाल,दिल्ली (सकलन)	10 00

20	प्रवचन पढो तनाव भगाओ	श्री ओमप्रकाश अग्रवाल,अलवर (सकलन)	15 00
21	अभय की साधना	डॉ कृष्णा जैन, ग्वालियर	15 00
22	शाकाहार–एक जीवन पद्धति	डॉ नीलम जैन, गाजियाबाद	3.00
23	शाकाहार एव विश्वशाति	डॉ नलिन के शास्त्री, दिल्ली	30 00
24	शाकाहार विजय	श्री सुभाष जैन, अलवर	15 00
25	शाकाहार–सर्वोत्तम आहार	डॉ सुरजमुखी जैन, मुजफ्फरनगर	5 00
26	शाकाहार या मासाहार (फैसला आप स्वय करें)	श्री गोपीनाथ अग्रवाल, दिल्ली	5 00
27	मादक पदार्थ व धूम्रपान (लाभ हानि स्वय जानिये)	श्री गोपीनाथ अग्रवाल, दिल्ली	5 00
28	गर्भपात–उचित या अनुचित फैसला आपका	श्री गोपीनाथ अग्रवाल, दिल्ली	3 00
29	धूम्रपान जहर ही जहर	डॉ नीलम जैन, गाजियाबाद	3 00
30	Vegetanan Nutntion	Dr D C Jain, Delhi	सदु
31	समाज निर्माण में महिलाओं का योगदान	डॉ नीलम जैन, गाजियाबाद	25 00
32	भगवान राम	डॉ मूलचन्द जैन, मुजफ्फरनगर	10 00
33	नानी नानी कहो कहानी	डॉ मूलचन्द जैन, मुजफ्फरनगर	15 00
34	बैठो! बैठो! सुनो कहानी	डॉ मूलचन्द जैन, मुजफ्फरनगर	15 00
35	सफर का हमसफर	डॉ मूलचन्द जैन, मुजफ्फरनगर	15 00
36	जग जा मेरे लाल	डॉ मूलचन्द जैन, मुजफ्फरनगर	15 00
37	डुबकी लगाओ मोती पाओ	डॉ मूलचन्द जैन, मुजफ्फरनगर	5 00
38	बुराई की बिदाई	डॉ मूलचन्द जैन, मुजफ्फरनगर	15 00
39	लुढकन रपटन कम्पन का साथी	डॉ मूलचन्द जैन, मुजफ्फरनगर	15 00
40	झोपडी से महलो तक	डॉ मूलचन्द जैन, मुजफ्फरनगर	15 00
41	मन की आवाज	डॉ मूलचन्द जैन, मुजफ्फरनगर	20.00
42	अभिवन्दना पुष्प	श्री निर्मल जैन, सतना (सम्पादक)	150 00
43	गुणो के आगर ज्ञान के सागर	प लालचन्द जैन 'राकेश', गजबासौदा	100.00
44	ज्ञानसागर की कहानी चित्रों की जुबानी	श्रीमती माधुरी जैन 'ज्योति', जयपुर	100.00
45	स्मर्णिका (डायरी)	सकलन	85 00
46	डॉ हीरालाल जैन–व्यक्तित्व एव कृतित्व	डॉ भागचन्द्र जैन 'भागेन्दु', दमोह	25 00

47	This is Jainism यह है जैन सिद्धात	डॉ भागचन्द्र जैन 'भागेन्दु', दमोह	12 00
48	न्याय कुमुदचन्द परिशीलन	प्रो उदयचन्द्र जैन, उदयपुर	500 00
49	षट्खडागम की शास्त्रीय भूमिका	डॉ हीरालाल जैन, जबलपुर	495 00
50	पारिवारिक शाति और अनेकान्त	डॉ बच्छराज दूगड़, लाडनू	60 00
51	ज्ञानायनी	डॉ शीतलचन्द जैन, जयपुर	200 00
52	शारदा के सपूत	प्राचार्य नरेन्द्र प्रकाश जैन, फिरोजाबाद	30 00
53	क्षणभगुर जीवन	डॉ कृष्णा जैन, ग्वालियर	20 00
54	डॉ कामताप्रसाद जैन व्यक्तित्व एव कृतित्व	श्री शिवनारायण सक्सेना, अलीगज	60 00
55	प जुगल किशोर व्यक्तित्व कृतित्व	डॉ शीतलचन्द जैन, जयपुर	200 00
56	प्राकृत और जैन धर्म समीक्षा	प्रो प्रेमसुमन जैन, उदयपुर	100 00
57	ज्ञान दर्पण (भाग–1 एव 2)	डॉ शीतलचन्द जैन, जयपुर	100 00
58	सिद्धान्तसार सग्रह	नरेन्द्र सेनाचार्य	200 00
59	अनमोल प्रवचन	डॉ विमल कुमार जैन, जयपुर	50 00
60	स्वतन्त्रता सग्राम मे जैन	डॉ कपूर चन्द जैन, खतौली डॉ ज्योति जैन, खतौली	200 00
61	युग–युग मे जैन धर्म	डॉ कामता प्रसाद जैन	20 00
62	मथुरा का जैन सास्कृतिक पुरा वैभव	डॉ फूलचन्द्र जैन 'प्रेमी'	200 00
63	भारत सविधान विषयक–जैन अवधारणाये	डॉ कपूर चन्द्र जैन, खतौली	25 00

आ. शान्तिसागर 'छाणी' स्मृति ग्रन्थमाला, बुढ़ाना के प्रकाशन

64	ज्योतिर्धरा	डॉ शेखरचन्द जैन, अहमदाबाद	25 00
65	स्मारिका आ कुन्दकुन्द सगोष्ठी	डॉ दरबारीलाल कोठिया, बीना एव डॉ जयकुमार जैन, मुजफ्फरनगर	25 00
66	स्मारिका आ समन्तभद्र सगोष्ठी	प्राचार्य नरेन्द्रप्रकाश जैन, फिरोजाबाद	25 00
67	स्मारिका सराक विद्वत् सगोष्ठी	डॉ नीलम जैन, गाजियाबाद एव डॉ जयकुमार जैन, मुजफ्फरनगर	25 00
68	आचार्य सूर्यसागर–व्यक्तित्व एव कृतित्व	डॉ रमेशचन्द जैन, बिजनौर	10 00
69	सराक क्षेत्र	डॉ नीलम जैन, गाजियाबाद	50 00

70	सराक जैन क्षेत्रो का सर्वेक्षण–समीक्षात्मक अध्ययन	डॉ कस्तूरचन्द्र कासलीवाल, जयपुर	25 00
71	सराकोत्थान प्रेरणा के स्वर	डॉ अशोककुमार जैन, लाडनूँ	10 00
72	तीर्थंकर महावीर और उनकी आचार्य परम्परा (भाग–1 से 4)	डॉ नेमिचन्द्र शास्त्री, ज्योतिषाचार्य आरा	400 00
73	मुक्तिपथ की ओर	आ सन्मतिसागरजी महाराज	15 00
74	प्रशात मूर्ति आ शातिसागर 'छाणी' स्मृति ग्रथ	डॉ कस्तूरचन्द कासलीवाल, जयपुर	150 00
75	विश्वशाति एव अहिसा प्रशिक्षण	डॉ बच्छराज दूगड, लाडनूँ	80 00
76	प्रशात मूर्ति आ शातिसागर छाणी–जीवन परिचय	डॉ कस्तूरचन्द कासलीवाल, जयपुर	15 00
77	ज्ञान के हिमालय	सुरेश जैन "सरल"	200 00

पूज्य उपाध्यायश्री की प्रेरणा से अन्य स्थानों से प्रकाशित साहित्य

78	रत्नकरण्ड श्रावकाचार	आचार्य समन्तभद्र स्वामी	40 00
79	डॉ महेन्द्रकुमार जैन 'न्यायाचार्य' स्मृति ग्रन्थ	डॉ दरबारीलाल कोठिया, बीना	151 00
80	सराक क्षेत्र–प्रगति की राह पर	सकलन	00 00
81	सराक ज्ञानाजलि काव्य	श्री निहालचन्द जैन, बीना	10 00
82	जैन विज्ञान राष्ट्रीय सगोष्ठी–95	डॉ निहालचन्द जैन, बीना	25 00
83	तिलोयपण्णत्ती (तीनो भाग)	डॉ चेतनप्रकाश पाटनी, जोधपुर	700 00
84	त्याग एव तपस्या की प्रतिमूर्ति मुनि श्री वर्द्धमानसागरजी	डॉ कस्तूरचन्द्र कासलीवाल, जयपुर	10 00
85	पचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव स्मारिका एव निर्देशिका–बिहारी कालोनी शाहदरा–दिल्ली	डॉ नलिन के शास्त्री, दिल्ली	सदु
86	श्रुत सवर्द्धन पुरस्कार समारोह–99	डॉ अनुपम जैन, इन्दौर	सदु
87	प्रतिभावान छात्र सम्मान समारोह–2000	सकलन	सदु
88	प्रतिभावान छात्र सम्मान स्मारिका–2000	डॉ अनुपम जैन, इन्दौर	सदु
89	श्रुत सवर्द्धन पुरस्कार समर्पण समारोह–2000	डॉ अनुपम जैन, इन्दौर	सदु

90	प्रतिभावान छात्र सम्मान समारोह–2001	सकलन	सदु
91	पुरस्कार परिचय पुस्तिका–2001	डॉ अनुपम जैन, इन्दौर	सदु
92	परिचायिका–2001	डॉ अनुपम जैन, इन्दौर	सदु
93	उपाध्याय ज्ञानसागर श्रुत सवर्द्धन पुरस्कार–2000	डॉ अनुपम जैन, इन्दौर	सदु
94	सराक स्मारिका–2001	सकलन	सदु
95	पचकल्याणक दर्पण–सूर्यनगर–दिल्ली	श्री मदनलाल जैन, दिल्ली	सदु
96	श्रुत सवर्द्धन एव सराक पुरस्कार–2002 परिचय पुस्तिका	डॉ अनुपम जैन, इन्दौर	सदु
97	ज्ञान गगा–वर्षायोग 2001 मेरठ	श्री सुभाषचन्द जैन	सदु
98	परिचायिका–पुरस्कार समर्पण समारोह–2002	डॉ अनुपम जैन	सदु
99	उपाध्याय ज्ञानसागर श्रुत सवर्द्धन पुरस्कार समर्पण समारोह–2001	डॉ नलिन के शास्त्री	सदु
100	श्रुत सवर्द्धन एव सराक पुरस्कार–2003 परिचय पुस्तिका	डॉ अनुपम जैन, इन्दौर	सदु

:: देश के सरल साहित्यकार : श्री सुरेश जैन 'सरल' ::

– *डा. आनंद जैन, सागर*

देश के सात महान सन्तो की जीवन–गाथा लिखते हुए सात विशेष ग्रन्थो की रूपरेखा तैयार कर देने वाले श्री सुरेश सरल एक मात्र साहित्यकार हैं जो सन 84 से अब तक केवल सन्तो–साध्वियो और अध्यात्म पर कलम चला रहे हैं– और देश के साहित्य–ससार मे सर्वथा नवीन एव मौलिक सूत्रो से युक्त साहित्य का भडारण कर रहे है।

यो प हरिशकर परसाई जी से प्रभावित होकर श्री सरल ने वर्ष 70 से 84 तक देश भर के पत्र–पत्रिकाओ मे सार्थक व्यग्य–लेख, व्यग्य–कविता और व्यग्य–कथाओ का क्रमबद्ध लेखन किया था, उसी अवधि मे व्यग्य को लेकर उनकी दो पुस्तके भी पाठको के समक्ष आई थी।

सन 84 से आचार्य विद्यासागर का सानिध्य प्राप्त कर लेने के बाद, सरल जी के प्रौढ–मन और परिपक्व–लेखनी ने केवल 'सन्त–विषय' को स्पर्श किया और अपनी जीवट "शिल्प" के सहारे सबसे पहले आचार्य विद्यासागर, फिर मुनि सुधासागर और उसके बाद आचार्य विरागसागर जी आदि की जीवनी लिखी। सन्त चरित लिखते समय वे उसमे अपने स्वाध्याय की पूर्ति भी कर लेते हैं, क्योकि उनकी कलम भक्ति के धरातल पर चलती है। वे आचार्य विद्यासागरजी के पूज्य गुरु–समाधिस्थ आचार्य ज्ञानसागर जी की जीवनी सहित कृातिकारी सत तरुण सागर, महायोगी गुप्तिसागर एव समाधि साधक आचार्य विमल सागरजी की भी लिख चुके है। कठिनताओ को स्वेच्छा से अगीकार कर अपने सुख–साखो को तिलाजलि दे, सरल जी नित्य लेखन कर्म की तपाग्नि से गुजरते हैं और जाप की तरह अनिवार्य लेखन को नित नये आयाम प्रदान करते है।

अब तक उनकी उन्नीस प्रकाशित कृतियॉ और पॉच अप्रकाशित ग्रन्थ साहित्य जगत की झोली मे, उनकी कलम के अवदान के रुप मे स्थान पा चुके हैं। लगभग पद्रह वर्षों से श्री सरल किसी भी स्पर्धा, प्रतियोगिता, मचबाजी, गोष्ठी–बाजी और सस्थाबाजी से दूर, किन्तु सब के प्रति निर्मल भावानाये लेकर चलने वाले, समय के एकमात्र व्यस्त लेखक हैं, जो प्रतिदिन दो–तीन घटे का समय लेखन सशोधन को प्रदान करके ही चैन अनुभूत करते हैं। मुशी प्रेमचद की लेखनी की सरलता और जैनेन्द्र कुमार जैन की लेखनी की दार्शनिकता सरल जी की लेखनी का स्वभाव बन चुके हैं। वे स्व डॉ धर्मवीर भारती, स्व कविवर वीरेन्द्र जैन, वरिष्ठ मनीषी डा नेमीचद जैन एव प्रा नरेन्द्र प्रकाशजी से भी कम प्रभावित नहीं हुए हैं।

देश के बडे से बडे मच और बड़ी से बडी प्रत्रिका से स्नेह प्राप्त कर लेने वाले सरल, अत्यन्त सुलझे हुए साहित्यकार हैं और सरलता को प्रथम धर्म/गुण मानते हैं।

भारतीय क्राति दिवस, 9 अगस्त 1942 को सस्कारधानी जबलपुर मे जन्मे सरल जी की लेखनी से "सर्व–हिताय" के स्वर ही अधिक निकले हैं, वे साहित्य को जिस ऊँचाई से लिखते हैं जीवन को उसी ऊँचाई से जीते हैं, सादगी और उदारता उनके अलकरण हैं।

देश के अनेक नगरो के जैन समाज द्वारा समय–समय पर उनके सार्वजनिक अभिनदन किये गये हैं। उसी श्रृखला मे गत वर्ष खण्डेला (राजस्थान) समाज से मुनिपुगव सुधासागरजी के सान्निध्य मे उन्हे

उनके लेखन पर स्वर्णाभिनदन–पत्र और इक्तीस हजार की राशि से अभिनदित किया जा चुका है।

इतना ही नही, अखिल भारतीय जैन समाज के वरिष्ठ एव मौन साहित्य साधक श्री सुरेशचद जैन "सरल" को "सत चरित्र" लिखने के फलस्वरूप "आचार्य विद्यासागर वागमय राष्ट्रीय विद्वत सगोष्ठी–सीकर" के दौरान, गत दिनो देश के 76 विद्वानो की उपस्थिति और राष्ट्रसत सुधासागर के सानिध्य मे, आचार्य ज्ञानसागर वागर्थ विमर्श केन्द्र ब्यावर द्वारा "साहित्य कुमुद चद्र" अलकरण से सम्मानित भी किया जा चुका है।

उनकी अनेक सचाइयॉ समय के शिलालेखो पर स्वर्णाक्षरो से लिखी जा सकेगी कि वे साहित्य और जीवन मे सरलता का रग भर रहे हैं, कि वे अपने साहित्य को औदार्य और निस्वार्थता का वह धरातल दे रहे–हैं जो आने वाली पीढियो को प्रकाशस्तम्भ का कार्य करेगा, कि वे सरल हो या कठिन परन्तु सन्त जीवनी की सुगन्धो से आप्लूत है, कि वे सन्त साहित्य और सन्त–स्वभाव के जौहरी है, कि वे मौन और गृह–एकान्त को सजाने वाले साधकपुरुष हैं, कि वे स्वेच्छा से जीवन को तप मे रत करने वाले विषपायी हैं, कि वे प्रौढ हैं पर उनमे बालको सी सरलता समाई हुई है।

सरलजी के विषय मे मनीषी मुनिपुगव श्री सुधासागर जी महाराज ने लिखा है– 'सरलजी वर्तमान दौर के अति विशिष्ट कथाकार है, वे भले ही सरल हो पर पुरस्कार उन्हे भारी लेखकीय श्रम कर लेने के बाद मिले हैं। मौलिक साहित्य की सर्जना मे निरतरता बनाये रखने मे कृतसकल्पित श्री सरल सिद्धहस्थ लेखको की राष्ट्रीय–सूची मे श्रेष्ठ स्थान पर हैं।"

दस वर्ष तक मच सचालन का सुनहरा इतिहास घडनेवाले सरल जी की कथा या कहानी–लेखन मे जितनी स्वस्थ पकड है, उतनी ही लेख और व्यग्य शिल्पन मे है, कविता तो उनके मानस मे ही रमी हुई है। उनकी विशेष पक्ति– "जिसे चार दाने मिल जाते, भूल बैठता वह उडान है।"

उनका बिन्दुवार शेष परिचय है :–

जन्म – 9 अगस्त, 1942 (भारतीय क्रान्ति दिवस) जबलपुर मे।

माता–पिता – स्व श्रीमती फूलमती देवी जैन। स्व श्री फदालीलाल जी जैन।

शिक्षा – स्थापत्य कला मे पत्रोपाधि 10 जून 1966, जबलपुर मे।

व्यवसाय – म प्र शासन के अतर्गत–लोक स्वास्थ्य यात्रिकीय विभाग, जबलपुर मे अभियता के पद से सेवानिवृत्त।

विवाह – 11 मई 1965 (पत्नी श्रीमती पुष्पा जैन सरल)

सस्थाएँ – अनेकान्त, ज्ञानगुजन, मित्रसघ, मिलन, अ भा अनेकान्त परिषद आदि मे मत्री। (वर्तमान मे नही)

अभिनन्दन –
1) 10 अक्टूबर 1982 को बरेला मे नागरिक–अभिनन्दन।
2) 13 फरवरी 1987 को गजरथ महोत्सव समिति नैनागिरि द्वारा आचार्य विद्यासागरजी के सानिध्य मे सार्वजानिक सम्मान, प्रतीक चिह्न सहित रुपये 2100/–की राशि से सम्मानित।
3) 29 जनवरी 95 को सकल जैन समाज गढा (जबलपुर) द्वारा सम्मान।

पुरस्कार – 1) कथा–पुस्तक "श्रावकाचार की सहज कथाएँ" अ भा सा जैन संघ बीकानेर द्वारा श्री रामपुरिया स्मृति पुरस्कार (रुपये–4001–नगद राशि) से पुरस्कृत। वर्ष 1987, जनवरी मे।

2) स्वदेश कहानी प्रतियोगिता ग्वालियर द्वारा "कहानी" को विशेष–पुरस्कार।

3) मिलन का सर्वश्रेष्ठ साहित्यकार, वर्ष 1988 के लिए रुपए, एक हजार एक से पुरस्कृत। (2 सितम्बर 1988)

4) जैन समाज हटा द्वारा "शाकाहार ही क्यों" पुस्तक हेतु रुपए 1500/– की राशि से सम्मान–13 फरवरी 89 को। सानिध्य मुनिवर 108 श्री गुप्तिसागर (अब उपाध्याय)

विधाएँ – कविता, कथा–कहानी, ललित–निबध व्यग्य लेखादि।

मौलिक–कृतियाँ – उदगार/मै से महावीर तक/बाजूवाला आदमी/मोक्षमार्ग की सत्य कथाएँ/सुनियो– साहब मेरे/पडज्जी/ श्रावकाचार की सहज कथाएँ/विद्याधर से विद्यासागर/शाकाहार ही क्यो, मॉसाहार क्यो नहीं/सुधा का सागर/क्रातिकारी–सत तरुणसागर/,आचार्य विरागसागर/महायोगी उपाध्याय गुप्तिसागर/,समाधिस्थ आचार्य श्री ज्ञानसागर/डा नेमीचद जैन साहित्य सिधु मे से कुछ बिदु एव समाधि साधक आचार्य विमलसागर।

अनुवादितकृति – 1) "शाकाहार ही क्यो" का गुजराती–अनुवाद श्री विपिन कोटडिया द्वारा।

2) विद्याधर से विद्यासागर का मराठी–अनुवाद श्रीमती रेखा जैन पूना द्वारा।

3) महायोगी गुप्तिसागर का अग्रेजी–अनुवाद, डा रेखा जैन दिल्ली द्वारा।

स्तम्भ लेखन – एक राष्ट्रीय दैनिक मे पॉच वर्ष तक तथा दो साप्ताहिको मे। (अब नहीं)

सम्पादन – अनेक स्मारिकाओ और अभिनन्दन ग्रन्थो का सूझबूझपूर्ण सम्पादन। अनेक साप्ताहिको, पाक्षिको और मासिको मे विशेषाको हेतु कलात्मक सम्पादन–सहयोग।

विविध – देश के प्रमुख दैनिको मे एव रगीन किन्तु साहित्यिक पत्रिकाओं मे सपारिश्रमिक रचनाओ का प्रकाशन। राष्ट्र स्तरीय.कवि सम्मेलनो, आध्यात्मिक काव्य–निशाओ एव आकाशवाणी से रचनाओ को आदर–स्नेह प्राप्त। कतिपय लघु रचनाओ का गुजराती, मराठी, कन्नड, तमिल और अग्रेजी के विद्वानो ने सदभावपूर्वक अनुवाद किया।

लेखन उद्देश्य – मानवीय मूल्यो की स्थापना। आदर्शो की प्रतिष्ठापना। शोशित मानवता का आकलन।

वर्तमान पता – 293, सरल कुटी, गढाफाटक पथ, जवाहर गज वार्ड, जबलपुर 482002 (म प) फोन : 0781–2312172

21

'चित्र खण्ड'

आचार्य शान्तिसागर छाणी और उनकी आचार्य परम्परा

बाल ब्रह्मचारी, प्रशान्त मूर्ति आचार्य 108 श्री शान्तिसागर जी महाराज (छाणी) उत्तर

जन्म तिथि	–	कार्तिक वदी एकादशी वि.स. -- 1945 (सन् 1888)
जन्म स्थान	–	ग्राम--छाणी जिला – उदयपुर (राजस्थान)
जन्म नाम	–	श्री केवलदास जैन
पिता का नाम	–	श्री भागचन्द जैन
माता का नाम	–	श्रीमती माणिकबाई
क्षुल्लक दीक्षा	–	सन् 1922 (वि.स. 1979)
स्थान	–	गढी जिला–बासबाडा (राजस्थान)
मुनि दीक्षा	–	भाद्र शुक्ला 14 सवत् 1980 (सन् 1923)
स्थान	–	सागवाडा जिला डूगरपुर ,राजस्थानद्ध
आचार्य पद	–	सन् 1926
स्थान	–	गिरीडीह (झारखड प्रान्त)
समाधिमरण	–	17 मई 1944 ज्येष्ठवदी दशमी
स्थान	–	सागवाडा (राजस्थान)

परम पूज्य आचार्य 108 श्री सूर्यसागर जी महाराज

जन्म तिथि		कार्तिक शुक्ला नवमी वि.स. 1940 (सन 1883)
जन्म स्थान	–	प्रेमसर जिला - ग्वालियर (म.प्र.)
जन्म नाम	–	श्री हजारीलाल जैन
पिता का नाम	–	श्री हीरालाल जैन
माता का नाम	–	श्रीमती गैंदाबाई
ऐलक दीक्षा		वि.स 1981 (सन 1924) (आ. शान्तिसागर जी से)
स्थान	–	इन्दौर (मध्य प्रदेश)
मुनि दीक्षा	–	मर्गासर बदी ग्यारस वि स 1981 (सन् 1924) 51 दिन पश्चात् आचार्य शान्तिसागर जी (छाणी) से
स्थान	–	हाटपीपल्या जिला - देवास (म प्र)
आचार्य पद		वि. स. 1985 (सन् 1928)
स्थान		कोडरमा (झारखण्ड)
समाधिमरण	–	वि. स. 2009 (14 जुलाई 1952)
स्थान		डालमिया नगर (झारखण्ड)
साहित्य क्षेत्र मे	–	33 ग्रन्थो की रचना की।

परम पूज्य आचार्य 108 श्री विजयसागर जी महाराज

जन्म तिथि		वि. स. 1938 माघ सुदी 8 गुरुवार
जन्म स्थान	–	सिरोली जिला - ग्वालियर (मध्य प्रदेश)
जन्म नाम	–	श्री चोखेलाल जैन
पिता का नाम	–	श्री मानिक चन्द जैन
माता का नाम		श्रीमती लक्ष्मी बाई
क्षुल्लक दीक्षा	–	इटावा (उत्तर प्रदेश)
ऐलक दीक्षा	–	मथुरा (उत्तर प्रदेश)
मुनि दीक्षा	–	मारोठ (जि नागौर राजस्थान) आचार्य श्री सूर्यसागर जी से
समाधि तिथि	–	20 दिसम्बर 1962
स्थान	–	मुरार जिला - ग्वालियर (मध्य प्रदेश)

आचार्य शान्तिसागर छाणी और उनकी आचार्य परम्परा

परम पूज्य आचार्य 108 श्री विमलसागर जी महाराज (भिन्ड वाले)

जन्म तिथि	–	पौष शुक्ला द्वितीया वि. स. 1948 (सन् 1891)
जन्म स्थान	–	ग्राम मोहना जिला – ग्वालियर (मध्य प्रदेश)
जन्म नाम	–	श्री किशोरीलाल जैन
पिता का नाम	–	श्री भीकमचन्द जैन
माता का नाम	–	श्रीमती मथुरादेवी जैन
क्षुल्लक दीक्षा	–	वि. स. 1998 (सन 1941) आ. विजयसागर जी से
स्थान	–	ग्राम – पाटन जिला – झालावाड (राजस्थान)
मुनि दीक्षा	–	वि. स. 2000 – आ. विजयसागर जी से
स्थान	–	कोटा (राजस्थान)
आचार्य पद	–	सन् 1973 स्थान – हाड़ौती
समाधिमरण	–	13 अप्रैल 1973 (वि. स. 2030)
स्थान	–	सागोद जिला – कोटा (राजस्थान)

मासोपवासी, समाधिसम्राट परम पूज्य आचार्य 108 श्री सुमतिसागर जी महाराज

जन्मतिथि	–	वि. स. 1974 आसोज शुक्ला चतुर्थी (सन 1917)
जन्म स्थान		ग्राम - श्यामपुरा जिला – मुरैना (मध्य प्रदेश)
जन्म नाम	–	श्री नत्थीलाल जैन
पिता का नाम		श्री छिद्दूलाल जैन
माता का नाम	–	श्रीमती चिरौजा देवी जैन
ऐलक दीक्षा	-	वि. स. 2025 चैत्र शुक्ला त्रयोदशी (सन 1968)
स्थान		मुरैना (मध्य प्रदेश) आ. विमलसागर जी से
ऐलक नाम	-	श्री वीरसागर जी
मुनि दीक्षा	-	वि. स. 2025 अगहन वदी द्वादशी (सन् 1968)
स्थान	–	गाजियाबाद (उत्तर प्रदेश)
आचार्य पद		ज्येष्ठ सुदी 5 वि.स. 2030 अप्रैल 13 सन 1973
स्थान	–	मुरैना (म प्र) आ विमलसागर जी (भिण्डवाले) महाराज से।
समाधिमरण	–	क्वार वदी 12 दि. 3 10 94
स्थान	-	सोनागिर सिद्धक्षेत्र जिला दतिया (मध्य प्रदेश)

सराकोद्धारक परम पूज्य उपाध्याय 108 श्री ज्ञानसागर जी महाराज

जन्म तिथि	–	वैशाख शुक्ल द्वितीया वि.स 2014 मई 1 सन 1957
जन्म स्थान	–	मुरैना (मध्य प्रदेश)
जन्म नाम	–	श्री उमेश कुमार जैन
पिता का नाम	–	श्री शांतिलाल जैन
माता का नाम	–	श्रीमती अशर्फी जैन
ब्रह्मचर्य व्रत	–	सन् 1974
क्षुल्लक दीक्षा	–	सोनागिर जी 5 11 1976
क्षु दीक्षोपरान्त नाम	–	क्षु. श्री गुणसागर जी
क्षुल्लक दीक्षा गुरु	–	आचार्य श्री सुमतिसागर जी महाराज
मुनि दीक्षा	-	सोनागिर जी महावीर जयन्ती चैत सुदी त्रयोदसी 31 3 1988
मुनि दीक्षापरान्त नाम		मुनि श्री ज्ञानसागर जी
दीक्षा गुरु	–	आचार्य श्री सुमतिसागर जी महाराज
उपाध्याय पद	–	सरधना मेरठ (उ प्र) 30 1 1989

शुभनगर मुरैना स्थित मंदिर की भव्य वेदी

उपाध्यायश्री के बचपन का दुर्लभ चित्र

पू. आचार्यश्री सुमतिसागर जी एवं उपाध्यायश्री ब्रह्मचर्य अवस्था में

उपाध्यायश्री क्षुल्लक अवस्था में

उपाध्यायश्री की दैनिक चर्याएँ
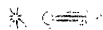
उपाध्यायश्री की दैनिक चर्याएँ

उपाध्यायश्री की दैनिक चर्याएँ

उपाध्यायश्री की विभिन्न मुद्रायें

उपाध्यायश्री की विभिन्न मुद्रायें

उपाध्यायश्री द्वारा संस्कार क्रियाएँ

सराकोद्धारक पूज्य उपाध्यायश्री

उपाध्यायश्री एवं विशिष्टजन

उपाध्यायश्री एवं विभिन्न आयोजन

उपाध्यायश्री एवं विभिन्न आयोजन

उपाध्यायश्री एवं विभिन्न आयोजन

उपाध्यायश्री एवं विभिन्न आयोजन